स्वाध्याय स्वमन्थन स्वावलम्बन

उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

इलाहाबाद

MASY-03/MASW-06 **सामाजिक अनुसंधान**	प्रथम खण्ड : सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति तथा विषय क्षेत्र द्वितीय खण्ड : शोध अभिकल्प (RESEARCH DESIGN) तृतीय खण्ड : आंकड़ा संकलन की प्रवृधियाँ चतुर्थ खण्ड : निदर्शन, अनुमापन विधियाँ तथा समाजमिति पंचम खण्ड : सामाजिक अनुसंधान में सांख्यिकी का प्रयोग

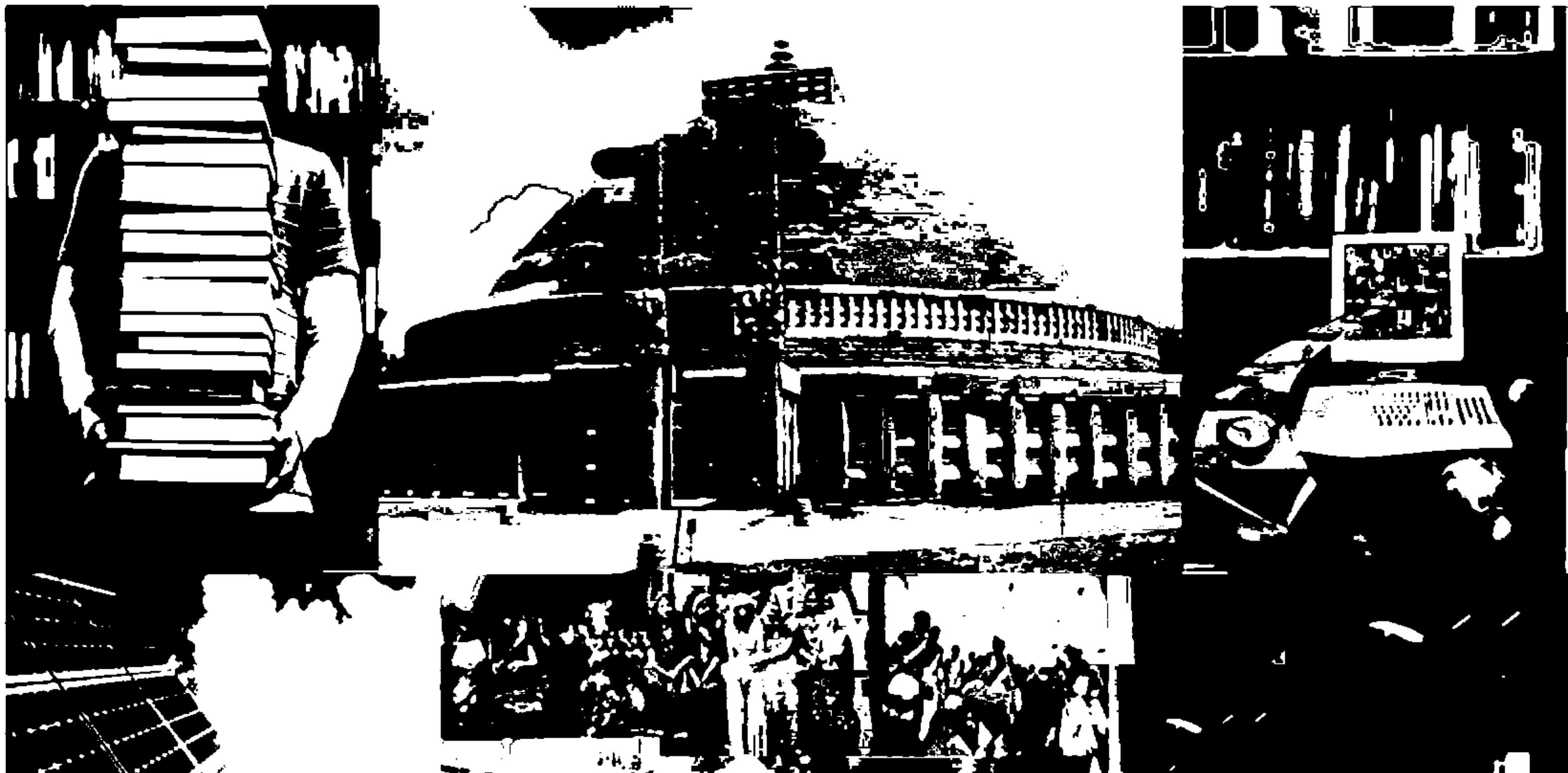

शान्तिपुरम् (सेक्टर-एफ), फाफामऊ, इलाहाबाद-211013

www.uprtouallahabad.org.in

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टंडन मुक्त विश्वविद्यालय

MASY-03/MASW
सामाजिक अनुसंधान

खण्ड

1

सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति तथा विषय क्षेत्र

इकाई 1

सामाजिक अनुसंधान की अवधारणा

इकाई 2

सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति

इकाई 3

सामाजिक अनुसंधान के प्रमुख चरण

इकाई 4

सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र व सामाजिक अनुसंधान में व्याप्त कठिनाइयाँ

संदर्भ ग्रन्थ सूची

परामर्श समिति

प्रो० देवेन्द्र प्रताप सिंह — अध्यक्ष
कुलपति
उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद

डॉ० एच० सी० जायसवाल — कार्यक्रम संयोजक
परामर्शदाता
उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इला०

डॉ० आर० के० बसलस — सचिव
कुल सचिव
उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद

विशेषज्ञ समिति

प्रो० वी० के० पंत — विषय विशेषज्ञ
से०नि०आचार्य एवं विभागाध्यक्ष
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

प्रो० डी० पी० सक्सेना — विषय विशेषज्ञ
से० नि० आचार्य
गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

प्रो० पी० एन० पाण्डेय — विषय विशेषज्ञ
आचार्य एवं पूर्व विभागाध्यक्ष
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

डा० मंजूलिका श्रीवास्तव — संरचनात्मक विषय विशेषज्ञ
स्ट्राइड, इग्नू, नई दिल्ली

पाठ्यक्रम लेखन समिति

PGSY-03 : – *सामाजिक अनुसंधान*

खण्ड एक : डॉ० वी० एन० मिश्र, प्रवक्ता कालीचरण कालेज, लखनऊ 4 इकाई (आकारगत 3)
खण्ड दो : डॉ० जय शंकर पाण्डेय, प्रवक्ता डी० ए० वी० कालेज, कानपुर 5 इकाई (आकारगत 4)
खण्ड तीन : डॉ० विजय कुमार वर्मा, प्रवक्ता, बी०एस०एन० वी०पी०जी० कालेज, लखनऊ 5 इकाई
खण्ड चार : डॉ० विजय कुमार वर्मा, प्रवक्ता बी०एस०एन० वी०पी०जी० कालेज, लखनऊ 4 इकाई
खण्ड पाँच : अनूप कुमार सिंह, प्रवक्ता, डी० ए० वी० कालेज, कानपुर 5 इकाई
सम्पादन : प्रो० वी० के० पंत

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
सर्वाधिकार सुरक्षित, इस कार्य के किसी भी अंश की उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की लिखित अनुमति के बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुन: प्रस्तुति अनुमन्य नहीं है।

दूरस्थ शिक्षा परिषद, नई दिल्ली के सहयोग से प्रकाशित।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय इलाहाबाद की ओर से Mk-vkj-d-ik.M;
कुलसचिव द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित, 2017
end%pUndyk ;fuoly ik-fy-] 42@7 tokgj yky ug: jkM] bykgkckn

खण्ड 1 का परिचय

सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति एवं विषय क्षेत्र

इस खण्ड में सामाजिक अनुसंधान एवं उसकी प्रकृति व क्षेत्र के विषय में चर्चा की गयी है। इस खण्ड को चार इकाइयों में बांटा गया है। सभी इकाइयों में उपइकाइयों का भी उपयोग किया गया है। इस खण्ड-1 में सामाजिक अनुसंधान का विस्तृत वर्णन किया गया है।

इस खण्ड के इकाई-1 के अन्तर्गत अनुसंधान की अवधारणा की विस्तृत विवेचना की गयी है। सामाजिक अनुसंधान के स्रोतों की भी चर्चा विशद् रूप से इसी इकाई में की गई है।

इकाई दो में यह दर्शाया गया है कि सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति कैसी है। उसे सामाजिक सर्वेक्षण से अलग किन आधारों पर किया जा सकता है। सामाजिक अनुसंधान वैज्ञानिक कैसे हो सकता है। इसकी भी चर्चा की गयी है।

इसी खण्ड के इकाई तीन के अन्तर्गत सामाजिक अनुसंधान के प्रमुख चरणों के विषय में बात की गयी है है और यह स्पष्ट किया गया है कि एक सामाजिक अनुसंधान को प्रारंभ से लेकर अन्त तक कितने स्तरों से गुजरना पड़ता है। हर स्तर की विशद् व्याख्या इस इकाई में प्रस्तुत की गयी है। वैज्ञानिक विधि की स्पष्टता को भी व्यक्ति किया है।

इस खण्ड के इकाई चार में सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र एवं उनको प्रभावित करने वाले प्रेरक तत्वों के विषय में चर्चा की गयी है। सामाजिक अनुसंधान का विषय क्षेत्र कहां तक है और इसकी विषय वस्तु क्या है, यह भी स्पष्ट किया गया है। इसी इकाई के अन्तर्गत सामाजिक अनुसंधान में वस्तुनिष्ठता को प्राप्त करने में क्या क्या कठिनाइयाँ आती है, को स्पष्ट किया गया है। व्यक्तिनिष्ठ और वस्तुनिष्ठ अध्ययनों की चर्चा की गयी है।

इस प्रकार इस खण्ड की चारों इकाइयों में सामाजिक अनुसंधान की अवधारणा, प्रकृति, इसके प्रमुख चरणों व सामाजिक अनुसंधान में व्याप्त कठिनाइयों का विशद् वर्णन किया गया है।

इकाई 1 सामाजिक अनुसंधान की अवधारणा

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 अनुसंधान की अवधारणा

1.2.1 सामाजिक अनुसंधान की अवधारणा

1.2.2 सामाजिक अनुसंधान के उद्देश्य

1.3 अनुसंधान का वर्गीकरण

1.3.1 विशुद्ध या मौलिक अनुसंधान

1.3.2 व्यावहारिक अनुसंधान

1.3.3 क्रियात्मक अनुसंधान

1.4 सामाजिक अनुसंधान की विधियाँ

1.5 सारांश

1.6 बोध प्रश्न

1.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- सामाजिक विज्ञानों में प्रयुक्त अध्ययन तरीकों का उल्लेख कर सकेंगे।
- सामाजिक विकास में सामाजिक अनुसंधान की भूमिका पर टिप्पणी कर सकेंगे।
- सामाजिक अनुसंधान के विभिन्न प्रकारों को स्पष्ट कर सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई समाज में व्याप्त सामाजिक समस्याओं एवं उनके समाधान से सम्बंधित है। इस इकाई में यह दर्शाया गया है कि वे कौन से कारक हैं जो सामाजिक समस्याओं को जन्म देते हैं तथा उनको कैसे दूर किया जा सकता है। सामाजिक अनुसंधान में सामाजिक तथ्यों से सम्बद्ध प्रश्नों या समस्याओं का वैज्ञानिक विधि द्वारा विश्वसनीय हल प्राप्त किया जाता है। अनुसंधान कर्ता अपना लक्ष्य निर्धारित करके समस्या का वस्तुनिष्ठ ढंग से विश्लेषण करता है तथा अनुसंधान के दोनों लक्ष्यों-सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक को साथ-साथ लेकर चलता है।

इस इकाई के अन्तर्गत सामाजिक अनुसंधान की अवधारणा को स्पष्ट रूप से समझाया गया है। अनुसंधान जब सामाजिकता का जामा पहन लेता है तो वह सामाजिक अनुसंधान कहलाता है। सामाजिक अनुसंधान को स्पष्ट करने के साथ ही उसके वर्गीकरण अर्थात् अनुसंधान को कितने भागों में बाटा जा सकता है, उसकी चर्चा की गयी है। सामाजिक अनुसंधान के लिये किस समय कौन-सी विधि अपनायी जानी चाहिये तथा इसके लिये सूचना के स्रोत क्या हैं इसकी विवेचना की गयी है।

1.2 अनुसंधान की अवधारणा

मनुष्य एक चिंतनशील प्राणी है और जिज्ञासा उसकी प्रमुख विशेषता रही है। मनुष्य की जिज्ञासु प्रवृत्ति ही अनुसंधान का मूल आधार है। प्रत्येक जिज्ञासा का प्रारंभ प्रश्नों से होता है और उसकी शांति उससे प्राप्त उत्तरों से। अनुसंधान का अर्थ है 'बार-बार' खोज करना। वैज्ञानिक जगत् में इस तरह अनुसंधान का अर्थ होता है नवीन ज्ञान की खोज एवं सत्यापन की वैज्ञानिक प्रणाली। अनुसंधान में वैज्ञानिक प्रणाली इसलिये प्रयुक्त की जाती है ताकि एकत्र किये गये तथ्य या सूचनायें विश्वसनीय, पक्षपातरहित एवं तर्क संगत हों। यद्यपि यह पूरी तौर पर विश्वसनीयता नहीं दी जा सकती है कि एकत्र किये गये तथ्य या सूचनाएं हमेशा विश्वसनीय, पक्षपात रहित एवं तर्क संगत ही हों तथापि वैज्ञानिक प्रणाली इस दिशा में सर्वाधिक आश्वासन देती है।

अनुसंधान में दो भौतिक तत्वों की प्रधानता पायी जाती है—प्रथम—अवलोकन द्वारा घटना को उद्देश्यपूर्ण ढंग से देखना अथवा उपलब्ध तथ्यों के आधार पर घटना को समझना। द्वितीय उन तथ्यों के अर्थ को जानकर घटना के पीछे छिपे कारणों को समझना। इन दोनों तथ्यों को ध्यान में रखकर जो ज्ञान संचित किया जाता है उसे विश्वसनीय एवं प्रामाणिक माना जाता है। इस प्रकार के ज्ञान को संचित करने की संपूर्ण प्रक्रिया को ही अनुसंधान कहा जाता है। अनुसंधान की प्रक्रिया निष्पक्ष एवं विश्वसनीय ढंग से सम्बद्ध तथा तर्क संगत ज्ञान की खोज पर ही बल नहीं देती बल्कि पूर्व स्थापित तथ्यों एवं निष्कर्षों का सत्यापन भी करती है।

अनुसंधान को परिभाषित करते हुए जे० डब्ल्यू० बेस्ट (1979) ने बताया है कि विश्लेषण की वैज्ञानिक विधि को अधिक आकारिक, व्यवस्थित एवं गहन रूप में प्रयोग करने को ही अनुसंधान कहते हैं। एक व्यक्ति बिना अनुसंधान किये वैज्ञानिक हो सकता है परन्तु कोई भी व्यक्ति बिना वैज्ञानिक बने अनुसंधान नहीं कर सकता है। इसी क्रम में एक अन्य सामाजिक विद्वान रैडमैन एवं मोरी (1923) ने बताया है कि ज्ञान प्राप्ति के लिये व्यवस्थित खोज ही अनुसंधान है।

डा० सुरेन्द्र सिंह (1974) का कहना है कि अनुसंधान शब्द का व्युत्पत्तीय अर्थ बार-बार खोजने से सम्बन्धित है।

इनसाइक्लोपिडिया ऑफ सोशल साइंसेज में बताया गया है कि अनुसंधान वस्तुओं, प्रत्ययों तथा संकेतों आदि को कुशलतापूर्वक व्यवस्थित करता है, जिसका उद्देश्य सामान्यीकरण द्वारा विज्ञान का विकास, परिमार्जन अथवा सत्यापन होता है, चाहे वह ज्ञान व्यवहार में सहायक हो या कला में।

इस प्रकार स्पष्ट है कि अनुसंधान, घटनाओं के बारे में ज्ञान प्राप्त करने और उन घटनाओं के मूल तक पहुँचने एवं कार्य कारण सम्बन्धों का पता लगाने का एक व्यवस्थित वैज्ञानिक तरीका है। इसके अन्तर्गत व्यक्ति अपनी जिज्ञासा के अनुरूप गहन अध्ययन करता है, जिज्ञासा का आधार चाहे प्राकृतिक दशाएं हों अथवा सामाजिक जटिलताएं इनसे सम्बन्धित ज्ञान का स्पष्टीकरण करना, उनका सत्यापन करना, नये सिद्धान्तों का निर्माण करना एवं पुराने सिद्धान्तों का सत्यापन व परीक्षण करना अनुसंधान के अन्तर्गत आता है।

1.2.1 सामाजिक अनुसंधान की अवधारणा

अनुसंधान के बाद अब हम सामाजिक अनुसंधान की चर्चा करेंगें। अनुसंधान की प्रक्रिया निष्पक्ष एवं विश्वसनीय ढंग से सम्बद्ध तथा तर्क संगत ज्ञान की खोज पर ही बल नहीं देती है बल्कि पूर्वस्थापित तथ्यों एवं निष्कर्षों का सत्यापन भी करती है। जब हम इस प्रक्रिया को सामाजिक घटनाओं से सम्बन्धित करते

हैं तो उसे सामाजिक अनुसंधान कहा जाता है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें हम सर्वप्रथम किसी समस्या, व्यवहार या घटना से सम्बन्धित आधारभूत तथ्यों का अवलोकन करके उसकी सामान्य प्रकृति को समझने का प्रयत्न करते हैं और तत्पश्चात् उन सामान्य कारणों अथवा नियमों को ढूंढ़ने का प्रयास करते हैं जो एक विशेष घटना से सम्बन्धित कार्य-कारण से सम्बंध को स्पष्ट कर सके।

इस दृष्टिकोण से सामाजिक अनुसंधान एक ऐसा प्रयास है जिसके द्वारा किसी विशेष लक्ष्य को सामने रखकर नये सिद्धान्त का निर्माण किया जाता है अथवा वर्तमान दशाओं के अन्तर्गत पुराने सिद्धान्तों की सत्यता को समझने का प्रयत्न किया जाता है। सामाजिक अनुसंधान को परिभाषित करते हुए विभिन्न विद्वानों में बोगार्डस (1936) ने कहा है कि एक साथ रहने वाले लोगों के जीवन में क्रियाशील अन्तर्निहित प्रक्रियाओं का अनुसंधान ही सामाजिक अनुसंधान है। इसी क्रम में एक अन्य विद्वान पी. वी. यंग (1960) का मानना है कि सामाजिक अनुसंधान तथा क्रमबद्ध पद्धतियों के द्वारा नवीन तथ्यों के अन्वेषण अथवा पुराने तथ्यों के पुन: परीक्षण एवं उनमें पाये जाने वाले अनुक्रमों, अन्त: सम्बन्धों, कारण सहित व्याख्याओं तथा उन्हें संचालित करने वाले स्वाभाविक नियमों का विश्लेषण करने के उद्देश्य के लिये बनायी गयी एक वैज्ञानिक योजना है।

मोजर (1961) का यह स्वीकर करना है कि सामाजिक घटनाओं एवं समस्याओं के सम्बन्ध में नवीन ज्ञान की प्राप्ति के लिये की गयी व्यवस्थित खोज को ही हम सामाजिक अनुसंधान कहते हैं। इस प्रकार उपरोक्त परिभाषाओं एवं तथ्यों के आधार पर स्पष्टत: यह कहा जा सकता है कि सामाजिक अनुसंधान—

(i) के अन्तर्गत वैज्ञानिक पद्धति द्वारा अध्ययन किया जाता है।

(ii) सामाजिक शोध इस मान्यता पर आधारित है कि सम्पूर्ण विश्व में कोई भी घटना अकारण नहीं होती है। हर घटना के पीछे कोई न कोई कारण अवश्य होता है।

(iii) सामाजिक अनुसंधान का सम्बन्ध मानवीय जीवन की समस्त सामाजिक घटनाओं से है।

(iv) सामाजिक अनुसंधान के अन्तर्गत नवीन तथ्यों की खोज एवं पुराने सिद्धान्तों का परीक्षण एवं सत्यापन किया जाता है तथा नवीन प्रविधियों का समुचित विकास किया जाता है।

(v) संक्षेप में सामाजिक अनुसंधान सामाजिक घटनाओं एवं तथ्यों के सम्बन्ध में नवीन ज्ञान की प्राप्ति या पुराने तथ्यों के सत्यापन की वह विधि है जिससे वैज्ञानिक पद्धतियों के अनुसरण के द्वारा सामाजिक जीवन की घटनाओं व समस्याओं के कारण, उनके अन्त: सम्बन्धों तथा उनमें अन्त निहित प्रक्रियाओं एवं नियमों का विश्लेषण व अध्ययन किया जाता है।

1.2.2 सामाजिक अनुसंधान के उद्देश्य

सामाजिक अनुसंधान के निम्न उद्देश्य हैं।

(i) मानव समाज के संगठन, उनकी विभिन्न क्रियाओं, उनको संचालित करने वाले नियमों तथा विभिन्न तथ्यों के बीच पारस्परिक सम्बंध ज्ञात करना।

(ii) प्राप्त ज्ञान के आधार पर सामाजिक समस्याओं का समाधान करना।

(iii) सामाजिक विकास के लिये योजना की आधार सामग्री एवं रूपरेखा प्रदान करना।

(iv) सामाजिक घटनाओं के नियंत्रण के लिये योजना को सुचारू रूप से बनाना व उपयुक्त सैद्धान्तिक विश्लेषण प्रस्तुत करना।

(v) सामाजिक वास्तविकता को निखारना तथा सामाजिक जीवन की व्याख्या करना।

(vi) समाज की कार्य पद्धति को समझना।

उपरोक्त विवेचन के आधार पर यह स्पष्ट हो जाता है कि यद्यपि सामाजिक अनुसंधान का मुख्य उद्देश्य ज्ञान की प्राप्ति, ज्ञान की वृद्धि एवं पुराने ज्ञान का नये सिरे से परीक्षण करना है। परन्तु प्राप्त ज्ञान सामाजिक समस्याओं के निदान व समाधान में भी सहायक होता है। इस दृष्टि से सामाजिक अनुसंधान के उद्देश्यों को 2 भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है—

(i) सैद्धान्तिक उद्देश्य

(ii) व्यावहारिक उद्देश्य

(i) सैद्धान्तिक उद्देश्य - सत्य तो यह है कि अनुसंधान का मूलभूत उद्देश्य व्यक्ति व समाज के विषय में मानव के ज्ञान में वृद्धि करना है। मनुष्य एक बुद्धिशील प्राणी है। इसलिये उसमें अज्ञात को जानने की उत्कट इच्छा रहती है। इस इच्छा के पीछे किसी प्रकार का शारीरिक या भौतिक सुख प्राप्त करने का उसका उद्देश्य नहीं रहता है। इससे उसे मानसिक संतोष मिलता है, अपने स्वयं के विषय में अपने परिवेश, समाज व समुदाय के विषय में जानकारी मिलती है। इसीलिये सामाजिक अनुसंधान सतत जारी रहते हैं। अत: सामाजिक अनुसंधान का सैद्धान्तिक उद्देश्य मूल रूप से ज्ञानपरक होता है। सामाजिक घटना व व्यवहार आदि के सम्बंध में नये नियमों की खोज एवं पुराने नियमों का परीक्षण इस उद्देश्य के अन्तर्गत आता है। सामाजिक अनुसंधान के सैद्धान्तिक उद्देश्य निम्न हैं:-

(i) सामाजिक अनुसंधान का प्रथम सैद्धान्तिक उद्देश्य नये तथ्यों की खोज करना है। मानव की जिज्ञासु प्रवृत्ति हमेशा नये तथ्यों, नियमों एवं सिद्धान्तों की खोज के लिये लालायित रहती है। सामाजिक अनुसंधान का प्रमुख उद्देश्य मानव की इसी जिज्ञासु प्रवृत्ति के अनुरूप नये तथ्यों, नियमों एवं सिद्धान्तों की खोज करना है।

(ii) सामाजिक अनुसंधान का द्वितीय सैद्धान्तिक उद्देश्य पुराने तथ्यों, नियमों एवं सिद्धान्तों का पुन: निरीक्षण कर उनका सत्यापन करना है। मानव समाज एवं सामाजिक तथ्य स्थिर नहीं होते, परिवर्तनशील तथा गतिशील होते हैं। उनकी इसी प्रकृति के कारण उनके सम्बंध में पूर्व स्थापित नियमों एवं सिद्धान्तों का बार-बार समय-समय पर परीक्षण कर सत्यापन करना आवश्यक होता है ताकि वे परिवर्तित परिस्थितियों में भी प्रासंगिक रह सकें।

(iii) सामाजिक अनुसंधान का तृतीय सैद्धान्तिक उद्देश्य सामाजिक घटनाओं के कार्य-कारण सम्बंधों की खोज करना है। सामाजिक जीवन की कोई भी घटना बिना कारण के घटित नहीं होती। प्रत्येक घटना के पीछे-पीछे न कोई कारण होता है । सामाजिक अनुसंधान का उद्देश्य इन्हीं कारणों की खोज कर सामाजिक घटनाओं के मध्य पाये जाने वाले प्रकार्यात्मक सम्बन्धों की खोज करना है।

(iv) सामाजिक अनुसंधान का चतुर्थ उद्देश्य उन नियमों का पता लगाना है जिनके अन्तर्गत सामाजिक घटनाएं घटती हैं। समाजशास्त्रीय अवधारणाओं के अनुसार प्राकृतिक घटनाओं के समान ही

सामाजिक घटनाएं भी किन्हीं स्वाभाविक नियमों द्वारा संचालित एवं नियंत्रित होती हैं। सामाजिक अनुसंधान का सैद्धान्तिक उद्देश्य इन्हीं स्वाभाविक नियमों की खोज करना है।

(v) सामाजिक अनुसंधान का पंचम सैद्धान्तिक उद्देश्य सामाजिक घटनाओं तथा तथ्यों का वैज्ञानिक अध्ययन कर उनके सम्बन्ध में सामान्यीकरण एवं वैज्ञानिक अवधारणाओं का निर्माण करना है।

सामाजिक अनुसंधान का प्रमुख सैद्धान्तिक उद्देश्य ज्ञान की प्राप्ति एवं ज्ञान की वृद्धि है। इसी ज्ञान की सहायता से नये सिद्धान्तों एवं विषयों से सम्बन्धित वैज्ञानिक अवधारणाओं का निर्माण किया जा सकता है। इस प्रकार सामाजिक अनुसंधान का मुख्य लक्ष्य सामाजिक जीवन के सम्बंध में सामान्यीकरण एवं सिद्धान्तों का निर्माण करना है।

(ii) व्यावहारिक उद्देश्य - व्यावहारिक उद्देश्य से तात्पर्य है सामाजिक अनुसंधान के द्वारा सामाजिक व्याधिकीय समस्या का समाधान एवं निदान ढूँढ़ना। सामाजिक अनुसंधान के प्रमुख व्यावहारिक उद्देश्य निम्न हैं:-

(i) सामाजिक अनुसंधान का प्रथम व्यावहारिक उद्देश्य सामाजिक समस्याओं का समाधान करना है। समाज में आज कई विघटनकारी एवं व्याधिकीय समस्याएं विद्यमान हैं। इन समस्याओं का निदान तब तक नहीं किया जा सकता जब तक कि इनका वैज्ञानिक ढंग से वास्तविक अध्ययन न किया जाये। किसी भी समस्या का समाधान ढूँढने के पूर्व उसकी प्रकृति, उसका विस्तार, उसके कारण, उसकी अन्तर्निहित क्रियाओं एवं उसके परिणामों एवं प्रभावों का वैज्ञानिक अध्ययन आवश्यक है। इस प्रकार समस्याओं के समाधान की योजनाएं बनाने में योजनाकारों एवं समाज सुधारकों को व्यावहारिक सहायता प्रदान करना सामाजिक अनुसंधान का प्रथम व्यावहारिक उद्देश्य है।

(ii) दूसरा प्रमुख उद्देश्य कई सामाजिक तथ्यों के सम्बन्ध में फैली भ्रांत अवधारणाओं से उत्पन्न सामाजिक तनाव की स्थिति को दूर करना है।

(iii) सामाजिक अनुसंधान का तीसरा व्यावहारिक उद्देश्य सामाजिक प्रगति एवं विकास के हेतु योजनाओं के निर्माण एवं उनके क्रियान्वयन में सहायक होना है। बेकारी, बीमारी, अंधविश्वास, धर्मान्धता, गरीबी, अपराध, बाल अपराध, भिक्षावृत्ति, वेश्यावृत्ति, आदि कई व्याधिकारक समस्याएं समाज में व्याप्त हैं।

(iv) सामाजिक अनुसंधान का चतुर्थ व्यावहारिक उद्देश्य सामाजिक नियंत्रण में सहायक होना है। सामाजिक अनुसंधान किसी भी विषय, समस्या एवं परिस्थिति के सम्बन्ध में हमें यथार्थ ज्ञान प्रदान करता है। इसी यथार्थ ज्ञान के आधार पर हम उन परिस्थितियों एवं उनसे उत्पन्न मानव व्यवहार पर नियंत्रण कर सकते हैं।

(v) सामाजिक अनुसंधान का पंचम उद्देश्य सामाजिक संगठन को दृढ़ता एवं स्थिरता प्रदान करना है। विघटन के कगार पर खड़े सामाजिक संगठन के सम्बन्ध में यथार्थ ज्ञान की प्राप्ति के द्वारा विघटन के कारणों की खोज कर विघटन की स्थिति को दूर करने के उपायों को ढूँढा जा सकता है।

1.3 अनुसंधान का वर्गीकरण

अनुसंधान का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जा सकता है।

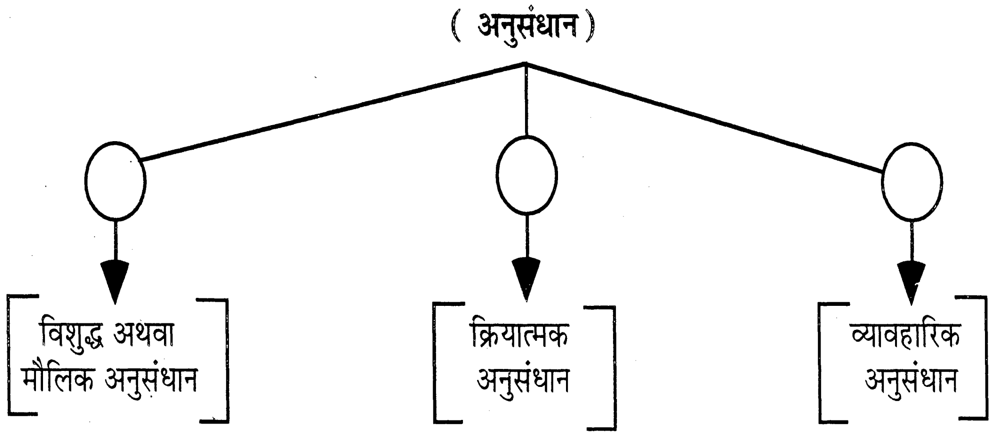

इसे निम्न प्रकार से विश्लेषित किया जा सकता है—

1.3.1 विशुद्ध अथवा मौलिक अनुसंधान

जिस अनुसंधान का उद्देश्य सामाजिक जीवन के विभिन्न पक्षों के सम्बन्ध में मौलिक नियमों की खोज एवं सिद्धान्तों का प्रतिपादन हो। उसे मौलिक अनुसंधान कहा जाता है। इस तरह का अनुसंधान मुख्यत: ज्ञान प्राप्ति के लिये किया जाता है इसीलिये इसकी प्रकृति सैद्धान्तिक होतो है। विशुद्ध अनुसंधान का उद्देश्य नये सिद्धान्तों की खोज एवं पूर्व स्थापित सिद्धान्तों का सत्यापन करना है। विशुद्ध अनुसंधान का सम्बन्ध ऐसी समस्याओं से होता है जिसके प्रेरक तत्व बौद्धिक, ज्ञानात्मक अथवा शैक्षणिक महत्व के होते हैं। सम्भवत: उनकी कोई तात्कालिक व्यावहारिक उपयोगिता नहीं भी हो सकती है। इस तरह के कार्य उपकल्पनाओं के परीक्षण, अवधारणाओं के निर्माण एवं सिद्धान्तों तथा नियमों के प्रतिपादन से सम्बद्ध होते हैं। विशुद्ध अनुसंधान ऐसे किन्हीं विचारों से प्रभावित नहीं होता कि उसके निष्कर्षों का क्या सामाजिक उपयोग किया जायेगा।

पी० वी० यंग (1960) ने विशुद्ध अनुसंधान को परिभाषित करते हुए कहा है कि विशुद्ध अथवा मौलिक अनुसंधान उसे कहा जाता है जिससे ज्ञान का संचय केवल ज्ञान प्राप्ति के लिये ही हो।

गुडे तथा हाट (1952) ने विशुद्ध अनुसंधान की प्रकृति को इसके प्रकार्यों के सन्दर्भ में स्पष्ट किया है व कहा है कि विशुद्ध अनुसंधान सामान्य सिद्धान्तों को विकसित करके उनकी व्यावहारिक समस्याओं का समाधान कर देता है और इसकी सहायता से भविष्य में उत्पन्न होने वाली समस्याओं के बारे में सरलतापूर्वक भविष्यवाणी की जा सकती है। विशुद्ध अनुसंधान समस्या से सम्बन्धित मुख्य कारकों का ज्ञान करने में भी बहुत सहायक है। साधारणत: जो व्यक्ति किसी समस्या को सामान्य अवलोकन द्वारा ही समझने का प्रयास करते हैं वे अक्सर उससे संबंधित मुख्य कारकों को नहीं समझ पाते। इस स्थिति को स्पष्ट करते हुए गुडे तथा हाट (1952) ने लिखा है कि यदि किसी क्षेत्र में प्रजातीय भेदभाव व्याप्त हो तो एक क्रीडा निदेशक विभिन्न प्रजातियों के लड़कों को अलग-अलग मैदानों में भिन्न-भिन्न समय में खेल की सुविधा देकर उनके संघर्ष की संभावना को अस्थायी रूप से दूर कर सकता है लेकिन इसे समस्या का स्थायी समाधान नहीं माना जा सकता। जब तक तनाव और मतभेद के वास्तविक कारणों को ज्ञात करके

उनका समाधान नहीं किया जाता तब तक प्रजातीय संघर्ष की स्थिति निरन्तर बनी रहेगी। यदि विशुद्ध अनुसंधान द्वारा समस्या के वास्तविक कारणों का पता लगा लिया जाता है तो उसका स्थायी निदान ढूंढा जा सकता है।

1.3.2 व्यावहारिक अनुसंधान

व्यावहारिक अनुसंधान का सम्बन्ध उन अध्ययनों से है जिनके निष्कर्षों का उपयोग तात्कालिक सामाजिक समस्याओं के समाधान के लिये किया जाता है। कोई भी अनुसंधान अथवा सिद्धान्त तब तक सार्थक नहीं बन सकता, जब तक वह लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति करने में समर्थ न हो, या उनके कल्याण में कोई वृद्धि न कर सके। ऐसे अनुसंधान का उद्देश्य केवल किसी समस्या का समाधान ढूंढना ही नहीं होता बल्कि सामाजिक नियोजन, सार्वजनिक स्वास्थ्य, शिक्षा, मनोरंजन तथा न्याय जैसे किसी भी पक्ष से सम्बन्धित एक व्यावहारिक योजना प्रस्तुत करना भी होता है। व्यावहारिक अनुसंधान की समस्याएं पूर्णत: सामाजिक भी हो सकती हैं, जैसे गरीबी, ग्रामीण विकास, अंतरजातीय तनाव आदि तथा वे आंशिक रूप से भी सामाजिक हो सकती हैं जैसे पर्यावरण-प्रदूषण। व्यावहारिक अनुसंधान का महत्व विशुद्ध अनुसंधान की दृष्टि से भी है। जैसा कि पी. पी. यंग (1951) ने कहा है कि "सिद्धान्त तथा व्यवहार आगे चलकर बहुधा मिल जाते हैं।" पी. वी. यंग (1951) ने व्यावहारिक अनुसंधान को परिभाषित करते हुए कहा है कि व्यावहारिक शोध का तात्पर्य ज्ञान के उस संचय से है जिसे मानवता की भलाई के लिये कार्यों में लाया जा सकेगा।

स्टाउफर (1956) ने व्यावहारिक अनुसंधान के महत्व की चर्चा करते हुए कहा है कि सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में व्यावहारिक अनुसंधान के तीन महत्वपूर्ण योगदान हैं —

(i) कोई सामाजिक तथ्य समाज के लिये कितना और किस प्रकार उपयोगी है इस सम्बन्ध में विश्वसनीय प्रमाण एकत्र करना।

(ii) ऐसी प्रविधियों का विकास करना, जो मौलिक अनुसंधान के लिये भी उपयोगी हों।

(iii) ऐसे तथ्यों एवं विचारों को प्रस्तुत करना जो सैद्धान्तिक अनुसंधान की सामान्यीकरण की प्रक्रिया को प्रभावित कर सकें। इस संदर्भ में पी. वी. यंग (1951) का कहना है कि वास्तव में विशुद्ध और व्यावहारिक अनुसंधान के बीच विभाजन की कोई रेखा नहीं खीची जा सकती। अनुसंधान के ये दोनों स्वरूप सिद्धान्तों के विकास और सत्यापन के लिए एक दूसरे पर निर्भर हैं।

1.3.3 क्रियात्मक अनुसंधान

क्रियात्मक अनुसंधान सामाजिक अनुसंधान का एक नवीन स्वरूप है, जिसका विकास आज से लगभग 30 वर्ष पहले अमरिका में कोलियर व लेविन ने किया। व्यावहारिक अनुसंधान का एक अधिक क्रियात्मक स्वरूप क्रियात्मक अनुसंधान कहलाता है। एक अध्ययनकर्ता अपने निर्णयों एवं क्रियाओं को दिशा देने, उन्हें सही बनाने अथवा उनका मूल्यांकन करने के लिए जिस प्रक्रिया के द्वारा अपनी समस्याओं का वैज्ञानिक रूप से अध्ययन करता है उसी को क्रियात्मक अनुसंधान कहा जाता है। जान बेस्ट (1979) ने क्रियात्मक अनुसंधान की प्रकृति को स्पष्ट करते हुए कहा है कि क्रियात्मक अनुसंधान का सम्बन्ध तात्कालिक उपयोग के अध्ययन से है न कि सिद्धान्तों को विकसित करने से। यह स्थानीय पृष्ठभूमि में समस्याओं के अध्ययन पर बल देता है। इसके निष्कर्षों का मूल्यांकन स्थानीय और तात्कालिक उपयोगिता के संदर्भ में किया जाता है, किसी सार्वभौमिक वैधता के सन्दर्भ में नहीं। जहाँ हमने अभी तक देखा कि

व्यावहारिक अनुसंधान में किसी समस्या के समाधान के लक्ष्य को सामने रखकर अध्ययन किया जाता है वहीं क्रियात्मक अनुसंधान में सामाजिक समस्या से सम्बद्ध अध्ययनों के निष्कर्ष को मुख्यत: किसी योजना या कार्यक्रम को कार्यान्वित करने के लिये उपयोग में लाया जाता है। इस प्रकार के अनुसंधान का

मुख्य लक्ष्य 'क्रिया' है जो समस्या के हल या किसी कार्यक्रम को संपन्न करने से सम्बद्ध होता है। क्रियात्मक अनुसंधान एक ओर विशुद्ध अनुसंधान की तरह घटना का वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत करता है, वहीं दूसरी ओर निष्कर्षों को कार्य योजना के अनुसार लागू करता है। एक विशेष उदाहरण से क्रियात्मक अनुसंधान की प्रकृति को सरलतापूर्वक समझा जा सकता है। भारत में स्वतंत्रता के बाद ग्रामों का सर्वाधिक विकास करने के लिए सामुदायिक विकास कार्यक्रम गांव, पंचायत तथा जिला परिषद् जैसी संस्थाओं की स्थापना की गयी। परन्तु फिर भी इन संस्थाओं द्वारा ग्रामीण जीवन का जब अधिक विकास नही किया जा सका तो समस्या का तात्कालिक समाधान ढूंढने के लिये 'बलवन्त राय मेहता' समिति नियुक्त की गयी। जिसने विभिन्न कार्यकमों का सूक्ष्म निरीक्षण कर उन कारणों का पता लगाया जिनके कारण विभिन्न कार्यक्रमों में ग्रामीण जनता का सहयोग प्राप्त नहीं हो पा रहा थी। समिति ने अनेक नीति निर्माताओं, प्रशासकों, तथा जनता के प्रतिनिधियों से सम्पर्क स्थापित करके, उनके विचारों को जानने का प्रयत्न किया। तत्पश्चात अन्तत: समिति इस निष्कर्ष पर पहुँची कि विकास योजनाओं से सम्बन्धित प्रशासनिक कार्यों का विकेन्द्रीकरण किये बिना इन्हें अधिक सफल नहीं बनाया जा सकता। फलस्वरूप एक नवीन पंचायती राज व्यवस्था की स्थापना की गयी जिसमें गांव स्तर पर गांव पंचायत, खण्ड स्तर पर पंचायत समिति तथा जिला स्तर पर जिला परिषदों के बीच समन्वय स्थापित करके ग्रामीण विकास को नवीन रूप प्रदान किया गया। यद्यपि इस सम्पूर्ण प्रक्रिया को क्रियात्मक शोध के दृष्टिकोण से नहीं किया गया किन्तु यह समस्त प्रकिया काफी हद तक क्रियात्मक अनुसंधान की प्रकृति को स्पष्ट करती है। इसी प्रकार भारत के योजना आयोग के अन्तर्गत 'योजना मूल्यांकन संगठन' की स्थापना की गयी है जिसका कार्य विभिन्न कार्यक्रमों के प्रभावों का मूल्यांकन करना तथा उनकी सफलता के लिये समय समय पर अनुसंधान कार्यों द्वारा नवीन प्रविधियों को ढूँढना है। इस संगठन की कार्य पद्धति भी मुख्यत: क्रियात्मक अनुसंधान पर आधारित होती है।

1.4 सामाजिक अनुसंधान की विधियाँ

सामाजिक घटनाओं का अध्ययन करने के लिये हम सामाजिक अनुसंधान को अन्तर्गत मुखयत: दो विधियों का प्रयोग करते हैं—

(क) गुणात्मक विधियाँ।

(ख) संख्यात्मक विधियाँ।

(क) गुणात्मक विधियाँ — इस विधि के अन्तर्गत सामाजिक घटनाओं का अध्ययन गुणात्मक ढंग से किया जाता है। प्राचीन काल में अध्ययन के लिये केवल यही विधि प्रचलन में थी। इस विधि का आधार तर्कशास्त्र है। विभिन्न सामाजिक घटनाओं का अवलोकन करके तर्कशास्त्र की आगमन तथा निगमन विधियों के आधार पर हम विभिन्न प्रकार के निष्कर्ष निकालते हैं। यह विधि बहुत निश्चित सिद्धान्तों पर आधारित होती है तथा उन्हीं सिद्धान्तों का तर्क सम्मत उपयोग विभिन्न घटनाओं में किया जाता है। सामाजिक अनुसंधान में गुणात्मक विधियों का उपयोग विशेष रूप से किया जाता है क्योंकि सामाजिक तथ्य स्वभाव से अमूर्त तथा जटिल होते हैं। हम उनको जानते तो हैं परन्तु उनकी निश्चित माप

नहीं बता सकते। सामाजिकता, रूढ़िवादिता, रहन-सहन के स्तर से क्या भाव व्यक्त होता है यह हम जानते तो हैं परन्तु उसकी माप क्या है इसका अनुमान नहीं लगा सकते। अधिकांश अनुसंधान व्यक्ति प्रधान होता है तथा वैषयिक गवेषणा संभव नहीं होती। यही कारण है कि सामाजिक अनुसंधान में गुणात्मक विधियों का उपयोग अधिक होता है।

(ख) संख्यात्मक विधि—इसे सांख्यिकीय विधि भी कहते है। इसके अनुसार विभिन्न तथ्यों को एक निश्चित माप दी जाती है। सांख्यिकीय विधियों में पारित संख्या में इकाइयों का होना आवश्यक है। इसमें व्यक्तिगत इकाइयों की बहुलता नहीं होती। सामाजिक अनुसंधान के अन्तर्गत इस विधि के उपयोग की पहली शर्त यह है कि किसी भी घटना को संख्यात्मक रूप से नापा जा सके। कुछ घटनाएं ऐसी होती है कि जिनकी प्रत्यक्ष माप हो जाती है, जैसे-परिवार की आय, लोगों की आय-व्यय,आदि के आंकड़े, परन्तु बहुत सी घटनाएं ऐसी होती हैं जिनकी प्रत्यक्ष माप नहीं हो सकती जैसे किसी व्यक्ति की पसंदगी की माप या रहन-सहन के स्तर की माप, आदि। इस तरह की घटनाओं को भी उचित पैमाने द्वारा मापने का प्रयास किया जाता है। इसके लिये विभिन्न प्रकार के समाजमिति पैमानों का विकास किया गया है। सांख्यिकीय अध्ययन सामूहिक होता है। इसमें व्यक्तिगत इकाइयों की विशेषताओं पर ध्यान नहीं दिया जाता। सांख्यिकीय विधि द्वारा किये अध्ययनों में विषयनिष्ठता की संभावना अधिक होती है। सांख्यिकीय विधियां अधिक वैज्ञानिक होती हैं तथा व्यक्तिगत प्रभाव से परे होती हैं। इसलिये इसमें वैषयिक अनुसंधान की अधिकता होती है।

1.5 सारांश

इकाई-1-''सामाजिक अनुसंधान की अवधारणा'' के अन्तर्गत हमने इकाई को निम्न उपइकाइयों में विभाजित किया है। 1.0 में उद्देश्यों का, 1.1 में प्रस्तावना, 1.2 में अनुसंधान की अवधारणा, 1.2.1 में सामाजिक अनुसंधान की अवधारणा, 1.2.2 में सामाजिक अनुसंधान के उद्देश्य, 1.3 में अनुसंधान का वर्गीकरण, 1.3.1 में विशुद्ध अनुसंधान 1.3.2 में व्यावहारिक अनुसंधान, 1.3.3 में क्रियात्मक अनुसंधान तथा 1.4 में इसकी प्रमुख विधियों का अध्ययन किया। अंत में 1.5 में सारांश, 1.6 में बोध प्रश्न तथा 1.7 में बोध प्रश्नों के उत्तर प्रस्तुत किए हैं।

इस प्रकार हमने इकाई-1 में सामाजिक अनुसंधान की अवधारणा, वर्गीकरण व विधियों का विशद वर्णन प्राप्त कर उपयुक्त अध्ययन किया है।

1.6 बोध प्रश्न

प्र० (क) लघु उत्तरीय प्रश्न

प्र०1 अनुसंधान के संबोध को स्पष्ट कीजिए?

प्र० 2 सामाजिक अनुसंधान की अवधारणा का क्या तात्पर्य है?

प्र० 3 विशुद्ध अनुसंधान से आप क्या समझते हैं ?

प्र० 5 सामजिक अनुसंधान में व्यावहारिक अनुसंधान व क्रियात्मक अनुसंधान में अन्तर स्पष्ट कीजिये ?

(ख) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्र०1 सामाजिक अनुसंधान को स्पष्ट करते हुए इसके वर्गीकरण पर प्रकाश डालिये ?

प्र० 2 सामाजिक अनुसंधान की विधियों का उल्लेख कीजिये ?

(ग) बहुविकल्पी बोध प्रश्न

(क) क्रियात्मक अनुसंधान का विकास हुआ ?

(a) इग्लैण्ड (b) अमेरिका (c) रूस (d) जापान

(ख) ''ज्ञान का संचय केवल ज्ञान प्राप्ति के लिये होता है'' कथन है —

(a) लुण्डबर्ग (b) मोजर (c) गुडे एण्ड हैट (d) पी. वी. यंग

(ग) सामाजिक अनुसंधान में किसी भी घटना को संख्यात्मक तथ्य में मापा जा सकता है—

(a) संख्यात्मक विधि द्वारा (b) गुणात्मक विधि (c) प्रायोगिक विधि

(d) उपरोक्त सभी द्वारा।

(घ) व्यावहारिक अनुसंधान मे बल दिया जाता है—

(a) तात्कालिक सामाजिक समस्याओं के समाधान पर

(b) दूरगामी समस्याओं के समाधान पर

(c) योजनाओं के कार्यान्वयन पर

(d) उपरोक्त से कोई नहीं।

(ङ) 'सामाजिक अनुसंधान एक वैज्ञानिक योजना है अवधारणा किसकी है—

(a) लुण्डबर्ग (b) सी. एच. कुले (c) पी. पी. यंग (d) गुडे तथा हाट

1.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

(क) — (b)

(ख) — (d)

(ग) — (a)

(घ) — (a)

(ङ) — (c)

इकाई 2 सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति

2.3 सामाजिक सर्वेक्षण का अर्थ

2.3.1 सामाजिक सर्वेक्षण की परिभाषा

2.3.2 सामाजिक सर्वेक्षण की विशेषता

2.4 सामाजिक अनुसंधान व सामाजिक सर्वेक्षण में अन्तर

2.5 सारांश

2.6 बोध प्रश्न

2.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति का वर्णन कर सकेंगे।
- सामाजिक सर्वेक्षण की विवेचना कर सकेंगे।
- सामाजिक अनुसंधान व सामाजिक सर्वेक्षण की तुलना कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

इकाई-दो में हम सामाजिक अनुसंधान के स्वरूप एवं प्रकृति के विषय में चर्चा करेंगे। खण्ड की यह दूसरी इकाई है। इस इकाई के अन्तर्गत यह प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है कि सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति क्या है, साथ ही साथ सामाजिक सर्वेक्षण की संकल्पना को स्पष्ट करते हुए विविध विद्वानों द्वारा दी गयी अलग-अलग परिभाषाओं का भी विशद वर्णन किया गया है। सर्वेक्षण की परिभाषा व इसकी विशेषताओं के साथ साथ अनुसंधान व सर्वेक्षण में अंतर को भी स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

2.2 सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति

सामाजिक अनुसंधान में सामाजिक तथ्यों से सम्बद्ध प्रश्नों या समस्याओं का वैज्ञानिक विधि द्वारा विश्वसनीय हल प्राप्त किया जाता है। इस दृष्टिकोण से सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति वैज्ञानिक है। इसके अन्तर्गत सामाजिक जीवन का अध्ययन, विश्लेषण एवं प्रत्यक्षीकरण, वैज्ञानिक विधि के माध्यम से किया जाता है। सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति को हम वैज्ञानिक मानते हैं। सामाजिक तथ्यों, घटनाओं एवं सामाजिक जीवन के अध्ययन व विश्लेषण की यह एक वैज्ञानिक विधि है। सामाजिक जीवन को समझना

इसका प्रमुख उद्देश्य है। सामाजिक अनुसंधान का सम्बन्ध मुख्यत: यथार्थ ज्ञान की प्राप्ति है। यथार्थ ज्ञान की प्राप्ति के लिये वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग किया जाता है। निरीक्षण, परीक्षण, तथ्यों का संकलन, वर्गीकरण, विश्लेषण आदि के द्वारा सामाजिक घटनाओं एवं समस्याओं के विषय में व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध ज्ञान प्राप्त करना तथा सिद्धान्तों का निर्माण करना सामाजिक अनुसंधान का उद्देश्य है। मूलत: उसकी प्रकृति सामाजिक घटनाओं को समझने की है। सामाजिक अनुसंधान सामाजिक घटनाओं के पीछे छिपे हुए कारणों को खोजने का कार्य करता है। सामाजिक अनुसंधान तथ्यों तक पहुँचने के लिये कल्पना, अनुमान, पक्षपात, पूर्वाग्रह से परे निरीक्षण, परीक्षण, प्रयोग, विश्लेषण और निष्कर्ष निरूपण पर आधारित वैज्ञानिक पद्धति का अनुसरण करता है। इसलिये सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति वैज्ञानिक है। सामाजिक अनुसंधान की वैज्ञानक प्रकृति पर निम्नांकित तथ्यों से प्रकाश पड़ता है—

(i) वैज्ञानिक अनुसंधानों के समान ही सामाजिक अनुसंधानकर्ता भी कल्पना, तर्क, अनुमान से स्वयं को दूर रखता है।

(ii) वैज्ञानिक अनुसंधानों की भाँति सामाजिक अनुसंधान भी अध्ययनकर्ता के द्वारा स्वयं संपादित किया जाता है। इस प्रकार सामाजिक अनुसंधान वैयक्तिक रूप में प्रयोग सिद्ध अनुभवों पर आधारित होता है।

(iii) वैज्ञानिक अनुसंधान की तरह ही सामाजिक अनुसंधान भी वैज्ञानिक और उपकरणों की सहायता से सम्पन्न किया जाता है।

(iv) वैज्ञानिक अनुसंधान अनेक चरणों के माध्यम से क्रमबद्ध रूप में सम्पादित किया जाता है. सामाजिक अनुसंधान भी वैज्ञानिक पद्धति के अन्तर्गत निर्धारित विभिन्न चरणों से होकर क्रमबद्ध रूप में सम्पादित किया जाता है।

(v) शोधकार्य करते समय एक वैज्ञानिक पक्षपात और पूर्वाग्रह से परे हरकर तटस्थतापूर्वक विषयवस्तु का अध्ययन करता है। सामाजिक अनुसंधानकर्ता यद्यपि उस समाज और समुदाय का सदस्य होता है जिसका कि वह स्वयं अध्ययन कर रहा है परन्तु इसके बावजूद वह पक्षपात व पूर्वाग्रह से स्वयं को मुक्त रखकर तटस्थ रहते हुए सामाजिक घटना का अध्ययन करता है।

(vi) वैज्ञानिक अनुसंधान की तरह सामाजिक अनुसंधान के अन्तर्गत भी नवीन तथ्यों की खोज अथवा पूर्व से ही ज्ञात तथ्यों एवं प्रचलित सिद्धान्तों की पुनर्परीक्षा व सत्यापन किया जाता है।

(vii) वैज्ञानिक अनुसंधान के अन्तर्गत विषयवस्तु का अध्ययन उसकी पूर्णता में नहीं बल्कि उसकी सूक्ष्मता से किया जाता है। इस दृष्टि से भी सामाजिक अनुसंधानों की प्रकृति वैज्ञानिक है।

(viii) वैज्ञानिक अध्ययन के माध्यम से निरूपित निष्कर्ष सत्यापनशील होते हैं। ऐसी सत्यापनशीलता सामाजिक अनुसंधानों में भी पायी जाती है।

(ix) वैज्ञानिक अनुसंधानों की भाँति सामाजिक अनुसंधान भी अधिकांशत: तथ्यों के संकलन, उनके सांख्यिकीय विश्लेषण व विवेचना पर निर्भर करते हैं। सांख्यिकी का उपयोग अब सामाजिक अनुसंधानों में आम तौर पर होने लगा है।

इस प्रकार सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति भी पूरी तरह वैज्ञानिक है। सामाजिक अनुसंधान में सामाजिक यथार्थ का वस्तुनिष्ठ अध्ययन, वैज्ञानिक पद्धति का उपयोग व प्रघटना के कार्य - कारण सम्बन्धों का व्यवस्थित अध्ययन निष्पक्षता व पूर्वाग्रहों से विरत होकर होता है। अत: उपर्युक्त बिन्दुओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति वैज्ञानिक है।

2.3 सामाजिक सर्वेक्षण का अर्थ

आंकड़ों के संग्रह के एक ढंग के रूप सर्वेक्षण का अतीत काल में भी प्रयोग किया जाता रहा है। इसे प्राचीन मिश्र में सामाजिक सर्वेक्षण की जानकारी एकत्रित करने के एक ढंग के रूप में सबसे पहले प्रस्तुत किया गया। सामाजिक सर्वेक्षण का औपचारिक शुभारंभ 18 वीं शताब्दी के मध्य में ब्रिटेन एवं फ्रांस में साथ-साथ हुआ। वैसे तो यह माना जाता है कि ईसा से लगभग तीन सौ वर्ष पूर्व मिश्र में जनसंख्या व सम्पत्ति का अध्ययन करने के लिये हेरोडोट्स ने सेर्वेक्षण के द्वारा अनेक महत्वपूर्ण सूचनाएं एकत्र की। भारत में हिन्दूकालीन इतिहास में मौर्य युग के दौरान कुछ संकेत दिखायी देते हैं। कौटिल्य की कृति अर्थशास्त्र उस युग का सामाजिक आर्थिक सर्वेक्षण प्रदान करती है। 18वीं शताब्दी के आस-पास जॉन, हावर्ड, चार्ल्स बुथ, राउण्ट्री फेड्रिक लीप्ले, आदि ने भी कुछ सर्वेक्षण सम्पादित किये।

अमेरिका में 1912 में शेल्वी हैरीसन ने 'रसेल सेज फाउण्डेसन' में सर्वेक्षण का कार्य प्रारंभ किया। पॉलकेलॉग नामक प्रमुख अमेरिकी सामाजशास्त्री ने 1909 में पिट्सबर्ग में प्रमुख सर्वेक्षण किया जिसे पिट्सबर्ग सर्वे के नाम से जाना जाता है। आज सामाजिक सर्वेक्षण के महत्व को व्यापक रूप में स्वीकार कर लिया गया है। नेल एनडरसन तथा एडवर्ड सी लिन्डेमन (1923) ने कहा है कि सतत तथ्य प्राप्त करने की आवश्यकता आधुनिक समाज की आवश्यकताओं के साथ बढ़ती है। आज की आवश्यकताएं सही ढंग एवं सूचना की मांग करती हैं। प्रत्येक समस्या का अध्ययन इसके अपने ही शब्दों में किया जाता है तथा यह विशेषज्ञों का कार्य है।

2.3.1 सामाजिक सर्वेक्षण की परिभाषा

अब हम सामाजिक सर्वेक्षण की विविध विद्वानों द्वारा प्रस्तुत परिभाषाओं का अध्ययन करेंगे—

ई. डब्ल्यू. बर्गेस (1916) ने कहा है कि एक समुदाय का सर्वेक्षण सामाजिक प्रगति के एक रचनात्मक कार्यक्रम को प्रस्तुत करने के उद्देश्य से इसकी परिस्थितियों एवं आवश्यकताओं का वैज्ञानिक अध्ययन है.............. समाज विशेषज्ञ की सांख्यिकीय मापों तथा तुलनात्मक मापदण्डों द्वारा जांचा गया सामाजिक अन्तर्दर्शन का एक ढंग है।

ई. एस. बोगार्ड्स (1936) का मानना है कि विस्तृत अर्थ में सामाजिक सर्वेक्षण किसी समुदाय के सदस्यों के जीवन तथा कार्य की दशाओं के सम्बन्ध में सांख्यिकी का संकलन करना है। इसी क्रम में एक अन्य विद्वान सिन पाओ यंग (1953) का कहना है कि सामाजिक सर्वेक्षण सामान्यतः किसी समूह के सदस्यों की रचना, क्रियाकलापों और रहन सहन की दशाओं के सम्बन्ध में जाँच पड़ताल करना है।

सी. ए. मोजर (1959) का मानना है कि समाजशास्त्रियों को सर्वेक्षणों को क्षेत्र अन्वेषण अध्ययन के विषय पर प्रत्यक्ष रूप से तथा घुमा फिरा कर आंकड़ों के संग्रह के एक अत्यधिक लाभपूर्ण ढंग के रूप में देखना चाहिए ताकि समस्या पर प्रकाश पड़ सके तथा अपनायी जाने योग्य बातों के विषय में सुझाव दिया जा सके।

इसी क्रम में एक अन्य विचारक जॉन गाल्टुंग (1967) का कहना है कि यदि अत्यधिक सामान्य शब्दों में विचार किया जाये तो सर्वेक्षण आंकड़ा मैट्रिक्सों को भरने के सामान्य ढंग के सिवा और कुछ नहीं है। अधिक संकुचित दृष्टि से स्थूलतः इसे जनमत अध्ययनों के लिये एक दूसरे शब्द के रूप में सोचा जा सकता है।

बेब्स्टर्स न्यू कालीजिएट डिक्शनरी का मानना है कि सर्वेक्षण एक आलोचनात्मक निरीक्षण है जो प्रायः सही सूचना प्रदान करने के लिये सरकारी तौर पर किया जाता है—यह प्रायः परिस्थिति विशेष अथवा इसकी व्यापकता के दृष्टिकोण से एक क्षेत्र का अध्ययन है।

2.3.2 सामाजिक सर्वेक्षण की विशेषता

सामाजिक सर्वेक्षण की विशेषताओं का वर्णन निम्नांकित है —

(i) सामाजिक सर्वेक्षण सामाजिक अनुसंधान की एक तकनीक है।

(ii) यह तथ्यों एवं सांख्यिकी के संकलन के लिये प्रविधियों, उपकरणों एवं विधियों के उपयोग से सम्बन्धित है।

(iii) इसके अन्तर्गत किसी भौगोलिक क्षेत्र में रहने वाले सभी व्यक्तियों या उनका प्रतिनिधित्व कर सकने योग्य निर्देशों से सांख्यिकी का संकलन किया जाता है।

(iv) सामाजिक सर्वेक्षण के अन्तर्गत व्यक्तियों के सामाजिक जीवन के किसी पक्ष या व्यवहार विशेष से सम्बन्धित कारकों या इनके पारस्परिक सम्बन्धों को ज्ञात करने के लिये सांख्यिकी का संकलन किया जाता है।

(v) सामाजिक सर्वेक्षण के अन्तर्गत सांख्यिकी या तथ्यों का संकलन व्यक्तियों से प्रत्यक्ष संपर्क कर कार्यालयीय अभिलेखों से या ग्रन्थालयीय सामग्री से किया जाता है।

(vi) सामाजिक सर्वेक्षण एक सहयोगी प्रक्रिया है। इसमें अनेक व्यक्तियों की सहभागिता रहती है।

(vii) अनुसंधान विषय यदि सीमित हो जैसे पी- एच. डी. उपाधि के लिये किया जाने वाला शोध कार्य, तो इसमें सर्वेक्षण कार्य अनेक व्यक्तियों द्वारा न कर केवल एक व्यक्ति द्वारा भी संपन्न किया जा सकता है।

(viii) सामाजिक सर्वेक्षण के अन्तर्गत केवल मात्रात्मक सांख्यिकीय का ही सर्वेक्षण नहीं किया जाता है। गुणात्मक तथ्यों का संकलन भी किया जा सकता है।

2.4 सामाजिक अनुसंधान तथा सामाजिक सर्वेक्षण में अन्तर

सामाजिक अनुसंधान तथा सामाजिक सर्वेक्षण में निम्नलिखित अन्तर है—

(i) सामाजिक सर्वेक्षण का अध्ययन क्षेत्र सामाजिक अनुसंधान की तुलना में अधिक विस्तृत है।

(ii) सामाजिक अनुसंधान के अन्तर्गत हमेशा परिकल्पना के आधार पर अध्ययन कार्य किया जाता है। जब कि सामाजिक सर्वेक्षण के लिये किसी परिकल्पना का निर्माण करना आवश्यक नहीं होता है।

(iii) सामाजिक अनुसंधान का मूल उद्देश्य सैद्धान्तिक अथवा शैक्षणिक होता है। यह आवश्यक है कि सामाजिक अनुसंधान के दोनों उद्देश्य हैं—सैद्धान्तिक व व्यावहारिक किन्तु पी. वी. यंग (1951) का कहना है कि सामाजिक अनुसंधानकर्ता का कोई सम्बन्ध न तो व्यावहारिक समस्याओं से है और न ही तात्कालिक सामाजिक नियोजन या सामाजिक सुधारों से।

(iv) सामजिक सर्वेक्षण का उद्देश्य तात्कालिक आवश्यकताओं की पूर्ति तथा विशेष समय में प्राप्त ज्ञान का उपयोग होता है। इस प्रकार इसका स्वभाव व्यावहारिक होता है जबकि सामाजिक अनुसंधान का उद्देश्य दीर्घकालीन तथा विस्तृत क्षेत्र का अनुसंधान करना होता है।

(v) सामाजिक सर्वेक्षण का उद्देश्य मनुष्य के जीवन में सुधार करना तथा उसकी उन्नति के मार्ग की बाधाओं का पता लगाकर उन्हें दूर करना होता है। इस तरह से यह उपयोगितावादी होता है जबकि सामाजिक अनुसंधान का उद्देश्य मानव की वृद्धि तथा अनुसंधान की प्रक्रियाओं में सुधार करना है अतः यह वैधानिक होता है।

2.5 सारांश

इकाई -दो के अन्तर्गत हमने सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति, सामाजिक सर्वेक्षण का अर्थ, परिभाषा व विशेषताओं का विशद्र अध्ययन किया है, अंत में सामाजिक अनुसंधान व सामाजिक सर्वेक्षण के बीच अन्तर का भी ज्ञान प्राप्त किया है। अंत में बोध प्रश्नों के द्वारा ज्ञानवृद्धि का प्रयास किया गया है।

2.6 बोध प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न

प्र०-1 सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति को अपने शब्दों में लिखिए ?

प्र०-2 सामाजिक सर्वेक्षण से आप क्या समझते हैं ?

प्र०-3 सामाजिक सर्वेक्षण तथा सामाजिक अनुसंधान में अन्तर स्पष्ट कीजिये।

प्र०-4 सामाजिक सर्वेक्षण के मुख्य बिन्दुओं को स्पष्ट कीजिये ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्र०-1 सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति को स्पष्ट करते हुए इसके सामाजिक सर्वेक्षण से अंतर को समझाइये ?

प्र०2 सामाजिक सर्वेक्षण क्या है? इसकी विशेषताएँ स्पष्ट कीजिये ?

बहुविकल्पीय प्रश्न

(1) सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति है—

(a) धार्मिक (b) सामाजिक (c) वैज्ञानिक (d) राजनैतिक

(2) 'सर्वे' शब्द की उत्पत्ति हुई है—

(a) जर्मन (b) फ्रेंच व लैटिन (c) फ्रेंच व यूरोपियन (d) कोई नहीं।

(3) पी. वी. यंग ने सामाजिक सर्वेक्षण के कितने प्रमुख पक्षों का वर्णन किया है—

(a) दो (b) तीन (c) चार (d) पांच

(4) सामाजिक सर्वेक्षण है —

(a) उपयोगितावादी (b) व्यवहारवादी (c) सिद्धान्तवादी (d) कोई नहीं।

2.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

(1) (c)

(2) (b)

(3) (b)

(4) (a)

इकाई 3 सामाजिक अनुसंधान के प्रमुख चरण

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 परिचय

3.2 विज्ञान की अवधारणा

3.3 वैज्ञानिक पद्धति का अर्थ

3.4 वैज्ञानिक पद्धति की विशेषताएँ

3.5 वैज्ञानिक पद्धति के कार्य

3.6 सामाजिक घटना और वैज्ञानिक पद्धति

3.7 सामाजिक अनुसंधान के प्रमुख चरण

3.8 बोध प्रश्न

3.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त :

- आप विज्ञान और वैज्ञानिक पद्धति का उल्लेख कर सकेंगे।
- आप वैज्ञानिक पद्धति की मुख्य विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे।
- आप सामाजिक घटनाओं में वैज्ञानिक पद्धति के प्रयोगों की विवेचना सकेंगे।
- आप सामाजिक अनुसंधान के विभिन्न चरणों पर टिप्पणी कर सकेंगे।

3.1 परिचय

इस इकाई में मुख्य रूप से समाज शास्त्र के अन्तर्गत विज्ञान के महत्व को दर्शाया गया है। एक अनुसंधानकर्ता को अनुसंधान करते समय कितने स्तरों से होकर निष्कर्ष की प्राप्ति होती है, इसका विवरण है। विज्ञान की अवधारणा और अर्थ को समझाते हुए यह बताया गया है कि सामाजिक घटना और वैज्ञानिक पद्धति में क्या सम्बन्ध है? क्या सामाजिक घटना का वैज्ञानिक पद्धति द्वारा अध्ययन किया जा सकता है? इस इकाई में उपकल्पना का विस्तृत वर्णन किया गया है। अनुसंधान के लिए समस्याओं का चुनाव कैसे किया जाय इसकी विस्तृत में चर्चा की गयी है। वैज्ञानिक पद्धति के क्या कार्य हो सकते हैं इसको समझाया गया है।

3.2 विज्ञान की अवधारणा

'विज्ञान' शब्द के साथ कई भ्रामक धारणाएँ जुड़ी हुई हैं, आइए देखते हैं किस तरह के विचार विज्ञान के सम्बन्ध में प्रचलित हैं—एक ओर कुछ लोग यह समझते हैं कि विज्ञान का संबंध प्रयोगशाला से है और

वैज्ञानिक वही है जो परखनली टेस्ट-ट्यूब लिए प्रयोगशाला में परीक्षण करता रहता है। दूसरी ओर विज्ञान को गणित के सूत्रों से जोड़ा जाता है। विज्ञान के बारे में एक भ्रम यह भी है कि वैज्ञानिक एक अत्यन्त तीक्ष्ण बुद्धि वाला व्यक्ति है जो व्यावहारिता से दूर एक सिद्धान्तशास्त्री है।

विज्ञान के बारे में उपर्युक्त सभी धारणाएं एक पक्षीय हो सकती हैं। वस्तुत: विज्ञान एक विशिष्ट एवं व्यवस्थिति ज्ञान है। गुडे तथा हाट ने विज्ञान को व्यवस्थित ज्ञान के रूप में परिभाषित किया है।

विज्ञान के अर्थ के संबंध में दो प्रकार की वैज्ञानिक अवधारणाएं हैं—

(क) **स्थिर विचार,** इसके अनुसार विज्ञान एक ऐसी क्रिया है जिससे विश्व की क्रमबद्ध सूचना प्राप्त होती है। इस दृष्टि से विज्ञान एक व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध ज्ञान है।

(ख) **गत्यात्मक विचार,** इसके अनुसार विज्ञान एक क्रिया है, एक पद्धति है, जो वैज्ञानिकों द्वारा संपादित की जाती है। इसके अन्तर्गत न केवल ज्ञान की वर्तमान स्थिति पर बल दिया गया है, बल्कि इसमें सतत वृद्धि एवं निरन्तरता पर भी जोर दिया गया है।

अर्थात 'ज्ञान' और वैज्ञानिक गतिविधि जिसके आधार पर ज्ञान का संचय होता है, विज्ञान के दो प्रमुख पहलू हैं। विज्ञान ज्ञान का संचय भी है और निश्चित विधि या प्रविधि भी है। विज्ञान का सम्बन्ध ऐसे ज्ञान से है, जिसका संचय व्यवस्थित, नियन्त्रित एवं आनुभाविक ढंग से किया जाता है।

वस्तुनिष्ठता, विश्वसनीयता एवं आनुभाविकता ये विज्ञान की प्रमुख विशेषताएँ है। ये विशेषताएं एक विशिष्ट वैज्ञानक पद्धति द्वारा संचित ज्ञान से संबद्ध है।

3.3 वैज्ञानिक पद्धति का अर्थ

विज्ञान को समझाने और उसकी व्याख्या करने का आधार वैज्ञानिक पद्धति ही है। स्टुअर्ट चेंज ने लिखा है कि ''विज्ञान का सम्बन्ध वैज्ञानिक पद्धति से है न कि अध्ययन विषय से''। कार्ल पियर्सन का भी मानना है कि ''समस्त विज्ञानों की एकता उनकी पद्धति में है न कि विषयवस्तु में''।

वैज्ञानिक पद्धति एक क्रिया है जिसके द्वारा किसी विषय वस्तु का व्यवस्थित अध्ययन किया जाता है। इस सम्बन्ध में **अगस्त क्राम्ट** का विचार था कि —

सम्पूर्ण विश्व का संचालन ''स्थिर प्राकृतिक नियमों द्वारा होता है और इन नियमों की व्याख्या वैज्ञानिक पद्धति द्वारा ही सम्भव है। चूंकि सामाजिक घटनाएँ भी इसी प्रकृति का एक अंग हैं अत: प्राकृतिक घटनाओं की भाँति सामाजिक घटनाओं का भी अध्ययन वैज्ञानिक पद्धति द्वारा ही सम्भव है। वैज्ञानिक पद्धति भावात्मक तात्विक चिंतन पर आधृत न होकर अनुभव, परीक्षण, प्रयोग एवं वर्गीकरण की व्यवस्थित कार्य प्रणाली पर आधृत होती है। वैज्ञानिक पद्धति के सन्दर्भ में बर्नार्ड (Bernard) ने लिखा है, ''विज्ञान की परिभाषा उसमें होने वाली छह प्रमुख प्रक्रियाओं के रूप में की जा सकती है। ये प्रक्रियायें हैं परीक्षण, सत्यापन, परिभाषा, वर्गीकरण, संगठन एवं परिमार्जन। इसी प्रकार **थाउलैस** का मानना है कि ''वैज्ञानिक पद्धति सामान्य नियमों की खोज के लक्ष्य की प्राप्ति हेतु प्रविधियों की एक व्यवस्था है जो कि विभिन्न विज्ञानों में अनेक बातों से भिन्न होते हुए भी एक सामान्य प्रकृति को बनाए रखती है।''

लुण्ड वर्ग ने वैज्ञानिक पद्धति को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि ''मोटे तौर पर वैज्ञानिक पद्धति आंकड़ों का

व्यवस्थित अवलोकन, वर्गीकरण एवं विश्लेषण है।''

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि —

(क) वैज्ञानिक पद्धति ही किसी विषय वस्तु को विज्ञान के रूप में स्थापित करने का प्रमुख आधार है।

(ख) यह पद्धति प्रत्येक विज्ञान में समान है।

(ग) केवल तथ्य ही विज्ञान नहीं है, बल्कि उन तथ्यों का व्यवस्थित संकलन, वर्गीकरण एवं विश्लेषण उन्हें विज्ञान बनाता है।

वस्तुत: वैज्ञानिक पद्धति विज्ञान की समस्त शाखाओं में एक होती है चाहे वह प्राकृतिक विज्ञान हो अथवा सामाजिक विज्ञान।

संक्षेप में वैज्ञानिक पद्धति एक व्यवस्थित प्रक्रिया है, जिसके अन्तर्गत तथ्यों का संकलन, सत्यापन ..र्गीकरण, एवं विश्लेषण किया जाता है। इस व्याख्या का उद्देश्य सामान्य नियमों की खोज या साधारण विवरण प्रस्तुत करना है। जिससे विषयवस्तु को समझा जा सके और उसे नियन्त्रित रूप में पूर्वानुमान के लिए प्रयुक्त किया जा सके। इस दृष्टि से वैज्ञानिक पद्धति द्वारा संकलित ज्ञान ही विज्ञान है।

3.4 वैज्ञानिक पद्धति की विशेषताएँ

वैज्ञानिक पद्धति निश्चित एवं क्रमबद्ध प्रक्रियाओं की व्यवस्था है, जिसके द्वारा ज्ञान का संचय किया जाता है। इस पद्धति के आधार पर हम जिस ज्ञान की खोज करते हैं, वह अपेक्षाकृत अधिक विश्वसनीय होता है। वैज्ञानिक पद्धति की विशेषताओं को हम निम्न प्रकार से देख सकते हैं—

1. **वस्तुनिष्ठता** — विशेष करके सामाजिक विषय वस्तु के अध्ययन में दो प्रकार के दृष्टिकोण हो सकते हैं—**व्यक्तिनिष्ठ, वस्तुनिष्ठ** । व्यक्तिनिष्ठ अध्ययन पक्षपातपूर्ण होता है। इसमें अध्ययनकर्ता कई तरह के पूर्वाग्रहों से ग्रसित होता है। निष्कर्षों की विश्वसनीयता के लिये वस्तुनिष्ठ अध्ययन आवश्यक है। किसी भी अध्ययन का वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण अध्ययनकर्ता के वैयक्तिक मूल्य एवं भावनाओं से स्वतन्त्र तथा निष्पक्ष होता है। इस सन्दर्भ में **वियर्स्टेड** (Bierstedt) ने कहा है कि वस्तुनिष्ठ का अर्थ है कि वैज्ञानिक निष्कर्ष, वैज्ञानिकों की प्रजाति, वर्ण, विश्वास, व्यवसाय, राष्ट्रीयता, धर्म, नैतिकता, और राजनीतिक अभिरुचियों से स्वतन्त्र हैं। अर्थात घटनाएँ जैसी हैं वैसे ही उनका अध्ययन किया जाए। भौतिक विज्ञानों में वस्तुनिष्ठता सरल है, जबकि सामाजिक विज्ञानों में यह एक चुनौती का विषय है क्योंकि यहाँ मनुष्यों द्वारा मनुष्यों के व्यवहार का अध्ययन किया जाता है, इसमें व्यक्ति की आदतें, मूल्य, रुचियाँ शामिल होती हैं।

2. **सत्यापनशीलता**—सत्यापनशीलता वैज्ञानिक पद्धति की एक प्रमुख विशेषता है। इसके द्वारा प्राप्त निष्कर्ष किसी समय भी सत्यापित किये जा सकते हैं। वैज्ञानिक पद्धति द्वारा प्राप्त निष्कर्षों की पुन: परीक्षा संभव है। इसके द्वारा उसकी विश्वसनीयता की जांच की जा सकती है। सत्यापन के कार्यों की आसानी के लिए ही एक वैज्ञानिक अपने अध्ययन की सम्पूर्ण प्रक्रिया एवं निष्कर्षों का प्रतिवेदन प्रस्तुत करता है। वे अध्ययन जिनका पुन: परीक्षण सम्भव नहीं है वैज्ञानिकता की कसौटी पर खरे नहीं उतरते।

3. **निश्चितता**—वैज्ञानिक पद्धति द्वारा निश्चित आधारों पर निश्चित तथ्यों को ढूँढने का प्रयास किया जाता है। अध्ययन यदि वस्तुनिष्ठ है और पुन: परीक्षण द्वारा उसका सत्यापन किया जा सकता है तो, प्राप्त निष्कर्ष 'निश्चित' होंगे। वैज्ञानिक पद्धति में अस्पष्ट एवं अनिश्चित कथनों का कोई औचित्य नहीं होता। अत: निश्चितता वैज्ञानिक पद्धति की एक प्रमुख विशेषता के रूप में मानी गयी है।

4. तार्किकता (Logicality) : वैज्ञानिक पद्धति भावना या संवेग से उत्पन्न विश्वासों पर आधारित नहीं है। इसमें तार्किक विचारों की प्रधानता होती है। तार्किकता का अर्थ है तथ्यों पर आध्रृत विवेकशील विश्लेषण। अनुसंधानकर्ता तथ्यों को एकत्र करके उनमें तर्कसम्मत संबंध स्थापित करता है। यदि तथ्य तार्किक रूप से ग्रहण करने योग्य हों तो वैज्ञानिक उन्हें स्वीकार करता है अन्यथा नहीं।

5. कार्य-कारण सम्बन्ध—वैज्ञानिक पद्धति के अन्तर्गत कार्यकारण सम्बन्ध की व्याख्या की जाती है। अब तक की मीमांसा के आधार पर हम यह जान चुके हैं कि विश्व में घटने वाली प्रत्येक घटना का कोई न कोई कारण अवश्य विद्यमान होता है। अकारण कोई घटना नहीं घटती। वैज्ञानिक किसी कार्य के पीछे छुपे हुए इसी 'कारण' की व्याख्या करते हैं। कार्य-करण के सम्बन्ध की व्याख्या के कारण ही वैज्ञानिक ज्ञान तार्किक एवं अनुभव सिद्ध होता है।

6. सामान्यता (Generality)—वैज्ञानिक पद्धति किसी घटना विशेष का अध्ययन न करके एक सत्य एवं सामान्य प्रवृत्ति की खोज पर बल देती है और यह प्रयास किया जाता है कि विभिन्न तथ्यों के आधार पर सामान्य सिद्धान्त एवं नियमों का प्रतिपादन एवं परीक्षण करे। यदि हम कहते है कि अमुक व्यक्ति 'X' का आई. क्यू. उच्च है, तो यह एक विशिष्ट व्यक्ति के बारे में कथन है। किन्तु इसी प्रकार कई व्यक्तियों के अध्ययन के आधार पर हम किसी वर्ग या क्षेत्र के बारे में हम एक सामान्य निष्कर्ष प्राप्त करते हैं तो यह एक सामान्य वैज्ञानिक नियम बन जाता है। तात्पर्य यह है कि वैज्ञानिक पद्धति के अन्तर्गत सम्मिलित इक... ्यक्ति विशेष न होकर समस्त वर्ग की प्रतिनिधि होती है।

7. पूर्वानुमान अथवा भविष्यवाणी की क्षमता—उपरोक्त विशेषताओं के आधार पर यह कहा जाता है कि वैज्ञानिक पद्धति में भविष्यवाणी करने की क्षमता होती है। जब वैज्ञानिक किसी भी घटना के कारणों की खोज कर उसके बारे में, सामान्य नियम एवं सिद्धान्त प्राप्त कर लेता है, तब उसके आधार पर वह वैसी ही दशाओं में वैसी ही घटना के घटित होने के बारे में पूर्वानुम लगा सकता है। जैसे यदि यह कहा जाय कि जिस समाज में व्यक्ति की समूह के साथ एकता कम होती है, वहाँ आत्महत्या की प्रवृत्ति अधिक होती है, तो जब भी वैसी परिस्थिति आयेगी आत्महत्या बढ़ेगी इस तरह की भविष्यवाणी की जा सकती है।

8. आनुभविकता (Empirical) —वैज्ञानिक पद्धति की एक प्रमुख विशेषता उसका आनुभाविक होना है। इसका अर्थ है कि वैज्ञानिक अपने तथ्यों को इन्द्रियानुभव के आधार पर स्वीकार करता है। वैज्ञानिक पद्धति में वे ही तथ्य स्वीकार किये जाते हैं जो अनुभव और अवलोकन के आधार पर पुनःपरीक्षित किये जा सकते हैं।

3.5 वैज्ञानिक पद्धति के कार्य

(क) वैज्ञानिक पद्धति के द्वारा किसी भी विषय वस्तु को समझने एवं वर्गीकृत करने का प्रयास किया जाता है। तथ्यों के संकलन के आधार पर घटना के विभिन्न पक्षों को वर्णित करना, उनके प्रकारों एवं विविधताओं को स्पष्ट करना। वैज्ञानिक पद्धति का एक महत्वपूर्ण कार्य है।

(ख) तथ्यों के आधार पर उनके पारस्परिक सम्बन्धों की अर्थपूर्ण व्याख्या इसका दूसरा महत्वपूर्ण कार्य है। विज्ञान केवल विभिन्न तथ्यों का ढेर नहीं है बल्कि यह उन तथ्यों के अर्थपूर्ण सम्बन्धों की खोज भी है जिससे सामान्य सिद्धान्तों एवं नियमों का विकास किया जा सके। प्रत्येक वैज्ञानिक अध्ययन सिद्धान्तों की खोज एवं स्थापना के उद्देश्य से प्रेरित होता है।

(ग) विषयवस्तु की प्रकृति, स्वरूप एवं विविधताओं को समझकर तथा उनके अर्थपूर्ण विश्लेषण एवं सिद्धान्तों के आधार पर एक वैज्ञानिक अपनी विषयवस्तु के बारे में पूर्वानुमान लगा सकता है तथा उसके सम्बन्ध में भविष्यवाणी कर सकता है।

अत: प्रत्येक वैज्ञानिक अध्ययन का उद्देश्य घटनाओं का बोध तथा वर्णन कर उनकी व्याख्या एवं भविष्यवाणी तथा नियन्त्रण करना है।

3.6 सामाजिक घटना और वैज्ञानिक पद्धति

प्राकृतिक घटनाएं एवं सामाजिक घटनाएँ समान नहीं होतीं। यहाँ पर एक महत्वपूर्ण सवाल उठता है कि क्या प्राकृतिक विज्ञानों की पद्धति सामाजिक घटनाओं के अध्ययन में सफल हो सकती है, या फिर क्या सामाजिक घटनाओं का विज्ञान हो सकता है। जब हम विज्ञान की बात करते हैं तो लोगों के जहन में भौतिक विज्ञान, रसायनशास्त्र आदि प्राकृतिक विज्ञान आते हैं।

समाज शास्त्र सामाजिक सम्बन्धों का अध्ययन करता है। इसी प्रकार अन्य सामाजिक विज्ञान भी मानव व्यवहार एवं सामाजिक जीवन के विभिन्न पक्षों का अध्ययन करते हैं। विज्ञान को समझने के दो दृष्टिकोण हैं—

(1) विज्ञान एक व्यवस्थित ज्ञान है जिसका संचय एक निश्चित वैज्ञानिक प्रणाली द्वारा किया जाता है।

(2) विज्ञान एक अध्ययन पद्धति है, जिसके द्वारा ज्ञान का संचय एवं सत्यापन किया जाता है। दोनों ही दृष्टिकोणों से यह स्पष्ट होता है कि विज्ञान की मान्यता एक पद्धति के रूप में है जो सभी विज्ञानों में संभवत: समान है। लेकिन इस सम्बन्ध में जब प्राकृतिक एवं सामाजिक विज्ञान की विषय वस्तु की तुलना की जाती है, तब सामाजिक विज्ञान के विज्ञान होने के दावे पर सवाल उठने लगता है।

इस सम्बन्ध में **डिल्थे** का मानना था कि सामाजिक घटनाओं का अध्ययन प्राकृतिक विज्ञान की पद्धति से नहीं किया जा सकता क्योंकि दोनों की विषय वस्तु की प्रकृति एवं दृष्टिकोण भिन्न है। प्राकृतिक विज्ञान तथ्यों का अध्ययन करते हैं और उनके विश्लेषण पर बल देते हैं जबकि सामाजिक विज्ञान का सम्बन्ध अर्थपूर्ण व्यवहार से है। डिल्थे के इस विचार से नवकांतवादी सामाजशास्त्री रिकर्ट (Rickert) सहमत नहीं हैं। इनका मानना था कि घटना या विषयवस्तु अलग हो सकते हैं लेकिन उनकी अध्ययन पद्धति में समानता संभव है। अत: प्राकृतिक घटनाओं की तरह सामाजिक घटनाओं का वैज्ञानिक अध्ययन संभव है।

समाज शास्त्र में भी सामाजिक घटनाओं के विश्लेषण के सम्बन्ध में दोनों प्रकार के दृष्टिकोणों का विकास हुआ—

एक ओर काम्ट, दुर्खीम आदि प्रत्यक्षवादी विचारक थे जिन्होंने सामाजिक विषयवस्तु के अध्ययन के लिए प्राकृतिक विज्ञान की पद्धति पर ही बल दिया। इन विद्वानों के समक्ष सामाजिक विषयवस्तु के अध्ययन को एक प्राकृतिक विज्ञान की तरह स्थापित करने का सवाल था।

दूसरी ओर मैक्सवेबर ने सामाजिक घटनाओं के अध्ययन के लिए वर्स्टेहेन (Verstehen) पद्धति का सुझाव दिया और कहा कि सामाजिक घटनाओं की प्रकृति भौतिक जगत के तथ्यों की तरह केवल बाह्य एवं वस्तुपरक विशेषताओं के अध्ययन तक ही सीमित नहीं है। इसका एक व्यक्तिपरक अर्थ भी है जो आंतरिक पक्षों के बोध से ही विश्लेषित किया जा सकता है।

3.7 सामाजिक अनुसंधान के प्रमुख चरण

सामाजिक अनुसंधान चाहे किसी भी प्रकार का हो उसकी प्रकृति वैज्ञानिक ही होती है। एक अनुसंधान की प्रक्रिया पूर्ण होने के लिये कई चरणों से होकर गुजरना पड़ता है जैसे—पी. वी. यंग ने सामाजिक अनुसंधान के निम्न चरण बताए हैं—

(क) अध्ययन समस्या का चुनाव

(ख) उप कल्पना का निर्माण

(ग) तथ्यों का संग्रह

(घ) तथ्यों का वर्गीकरण

(ङ) तथ्यों का व्यवस्थित सारणीयन

(च) सामान्यीकरण

(क) अध्ययन समस्या का चुनाव— अनुसंधान का यह सबसे प्राथमिक और महत्वपूर्ण चरण है । किसी भी अनुसंधान का सबसे महत्वपूर्ण सवाल होता है, समस्या का चुनाव कैसे किया जाय ? अनुसंधान से सम्बन्धित विषय का चुनाव यदि दोषपूर्ण हो गया तो अनुसंधानकर्ता किसी भी स्थिति में अपने लक्ष्य की प्राप्ति नहीं कर सकता है। विषय का चुनाव करते समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि अध्ययन विषय ऐसा हो जिस पर निश्चित समय में उपलब्ध सामग्री की सहायता से अध्ययन कार्य को पूरा किया जा सके। इस सम्बन्ध में पी. वी. यंग ने चार सावधानियों का उल्लेख किया है—

1. विषय ऐसा हो जिसे अनुसंधानकर्ता आसानी से समझ सके और नियत समय में पूरा कर सके।
2. यदि उस विषय से सम्बन्धित कोई अन्य शोध कार्य न किये गये हों तो विषय का अध्ययन क्षेत्र बहुत अधिक व्यापक नहीं होना चाहिए।
3. यह ध्यान रखना चाहिये कि चुने गये विषय का अध्ययन उपलब्ध प्रविधियों की सहायता से सम्भव है अथवा नहीं।
4. यह भी देखना आवश्यक है कि इस विषय पर वैज्ञानिक शोध करने से किस सीमा तक यथार्थ निष्कर्ष प्रस्तुत किए जा सकते हैं।

इसका तात्पर्य यह है कि ऐसे विषय का चयन हीं करना चाहिए जिससे सम्बन्धित प्रामाणिक तथ्य उपलब्ध न हो सकें।

(ख) उपकल्पना का निर्माण—वैज्ञानिक अध्ययन का प्रारम्भ निश्चित रूप से समस्या निर्धारण और उपकल्पनाओं के विकास के साथ होता है। समस्या निर्धारण का विशिष्टतम रूप उपकल्पनाओं का विकास है। यद्यपि यह प्रत्येक दशा में आवश्यक नहीं हो सकता है, तथापि उपकल्पनाओं का निर्माण वैज्ञानिक अध्ययन के लिये महत्वपूर्ण अवश्य है । जब हमें किसी नई बात की खोज करनी होता है तो हम पूर्ण अज्ञान की दशा में कभी भी आगे नहीं बढ़ सकते। हम सबसे पहले अपने ज्ञान, सूचना तथा अनुभव के आधार पर एक सम्भावित कार्य-कारण सम्बन्ध स्थिर करते हैं। इसके पश्चात् उचित सामग्री एकत्र करके उसकी परीक्षा करते हैं। हमारी कल्पना पूर्णरूपेण सत्य एवं असत्य दोनों हो सकती है। लेकिन यह अनुसंधान को आगे बढ़ाने में सहायता अवश्य कर सकती है।

बिना उपकल्पना के अनुसंधान अपने रास्ते से भटक सकता है। उपकल्पना ही अनुसंधान का मार्ग निर्धारित करती है।

लुण्डवर्ग ने उपकल्पना को परिभाषित करते हुए कहा है कि ' 'उपकल्पना एक काम चलाऊ निष्कर्ष है जिसकी वैधता की परीक्षा अभी शेष है। बिल्कुल प्रारम्भिक स्तर पर उपकल्पना केवल एक अनुमान, विचार अथवा कल्पना हो सकती है, जिसके आधार पर हम आगे खोज कर सकते हैं।

गुडे तथा हाट — ने उपकल्पना को एक प्रस्ताव बताया है जिसकी सत्यता का पता लगाने के लिए परीक्षा की जा सकती है।

यहाँ पर एक महत्वपूर्ण बात जान लेना आवश्यक है कि 'सिद्धान्त' और उपकल्पना दोनों एक नहीं हैं । यद्यपि दोनों परस्पर बहुत अधिक सम्बन्धित हैं। विलियम जार्ज ने कहा है कि सिद्धान्त एक विस्तृत उपकल्पना है। उपकल्पना का जन्म सिद्धान्त से होता है, और अनेक परीक्षित उपकल्पनाओं से परस्पर सम्बन्धित एक सिद्धान्त का निर्माण होता है। अत: उपकल्पना सिद्धान्त का एक अंग तथा उसका एक प्रारम्भिक रूप है और दोनों का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है।

उपकल्पना के स्रोत—

गुडे तथा हाट ने उपकल्पना के निम्न स्रोत बताये हैं—

(क) सामान्य संस्कृति —संस्कृति का सामान्य ढाँचा न केवल उपकल्पना के निर्माण में सहायक होता है, बल्कि उसकी गतिविधि का निर्देश भी करता है। किसी भी समाज की संस्कृति का वहाँ के लोगों की विचारधारा तथा उनके दृष्टिकोणों पर बहुत प्रभाव पड़ता है और जो भी उपकल्पनाएं बनायी जाती हैं वे उनसे पर्याप्त सीमा तक प्रभावित होती हैं।

(ख) व्यक्तिगत अनुभव—व्यक्तिगत अनुभव उपकल्पना के निर्माण में एक प्रमुख अंग होता है। तथ्य तो सभी समाज में उपलब्ध रहते ही हैं कोई विरला व्यक्ति ही एक विशिष्ट दृष्टिकोण से देखकर एक नई उपकल्पना का निर्माण करता है। जैसे न्यूटन से पहले भी लोगों ने सेब को जमीन पर गिरते देखा था, लेकिन उसके आधार पर गुरुत्वाकर्षण की कल्पना केवल न्यूटन ने ही की थी।

(ग) उपमा अथवा तुलना—उपमा उपकल्पनाओं के निर्माण तथा घटना में किसी काम चलाऊ नियम की खोज में अत्यन्त मार्गदर्शक है। कभी-कभी दो तथ्यों के बीच समानता के कारण नई उपकल्पना का जन्म होता है।

हम जो बात एक क्षेत्र में देखते हैं प्राय: उसी को हम अन्य क्षेत्रों में लागू करने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार अनेक सिद्धान्तों तथा उपकल्पनाओं का जन्म होता है।

संक्षेप में हम उपकल्पना के बारे में कह सकते हैं कि —

1. उपकल्पना अध्ययन को निश्चयात्मकता प्रदान करती है।
2. उपकल्पना अनुसंधान की दिशा का निर्देश करती है।
3. उपकल्पना सम्बन्धित तथ्यों के चुनाव में सहायक होती है।
4. उपकल्पना निष्कर्ष निकालने तथा उसकी सत्यता की जांच करने में सहायक सिद्ध होती है।
5. गुडे तथा हाट का मानना है कि बिना उपकल्पना के अनुसंधान एवं अनिर्दिष्ट विचारहीन भटकने के समान है।

(ग) तथ्यों का संग्रह— सामाजिक अनुसंधान का तीसरा प्रमुख चरण है आकड़ों का निरीक्षण एवं संकलन। समस्या के चुनाव और उपकल्पना के निर्माण के बाद अनुसंधान में तथ्यों या आकड़ों

का संकलन आवश्यक है। इनका संकलन एवं अंकन पक्षपात रहित ढंग से किया जाना चाहिए। इसी आधार पर हम अपने अध्ययन को वस्तुनिष्ठ बना सकते हैं। तथ्य जिस रूप में होते हैं उनको उसी रूप में संकलित करना चाहिए। इनके संकलन के लिये समाज शास्त्र में कई प्रविधियाँ प्रचलित हैं। जैसे अवलोकन, प्रश्नावली, वैयक्तिक अध्ययन, अनुसूची, साक्षात्कार इत्यादि। अनुसंधानकर्ता को विषय वस्तु एवं समस्या के आधार पर तथ्य संकलन की विधियों का चुनाव करना होता है। अर्थात् जो विधि अधिक उपयोगी होती है उसी विधि का चुनाव किया जाना चाहिए।

(घ) **तथ्यों का वर्गीकरण**—तथ्यों या आंकड़ों के संकलन के पश्चात् उनका वर्गीकरण किया जाता है जिससे वे अर्थपूर्ण बनाये जा सकें। तथ्यों को अर्थपूर्ण बनाने के लिये आवश्यक है कि उन्हें समानता, असमानता तथा प्रवृत्ति के आधार पर वर्गीकृत या श्रेणीबद्ध किया जाये। वर्गीकरण कर देने पर तथ्यों की जटिलता दूर होती है तथा साथ ही साथ वे सरल, स्पष्ट और अर्थपूर्ण बन जाते हैं। तथ्यों का वर्गीकरण वैज्ञानिक निष्कर्ष, सामान्यीकरण एवं उपकल्पना-परीक्षण के लिए आवश्यक चरण है। वर्गीकरण के आधार पर अध्ययन के अन्तर्गत विषय की प्रकृति स्पष्ट की जाती है तथा तुलनात्मक विश्लेषण आसानी से किया जा सकता है।

(ङ) **तथ्यों का व्यवस्थित सारणीयन (Tabulation) :**— तथ्यों का वर्गीकरण कर लेने के पश्चात् उनका सही ढंग से सारणीयन करना आवश्यक होता है। सारणीयन का तात्पर्य है, विभिन्न तथ्यों को संख्यात्मक रूप में अनेक पदों में इस प्रकार व्यवस्थित करना जिससे एक विशेष वर्ग से सम्बन्धित बहुत सी संख्याओं अथवा विशेषताओं को संक्षिप्त सारणियों की सहायता से समझा जा सके। यद्यपि यह एक ऐसा कार्य है जिसमें अनुसंधानकर्ता का मन कम लगता है। लेकिन यह कार्य जितना अधिक सावधानीपूर्वक किया जाता है, वैज्ञानिक निष्कर्ष प्रा करने की संभावना उतनी ही अधिक हो जाती है।

(च) **सामान्यीकरण :**—सामाजिक अनुसंधान में अन्तिम चरण सामान्यीकरण का होता है। इस चर में वर्गीकृत तथ्यों के विश्लेषण के आधार पर सामान्य निष्कर्षों तक पहुंचा जाता है। सामाजिक अनुसंधान में तथ्यों के वर्गीकरण एवं तुलनात्मक विश्लेषण के कारण वैज्ञानिक सामान्यीकरण का मार्ग सरल हो जाता है। अनुसंधानकर्ता इसके आधार पर विविध तथ्यों के बीच एक सामान्य प्रकृति की खोज करता है। इस प्रवृत्ति के विश्लेषण के आधार पर वैज्ञानिक सिद्धान्तों एवं नियमों का प्रतिपादन किया जाता है।

इस तरह सामान्यीकरण के आधार पर सिद्धान्तों एवं नियमों का निर्माण होता है। वास्तविक अर्थों में सिद्धान्त उपकल्पनाओं, अवधारणाओं एवं तथ्यों के सामान्यीकृत एवं व्यवस्थित सम्बन्ध को स्पष्ट करता है। ये सामान्यीकरण जब अधिक व्यापक या सार्वभौम स्तर पर भी सत्यापित होते हैं, तब उन्हें वैज्ञानिक नियम का दर्जा दिया जाता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सामाजिक अनुसंधान एक लम्बी प्रक्रिया है तथा इसके प्रत्येक स्तर पर अनुसंधानकर्ता को अनेक सावधानियां ध्यान में रखनी पड़ती हैं। अनुसंधान के विभिन्न चरणों के प्रति शोधकर्ता जितना अधिक व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाता है, उसकी सफलता की संभावना उतनी ही अधिक बढ़ जाती है।

3.8 बोध प्रश्न

टिप्पणी 1) प्रश्नों का उत्तर नीचे खाली स्थानों में लिखें ।

2) अपने उत्तरों का मिलान इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से करें।

प्र०-1 वैज्ञानिक अध्ययन से आप क्या समझते हैं ?

प्र०-2 वैज्ञानिक पद्धति की मुख्य विशेषताएँ बताइये ?

प्र०-3 तथ्य संकलन की प्रमुख विधियाँ कौन-कौन सी हैं ?

प्र०-4 उपकल्पना का सामाजिक अनुसंधान में महत्व बताइये ?

प्र०-5 सामान्यीकरण से आपका क्या तात्पर्य है ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्र०-1 "विज्ञान का सम्बन्ध वैज्ञानिक पद्धति से है न कि अध्ययन विषय से" यह विचार किसका है।

(a) लुण्डवर्ग (b) ग्रीन (c) जान मिल (d) स्टुआर्ट चेंज

प्र०-2 निम्न में से किस विचारक ने प्रत्यक्ष की धारणा प्रस्तुत की है?

(a) मैलिनोस्की (b) पी० वी० यंग (c) अगस्त काम्ट (d) मिल

प्र०-3 विज्ञान की प्रमुख विशेषता है—

(a) आनुभविकता (b) विश्वसनीयता (c) वस्तुनिष्ठता (d) उपरोक्त सभी

प्र०-4 वेर्स्टेहेन पद्धति का जन्मदाता कौन है ?

(a) मिल (b) स्टुअर्ट चेन्ज (c) दुर्खीम (d) मैक्स वेवर

प्र०-5 उपकल्पना एक काम चलाऊ निष्कर्ष है यह किसकी मान्यता है—

(a) बेवर (b) मैनहाइम (c) दुर्खीम (d) लुण्डबर्ग

3.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

(1) (d)

(2) (c)

(3) (d)

(5) (d)

इकाई 4 सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र व सामाजिक अनुसंधान में व्याप्त कठिनाइयाँ

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 सामाजिक अनुसंधान के प्रेरक तत्व

4.3 सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र

4.4 सामाजिक अनुसंधान की उपयोगिता

4.5 वस्तुनिष्ठता की अवधारणा

4.6 सामाजिक अनुसंधान में वस्तुनिष्ठता की आवश्यकता

4.7 वस्तुनिष्ठता प्राप्त करने के माध्यम

4.8 सामाजिक अनुसंधान में वस्तुनिष्ठता की समस्या

4.9 सारांश

4.10 बोध प्रश्न

4.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र एवं अवधारणा का उल्लेख कर सकेंगे।
- सामाजिक अनुसंधान की उपयोगिता का वर्णन कर सकेंगे।
- सामाजिक अनुसंधान में वस्तुनिष्ठता की आवश्यकता का उल्लेख कर सकेंगे।
- सामाजिक अनुसंधानों में वस्तुनिष्ठता प्राप्त करने में आने वाली समस्याओं की विवेचना कर सकेंगे।

4.1 प्रस्तावना

इस इकाई 4 के अन्तर्गत सर्वप्रथम उन तत्वों की चर्चा की गयी है। जो सामाजिक अनुसंधान के लिये प्रेरणा का कार्य करते हैं। इसमें बताया गया है कि सामाजिक अनुसंधान को कैसे आगे बढ़ाया जा सकता है। उसके बाद अध्ययन विषय के बारे में चर्चा की गई है। विषय वस्तु की भी चर्चा इसी इकाई के अन्तर्गत की गयी है। सामाजिक अनुसंधान की उपयोगिता का वर्णन करने के बाद सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र में आने वाली समस्या पर विस्तृत चर्चा विद्यमान है। वस्तुनिष्ठता की अवधारणा, इसकी आवश्यकता तथा सामाजिक अनुसंधान में इसे प्राप्त करने के माध्यम की चर्चा की गयी है। अंत में सामाजिक अनुसंधान में वस्तुनिष्ठता की समस्या पर भी प्रकाश डाला गया है। इस इकाई के अंत में सारांश, फिर बोध प्रश्नों के माध्यम से बच्चों का ज्ञानवर्धन करने का उत्कृष्ट प्रयास किया गया है।

4.2 सामाजिक अनुसंधान के प्रेरक तत्व

कोई भी कार्य करने के पीछे कोई न कोई प्रेरणा अवश्य होती है। सामाजिक अनुसंधान जैसा कार्य बिना किसी प्रेरक तत्व के सम्पादित हो ही नहीं सकता। हम केवल ज्ञान की वृद्धि या विस्तार की दृष्टि से ही सामाजिक अनुसंधान की व्याख्या नहीं करते।

पी. वी. यंग (1951) ने सामाजिक अनुसंधान को प्रेरित करने वाले 4 प्रमुख तत्वों की चर्चा की है—

(क) अज्ञात के प्रति जिज्ञासा—जिज्ञासा मनुष्य का प्रमुख गुण है जो उसको अपने आस-पास की वस्तुओं के प्रति ज्ञान प्राप्त करने के लिये प्रेरित करती है जिज्ञासा की प्रवृत्ति समाज के सभी आयु के वर्गों में देखी जाती है—

पी. वी. यंग (1951) ने लिखा है कि जिज्ञासा मनुष्य का मौलिक गुण है तथा मनुष्य के पर्यावरण की खोज के लिए एक बहुत बड़ी चालक शक्ति है। यही जिज्ञासा की प्रवृत्ति मनुष्य को सामाजिक अनुसंधान के लिये प्रेरित करती है। अज्ञात वस्तुओं की खोज की लालसा ही सामाजिक अनुसंधान को प्रेरित करती है। एक वैज्ञानिक जब अज्ञात के विषय में जानकारी करता है तो एक व्यवस्थित विधि अपनाता है अर्थात् वैज्ञानिक तरीके से सामाजिक अनुसंधान करता है।

(ख) सामाजिक घटनाओं के मध्य कार्य-कारण को समझने की इच्छा — एक सामान्य मनुष्य से लेकर वैज्ञानिक तक कोई भी यह बात मानने को तैयार नहीं है कि कोई भी घटना अकारण घटती है। हर घटना के पीछे कोई न कोई कारण अवश्य विद्यमान होता है। मनुष्य की यह स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है कि वह हर घटना के पीछे निहित कारण की खोज करता है। **पी. वी. यंग** का मानना है कि मनुष्य की यह प्रवृत्ति किसी भी वैज्ञानिक शोध के पीछे सबसे शक्तिशाली प्रेरक तत्व है। समाज में जब भी कोई घटना घटित होती है तो उसके पीछे छिपे कारणों की खोज करना अनुसंधान का विषय होता है।

(ग) नवीन एवं अप्रत्याशित परिस्थितियाँ — पिछली इकाइयों में हमने यह पढ़ा है कि सामाजिक अनुसंधान नये तथ्यों की खोज करता है, नये ज्ञान का सृजन करता है तथा उसकी वैधता को प्रमाणित करता है। समाज में नित्य नवीन घटनाएं जन्म लेती रहती हैं। इन घटनाओं की व्याख्या समाजशास्त्रियों के लिए एक चुनौती होती है, जो उसे अनुसंधान के लिए प्रेरित करती है। इस प्रकार से नवीन एवं अप्रत्याशित घटनाएं अनुसंधान के लिए पृष्ठभूमि तैयार करती हैं।

(घ) नवीन विधियों की खोज एवं पुरानी विधियों के परीक्षण की आवश्यकता— कहा जाता है कि आवश्यकता आविष्कार की जननी होती है समाज और समाजशास्त्र दोनों के विकास के लिए नवीन विधियों की खोज एवं उनका परीक्षण आवश्यक है। सामाजिक अनुसंधान केवल निष्कर्षों की खोज नहीं है, बल्कि यह उन विधियों की खोज एवं परीक्षण का भी प्रयास है, जिनसे अधिक विश्वसनीय निष्कर्ष, प्राप्त किये जा सकें। समाज वैज्ञानिक नित्य नवीन, उपयुक्त एवं विश्वसनीय विधि की खोज का प्रयत्न करता है तथा साथ ही साथ पुरानी विधियों की सार्थकता एवं विश्वसनीयता का परीक्षण भी करता है। उसका यही प्रयास सामाजिक अनुसंधान के लिए प्रेरणा का स्रोत होता है।

4.3 सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र

सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र व सामाजिक अनुसंधान में व्याप्त कठिनाइयाँ

सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र से तात्पर्य है कि सामाजिक शोध किन विषयों के अध्ययन से सम्बन्धित है। अर्थात् किन - किन विषयों का अध्ययन इसके अन्तर्गत आता है। मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि सम्पूर्ण सामाजिक जीवन तथा सामाजिक प्रक्रियाएं इसके अध्ययन का विषय हैं। **पी० वी० यंग** ने सामाजिक अनुसंधान के अध्ययन क्षेत्र को निम्न ढंग से समझाया है।

— सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र के अन्तर्गत वे सभी शोध कार्य आते हैं जिनका सम्बन्ध सामाजिक जीवन की संरचना को बनाने वाली विभिन्न इकाइयों तथा उनके विभिन्न प्रकार्यों से है।

— सामाजिक संरचना का निर्माण करने वाली इकाइयों अथवा तत्वों का अध्ययन करते समय जहाँ एक ओर यह देखने का प्रयत्न किया जाता है कि एक विशेष सामाजिक संरचना में उनकी स्थिति क्या है, वहीं यह भी देखा जाता है कि वे इकाइयां किन कार्यों के आधार पर एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। इसके फलस्वरूप किसी भी विशेष सामाजिक संरचना अथवा उपसंरचना की सम्पूर्ण प्रकृति को समझना सम्भव हो जाता है। भारत में विभिन्न जनजातियों, ग्रामीण समुदायों, कृषक समाज तथा जाति व्यवस्था से सम्बन्धित जो अनुसन्धान किये गये हैं वे सब इसी श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं। चार्ल्स कुले, थामस जैननकी, रेडाक्लिफ ब्राउन तथा दुर्खीम द्वारा किये गये शोध कार्य भी इसी श्रेणी के अन्तर्गत आते है।

— सामाजिक अनुसंधान का क्षेत्र उन विषयों से भी सम्बन्धित है, जिनकी सहायता से अध्ययन के नये आयामों को ढूंढा जा सके तथा नये सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया जा सके। इस प्रकार के अनुसंधान कार्य मुख्यत: अनुभवसिद्ध तथ्यों पर आधारित होते हैं तथा उनका उद्देश्य किसी, विषय से सम्बन्धित भावी प्रवृत्तियों को ज्ञात करना होता है। जैसे भारत में जेल सुधार, बाल अपराध, परिवार व्यवस्था, अन्तर्रजातीय विवाह आधुनिकीकरण से सम्बन्धित प्रवृत्तियों तथा पुनर्वास से सम्बन्धित जो अनुसंधान कार्य किये गये हैं उनमें से अधिकांशत: शोध कार्यों का उद्देश्य नये सिद्धान्तों का प्रतिपादन करके यह ज्ञात करना है कि कुछ विशेष प्रक्रियाएं अथवा प्रयत्न भविष्य में एक विशेष सामाजिक व्यवस्था को किस प्रकार प्रभावित करेंगे। अत: उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि आज सामाजिक अनुसंधान का क्षेत्र व्यापक होता जा रहा है। सामाजिक जीवन का कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं है जिस पर शोध कार्य करना सम्भव न हो इस दृष्टि कोण से अमेरिकन सोशियालॉजिकल सोसाइटी ने उन अध्ययन विषयों का उल्लेख किया है जो सामाजिक अनुसंधान के अन्तर्गत आते हैं—

1- मानव व्यवहारों तथा व्यक्तित्व का अध्ययन

2- विभिन्न समूहों तथा जनसंख्या सम्बन्धी अध्ययन

3- सामाजिक संघटन संरचना तथा विभिन्न संस्थाओं का अध्ययन

4- सामुदायिक परिस्थितियों का अध्ययन

5- ग्रामीण समुदायों, ग्रामीण जनसंख्या, ग्रामीण पारिस्थितिकी एवं ग्रामीण व्यक्तित्व का अध्ययन।

6- सामूहिक व्यवहार का अध्ययन, जिसके अन्तर्गत संचार के विभिन्न साधनों, प्रचार, जनमत, चुनाव, युद्ध तथा क्रान्ति आदि से सम्बन्धित अध्ययनों का भी समावेश है।

7- समाज में पायी जाने वाली सहयोगी तथा असहयोगी प्रक्रियाओं का अध्ययन जिसके अन्तर्गत धर्म, शिक्षा, कानून, सामाजिक परिवर्तन तथा सामाजिक विकास आदि का अध्ययन आता है।

8- विभिन्न प्रकार की सामाजिक समस्यायें सामुदायिक अनुसंधान के अन्तर्गत आती हैं।

9- पुराने सिद्धान्तों तथा पद्धतियों की पुन: परीक्षा एवं नये सिद्धान्तों और नई पद्धतियों की खोज सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र के अन्तर्गत आते हैं। यहाँ पर हम सारांश के तौर पर कह सकते हैं कि सामाजिक अनुसंधान का अध्ययन क्षेत्र बहुत व्यापक है। इसके अन्तर्गत सभी प्रकार की सामाजिक घटनाओं को सम्मिलित किया जाता है। वास्तव में समाज एक जटिल व्यवस्था है जिसमें एक दूसरे से भिन्न अनेक प्रकार की प्रक्रियाओं, व्यवस्था तथा व्यवहारों का समावेश होता है। स्वयं सामाजिक घटनाओं की प्रकृति बहुत गतिशील होने के कारण भी सामाजिक अनुसंधान का अध्ययन क्षेत्र बहुत व्यापक हो जाता है।

4.4 सामाजिक अनुसंधान की उपयोगिता

भारतीय समाज आज परिवर्तन के दौर से गुज़र रहा है। नियोजन की प्रक्रिया लगातार चल रही है। परिवर्तन ने जहाँ एक ओर मानवीय मूल्यों एवं सामाजिक संरचना को एक नवीन रूप दिया है, वहीं इसके फलस्वरूप समाज में अनेक नवीन समस्याओं का भी प्रादुर्भाव हुआ है। सामाजिक जीवन जैसे - जैसे जटिल होता जा रहा है। वैसे - वैसे उसके अध्ययन की आवश्यकता भी बढ़ती जा रही है। सामाजिक अनुसंधान की उपयोगिता इसी तथ्य से स्पष्ट की जा सकती है कि आज अनुसंधान के द्वारा ही विभिन्न प्रकार की समस्याओं का निष्पक्ष रूप से वैज्ञानिक अध्ययन करके प्रमाणिक तथ्यों को प्राप्त किया जा सकता है। आज जैसे-जैसे सामाजिक नियोजन के प्रति हमारी जागरूकता बढ़ती जा रही है, सामाजिक अनुसंधान के द्वारा ही उपयोगी ज्ञान प्राप्त करके मानवीय कल्याण में वृद्धि करना संभव है। आज सामाजिक अनुसंधान की उपयोगिता समाज के सभी क्षेत्रों में बढ़ती जा रही है। अनुसंधान एक विकसित राष्ट्र का निर्माण करने के लिए विषय सामग्री की व्यवस्था कराता है। इस दृष्टिकोण से अनुसंधान की उपयोगिता को समझा जा सकता है—

→ नवीन ज्ञान की प्राप्ति सामाजिक अनुसंधान का सबसे महत्वपूर्ण उपयोग है। नवीन ज्ञान से केवल मनुष्य की जिज्ञासाओं का ही समाधान नहीं होता बल्कि इसके द्वारा हमें वह उपयोगी ज्ञान भी प्राप्त होता है जिसकी सहायता से समाज में प्रगति लाई जाती है। नवीन ज्ञान समाज का नये सिरे से पुनर्निर्माण करने में भी सहायक होता है। इस सन्दर्भ में **पी. हेटिंग** ने लिखा है कि "अनुसंधान का प्रत्यक्ष कार्य ज्ञान के वर्तमान भण्डार में नवीन ज्ञान को जोड़ना है।" इस दृष्टि कोण से सामाजिक अनुसंधान को केवल बौद्धिक प्रयास ही न मानकर इसे सभ्यता के विकास का वास्तविक आधार भी स्वीकार किया जाना चाहिए।

→ सामाजिक अनुसंधान का उपयोग मनुष्य अपनी अज्ञानता को दूर करने के लिए करता है। हम जिन घटनाओं को नहीं समझ पाते, उनके पीछे छुपे कारणों को ढूंढ़ने में हम सामाजिक अनुसंधान का ही सहारा लेते हैं। हमारे समाज में आज क्षेत्रवाद, भाषावाद, जातिवाद, भ्रष्टाचार, युवा तनाव, अपराध, धर्म संकट, नैतिकता और मनोरंजन में पतन जैसी जो विषम समस्याएं विद्यमान हैं, उनके वास्तविक कारणों को अनुसंधान के द्वारा ज्ञात करके ही उनके प्रभाव को कम या समाप्त किया जा सकता है। इसका तात्पर्य यह है कि अनुसंधान की सहायता से हम उन आधारों की वास्तविकता को समझ सकते हैं जो विभिन्न मानव समूहों में तनाव उत्पन्न करके उन्हें एक दूसरे से पृथक कर रहे हैं।

→ सामाजिक अनुसंधान की एक महत्वपूर्ण उपयोगिता समाज कल्याण में वृद्धि करना है। समाज कल्याण के लिए आवश्यक है कि सामाजिक संगठन इस प्रकार हों जिससे विघटनकारी तत्वों या बुराइयों को पनपने का अवसर न मिले तथा ऐसे मूल्यों या संस्थाओं को साहस न मिले जो व्यक्ति तथा समाज के विकास में बाधक हों। सामाजिक अनुसंधान के द्वारा हम उन तत्वों का पता लगाते हैं जो समाज को तोड़ने का कार्य करते हैं तथा समाज के विकास में बाधक बनते हैं। सामाजिक अनुसंधानों की उपयोगिता तत्वों का पता लगाने भर के लिए ही नहीं होती बल्कि उनको कैसे हटाया जाय और एक स्वस्थ समाज की कैसे रचना की जाय इसके लिए भी उपयोगी है।

→ सामाजिक अनुसंधान की उपयोगिता समाज में नियन्त्रण स्थापित करने में भी होती है। हर समाज प्रगतिशील है और उनमें हमेशा परिवर्तन होता रहता है। व्यक्ति तथा समाज दोनों एक दूसरे के पूरक हैं, दोनों एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। यदि हम मानव के सामाजिक व्यवहार को ठीक ढंग से समझ जाएं तो उसको आसानी से नियंन्त्रित कर सकते हैं तथा अनेक प्रकार की दोषपूर्ण प्रवृत्तियों को रोका जा सकता है। सामाजिक अनुसंधान के द्वारा इन तत्वों का ज्ञान प्राप्त करके समाज को अधिक संगठित किया जा सकता है। अत: सामाजिक अनुसंधान सामाजिक नियन्त्रण स्थापित करने में सहायक होता है।

→ सामाजिक अनुसंधान का एक सबसे बड़ा लाभ यह होता है कि यह अनुसंधान की विधियों को अधिक उपयोगी तथा विश्वसनीय बनाने में सहायक होता है। प्राय: अनुसंधान की प्रणालियां अधिकतर विज्ञानों में समान होती है। अत: यदि किसी एक विज्ञान में अनुसंधान द्वारा उसके विकास में सहायता प्राप्त होती है तो उसका उपयोग अन्य विज्ञानों में भी किया जा सकता है।

→ सामाजिक अनुसंधान का उपयोग इस दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है कि इसकी सहायता से हम भविष्य की घटनाओं के विषय में जानकारी हसिल कर सकते हैं। भविष्य में उत्पन्न होने वाली दशाओं का पहले से ही ज्ञान प्राप्त करके उनका निराकरण करने के उपाय ढूँढ सकते हैं। सामाजिक अनुसंधान द्वारा दी गयी भविष्यवाणियाँ वर्तमान और भविष्य के बीच सन्तुलन स्थापित करने में सहायक होती हैं।

4.5 वस्तुनिष्ठता की अवधारणा

अब हम सामाजिक अनुसंधान में व्याप्त कठिनाइयों पर चर्चा करेंगे। 'वस्तुनिष्ठता' सामाजिक अनुसंधान में एक समस्या के रूप में विद्यमान है। अत: हम सर्वप्रथम वस्तुनिष्ठता की अवधारणा से शुरूआत करते हुए इसके विविध पक्षों का विवरण प्रस्तुत करेंगे।

'वस्तुनिष्ठता' का तात्पर्य यथार्थ ज्ञान' से है जिसे भारतीय दर्शन की शब्दावली में 'प्रमेय' कहते हैं—जिसका अर्थ है कि ''वस्तु का ज्ञान उसी रूप में होना चाहिये जिस रूप में वस्तु की स्थिति हो।''

अर्थात् वस्तुनिष्ठता किसी अध्ययन से सम्बन्धित वह विशेषता है जो यथार्थ अवलोकन पर आधारित होती है। जब हम अपने अध्ययन के दौरान धर्म, जाति, प्रजाति, विचार, भावना, विश्वास, अपने निजी विचार आदि से पृथक रहकर कोई अध्ययन करते हैं तो उसे वस्तुनिष्ठ अध्ययन कहते हैं। इसके अन्तर्गत तथ्यों का वास्तविक विश्लेषण होता है। वस्तुनिष्ठता को परिभाषित करते हुए प्रो. ए. डब्लू. ग्रीन ने लिखा है—''वस्तुनिष्ठता निष्पक्ष रूप से किसी तथ्य का परीक्षण करने की इच्छा और योग्यता है।'' यहाँ पर 'इच्छा' का तात्पर्य विभिन्न घटनाओं को यथार्थ रूप में प्रस्तुत करने की इच्छा से है जबकि 'योग्यता' का

सम्बन्ध व्यक्तिनिष्ठता को दूर रखने की कुशलता से है। अर्थात् जब अनुसंधानकर्ता कुशलतापूर्वक तथ्यों को उनके यथार्थ रूप में प्रस्तुत करता है तब इसे हम वस्तुनिष्ठता कहते हैं।

लावेल जे. कार का मानना है कि वस्तुनिष्ठता एक विशेष दृष्टिकोण है जो एक यथार्थ स्थिति का बोध कराती है। इसे स्पष्ट करते हुए **फेयर चाइल्ड** ने लिखा है कि वस्तुनिष्ठता का अभिप्राय एक ऐसी योग्यता से है जिसके द्वारा अनुसंधानकर्ता स्वयं को उन दशाओं से पृथक रख सके जिनका कि वह स्वयं एक अंग है।

अत: सारांश के तौर पर हम कह सकते हैं कि घटनाओं को उनके उसी रूप में देखना जिस रूप में वे वास्तव में स्थित हैं। वस्तुनिष्ठता का आधार है। इसमें जहाँ एक ओर अनुसंधानकर्ता का पक्षपात रहित दृष्टिकोण सम्मिलित है, वहीं इसमें तटस्थ अवलोकन एवं विश्लेषण का भी समावेश है। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि वस्तुनिष्ठता के अभाव में किसी भी अध्ययन को वैज्ञानिक नहीं कहा जा सकता है।

4.6 सामाजिक अनुसंधान में वस्तुनिष्ठता की आवश्यकता

किसी भी अनुसंधान को वैज्ञानिक बनाने के लिए वस्तुनिष्ठता आवश्यक है। इसके अभाव में अनुसंधान कभी भी वैज्ञानिक स्वरूप नहीं ले सकता। वास्तव में देखा जाय तो वैज्ञानिक अध्ययन का आधारभूत उद्देश्य एक सार्वभौमिक उद्देश्य प्राप्त करना होता है। जो वस्तुनिष्ठता के द्वारा ही सम्भव है। सामाजिक अनुसंधान के अन्तर्गत वस्तुनिष्ठता की आवश्यकता :

→ तथ्यों के सत्यापन के लिए पड़ती है। पिछली इकाई (तीन) में हमने वैज्ञानिक अध्ययन की विशेषता की चर्चा की है, जिसमें सत्यापनशीलता को एक प्रमुख विशेषता के रूप में बताया गया है। एक वैज्ञानिक अध्ययन के लिए यह अनिवार्य है कि उसका सत्यापन किया जा सके। उसकी पुनर्परीक्षा की जा सके। अनुसंधान के पश्चात् हम जो निष्कर्ष प्राप्त करते हैं यदि वह यथार्थ है तो उसकी किसी भी समय पुनर्परीक्षा करके उसका सत्यापन किया जा सकता है। अनुसंधान के फलस्वरूप प्राप्त निष्कर्ष की कोई भी व्यक्ति जब चाहे पुनर्परीक्षा कर सकता है। यदि निष्कर्ष परीक्षण एवं सत्यापन योग्य नहीं है तो अनुसंधान में वस्तुनिष्ठता का अभाव है। अनुसंधान में अगर वस्तुनिष्ठता है तो एक ही घटना का बार-बार भिन्न-भिन्न लोगों द्वारा किया गया अध्ययन एक समान निष्कर्ष प्रस्तुत करता है। अत: तथ्यों के सत्यापन के लिए वस्तुनिष्ठता आवश्यक है।

→ किसी भी अनुसंधानकर्ता का मुख्य लक्ष्य होता है यथार्थ ज्ञान की प्राप्ति। यथार्थ ज्ञान अनुसंधानों में वस्तुनिष्ठता के द्वारा ही सम्भव है। सामाजिक परिवर्तन के कारण आज विभिन्न सामाजिक घटनाओं एवं मूल्यों में तीव्रता से परिवर्तन हो रहे हैं। इन परिस्थितियों में एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाकर ही समकालीन दशाओं से सम्बन्धित यथार्थ ज्ञान को प्राप्त किया जा सकता है। व्यक्तिनिष्ठ अथवा भावनात्मक दृष्टिकोण के द्वारा कभी भी यथार्थ ज्ञान की प्राप्ति नहीं की जा सकती है। अत: यथार्थ ज्ञान की प्राप्ति के लिए वस्तुनिष्ठता आवश्यक है।

→ अनुसंधान से भ्रान्तियों को दूर करने के लिए वस्तुनिष्ठता की आवश्यकता पड़ती है। व्यक्ति अपनी प्रवृत्ति के अनुरूप अपने सामान्य ज्ञान के आधार पर बहुत से भ्रमों को विकसित कर लेता है तथा विभिन्न प्रकार के व्यवहारों को अपने ही दृष्टिकोण से समझने लगता है। वास्तविकता को जानने के लिए कोई ठोस वैज्ञानिक आधार नहीं निर्धारित करता। जब तक हम इस प्रकार की भ्रान्तियों को पृथक नहीं करते किसी घटना का वस्तुनिष्ठ अध्ययन नहीं कर सकते।

→ सामाजिक घटनाएं इतनी जटिल होती हैं कि अनुसंधानकर्ता अपने आपको पूर्णतया इनसे अलग नहीं रख पाता। प्राकृतिक विज्ञानों के अध्ययन में तो अनुसंधानकर्ता अपने आपको उस प्रक्रिया से अलग करके अध्ययन आसानी से कर लेता है, लेकिन सामाजिक विज्ञानों के अन्तर्गत यह एक बड़ी कठिनाई है। इस तरह की कठिनाई से बचने के लिए वस्तुनिष्ठता आवश्यक है।

सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र व सामाजिक अनुसंधान में व्याप्त कठिनाइयाँ

→ समाज शास्त्रीय अध्ययन को वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करने के लिए वस्तुनिष्ठता आवश्यक है। बहुत से वैज्ञानिकों का मानना है समाजशास्त्रीय अध्ययन वैज्ञानिक नहीं है क्योंकि इसमें तथ्यों का अध्ययन वस्तुनिष्ठ रूप से नहीं किया जा सकता। इनका मानना है कि सामाजिक अध्ययन व्यक्तिगत विचारों, भावनाओं, स्वार्थों, और पूर्वाग्रहों से प्रभावित हुए बिना रह ही नहीं सकता। इस स्थिति में समाज शास्त्रीय अध्ययनों में वैज्ञानिकता को विकसित करके ही ऐसी मिथ्या धारणाओं को दूर किया जा सकता है।

→ अनुसंधानकर्ता पर नियन्त्रण रखने के लिए भी वस्तुनिष्ठता की आवश्यकता पड़ती है। अनुसंधान कर्ता एक सामाजिक प्राणी है और वह जिस समाज का अध्ययन करता है उस समाज का प्रभाव अनुसंधान कर्ता पर पड़ना स्वाभाविक है। ऐसी स्थिति में वह अपने व्यक्तिगत स्वार्थों, भावनात्मक प्रवृत्तियों तथा नैतिक पक्षपात को अनुसंधान से अलग नहीं रख सकता। इन परिस्थितियों में वस्तुनिष्ठता ही अनुसंधानकर्ता पर नियन्त्रण स्थापित करती है और निरपेक्ष भाव से अनुसंधान करने के लिए उसे प्रेरित करती है।

4.7 वस्तुनिष्ठता प्राप्त करने के माध्यम

पिछली इकाइयों के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्राकृतिक विज्ञानों या घटनाओं की तुलना में सामाजिक विज्ञानों या घटनाओं के अध्ययन में वस्तुनिष्ठता बनाये रखना एक कठिन कार्य है। सामाजिक विज्ञानों के अन्तर्गत शत-प्रतिशत वस्तुनिष्ठता तो नहीं लायी जा सकती, लेकिन इससे मुँह भी नहीं मोड़ा जा सकता। आज ऐसे अनेक साधनों और पद्धतियों का विकास कर लिया गया है कि जिनकी सहायता से सामाजिक घटनाओं के अध्ययन में वस्तुनिष्ठता प्राप्त की जा सकती है। वास्तव में वस्तुनिष्ठता का सम्बन्ध अध्ययन की यथार्थता तथा अनुसंधानकर्ता के पक्षपातरहित दृष्टिकोण से है। सामाजिक अनुसंधान में इसे प्राप्त करने के कुछ माध्यम या विधियां बतायी गयी हैं—

(क) सामाजिक घटनाओं के गहन, निष्पक्ष तथा यथार्थ अध्ययन के लिए आजकल अन्तरानुशासनिक विधि को उपयोगी माना गया है। यह एक ऐसी विधि है जिसके द्वारा किसी समस्या के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन विभिन्न विषयों के विद्वानों द्वारा पारस्परिक सहयोग से किया जाता है। जैसे यदि किसी समस्या के आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक पक्षों का अध्ययन करना है तो क्रमशः अर्थशास्त्रियों, राजनीतिशास्त्रियों तथा मनोवैज्ञानिकों द्वारा मिलजुल कर अध्ययन किया जाय तब इसे अन्तर अनुशासनिक विधि कहा जाता है। इस विधि से यथार्थ तथ्यों को एकत्र करने का प्रयास किया जाता है, इससे अध्ययन अधिक यथार्थ और वस्तुनिष्ठ हो जाता है।

(ख) सामाजिक घटनाओं के वस्तुनिष्ठ अध्ययन के लिए प्रश्नावली अथवा अनुसूची का प्रयोग किया जाता है। प्रश्नावली में छपे प्रश्न स्पष्ट और मानक होते हैं और उत्तरदाता इन्हें सरलता से समझकर सही सूचनाएं देता है। प्रश्न पहले से ही छपे होने के कारण तथ्यों का संकलन करते समय अनुसंधानकर्ता अपनी रुचि अथवा पक्षपातपूर्ण मनोवृत्ति से उन्हें प्रभावित नहीं कर पाता। प्रश्नावली उत्तरदाता के पास सीधे डाक द्वारा भेज दी जाती है। इससे उत्तरदाता को प्रभावित

करने की संभावना बहुत कम रह जाती है। यद्यपि प्रश्नावली तथा अनुसूची का उपयोग पूर्णतया दोषरहित नहीं है लेकिन इनके अन्तर्गत प्रश्नों का संयोजन इस प्रकार किया जाता है जिससे उत्तरादाता बहुत स्वाभाविक रूप से सही सूचनाएं दे सके । व्यक्तिगत शोध से लेकर सरकारी तथा गैरसरकारी संगठनों द्वारा किये जाने वाले अधिकांश अनुसंधान प्रश्नावली तथा अनुसूची के माध्यम से ही किये जाते हैं और अधिक वस्तुनिष्ठ होते हैं।

(ग) वस्तुनिष्ठता को प्राप्त करने के लिए मशीनें अधिक उपयुक्त बतायी गयी हैं। अनुसंधान के समय मनुष्य कहीं न कहीं अपनी व्यक्तिगत भावनाएं समाहित कर ही देता है। इसलिए ऐसा माना गया है कि मनुष्य की अपेक्षा मशीनें वस्तुनिष्ठ अध्ययन के लिए सही माध्यम होती हैं, क्योंकि इनकी कोई व्यक्तिगत भावनाएं नहीं होती हैं। साधारणतया मानसिक अनुसंधान में मशीनों का अधिक प्रयोग सम्भव नहीं है। परन्तु इसकी कुछ शाखाओं विशेषकर मनोविज्ञान में यन्त्रों का उपयोग पर्याप्त सीमा तक किया जाने लगा है। विशुद्ध सामाजिक अनुसंधान में भी टेपरिकार्डर, फिल्म, कम्प्यूटर इत्यादि यांत्रिक साधनों का उपयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त संख्यिकीय विवेचना के लिए कार्डों में छेद करने, सारणीयन करने तथा गणना करने का काम भी मशीनों द्वारा लिया जाता है। इन यांत्रिक साधनों के प्रयोग से अनुसंधानों में पयाप्त वस्तुनिष्ठता लायी जा सकती है। तथा अनुसंधानकर्ता के पक्षपात तथा अभिनति की सम्भावना कम हो जाती है। ''अभिनति'' ऐसी कृत्रिम स्थिति होती है जिसके कारण द्रष्ट किसी विशेष घटना को उसके वास्तविक रूप में न देखकर किसी पूर्व निश्चित काल्पनिक रूप में देखता है। वह काल्पनिक रूप एसा होता है, जो उसकी विचारधारा से मेल खाता है।

(घ) सामाजिक अनुसंधान में वस्तुनिष्ठता लाने के लिए दैव निदर्शन एक उपयोगी माध्यम होता है। इस पद्धति के द्वारा अध्ययन से सम्बन्धित इकाइयों का चयन अध्ययनकर्ता की इच्छा पर निर्भर न रह कर संयोग (Chance) पर निर्भर रहता है। ऐसे निदर्शन से समग्र की विशेषताओं का प्रतिनिधित्व करने वाली सभी इकाइयों के चुने जाने का समान अवसर प्राप्त हो जाता है। यहाँ पर शोधकर्ता को इकाइयों का चुनाव करने की स्वतन्त्रता नहीं होती है। अनुसंधानकर्ता यदि अपनी स्वेच्छा से इकाइयों का चयन करता है तो पक्षपात की संभावना बनी रहती है। दैव निदर्शन यदि वैज्ञानिक प्रविधियों पर अधारित होता है तो पक्षपात पूर्ण तथ्यों को संकलित होने से रोका जा सकता है।

(ङ) मिश्रित सांस्कृतिक उपागम के माध्यम से भी सामाजिक अनुसंधान में वस्तुनिष्ठता लायी जा सकती है। जब दो या दो से अधिक सांस्कृतिक समूहों अथवा क्षेत्रों के विशेषज्ञ मिलकर किसी एक ही स्थान पर एक विशेष समस्या का अध्ययन करते हैं तब इसे मिश्रित उपागम कहा जाता है। यदि एक अनुसंधानकर्ता उसी समूह का सदस्य हो जिसका वह अध्ययन कर रहा है तो इससे वह अध्ययनकर्ता, जिसका अध्ययन किये जाने वाले समूह अथवा समुदाय से कोई भी सांस्कृतिक सम्बन्ध नहीं होता, कहीं अधिक तटस्थ रहकर यथार्थ तथ्यों को एकत्रित कर सकता है। उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि सामाजिक घटनाओं के अध्ययन में यदि समुचित पद्धतियों एवं साधनों का समन्वित उपयोग किया जाय तो ऐसे अध्ययनों में भी वस्तुनिष्ठता प्राप्त करना सम्भव है, हालांकि आज भी अधिकांश समाज वैज्ञानिकों की यह धारणा है कि सामाजिक घटनाओं एवं समस्याओं के अध्ययन में पूर्ण वस्तुनिष्ठता प्राप्त करना एक कोरी कल्पना है, क्योंकि न तो कोई अनुसंधानकर्ता अपने अध्ययन विषय के प्रति पूर्णतया तटस्थ रह सकता है और न ही उत्तरदाता निष्पक्ष रूप से अपने विचारों और भावनाओं को व्यक्त कर सकते हैं। प्रतिवर्ती समाजशास्त्र (Reflective Sociology) के प्रतिपादक एल्विन गोल्डनर ने यह स्पष्ट किया है कि एक अनुसंधानकर्ता के लिए बाह्य तत्वों को देखना उतना आवश्यक नहीं है जितना

कि स्वयं अपनी ओर देखना। इसका तात्पर्य यह है कि अनुसंधानकर्ता की व्यक्तिगत एवं बौद्धिक ईमानदारी के द्वारा ही वस्तुनिष्ठता लायी जा सकती है, केवल कुछ विशेष अध्ययन पद्धतियां ही वस्तुनिष्ठता को जन्म नहीं दे सकतीं।

इसके अतिरिक्त उग्रवादी समाजशास्त्र तथा एथनोमेथडोलाजी भी अध्ययन के नये उपागम हैं जिनके द्वारा वस्तुनिष्ठता तथा व्यक्तिनिष्ठता के अन्तर को समाप्त करने का प्रयत्न किया जा रहा है। इन उपागमों को मानने वाले विद्वान सामाजिक विज्ञानों के अन्तर्गत मूल्य तटस्थता को स्वीकार नहीं करते।

इनके अनुसार यदि सामाजिक घटनाओं के अध्ययन में वस्तुनिष्ठता को प्राप्त करना है तो अनुसंधानकर्ता के लिए यह आवश्यक है कि अध्ययन से पूर्व ही वह स्पष्ट कर दे कि वह किन-किन पूर्वाग्रहों दृष्टिकोणों, मूल्यों, रुचियों से प्रभावित है।

4.8 सामाजिक अनुसंधान में वस्तुनिष्ठता की समस्या

अब तक के विवेचन से यह स्पष्ट हो गया है कि सामाजिक विज्ञानों की प्रकृति विज्ञानों से पूरी तरह भिन्न है। प्राकृतिक विज्ञानों में वस्तुनिष्ठता आसानी से प्राप्त हो जाती है क्योंकि इसमें किसी भी प्रकार का मानवीय दृष्टिकोण समाहित नहीं होता। सामाजिक घटनाएं जटिल, अमूर्त, परिवर्तनशील, गुणात्मक तथा विभिन्नतायुक्त होती हैं। यही कारण है कि भौतिक विज्ञानों की तुलना में सामाजिक विज्ञानों में वस्तुनिष्ठता को प्राप्त करना एक कठिन कार्य है तथा समस्या का विषय है।

सामाजिक घटनाओं का अध्ययन करने वाला एक अनुसंधानकर्ता भी साधारणतया उसी समाज का सदस्य होता है जिसके फलस्वरूप वह अपनी जाति, धर्म, प्रथाओं, परम्पराओं, विश्वासों, भावनाओं और सामाजिक मूल्यों का अध्ययन प्राय: पक्षपात रहित होकर नहीं कर पाता। रासायनिक विज्ञानों का अध्ययन करने वाला कभी भी रासायनिक पदार्थों से प्रेमभाव नहीं रखता लेकिन सामाजिक अध्ययन करते समय इस प्रकार के संवेगों अथवा विचारों से बच पाना बहुत कठिन होता है। इसके अतिरिक्त भी अनेक ऐसी दशाएं हैं जो सामाजिक अनुसंधान में वस्तुनिष्ठता को बनाये रखने में समस्या पैदा करती हैं। जैसे :

भावनात्मक प्रवृत्तियाँ

अनुसंधानकर्ता की भावनात्मक प्रवृत्तियाँ वस्तुनिष्ठता के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा पैदा करती हैं। इन भावनात्मक प्रवृत्तियों का आधार अनेक सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्य होते हैं। एक अनुसंधानकर्ता के लिये यह बहुत कठिन होता है कि वह जिन सांस्कृतिक मूल्यों के अन्तर्गत जीवन व्यतीत करता आया है

इन्हीं के बारे में वह पूर्णतया तटस्थ रहकर एक निष्पक्ष बात कह सके। भौतिक पदार्थों का दर्शन तो हम पूर्णतया तटस्थ भाव से कर सकते हैं लेकिन सामाजिक घटनाओं के सम्बन्ध में ऐसा पूर्णतया सम्भव नहीं है, क्योंकि अध्ययनकर्ता स्वयं भी समाज का अभिन्न अंग होता है।

अनुसंधानकर्ता का व्यक्तिगत स्वार्थ

कभी-कभी अनुसंधान में अभिनति इसलिए भी उत्पन्न हो जाती है कि अनुसंधानकर्ता का व्यक्तिगत स्वार्थ भी अनुसंधान के फल में सन्निहित रहता है। जैसा कि पी० वी० यंग ने लिखा है—अनुसंधानकर्ता के अध्ययन के फलों का प्रभाव प्राय: उसके निजी स्वार्थ पर पड़ता है। अतएव उनकी इच्छा उनकी खोज को प्रभावित कर सकती है। जब अनुसंधानकर्ता देखता है कि उसकी खोज का परिणाम उसके हित अथवा

स्वीकृत सिद्धान्तों के विरुद्ध है तो उसका मन उन निष्कर्षों को स्वीकार करने से मना कर देता है। तब वह ऐसे तथ्यों की खोज करने लग जाता है जो उसके विचारों से मेल खाते हैं। ऐसी परिस्थिति में वस्तुनिष्ठता प्राप्त करना एक कठिन कार्य है।

रीति-रिवाजों तथा सामाजिक दर्शन का प्रभाव

प्रत्येक समाज में सामाजिक जीवन के बहुत से ऐसे पहलू होते हैं। जिन्हें हर समाज मानता रहता है, उसके पीछे कोई वैज्ञानिक आधार ढूँढने का प्रयास नहीं करता। बहुत सी घटनाएँ ऐसी होती हैं जो हमारी आपकी निगाह से अनेकों बार गुजर चुकी हैं तथा जिनके बारे में हम आप पहले से ही धारणा बना चुके हैं। पी. वी. यंग का कहना है कि ''किसी वैज्ञानिक के लिए अपने आप को रीति-रिवाजों सामाजिक दर्शन इत्यादि से अलग रखना कठिन होता है। वैज्ञानिक अनुसंधान से उपयुक्त वस्तुनिष्ठता प्राप्त करना, विशेषकर उन अवसरों पर जबकि ऐसी खोज से किसी वर्तमान सामाजिक परम्परा को आघात पहुँचता हो, एक कठिन कार्य है।

सजातिवाद (Ethnocentrism)

सजातिवाद एक ऐसी धारणा है, जिसके अन्तर्गत व्यक्ति अपनी ही जाति, धर्म, भाषा, क्षेत्र, संस्कृति, समाज अथवा समूह को सर्वोत्तम मानने लगता है। सजातिवाद के कारण अनुसंधानकर्ता अपनी संस्कृति और सामाजिक विशेषताओं को ही बढ़ा-चढ़ाकर प्रस्तुत नहीं करता बल्कि दूसरे समूह की संस्कृति को नीचा दिखाने का प्रयास करता है और ये दोनों ही दशाएँ अनुसंधान को वास्तविकता से दूर ले जाती हैं जिससे अनुसंधान में वस्तुनिष्ठता कठिन होती जाती है। समाजशास्त्रीय अनुसंधान में जब अनुसंधानकर्ता अपनी विचारधारा को सर्वोत्तम मानने लगता है तब वस्तुनिष्ठता प्राप्त करना एक समस्या बन जाती है।

मिथ्या झुकाव तथा पूर्वाग्रह

मिथ्या झुकाव तथा पूर्वाग्रह दोनों ही भ्रान्तियां सामाजिक अनुसंधान में वस्तुनिष्ठता को प्राप्त करने में बाधा उत्पन्न करती हैं। लुण्डवर्ग का मानना है कि ''पक्षपात और पूर्वाग्रह सभी विज्ञानों में जटिलता उत्पन्न करने वाले कारक हैं परन्तु इनका प्रभाव भौतिक विज्ञानों की तुलना में सामाजिक विज्ञानों पर अधिक पड़ता है, क्योंकि समाज विज्ञानों की विषय वस्तु प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से सामाजिक सम्बन्धों पर ही आधारित होती है जो भावनात्मक दशाओं से अधिक प्रभावित होती है। इस सम्बन्ध में जेम्स ड्रेवर ने लिखा है कि ''पक्षपात एक विशेष मनोवृत्ति है जो अनेक संवेगों से रंगीन होने के कारण किसी विशेष क्रिया, वस्तु, व्यक्ति या सिद्धान्त का या तो विरोध करती है या उसका पक्ष लेती है। दूसरी ओर पूर्वाग्रह एक ऐसी स्थिति है जिसमें हम किसी विशेष व्यक्ति, समूह अथवा सिद्धान्त के प्रति पहले ही से अपने मन में एक विशेष धारणा विकसित कर लेते हैं तथा उसी के सन्दर्भ में एक तथ्य का मूल्यांकन करने का प्रयत्न करते हैं। स्वाभाविक है कि ये दोनों ही दशाएं वस्तुनिष्ठता प्राप्त करने में कठिनाई उत्पन्न करती हैं।

अध्ययन में अति-शीघ्रता

कभी-कभी समस्याएँ इतनी आवश्यक हो जाती हैं कि उन पर तुरन्त ही कार्यवाही की आवश्यकता पड़ती है। यह स्थिति भी वस्तुनिष्ठता के लिए एक बड़ी मुश्किल खड़ी कर देती है। ऐसे अवसरों पर शीघ्रता के कारण कोई भी समाधान स्वीकार कर लेने की प्रवृत्ति होती है।

सामाजिक अनुसंधान अपनी जटिलता के कारण दीर्घकालीन प्रकृति वाला होता है और सच्चे तथा सही निष्कर्ष के लिए दीर्घकाल तक धैर्यपूर्ण प्रयास की आवश्यकता होती है। ऐसे अवसरों पर जल्दबाजी वस्तुनिष्ठता प्राप्त करने के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा है।

सामाजिक घटनाओं की जटिलता

सामाजिक घटनाओं की जटिलता भी वस्तुनिष्ठता प्राप्त करने में एक महत्वपूर्ण बाधा है। जटिलता का प्रमुख कारण है सामाजिक घटनाओं तथा तथ्यों का परिवर्तनशील होना। समाज में प्रत्येक व्यक्ति की योग्यता, उसकी प्रकृति, भूमिका, प्रस्थिति एक दूसरे से बहुत भिन्न होते हैं, जिसके कारण सामाजिक सम्बन्धों की प्रकृति बहुत जटिल हो जाती है। विभिन्न व्यक्तियों के विश्वास तथा उनका पर्यावरण भी एक दूसरे से भिन्न होने के कारण सामाजिक विभिन्नता में वृद्धि होती है। इन सबका परिणाम यह होता है कि अनुसंधानकर्ता किसी विषय का अध्ययन करते समय अपनी निजी भावनाओं और विश्वासों के अधार पर ही अनेक निष्कर्ष प्रस्तुत कर देता है जिससे वस्तुनिष्ठता प्राप्त करने में कठिनाई उत्पन्न होती है।

4.9 सारांश

इकाई चार के अन्तर्गत हमने सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र, विषय वस्तु इसके प्रेरक तत्वों के साथ-साथ इसकी उपयोगिता का भी अध्ययन किया है। उपइकाई 4.5 से 4.8 तक सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र में आने वाली या व्याप्त कठिनाइयों जैसे-वस्तुनिष्ठता की समस्या आदि का विस्तृत अध्ययन प्राप्त कर ज्ञानार्जन व ज्ञानभंडार में अपेक्षित वृद्धि की है। वस्तुनिष्ठता की अवधारणा, इसे प्राप्त करने के माध्यम व तरीकों के अलावा इसे कैसे प्राप्त किया जा सकता है, आदि का वृहद् अध्ययन किया है। अब इस इकाई के अध्ययनोपरांत सभी छात्र सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र, विषय वस्तु, इसकी उपयोगिता व इसमें वस्तुनिष्ठता की समस्याओं को जानने में सक्षम हो सकेंगे।

4.10 बोध-प्रश्न

(क) लघुउत्तरीय प्रश्न

प्र०-1 सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र व विषयवस्तु का वर्णन कीजिये ?

प्र०-2 सामाजिक अनुसंधान की उपयोगिता को दर्शाइये ?

प्र०-3 वस्तुनिष्ठता का क्या तात्पर्य है?

प्र०-4 वस्तुनिष्ठता प्राप्त करने का क्या तरीका है।

प्र०-5 सामाजिक अनुसंधान में व्याप्त कठिनाइयों का वर्णन कीजिये?

(ख) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्र०-1 सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र, प्रेरक तत्वों का वर्णन करते हुए इसकी उपयोगिता पर प्रकाश डालिये ?

प्र०-2 सामाजिक अनुसंधान में वस्तुनिष्ठता क्या है, इसे प्राप्त करने के तरीकों का विस्तृत विश्लेषण कीजिये ?

(ग) बहुविकल्पीय बोध प्रश्न

(1) जिज्ञासा मनुष्य का मौलिक गुण है'' यह कथन है—

(a) गुडे तथा हाट (b) न्यूकोब (c) पी. वी. यंग (d) बोगार्डस

(2) सामाजिक अनुसंधान का क्षेत्र है —

(a) अनिर्धारित (b) विस्तृत (c) सीमित (d) अल्पविकसित

(3) सामाजिक अनुसंधान की विषयवस्तु है—

(a) सामाजिक समस्याएं (b) राजनैतिक समस्याएँ (c) धार्मिक समस्याएँ

(d) उपरोक्त सभी।

(4) सामाजिक अनुसंधान में वस्तुनिष्ठता नहीं पायी जाती है—

(a) नही पायी जाती है

(b) पायी जाती है

(c) कुछ हद तक पायी जाती है

(d) बिल्कुल असंभव

(स) पुस्तक Social Research' लिखा है

(a) लुण्डवर्ग (b) मैकाइवर पेज (c) सी. डब्ल्यू. हार्ट (d) एल. जे. कार

(6) वस्तुनिष्ठता प्राप्त करने में बाधा उत्पन्न करती है—

(a) भावात्मक प्रवृत्तियां (b) सामान्य ज्ञान का प्रभाव (c) अनुसंधानकर्ता के निजीस्वार्थ

(d) उपरोक्त सभी।

4.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

(1) → (c)

(2) → (b)

(3) → (d)

(4) → (b)

(5) → (a)

(6) → (d)

4.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. बोगार्ड्स, ई. एस. (1936), इन्ट्रोडक्शन टू सोशल रिसर्च
2. गुडे एण्ड हैट, (1952), मेथड्स इन सोशल रिसर्च मैक्ग्राहिल बुक कंपनी, न्यूयार्क।
3. सिनपाओ यंग, (1953), फैक्ट फाइन्डिंग विद रूरल पीपुल।
4. लुण्डबर्ग, जी० ए० (1951), सोशल रिसर्च, लागमन्स ग्रीन एण्ड कंपनी, न्यूयार्क।
5. यंग पी. वी. (1951), साइंटिफिक सोशल, सर्वेज एण्ड रिसर्च, प्रिन्टिस हाल, न्यूयार्क,
6. जे. डब्लू. बेस्ट, (1979) रिसर्च इन एजूकेशन,
7. इनसाइक्लोपीडिया आफ सोशल साइंसेज, (1934)।
8. सिंह, सुरेन्द्र (1975), सामाजिक अनुसंधान, उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, लखनऊ।
9. गांल्टुंग, जोहान (1967), थियरी एण्ड मेथड्स आफ सोशल रिसर्च, जार्ज, ऐलेन एण्ड अनविन लि० लंदन।
10. सी० ए० मोजर, (1959), सर्वे मेथड्स इन सोशल इन्वेस्टीगेशन, विलियम हीन मैन लि० लंदन,
11. बेब्स्टर्स न्यू कालीजिएट डिक्शनरी (1949).
12. स्टाउफर, (1956), कान्टीन्यूटीस इन सोशल रिसर्च।

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टंडन मुक्त विश्वविद्यालय

MASY-03/MASW-04
सामाजिक अनुसंधान

खण्ड

2

शोध अभिकल्प (RESEARCH DESIGN)

इकाई 5

शोध अभिकल्प : एक परिचयात्मक अध्ययन

इकाई 6

शोध अभिकल्प के प्रकार

इकाई 7

प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प

इकाई 8

प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प के तार्किक आधार एवं प्रकार

इकाई 9

प्रायोगिक शोध के लिए कुछ मूल्यवान अथवा समृद्ध शोध अभिकल्प निदर्श

परामर्श समिति

प्रो० देवेन्द्र प्रताप सिंह कुलपति उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद	अध्यक्ष
डॉ० एच० सी० जायसवाल परामर्शदाता उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इला०	कार्यक्रम संयोजक
डॉ० आर० के० बसलस कुल सचिव उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद	सचिव

विशेषज्ञ समिति

प्रो० वी० के० पंत से०नि०आचार्य एवं विभागाध्यक्ष कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल	विषय विशेषज्ञ
प्रो० डी० पी० सक्सेना से० नि० आचार्य गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर	विषय विशेषज्ञ
प्रो० पी० एन० पाण्डेय आचार्य एवं पूर्व विभागाध्यक्ष काशी हिन्दू विश्वविद्यालय	विषय विशेषज्ञ
डा० मंजूलिका श्रीवास्तव स्ट्राइड, इग्नू, नई दिल्ली	संरचनात्मक विषय विशेषज्ञ

पाठ्यक्रम लेखन समिति

PGSY-03 : – *सामाजिक अनुसंधान*

खण्ड एक : डॉ० वी० एन० मिश्र, प्रवक्ता कालीचरण कालेज, लखनऊ 4 इकाई (आकारगत 3)
खण्ड दो : डॉ० जय शंकर पाण्डेय, प्रवक्ता डी० ए० वी० कालेज, कानपुर 5 इकाई (आकारगत 4)
खण्ड तीन : डॉ० विजय कुमार वर्मा, प्रवक्ता, बी०एस०एन० वी०पी०जी० कालेज, लखनऊ 5 इकाई
खण्ड चार : डॉ० विजय कुमार वर्मा, प्रवक्ता बी०एस०एन० वी०पी०जी० कालेज, लखनऊ 4 इकाई
खण्ड पाँच : अनूप कुमार सिंह, प्रवक्ता, डी० ए० वी० कालेज, कानपुर 5 इकाई
सम्पादन : प्रो० वी० के० पंत

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित, इस कार्य के किसी भी अंश की उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की लिखित अनुमति के बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुन: प्रस्तुति अनुमन्य नहीं है।

दूरस्थ शिक्षा परिषद, नई दिल्ली के सहयोग से प्रकाशित।

खण्ड 5 का परिचय : शोध अभिकल्प (Research Design)

प्रस्तुत खण्ड शोध अभिकल्प के बारे में विस्तृत एवं गहन रूप से जानकारी प्राप्त कराने के उद्देश्य से एक विनम्र एवं सूक्ष्म प्रयास है। यह खण्ड पाँच इकाइयों में विभाजित किया गया है। प्रथम इकाई 'शोध अभिकल्प : एक परिचयात्मक अध्ययन' है । इस इकाई में शोध अभिकल्प की अवधारणा, अर्थात शोध समस्या के चयन एवं निर्माण के बाद शोधकर्ता को शोध अभिकल्प के बारे में सोचने एवं इसके प्रकार के चयन के बारे में निर्णय करना पड़ता है अर्थात् सामाजिक शोध में किन विधियों का चयन किया जाय क्योंकि शोध का सम्पूर्ण ढाँचा शोध अभिकल्प पर ही निर्भर करता है इसी अवधारणा से शोध की एक निश्चित दिशा तय होती है एवं शोधकर्ता विचलन के कुचक्र से निकलकर एक निर्धारित योजना के अन्तर्गत अपनी समाज शास्त्रीय शोध परियोजना को आगे बढ़ाता है। इसके अतिरिक्त इस इकाई में शोध अभिकल्प की अधिकृत परिभाषा, शोध अभिकल्प का उद्देश्य, इसके सिद्धान्त, अर्थात् क्रमबद्ध प्रसरण की वृद्धि, अशुद्धियों के प्रसरण का न्यूनीकरण और विजातीय क्रमबद्ध प्रसरण का नियन्त्रण, मटील्डा व्हाइट रिले द्वारा दिया गया शोध अभिकल्प पैराडाइम (संरूपावली निदर्श) एक अच्छे शोध अभिकल्प की आवश्यकताएँ अर्थात् समृद्ध शोध अभिकल्प के मानदण्ड, शोध अभिकल्प के प्रकार्य और शोध अभिकल्पित करने की अवस्थाओं के बारे में जानकारी दी गयी है।

द्वितीय इकाई 'शोध अभिकल्प के प्रकार' है। इस इकाई में हेनरी मेनहीम द्वारा वर्णित तीन प्रकार के शोध अभिकल्पों अर्थात् अन्वेषणात्मक शोध अभिकल्प, व्याख्यात्मक शोध अभिकल्प और वर्णनात्मक शोध अभिकल्प का वर्णन किया गया है। अन्वेषणात्मक शोध अभिकल्प के अन्तर्गत इस अभिकल्प का उद्देश्य (सरनताकोस; ई वेबी जिकमण्ड द्वारा उल्लिखित), सहायक विधियाँ अर्थात् सामाजिक विज्ञान अथवा अन्य सम्बन्धित साहित्य का पुर्नरीक्षण, अध्ययन, समस्या से सम्बन्धित अनुभवी व्यक्तियों का सर्वेक्षण, अर्न्तदृष्टि-प्रेरक उदाहरणों का विश्लेषण, के बारे में जानकारी दी गयी है। व्याख्यात्मक शोध अभिकल्प के अन्तर्गत आश्रित चर की व्याख्या अर्थात् स्वतन्त्र चर (कारण) एवं आश्रित चर (प्रभाव अथवा परिणाम) के बीच सम्बन्धों की व्याख्या विभिन्न अवधारणात्मक योजनाओं के द्वारा तथा उदाहरणों द्वारा स्पष्ट की गयी है । वर्णनात्मक शोध अभिकल्प के अन्तर्गत इसकी परिभाषा, प्रकार अर्थात् गुणात्मक वर्णनात्मक शोध अभिकल्प एवं परिमाणात्मक वर्णनात्मक शोध अभिकल्प, वर्णनात्मक शोध अभिकल्प के चरण, अन्वेषणात्मक एवं वर्णनात्मक शोध अभिकल्प में अन्तर आदि का वर्णन, किया गया है। इसके अतिरिक्त मेनहीम और ब्लैक एवं चैम्पियन द्वारा विभेदीकृत अन्य शोध, अभिकल्प अर्थात सर्वेक्षण शोध अभिकल्प, वैयक्तिक अध्ययन अभिकल्प एवं प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प में से सर्वेक्षण शोध अभिकल्प एवं वैयक्तिक शोध अभिकल्प के बारे में जानकारी दी गयी है।

तृतीय इकाई, 'प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प' है इस इकाई में प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प की अवधारणा, परिभाषा, प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प निदर्श (पैराडाइम) चर (परिवर्त्य), चरों के प्रकार अर्थात् स्वतन्त्र चर, आश्रित चर, नियन्त्रित चर, अन्तर्वर्ती चर, जैविक चर, तथा स्वतन्त्र चर एवं आश्रित चर के अन्य प्रकार भेद अर्थात्-सक्रिय चर, आरोपित चर, अविच्छिन्न अथवा सतत चर, विच्छिन्न चर, गुणात्मक अथवा अश्रेणीबद्ध चर, परिणात्मक अथवा श्रेणीबद्ध चर, उद्दीपन चर, प्रतिक्रिया चर, व्यवहार चर,

प्रासंगिक चर, अप्रासंगिक चर आदि का वर्णन किया गया है। इन चरों का वर्णन इस हेतु किया गया है कि विभिन्न प्रयोगों में विभिन्न चरों का उपयोग आवश्यकतानुसार किया जाता है, इसलिए चरों के प्रकार के बारे में जानकारी आवश्यक प्रतीत होती है जिससे शोधकर्ता अपनी आवश्यकतानुसार चरों के सम्बोध एवं विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए विश्लेषण कर सके। इसके अतिरिक्त इस इकाई में, साक्ष्यों के प्रकार अर्थात् सहपरिवर्तन साक्ष्य, इसके प्रकार अर्थात् सकारात्मक एवं नकारात्मक सहपरिवर्तन साक्ष्य, चरों के घटित होने के समय क्रम का साक्ष्य, साक्ष्य जिसने विजातीय चरों के प्रभाव को नियन्त्रित कर लिया है, आदि का वर्णन किया गया है।

चतुर्थ इकाई 'प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प के तार्किक आधार एवं प्रकार' है। इस इकाई में जान स्टूअर्ट मिल द्वारा प्रतिपादित अन्वेषण के अधिनियम के अर्न्तगत प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प के तार्किक आधार का वर्णन किया गया है, अन्वेषण के पाँच अधिनियम अर्थात् सहमति विधि, भिन्नता विधि, समता एवं भिन्नता की सम्मिलित विधि, सहपरिवर्तन विधि, अवेशष विधि का उल्लेख किया गया है। इसी इकाई में प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प के प्रकार अर्थात् केवल पश्चात् परीक्षण प्रयोगात्मक अभिकल्प (सारणी सहित), इसकी कमियां, पूर्व पश्चात् प्रायोगिक अभिकल्प, उपयोगिताएँ (सारणी सहित), पूर्व-पश्चात् प्रायोगिक आभिकल्प की कमियां एवं लाभ, तत्पश्चात् तत्परिणामी प्रायोगिक आभिकल्प, तत्पश्चात्-तत्परिणामी प्रायोगिक शोध निदर्श (पैराडाइम), इसके गुण एवं दोष का वर्णन किया गया है।

पंचम इकाई 'प्रयोगात्मक शोध के लिए कुछ मूल्यमान अथवा समृद्ध शोध अभिकल्प' है। इस इकाई में कुछ ऐसे प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प निदर्शों का उल्लेख एवं वर्णन हुआ है जिनसे विभिन्न दशाओं एवं प्रघटनाओं की स्थिति के अनुसार शोधकर्ता अपनी आवश्यकता के अनुरूप तत्सम्बन्धी प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प निदर्श (पैराडाइम) का प्रयोग उपयुक्त ढंग से योजनानुसार कर सके। इस इकाई में कुछ महत्वपूर्ण प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प निदर्श अर्थात् प्रयोग समूह-नियन्त्रित समूह - यादृच्छिक पात्र अभिकल्प निदर्श अथवा दो यादृच्छिक समूहों का शोध अभिकल्प, दो से अधिक यादृच्छिक बहुसमूह-यादृच्छिक-पात्र अभिकल्प, यादृच्छिक-सादृश्य-समूह अभिकल्प, सादृश्य-पूर्व-पश्चात् नियन्त्रित समूह अभिकल्प, तीन समूह स्वरूप - प्रयोग समूह एवं नियंत्रित समूह अभिकल्प, चार समूह स्वरूप-प्रयोग समूह एवं नियन्त्रित समूह अभिकल्प, 2 × 2 तात्विक अभिकल्प निदर्श, केवल यादृच्छीकृत समेलित (सादृश्य), पश्चात् परीक्षण नियन्त्रित समूह शोध अभिकल्प, पूर्व परीक्षण-पश्चात् परीक्षण नियन्त्रित समूह शोध अभिकल्प, यादृच्छीकृत एक-मार्गीय एनोवा (Anova) शोध अभिकल्प, यादृच्छीकृत अवरुद्ध एक मार्गीय एनोवा शोध अभिकल्प, निदर्शों का चित्र, तालिका एवं उदाहरण युक्त वर्णन किया गया है।

प्रत्येक इकाई में समाज वैज्ञानिकों द्वारा लिखित अथवा संपादित मूल पुस्तकों को व्यवस्थित रूप से सन्दर्भित किया गया है जिसका उपयोग हम आवश्यकतानुसार सन्दर्भ के रूप में कर सकते हैं।

इकाई 5 शोध अभिकल्प : एक परिचयात्मक अध्ययन

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 शोध अभिकल्प–अवधारणा

5.3 परिभाषा

5.4 शोध अभिकल्प का उद्देश्य

5.5 सिद्धान्त

5.5.1 क्रमबद्ध प्रसरण की वृद्धि

5.5.2 अशुद्धियों के प्रसरण का न्यूनीकरण

5.5.3 विजातीय क्रमबद्ध प्रसरण का नियंत्रण

5.6 एक अच्छे अथवा समृद्ध शोध अभिकल्प के मानदण्ड

5.7 शोध अभिकल्प के प्रकार्य

5.8 शोध अभिकल्पित करने की अवस्थाएँ

5.9 सारांश

5.10 बोध प्रश्न

5.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.12 सूची एवं सन्दर्भ

5.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :

- शोध अभिकल्प के प्रकार्यों का उल्लेख कर सकेंगे।
- शोध अभिकल्प के सिद्धान्तों का वर्णन कर सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना

सामाजिक शोध में शोध अभिकल्प की भूमिका अति महत्वपूर्ण है। किसी भी तरह का शोध, चाहे वह प्रयोगात्मक हो या अप्रयोगात्मक हो, उस शोध का परिणाम एवं निष्कर्ष शोध अभिकल्प पर निर्भर करता है। यदि शोध अभिकल्प दोषपूर्ण होगा तो वैसी परिस्थिति में शोध के परिणाम तथा निष्कर्ष पर निर्भरता तथा उसकी वैधता समाप्त हो जाती है। इसलिए शोध अभिकल्प की अवधारणा अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। शोध अभिकल्प शोध समस्याओं के बारे में उत्तर प्राप्त करने की एक वैज्ञानिक योजना अथवा रूपरेखा है जिसके द्वारा शोध समस्याओं का उत्तर प्राप्त किया जाता है। इसके द्वारा यह पता चलता है कि कितने स्वतन्त्र चर प्रयोग किये गये हैं, उनके कितने स्तर हैं, विजातीय चरों को नियन्त्रित करने के लिए किन-किन प्रविधियों का प्रयोग किया गया है तथा आश्रित चर का मापन किस रूप में हुआ है।

5.2 शोध अभिकल्प - अवधारणा

शोध समस्या के चयन एवं निर्माण के पश्चात् शोध अभिकल्प के प्रकार के बारे में शोधकर्ता को निर्णय करना पड़ता है। इस सन्दर्भ में जे० सी० टाउनसण्ड ने कहा ''कि शोध समस्या खोज लेने के बाद उसका पूर्णतया विश्लेषण एवं परिभाषीकरण कर लेने पर परिकल्पना या एक से अधिक परिकल्पनाओं का रूप स्पष्ट होता है और शोध अभिकल्प के विकास की सही दिशा में द्वितीय चरण के रूप में प्रकट होता है।''[1]

समाजशास्त्रीय शोध परियोजना के अभिकल्प को क्रिया की योजना, शोध-नीति एवं सम्पूर्ण क्रिया विधि की संरचना कहा जा सकता है जिसके द्वारा समाज के विशिष्ट पक्ष या विशिष्ट समस्या के बारे में अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त करने की इच्छा की जाती है। शोध के प्रश्नों का एक महत्वपूर्ण अंश शोध अभिकल्प या शोध प्ररचना (Research Design) होता है। अभिकल्प शोध के लक्ष्य तक पहुँचने का साधन प्रस्तुत करता है। इसी बारे में डब्लू. जे. गुडे एवं पी. के. हाट का कहना है कि ''जो शोधकर्ता शोध अभिकल्प के निर्माण की समस्याओं से पूर्णत: परिचित रहता है, उसे अपने प्रदत्त के विश्लेषण में कोई कठिनाई नहीं होती है।''[2]अर्थात् शोध अभिकल्प एक प्रकार से शोध करने में अपनाई जाने विधि का पूरा खाका है यदि शोधकर्ता अभिकल्प की विशेषताओं और उसके निर्माण की प्रक्रियाओं से परिचित रहता है तो शोध अध्ययन उसके लिए बहुत ही आसान हो जाता है। इसको उल्लिखित करते हुए समाज वैज्ञानिक पी. वी. यंग ने कहा है कि शोध अभिकल्प शोध के एक अंश की तार्किक एवं सुव्यवस्थित योजना एवं निर्देशन है।''[3] इनके अनुसार - उपलब्ध समय, ऊर्जा, मुद्रा एवं प्रदत्त की उपलब्धता को ध्यान में रखकर ही अभिकल्प का अनुकूलन या चयन किया जाता है जो कि वांछनीय अथवा सम्भाव्य रूप से उन व्यक्तियों के समूहों या सामाजिक संगठनों पर लागू किया जा सकता है, जिनमें प्रदत्त की उपलब्धता हो।''[4]

संपूर्ण रूप से शुद्ध अभिकल्प का निर्माण एवं उसका परिपालन असम्भव तो नहीं परन्तु अत्यधिक कठिन है। इस सन्दर्भ में ई. ए. एच मेन का कहना है कि ''कोई भी अभिकल्प एकल अथवा संशुद्ध नहीं है।'' व्यावहारिक स्तर पर विभिन्न शोधकर्ता अपने सामाजिक शोध में अपने सैद्धान्तिक अथवा पद्धति शास्त्रीय झुकाव के अनुकूल ही अभिकल्प का चुनाव करते हैं। उनका यह भी कहना है कि एक शोध अभिकल्प बिना विचलन का अनुसरण करते हुए कोई उच्चीकृत या विशिष्टीकृत योजना नहीं है परन्तु शोध को यह ठीक एवं निश्चित दिशा में निर्देशित अवश्य करती है।''[5]

5.3 परिभाषा

उपरोक्त विश्लेषण के उपरान्त यह आवश्यक है कि शोध अभिकल्प की परिभाषा जो विभिन्न शोध रीति वैज्ञानिकों द्वारा दी गयी है उसका उल्लेख किया जाय—

समाज वैज्ञानिक आर० एल० एकॉफ के अनुसार

अभिकल्प निर्णयों को कार्यान्वित करने की दिशा में, किसी परिस्थिति से उत्पन्न पूर्व निर्णयों को निर्धारित करने की एक प्रक्रिया है। किन्हीं अपेक्षित परिस्थितियों को नियंत्रित करने की दिशा में यह एक संकल्पित पूर्वानुमान की प्रक्रिया है।[6]

फ्रेड एन. करलिंगर के अनुसार

''शोध अभिकल्प अनुसन्धान के लिए कल्पित एक योजना, एक संरचना तथा एक प्रणाली है, जिसका एक मात्र प्रायोजन शोध सम्बन्धी प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करना तथा प्रसरणों का नियन्त्रण करना होता है।''[7]

विभिन्न समाज वैज्ञानिकों ने शोध अभिकल्प को अपने-अपने ढंग से परिभाषित किया है। परन्तु सभी परिभाषाओं को पारिभाषित एवं उल्लिखित करना यहाँ सम्भव एवं अपेक्षित नहीं है। इन परिभाषाओं में फ्रेड एन. करलिंगर द्वारा दी गयी परिभाषा उपयुक्त प्रतीत होती है। इनके द्वारा प्रयुक्त-योजना, संरचना एवं शोध नीति को शोध अभिकल्प के तीन पक्षों के रूप में पुनः परिभाषित करने की आवश्यकता है जो निम्न है—

योजना — यह शोध का व्यापक स्वरूप होता है जिसमें परिकल्पनों के निर्माण से लेकर तथ्यों के विश्लेषण तक, सभी आवश्यक चरणों की रूपरेखा निर्धारित रहती है। इस प्रकार इसका अभिप्राय शोध का पूर्ण कार्यक्रम अथवा परियोजनो से है।

संरचना — यह शोध का व्यापक स्वरूप न होकर, एक विशिष्ट निदर्श (Paradigm) बन जाता है।

प्रो. देवेन्द्र ठाकुर के अनुसार निदर्श का हमारा तात्पर्य एक संरचना अर्थात् एक मार्ग दर्शक अथवा निर्देशक माडल है जो कि चरों के परिचालनीकरण को नियमित करती है। चरों के परिचालनीकरण का तात्पर्य सूचकों के सम्बन्ध में उन्हें परिभाषित करना अथवा रूपरेखा तय करना है और एक दूसरे से उनके सम्बन्धों का विशेष रूप से या अलग-अलग उल्लेख करना है।[8]

विशिष्ट निदर्श के दो पक्ष हो जाते हैं—

(क) शोध योजना (Research Scheme)

(ख) चरों या परिवर्त्यों का स्वरूप (Nature of variables)

शोध नीति—इसके अन्तर्गत उन प्रविधियों तथा तकनीकों का उल्लेख रहता है जो परिकल्पना परीक्षण हेतु, तथ्यों के संकलन तथा विश्लेषण में काम आते हैं। शोध परियोजना को उद्देश्यों को निश्चित करने के पश्चात् परीक्षण की विधियों एवं क्रियाविधियों का विशेष रूप से उल्लेख करना पड़ता है।

5.4 शोध अभिकल्प का उद्देश्य

प्रो. देवेन्द्र ठाकुर के अनुसार किसी भी शोध प्रकल्प के मूलभूत दो उद्देश्य होते हैं—

(अ) शोध प्रश्नों के उत्तर देना, जैसे - वैधता, वस्तुनिष्ठता, जहाँ तक सम्भव हो कम व्यय और अधिक यथार्थ के रूप में।

(ब) प्रसरणों को नियंत्रित करते हुए शोध समस्या से सम्बन्धित आनुभाविक प्रमाण उपलब्ध कराना ।सभी प्रकार की शोध गतिविधियों का उद्देश्य शोध प्रश्नों का उत्तर देना होता है। हालांकि शोध प्रश्नों का उत्तर देने की प्रवृत्ति समस्याओं की प्रवृत्ति के अनुसार स्थितियों -परिस्थितियों के आधार पर भिन्न - भिन्न होती हैं।[9]

समाज वैज्ञानिकों ने मूल्य के विविध, नाम रूप परिवर्तित, परिवर्ती शोध प्रकल्पों का उपयोग किया है। इस सन्दर्भ में मटील्डा व्हाइट रिले में लेख प्रासंगिक है जो अपनी ''पैराडाइम : सम आल्टरनेटिव्स ऑप सोशियोंलोजिकल रिसर्च में निम्नलिखित विषयों अथवा मदों से स्वयं को सम्बन्धित करती है—

P = पैराडाइम = निदर्श

P – I शोध केस (Case) की प्रकृति : व्यक्तिगत भूमिका (एक सामूहिकता में); अन्तर्सम्बन्धित समूह सदस्यों के जोड़े अथवा डायड: उपसमूह; समाज; इसके कुछ सम्मिलित।

P–II केसों की संख्या : एकल केस, कुछ चयनित केसेस; कई चयनित केसेज

P–III सामाजिक - सांसारिक सन्दर्भ : एकल अवधि में समाज से केसेज-अनेक अवधियों अथवा अनेकों समाजों के केसज;

P–IV निदर्शन के लिए प्राथमिक आधार: प्रतिनिधित्वात्मक, विश्लेषणात्मक : दोनों।

P–V समय कारक— स्थितिका अध्ययन (समय अन्दर एकल बिन्दु को कवर करते हुए) गतिकी अध्ययन समय पश्चात् प्रक्रिया और परिवर्तन को कवर करते हुए'

P–VI अध्ययन के अन्तर्गत व्यवस्था पर शोधकर्ता के नियंत्रण का स्तर —कोई नियंत्रक नहीं, अव्यवस्थित नियंत्रण व्यवस्थित नियंत्रण।

P–VII सामग्री अथवा प्रदत्त के प्राथमिक स्रोत : शोधकर्ता द्वारा निश्चित उद्देश्य के लिए उसके पास नये तथ्यों का संकलन : उपलब्ध सामग्री जो कि शोध समस्या के लिए प्रासंगिक हो सकती है।

P–VIII सामग्री / प्रदत्त संकलन की पद्धति : अवलोकन; प्रश्नावली, संयुक्त अवलोकन और प्रश्न पूछना; अन्य।

P–IX शोध में प्रयुक्त गुणों की संख्या : एक; थोड़ा; अनेक ।

P–X एकल गुणों को संचालित करने की विधि या पद्धति : व्यवस्थित वर्णन; चरों का मापन।

P–XI गुणों के बीच सम्बन्धों को संचालित करने की पद्धति : व्यवस्थित वर्णन; व्यवस्थित विश्लेषण।

P–XII व्यवस्था गुणों का उपचार जैसे : एकल : एकात्मक: सामूहिक।

P = Paradigm — निदर्श

उपरोक्त अध्ययन प्रकल्प पी. वी यंग द्वारा प्रयुक्त लेख : जनरल ओवर व्यू ऑफ ए रिसर्च प्रोजेक्ट इन प्रासॅस, से तुलना कर सकते हैं—

उपरोक्त पैराडाइम को समस्या की प्रकृति, उत्तर की प्रकृति स्थितियों - परिस्थितियों , शोध उद्देश्यों के अनुसार शोध वैज्ञानिक अपनी शोध समस्यायों के उत्तर प्राप्त करने के लिए प्रयुक्त करते हैं। शोध समस्या का दूसरा मूलभूत उद्देश्य प्रसरण का नियंत्रण है । यह एक प्रकार से शोधकर्ता का नियंत्रण है कि वह किस प्रकार अपनी सामग्री का संग्रह तथा विश्लेषण करे । शोध अभिकल्प प्रयोगात्मक चरों के परिचालन में सहायक होता है। जैसे- कल्पित कारण अथवा प्रयोगात्मक चरों एवं प्रभावों जैसे अश्रित चरों के बीच सम्बन्ध स्थापित करने में। इस प्रकार के सम्बन्ध की स्थापना के लिए यह आवश्यक है कि दूसरे चरों का प्रभाव (प्रयोगात्मक के अलावा भी) नियंत्रित होना चाहिए। इस प्रकार के चरों को विजातीय चर कहते हैं। यह व्याख्या करते हुए कि किसी भी शोध प्रकल्प का उद्देश्य प्रसरण नियंत्रण करता है, इसके लिए अग्रांकित तीन सिद्धान्त प्रस्तुत किये गये हैं—

5.5 सिद्धान्त

(क) क्रमबद्ध प्रसरण की अभिवृद्धि

(ख) अशुद्धियों के प्रसरण का न्यूनीकरण

(ग) विजातीय क्रमबद्ध प्रसरण का नियंत्रण

उपरोक्त सिद्धान्त को सूत्र रूप में 'अभिन्यूनीय ' (MAXMINCON) सिद्धान्त कहा जाता है।

प्रो. गोपाल जी के अनुसार

1- इसके लिए शोध अभिकल्प को इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है कि स्वतन्त्र चर (परिवर्त्य) पूरी तरह परिवर्तित किया जा सके तथा उसके आश्रित चरों को भी परिचालित करना आसान हो जाय।

2- एक स्वतन्त्र चर, जिसे प्रयोग चर के रूप में परिचालित किया जाता है, उसके अतिरिक्त अन्य सभी समान दीखने वाले स्वतन्त्र चरों (विजातीय चरों) को नियन्त्रित कर प्रभाव शून्य अथवा तटस्थ (Neutral) अथवा स्थिर बना दिया जाता है। इस प्रकार एक ही परिचालित स्वतन्त्र चर का प्रभाव शुद्ध रूप से आश्रित चरों के रूप में घटित हो जाता है।

इस उद्देश्य प्राप्ति के लिए निम्नलिखित विधियाँ व्यवहार में प्रयुक्त होती है—

(क) विजातीय चरों का निष्कासन (Elimination of Extraneous Variable)

(ख) यादृच्छीकरण (Randomisation)

(ग) विजातीय चरों का प्रयोग-अभिकल्प में नियोजित चर के रूप में अंगीभूत कर लेना। Building the extraneous variable into the Research Design as an assigned variable)

(घ) पात्रों का सादृश्यीकरण - (Matching the subjects)

इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए, शोध अभिकल्प का प्रकार, संरचना और पर्याप्तता पर काफी सीमा तक निर्भर करता है। प्रत्येक प्रकार के प्रसरण के व्याख्या करने की अभी आवश्यकता है।[12]

5.5.1 क्रमबद्ध प्रसरण की अभिवृद्धि

क्रमबद्ध प्रसरण की अभिवृद्धि का तात्पर्य स्वतन्त्र चर पर प्रयोगात्मक चर का प्रभाव आवर्धित अथवा प्रमाणित करता है। प्रसरण का सम्बोध और इसके नियंत्रण की उदाहरण के आधार पर पुन: व्याख्या कर सकते हैं— मान लीजिए एक समाजशास्त्र के प्रोफेसर अथवा विश्वविद्यालय के प्रशासक कक्षा में छात्रों के निष्पादन में सुधार चाहते हैं। इसके लिए उनको शिक्षा देने के लिए सर्वोत्तम वृद्धि को खोजना है। वह उपकल्पना का निर्माण करते है कि छात्रों को पढ़ने के स्वभाव को बढ़ाया जाय अथवा उनके कक्षा निष्पादन का 'सहभागी विधि' द्वारा सुधार किया जाय। जैसे कक्षा में वाद-विवाद, संगोष्ठियों सहभागिता द्वारा सामान्य वक्ता विधि की तुलना में इस उदाहरण में प्रयोगात्मक चर 'शिक्षण की सहभागिता विधि' होगी जिसका प्रभाव प्रोफेसर अथवा प्रशासक मापने की इच्छा करते हैं। शिक्षण की वक्ता विधि की तुलना के रूप में छात्रों का निष्पादन स्वतन्त्र चर है। दूसरे अध्ययन में छात्रों के पढ़ने का स्वभाव स्वतन्त्र चर के रूप में और प्रयोगात्मक चरों के रूप में समान रूप से लिया जा सकता है।

5.5.2 अशुद्धियों के प्रसरण का न्यूनीकरण

अशुद्धियों का प्रसरण अव्यवस्थित ढंग से किये गये मापों के विचलन से उत्पन्न होता है। परन्तु इसमें मौलिक विशेषता यह है कि इसकी अशुद्धियाँ एक दूसरे को संतुलित कर प्रभाव शून्य बना देती है। अशुद्धियों के प्रसरण के लिए भविष्यवाणी संभव नहीं, पर क्रमबद्ध प्रसरण के लिए मूलरूप से भविष्यवाणी सम्भव है।

अशुद्धियों के प्रसरण के कुछ प्रमुख स्रोत निम्नलिखित हैं-

(क) पात्रों में सन्निहित वैयक्तिक विभिन्नता के तत्व, जिन्हें क्रमबद्ध प्रसरण करते हैं।

(ख) मापन की अशुद्धियां, जैसे एक प्रयास से दूसरे प्रयास में परिवर्तन, क्षणिक ध्यान विचलन, आंशिक थकान, स्मरण का किंचित दोष, पात्रों में सांवेगिक अवस्था का किंचित परिवर्तन आदि। शोध में अशुद्धियों के प्रसरण के न्यूनीकरण के लिए निम्नलिखित नियंत्रण आवश्यक है।[13]

(क) नियंत्रित परिस्थिति के द्वारा मापन की अशुद्धियों (Errors of Measurement) को न्यूनतम बना देना अथवा नगण्य बना देना। इसके लिए पात्रों का उपयुक्त निर्देशन तथा विजातीय चरों का पर्याप्त रूप से निष्कासन या स्थिरीकरण आवश्यक हो जाता है।

(ख) मापन की विश्वसनीयता बढ़ा देना। इसका अभिप्राय यह है कि प्राप्तांकों में विचलन जितना ही कम होगा उसमें विश्वसनीयता उतनी ही अधिक बढ़ जायेगी।

(ग) प्राप्तांकों के मध्यमानों की सार्थकता की जाँच कर लेना।

5.5.3 विजातीय क्रमबद्ध प्रसरण का नियंत्रण

इसका तात्पर्य दूसरे स्वतन्त्र चरों के प्रभाव को समाप्त करना या नियन्त्रित करना है जो कि सम्भाव्य रूप से आश्रित चर को प्रभावित करते हैं परन्तु विशिष्ट शोध कार्य के प्रसंग में विजातीय अथवा अनावश्यक माने जाते हैं। उनके प्रभाव को समाप्त करना आवश्यक है इसलिए कि आश्रित चर में अन्तर कल्पित कारण के लिए ही स्थान ग्रहण करता है। उपरोक्त उदाहरण के मामले में (प्रोफेसर और विश्वविद्यालय के प्रशासक द्वारा कक्षा में छात्रों के निष्पादन में सुधार)— आयु वृद्धि, पूर्व विद्यालय का परिवेश, पारिवारिक पृष्ठभूमि इत्यादि अतिरिक्त कारक हैं जो छात्रों की पढ़ाई का स्वभाव अथवा कक्षा में निष्पादन को प्रभावित कर सकते हैं। शोधकर्ता का उद्देश्य इस प्रकार के विजातीय चरों के प्रभाव को न्यूनीकृत करना, अलग करना, शून्य करना अथवा समाप्त करना है। प्रयोगात्मक चर— ''शिक्षण विधियों'' का स्वतन्त्र चर छात्रों के कक्षा में निष्पादन अथवा छात्रों की पढ़ने की आदत पर प्रभाव को इस क्रम में प्रदर्शित करता है।

विशेषज्ञों ने सामाजिक शोध में विजातीय चरों को नियंत्रित करने की निम्नलिखित छह विधियों को अधिक महत्वपूर्ण बतलाया है—

विलोपन (Elimination) शोध में या प्रयोग में बहिरंग चरों (विजातीय चरों) — को नियन्त्रित करने का सबसे आसान तरीका यह है कि उसे प्रयोगात्मक परिस्थिति से निष्कासित कर दिया जाए ताकि आश्रित चर पर उसका प्रभाव अपने आप ही विलोपित हो जाए । उदाहरण स्वरूप यदि प्रयोग ऐसा है जिसमें बाहरी आवाज एक बहिरंग चर है, तो हम प्रयोगशाला को यदि ध्वनि निरोधी (Sound Proof) बना देते हैं तो बहिरंग चर अपने आप ही प्रयोगात्मक परिस्थिति से विलोपित हो जाएगा और तब उससे उत्पन्न होने वाला प्रसरण (Variance) अपने आप ही नियन्त्रित हो जायेगा। उसी तरह से मान लिया जाए कि कोई प्रयोगकर्ता पाठ की लम्बाई का प्रभाव सीखने की गति (rate) पर क्या पड़ता है जानने के लिए प्रयोग करना चाहता है। इस प्रयोग में पाठ की अर्थ पूर्णता (Meaning fullness) एक महत्वपूर्ण बहिरंग चर होगा क्योंकि इसमें अन्तर होने से पाठ के सीखने की गति सीधे नियन्त्रित करने के लिए शोधकर्ता मात्र निरर्थक पाठ जैसे निरर्थक पद (Nonsense Syllabus) का ही प्रयोग कर सकता है। ऐसा करने से चूँकि पाठ की अर्थपूर्णता अपने आप विलोपित हो जाती है, अत: उसे उत्पन्न प्रसरण भी नियन्त्रित हो जाता है।

स्थिरता (Constancy) —

जब बहिरंग चरों (Extraneous Variable) को शोध या प्रयोगात्मक परिस्थिति से विलोपित (Eliminate) करके नियन्त्रित करना संभव नहीं होता है, तो उसके मान (Value) को सभी अवस्थाओं (Conditions) में एक समान रखकर अर्थात् उसमें स्थिरता लाकर हम उसके प्रभावों को नियन्त्रित कर लेते हैं।

दूसरे शब्दों में, नियन्त्रण की इस अवधि में सभी प्रयोज्य (Subjects) का बहिरंग चर (विजातीय चरों) के एक ही मान (Value) से सामना कराया जाता है, ताकि उसका पड़ने वाला प्रभाव सभी प्रयोज्यों पर एक समान हो। उदाहरणस्वरूप, यदि कोई प्रयोग ऐसा है जिसमें 10 प्रयोज्य हैं, तो उस सभी को एक ही कमरे में बैठाकर यदि प्रयोग किया जाता है, तो इसमें कुछ बहिरंग चर जैसे कमरे की दीवाल का रंग, कमरे में रखे फर्नीचर तथा कमरे की अन्य तड़क-भड़क का प्रभाव सभी प्रयोज्य पर एक समान पड़ेगा। अत: इन चरों से आश्रित चर (Dependent Variable) में होने वाला परिवर्तन सभी प्रयोज्यों के लिए एक समान होगा। फलत: उनके प्रभाव से शोध के अन्तिम परिणाम में कोई विभेद (discrimination) नहीं होगा परन्तु कुछ प्रयोज्यों को एक कमरे में तथा कुछ प्रयोज्यों को दूसरे कमरे में बैठाकर जब प्रयोग किया जाता है, तो संभव है, कि उपर्युक्त बहिरंग चर इन दोनों अवस्थाओं के लिए समान या समरूप (Constant) न हों और तब उससे आश्रित चर में इस विभिन्नता के कारण अन्तर हो सकता है। उसी तरह कुछ जैविक चर (Organismic Variables) जैसे प्रयोज्यों के यौन (Sex) ,उम्र (Age), बुद्धि आदि कभी किसी-किसी प्रयोग में महत्वपूर्ण बहिरंग चर (विजातीय चरों) के रूप में उपस्थित होते हैं। ऐसे जैविक बहिरंग चरों को नियन्त्रित करने के लिए शोधकर्ता सिर्फ उन प्रयोज्यों को चुनता है, जो विशेष बहिरंग चर पर समान हों। जैसे, यदि सभी प्रयोज्य एक ही यौन (Sex) के हों अर्थात् पुरुष हों या स्त्री, तो स्वभावत: यौन का प्रभाव अपने आप नियन्त्रित हो जाएगा। उसी ढंग से यदि सभी प्रयोज्यों की उम्र सीमा समान हो जैसे 14-16 वर्ष की उम्र के ही प्रयोज्यों को अध्ययन में रखा जाए तो उससे उम्र का प्रभाव अपने आप नियन्त्रित हो जाएगा। उसी ढंग से बुद्धि (intelligence) के प्रभाव को नियन्त्रित किया जा सकता है। यदि शोध ऐसा है जिसमें दो या दो से अधिक समूह भाग लेंगे तो प्रत्येक समूह में समान बुद्धि- लब्धि के प्रयोज्यों को रखकर सुमेलित समूह (Matched Group) तैयार कर लिया जाएगा। इस प्रक्रिया को मिलान (Matching) की प्रक्रिया कहा जाता है। उसी तरह से उपकरण (Apparatus) से संबंधित बहिरंग चरों को नियन्त्रित करने के लिए यह आवश्यक है कि सभी प्रयोज्यों की अनुक्रियाओं को एक ही उपकरण द्वारा रिकार्ड किया जाए तथा सभी प्रयोगात्मक अवस्थाओं में समरूप उपकरण का प्रयोग किया जाए। ऐसी स्थिति में शोधकर्ता विश्वास के साथ यह कह सकता है कि आश्रित चर में होने वाला परिवर्तन स्वतन्त्र चर में किये गये जोड़-तोड़ (Manipulation) के फलस्वरूप हुआ है।

संतोलन (Balancing)—जब शोधकर्ता या प्रयोग कर्ता के लिए बहिरंग चरों को नियन्त्रित करने के लिए विभिन्न प्रयोगात्मक अवस्थाओं (Experimental Conditions) को एक समान या स्थिर (Constant) रखना संभव नहीं हो पाता है, तो वह संतोलन (Balancing) के सहारे इन चरों के प्रभाव को नियन्त्रित करता है। संतोलन का प्रयोग निम्नांकित दो परिस्थितियों में किया जाता है—

(क) जब शोधकर्ता बहिरंग चरों की पहचान करने में असमर्थ हो, तथा

(ख) जब शोधकर्ता बहिरंग चरों की पहचान करके उन्हें नियन्त्रित करने के लिए कुछ विशेष कदम उठाता हो।

जहाँ तक पहली परिस्थिति का प्रश्न है, इसमें शोधकर्ता बहिरंग चरों (विजातीय चरों) की संख्या तथा उसके स्वरूप के बारे में कुछ नहीं सोचता है बल्कि वह प्रयोज्यों के सभी समूहों (Group) के साथ समान ढंग से विवेचन (Treatment) करता है। परन्तु स्वतन्त्र चर पर प्रयोगात्मक समूह तथा नियन्त्रित समूह (Control Group) का विवेचन अलग ढंग से करता है। इसका परिणाम यह होता है कि जो भी बहिरंग चर प्रयोग के दौरान क्रियाशील होते हैं, वे प्रयोगात्मक समूह (Experimental Group) तथा नियन्त्रित समूह (Control Group) को समान ढंग से प्रभावित करते हैं। अत: उनका प्रभाव अपने आप ही संतुलित (Balanced) होकर तटस्थ (Neutral) हो जाता है और आश्रितचर में होने वाले परिवर्तन

का कारण मात्र स्वतन्त्र चर में किया गया जोड़-तोड़ ही रह जाता है। इसे एक उदाहरण द्वारा इस प्रकार समझाया जा सकता है— मान लिया जाए कि किसी प्रयोग में दो बहिरंग चर हैं तथा दो समूह अर्थात् एक प्रयोगात्मक समूह (Experimental Group) है तथा दूसरा नियन्त्रित समूह (Control Group) है और यह भी मान लिया जाए कि इस अध्ययन में एक स्वतन्त्र चर (Independent Variable) है तथा एक आश्रित चर (Dependent Variable) है। दो बहिरंग चरों के प्रभाव को नियन्त्रित करने के लिए उनके प्रभावों को समान रूप से प्रयोगात्मक समूह (Experimental Group) तथा नियंन्त्रित समूह (Control Group) पर पड़ने दिया जाएगा, ऐसी स्थिति में बहिरंग चरों का प्रभाव अपने आप संतुलित (Balanced) होकर समाप्त हो जायेगा अर्थात् उसका कोई विभेदी प्रभाव (Discriminating Effect) आश्रितचर पर नहीं पड़ेगा।

(Representation of the use of control group as a technique of balancing)

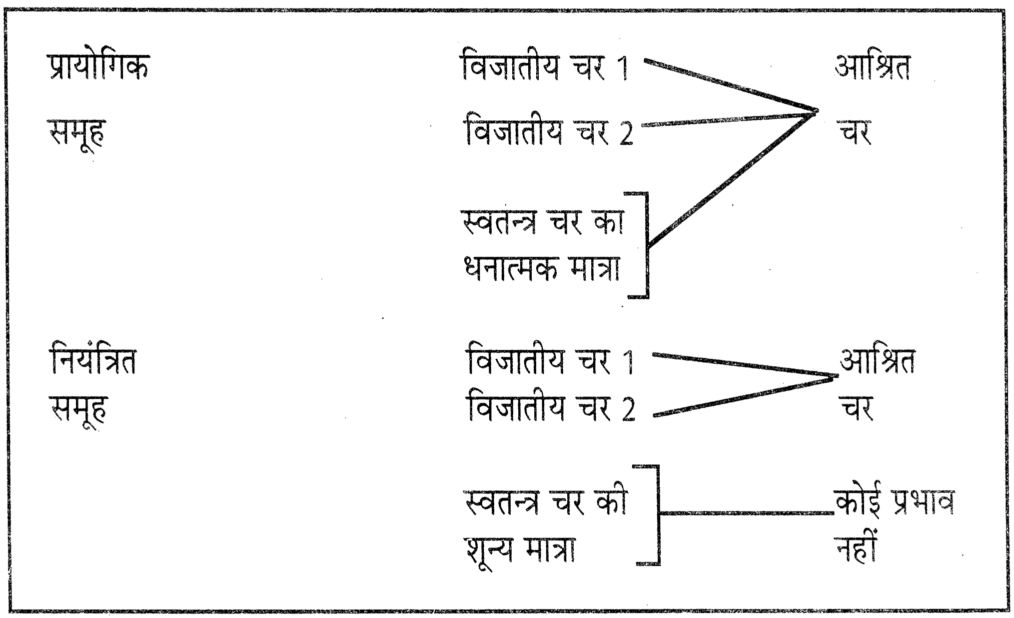

नियंत्रित समूह का संतोलन प्रविधि के रूप में निरुपण —

दो बहिरंग चरों का प्रभाव चूंकि दोनों समूहों अर्थात् प्रयोगात्मक समूह तथा नियन्त्रित समूह पर समान रूप से पड़ रहा है और मात्र स्वतन्त्र चर का प्रभाव ही इन दोनों समूहों पर अलग-अलग ढंग से पड़ रहा है। अत: आश्रित चर में होने वाला परिवर्तन स्पष्टतत: स्वतन्त्र चर में किये गये जोड़-तोड़ का ही परिणाम माना जा सकता है।

नियन्त्रित समूह (Control Group) के माध्यम से बहिरंग चरों (Extraneous Variable) के प्रभाव को संतुलित (Balanced) करने में एक महत्वपूर्ण पूर्व कल्पना (Assumption) यह होती है कि प्रत्येक समूह के सभी प्रयोज्य (Subjects) प्रारम्भिक (Initially) तौर पर तुल्य (Equivalent) हैं।

संतोलन (Balancing) की दूसरी परिस्थिति वह होती है जिसमें शोधकर्ता को यह पता होता है कि इस प्रयोग में कौन-कौन बहिरंग चर (Extraneous Variable) हैं तथा उनकी संख्या कितनी है। इन चरों को नियन्त्रित करने के लिए वह विशेष कदम उठाता है। उदाहरणस्वरूप, मान लिया जाए कि शोधकर्ता

को यह पता है कि अमुक प्रयोग या शोध में यौन (Sex) एक बहिरंग चर (Extraneous Variable) है। इस चर को नियन्त्रित करने के लिए सबसे उत्तम तरीका यह है कि सभी प्रयोज्यों का यौन (Sex) चाहे पुरुष हो या स्त्री एक ही रखा जाए। परन्तु यदि अध्ययन ऐसा है जिसमें दोनों यौन के प्रयोज्यों को लिया जाना आवश्यक है तो शोधकर्ता को ऐसी परिस्थिति में विशेष कदम उठाना पड़ता है। ऐसी परिस्थिति में शोधकर्ता या प्रयोगकर्त्ता सभी समूहों में दोनों यौन के प्रयोज्यों की संख्या बराबर करके यौन (Sex) के प्रभाव को संतुलित (Balanced) कर सकता है। इस संतुलित अवस्था में आश्रित चर पर यौन का प्रभाव यदि कुछ पड़ता हो तो, समान रूप से पड़ेगा।

अत: आश्रित चर पर यौन (Sex) के प्रभाव से होने वाला विशेष अन्तर सभी समूहों के लिए एक समान होगा, जिससे प्रयोग के अन्तिम परिणाम की व्याख्या वैज्ञानिक ढंग से हो पायेगी। इसी ढंग से शोधकर्ता उम्र (Age) जैसे बहिरंग चर (विजातीय चर) के प्रभाव को प्रत्येक समूह में प्रत्येक उम्र वर्ग (Age classification) से समान प्रयोज्यों (Subject) को लेकर संतुलित कर सकता है।

प्रतिसंतोलन (Counter Balancing) – प्रति संतोलन का उपयोग करके बहिरंग चरों के प्रभाव को उन प्रयोगों (Experiments) या शोधों (Researches) में नियन्त्रित किया जाता है जिसमें एक से अधिक प्रयोगात्मक अवस्थाएँ (Experimental Conditions) होती हैं और प्रत्येक अवस्था में प्रत्येक प्रयोज्य (Subjects) कार्यरत रहता है। इस तरह के प्रयोग में जहाँ प्रत्येक प्रयोज्य प्रत्येक प्रयोगात्मक अवस्था में कार्यरत रहता है सामान्यत: दो तरह के क्रम प्रभाव (Order Effects) (जो बहिरंग चर कहलाते हैं) उत्पन्न होते हैं— अभ्यास प्रभाव (Practice Effects) तथा थकान प्रभाव (Fatique Effects)। ऐसा संभव है कि जब प्रयोज्य प्रयोगात्मक अवस्था A से प्रयोगात्मक अवस्था B में कार्य करना प्रारम्भ करें तो अभ्यास प्रभाव (Practice Effects) के कारण प्रयोगात्मक अवस्था B में उसका निष्पादन (अर्थात्) आश्रित चर पर उसका प्राप्तांक (Score) पहले से अधिक हो जाए या यह भी संभव हो कि थकान प्रभाव (Fatigue Effets) के कारण उसका निष्पादन प्रयोगात्मक अवस्था B में पहले की अपेक्षा कम हो जाए। प्रतिसंतोलन (Counter Balancing) का उपयोग इन दोनों तरह के बहिरंग चरों (Extraneous Variable) अर्थात् अभ्यास प्रभाव (Practive Effects) तथा थकान प्रभाव (Fatique Effects) को संतुलित कर उसे नियन्त्रित करने के लिए किया जाता है। प्रतिसंतोलन द्वारा इन दोनों तरह के प्रभावों का प्रभाव प्रत्येक प्रयोगात्मक अवस्था में समान रूप से पड़ता है। अत: प्रभाव अपने आप नियन्त्रित हो जाता है।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि प्रतिसंतोलन (Counter Balancing) का बहिरंग चरों के नियन्त्रण के रूप में वहीं प्रयोग किया जाना चाहिए जब प्रयोगात्मक अवस्था A से प्रयोगात्मक अवस्था B में होने वाला अन्तरण (Transfer) प्रतिसम (Symmetrical) न होकर अप्रतिसम (Asymmetrical) होता है। प्रतिसम अन्तरण (Symmetrical transfer) तथा अप्रतिसम अन्तरण (Asymmetrical Transfer) का एक-एक उदाहरण इस तालिका में दिया गया है।

तालिका 1

प्रयोगात्मक अवस्था A तथा B के बीच प्रतिसम अन्तरण (Symmetrical Transfer) तथा अप्रतिसम अन्तरण (Asymmetrical Transfer) का नमूना :-

प्रयोज्यों की संख्या (N = 10)	प्रतिसम अन्तरण (Symmetrical Transfer)			अप्रतिसम अन्तरण (Asymmetrical Transfer)		
प्रयोज्यों की कुल संख्या का आधा (N = 5)	A 7	B 9	अन्तर 2	A 7	B 9	अन्तर 2
प्रयोज्यों की कुल संख्या का आधा (N = 5)	4	6	2	4	8	4

तालिका 1 से स्पष्ट है कि इसमें प्रयोज्यों की कुल संख्या (N = 10) 10 है जिसे दो भागों में बराबर-बराबर की संख्या में बाँटा गया है। प्रत्येक भाग के प्रयोज्य को दोनों प्रयोगात्मक अवस्थाओं (A तथा B) में कार्यरत रखा गया है। तालिका में स्पष्ट है कि जब प्रयोज्यों को A अवस्था में पहले रखा गया तो उससे आश्रित चर पर 7 प्राप्तांक आया तथा बाद की B अवस्था में 9 प्राप्तांक आया। दोनों का अन्तर 9-7=2 आया। दूसरी तरफ बाकी आधे प्रयोज्यों का प्राप्तांक A अवस्था में 4 तथा B अवस्था में 6 आया। यहाँ भी अन्तर 6-4=2 का है। अत: दोनों समूहों के लिए अवस्था A से B में प्राप्तांक का अन्तर 2-2 था। यह स्पष्टत: एक प्रतिसम अन्तरण (Symmetrical Transfer) का उदाहरण है। परन्तु तालिका के दायें कोने में अप्रतिसम अन्तरण को दिखलाया गया है। तालिका से स्पष्ट है कि प्रयोज्यों के आधे समूह द्वारा A तथा B में 2 प्राप्तांक का अन्तर है परन्तु बाकी आधे प्रयोज्यों के लिए A तथा B में 4 प्राप्तांक का अन्तर है। जो स्पष्टत: अप्रतिसम अन्तरण (Asymmetrical Transfer) को बतला रहा है। प्रतिसंतोलन का प्रयोग ऐसी ही परिस्थितियों में किया जाता है जहाँ अप्रतिसम अन्तरण (Asymmetrical Transfer) की संभावना होती है।

प्रतिसंतोलन (Counter Balancing) द्वारा किस ढंग से अभ्यास प्रभाव (Prctice Effect) तथा थकान प्रभाव (Fatique Effects) जैसे बहिरंग चरों (Extraneous Variable) का नियन्त्रण होता है, इसे एक उदाहरण द्वारा इस प्रकार समझाया जा सकता है— मान लिया जाए कि कोई शोधकर्ता, परिणाम ज्ञान (Knowledge of Result) का प्रभाव रेखा-आरेखण कार्य (Line Drawing Task) पर क्या पड़ता है, यह अध्ययन करना चाहता है। यह मान लिया जाए कि इसके लिए वह 10 प्रयोज्यों का यादृच्छिक ढंग से चयन करता है तथा इस अध्ययन में दो प्रयोगात्मक अवस्थाएँ (Experimental Conditions) ली गई हैं। एक प्रयोगात्मक अवस्था वह है जिसमें प्रयोज्यों को अपने कार्य का परिणाम ज्ञान (Knowledge Result) दिया जाता है (Experimental Conditions A) तथा दूसरी प्रयोगात्मक का अवस्था वह है जिसमें प्रयोज्यों को अपने कार्य का परिणाम ज्ञान नहीं दिया जाता है। इस प्रयोग में स्पष्ट है चूँकि प्रयोज्यों का एक ही समूह दोनों अवस्थाओं अर्थात् A एवं B में कार्यरत है अत: अभ्यास प्रभाव (Practice Effects) तथा थकान प्रभाव (Fatique Effects) हो सकते हैं। इन दोनों तरह के बहिरंग चरों (Extraneous Variable) को नियंत्रित करने के लिए का एक नमूना तालिका 2 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका - 2

बहिरंग चरों का प्रतिसंतोलन द्वारा नियन्त्रण

प्रयोज्यों का वितरण	Experimental	Conditions
कुल प्रयोज्यों की आधी संख्या (N = 5)	A	B
	WKR	KR
प्रयोज्यों की बाकी आधी संख्या (N = 5)	KR	WKR

WKR = Without Knowledge of Results
परिणाम अज्ञान

KR = Knowledge of Results
परिणाम ज्ञान

तालिका 2 से स्पष्ट है कि दोनों प्रयोगात्मक अवस्थाएँ अर्थात् A और B प्रत्येक प्रयोज्य को समान संख्या में अर्थात् (दो-दो बार) दी गई हैं तथा प्रत्येक अवस्था समान संख्या में प्रत्येक सत्र (Session) में रखी गई है। इसके अलावा, प्रत्येक अवस्था एक दूसरे से आगे एवं पीछे समान संख्या में दी गई है। इस तरह से स्पष्ट है कि प्रतिसंतोलन के लिए निम्नांकित तीन नियमों (Principles) का पालन किया जाना आवश्यक है।

(A) प्रत्येक प्रयोगात्मक अवस्था प्रत्येक प्रयोज्य को समान संख्या में दी जानी चाहिए। (Experimental conditions must be presented to each subject equal number of times.

(B) प्रत्येक प्रयोगात्मक अवस्था की संख्या प्रत्येक आभास सत्र में एक समान होनी चाहिए। (Experimental conditions must be occur an equal number of times at each practice session,

(C) प्रत्येक प्रयोगात्मक अवस्था एक दूसरे के आगे और पीछे समान रूप से हो। (Experimental condition must proceed and follow all other conditions on equal number of times.

अंत में हम छात्रों को प्रतिसंतोलन (Counter-Balancing) तथा संतोलन (Balancing) में अन्तर भी बता देना उचित समझते हैं क्योंकि दोनों में समानता अधिक होने से छात्र इन दोनों को एक ही समझने की भूल कर सकते हैं। प्रतिसंतोलन का प्रयोग वहाँ किया जाता है, जहाँ प्रत्येक (Subject) को एक से अधिक प्रयोगात्मक अवस्थाओं में कार्यरत रहना पड़ता है और जहाँ प्रयोगकर्ता का प्रयास यह रहता है कि क्रम प्रभाव (Order Effects) अर्थात् अभ्यास प्रभाव (Practice Effect) तथा थकान प्रभाव (Fatique Effect) का प्रभाव सभी प्रयोगात्मक अवस्थाओं में समान रूप से वितरित हो ताकि इसका प्रभाव आश्रित चर पर विशिष्ट अन्तर न उत्पन्न कर दे। संतोलन (Balancing) का उपयोग वैसी परिस्थिति में किया जाता है जहाँ प्रत्येक प्रयोज्य को किसी एक ही अवस्था (Condition) का विवेचन (Treatment) मिलता है, अर्थात् प्रत्येक प्रयोज्य को किसी एक ही अवस्था में रखा जाता है। परन्तु बहिरंग चरों के

प्रभाव को समान रूप से सभी प्रयोगात्मक समूह (Experimental Group) एवं नियन्त्रित समूह (Control Group) पर पड़ने दिया जाता है। ऐसा करने से बहिरंग चरों का प्रभाव अपने आप संतुलित होकर प्रभावहीन हो जाता है।

बहिरंग चर को स्वतन्त्र चर के रूप में बदलना — (To convert the extraneous variable into an independent variable) —

बहिरंग चर के अवांछित प्रभाव (Unwanted Effect) के नियन्त्रित करने का एक सीधा तरीका यह है कि उसे प्रयोग या शोध में एक स्वतंत्र चर (Independent Variable) के रूप में बदलकर उपयोग किया जाए। ऐसी अवस्था में बहिरंग चर का अस्तित्व ही खत्म हो जायेगा, और साथ ही प्रयोगकर्ता या शोधकर्ता आश्रित चर पर इस चर के पड़ने वाले प्रभाव का भी विश्लेषण कर पायेगा। उदाहरणस्वरूप मान लिया जाए कि को शोधकर्ता या प्रयोगकर्ता महासार या अल्कोहल (alcohal) का प्रभाव टाइपिंग की गति (typing speed) पर क्या पड़ता है, यह देखना चाहता है। इसके लिए मान लिया जाए कि वह 20 प्रयोज्यों का चयन करता है, जो समान उम्, एक ही यौन (Sex) तथा समान बुद्धि लब्धि (Intelligence) के हैं। इसमें से 10 प्रयोज्यों को अल्कोहल पीने के लिए 2 घण्टे के बाद टाइप्राइटर (Typewriter) पर टाइप करने के लिए कहा जा सकता है। बाकी 10 प्रयोज्यों का दूसरा समूह बिना अल्कोहल पिए ही टाइपराइटर पर टाइप करने के लिए उसी समय बैठेगा। इस प्रयोगात्मक परिस्थिति में एक महत्वपूर्ण बहिरंग चर (विजातीय चर) टाइपराइटर का प्रकार (Types) है जिससे आश्रित चर अर्थात् टाइपिंग की गति (Rate) प्रभावित हो सकती है। सामान्यत: टाइपराइटर के दो प्रकार होते हैं। (Electronic Typewriter) तथा मैनुअल टाइपराइटर (Mannual Typewriter) जिस समूह को पहले प्रकार के टाइपराइटर पर टाइप करने लिए कहा जायेगा स्वभावत: उसकी टाइपिंग गति उस समूह की अपेक्षा जिसे दूसरे प्रकार का टाइपराइटर दिया जायेगा, अधिक होगी। इन बहिरंग चर के प्रभाव को अर्थात् टाइपराइटर के अन्तर (Typewriter Differences) के प्रभाव को अध्ययन में एक स्वतन्त्र चर (Independent Variable) के रूप में बदल कर नियन्त्रित किया जा सकता है। ऐसी परिस्थिति में प्रयोग के दो उद्देश्य (Purpose) हो जायेंगे। पहला टाइपिंग गति पर अल्कोहल के प्रभाव का अध्ययन करना तथा दूसरा टाइपिंग गति पर टाइपराइटर के अन्तरों के प्रभावों का अध्ययन करना। इस तरह के प्रयोग में अब दो समूह अर्थात् अल्कोहल पीने वाला समूह (N = 10) और अल्कोहल न पीने वाला (N = 10) की जगह पर चार समूह जो जायेंगे। जो निम्नांकित हैं—

तालिका 3

दो समूह डिजाइन का चार - समूह डिजाइन में परिवर्तन

समूह A	समूह B
10 प्रयोज्य	10 प्रयोज्य

दो समूह डिजाइन

	समूह A	समूह B
वैद्युत टाइपराइटर	5 प्रयोज्य	5 प्रयोज्य
मैन्युअल	5 प्रयोज्य	5 प्रयोज्य

चार समूह डिजाइन

दो समूह डिजाइन में प्रयोगकर्ता समूह A तथा समूह B के माध्य (Mean) की तुलना करके एक निष्कर्ष पर पहुँचेगा। इस डिजाइन में अल्कोहल का पीना स्वतन्त्र चर है। टाइपिंग की गति (Rate) आश्रित चर है तथा टाइपराइटर का प्रकार (Types) अर्थात् टाइपराइटर अन्तर (Typewriter Difference) प्रमुख बहिरंग चर (विजातीय चर) है। चार समूह डिजाइन में प्रयोगकर्ता इस बहिरंग चर (विजातीय चर) को अर्थात् टाइपराइटर के अन्तर को भी एक स्वतन्त्रचर के रूप में बदल देता है।

इसके परिणाम स्वरूप अब प्रयोगकर्ता को चार माध्य (Means) ज्ञात करने होंगे— समूह A का माध्य, समूह B का माध्य, वैद्युत टाइपराइटर पर टाइप करने वाले समूह का माध्य तथा मैनुअल टाइपराइटर पर टाइप करने वाले समूह का माध्य। प्रथम माध्यों (Means) के अन्तर द्वारा टाइपिंग गति (Typing Rate) पर अल्कोहल के प्रभाव का पता चलेगा तथा अन्तिम दो माध्यों में अन्तर द्वारा टाइपिंग गति पर टाइपराइटर के अन्तरों का पता चलेगा।

यादृच्छीकरण (Randomization)

बहिरंग चरों (विजातीय चरों) को नियंत्रित करने की उपरोक्त पांच विधियों में से किसी भी विधि का उपयोग जब किसी भी कारण से संभव नहीं हो, तो वैसी परिस्थिति में उन चरों का नियन्त्रण यादृच्छीकरण (Randomization) की प्रविधि से किया जाता है। यादृच्छिकरण (Randomization) एक ऐसी प्रविधि है जिसमें किसी भी जीव (मनुष्य या पशु) की अध्ययन समूह में चुने जाने की सम्भावना (Probability) बराबर-बराबर होती है। उदाहरण स्वरूप मान लिया जाए कि किसी वर्ग में 30 छात्र हैं, जिनमें से हमें 20 छात्रों का चयन यादृच्छीकरण ढंग से (Randomly) करना है। इसके लिए सबसे पहले तरीका यह होगा कि 30 छात्रों का नाम समान कागज के टुकड़ों पर लिखकर उसे समान ढंग से मोड़ दिया जाए और सभी को एक बाक्स या डिब्बे में रखकर उसे हिला डुला कर मिश्रित कर दिया जाए उसके बाद उनमें से एक-एक करके 20 कागज के टुकड़ों को निकाल लिया जाए. यह एक यादृच्छीकरण (Randomization) का उदाहरण है। क्योंकि इसमें जब भी प्रयोगकर्ता बाक्स में कागज के किसी टुकड़े को चुनने का प्रयत्न करता है, उस समय बाक्स में उपस्थित सभी टुकड़ों को चुने जाने की संभावना बराबर-बराबर होती है। यादृच्छीकरण की अन्य विधियाँ भी हैं। जिनमें यादृच्छिक संख्या की टेबुल * (Table Random Numbers) का प्रयोग एक महत्वपूर्ण विधि है।

प्रयोग या शोध में यादृच्छीकरण (Randomization) की प्रक्रिया में सिर्फ प्रयोज्यों का ही चयन यादृच्छिक ढंग से नहीं किया जाता है बल्कि उन्हें प्रयोगात्मक अवस्था (Experimental Conditions) तथा नियन्त्रित अवस्था (Control Conditions) में यादृच्छिक ढंग से आवंटित (assign) भी किया जाता है। यादृच्छीकरण की पूरी प्रक्रिया सम्पन्न होने पर सभी ज्ञात तथा अज्ञात बहिरंग चर (विजातीय चर) प्रयोज्यों एवं विभिन्न अवस्थाओं (Conditions) को समान रूप से प्रभावित करते समझे जाते हैं; अत: उन सबका का प्रभाव आश्रित चर पर यदि कुछ होता भी है तो समान रूप से होता है। इसका शुद्ध परिणाम यह होता है कि बहिरंग चर (विजातीय चर) का प्रभाव अपने आप नियन्त्रित हो जाता है। यादृच्छीकरण (Randomization) की महत्ता पर टिप्पणी करते हुए मैक ग्यूगन (Mc Guigan, 1990) ने कहा है "यादृच्छीकरण का महत्व यह है कि यह बहिरंग प्रभावों को चाहे वे जैसे भी हों, यादृच्छिक ढंग से प्रयोगात्मक तथा नियन्त्रित अवस्थाओं में बांट देता है। चाहे हम विशेष बहिरंग चरों की पहचान किये हो या न किये हों, इसका ऐसा ही संतुलितकारी प्रभाव होता है, क्योंकि इसमें अज्ञात एवं अविशिष्ट बहिरंग चरों का प्रभाव किन्हीं परिस्थितियों में समान रूप से वितरित हो जाता है।"

यादृच्छीकरण (Randomization) का एक उदाहरण हम इस प्रकार दे सकते हैं— मान लिया जाए कि किसी प्रयोग या शोध में प्रयोगकर्ता यह अध्ययन करना चाहता है कि सीखने की प्रक्रिया सीखने की

विभिन्न विधियों (Method) से किस प्रकार प्रभावित होती है। और यह भी मान लिया जाए कि ऐसी विधियाँ तीन हैं; जिनके प्रभावों का वह अध्ययन करना चाहता है— (Method A, Method B, तथा Method C)। इस अध्ययन में विधि स्वतन्त्र है। तथा सीखने की प्रक्रिया आश्रित चर है एवं प्रज्योज्यों के उम्र, यौन, बुद्धि, शैक्षिक स्तर बहिरंग चर (विजातीय चर) के उदाहरण हैं। मान लिया जाए कि प्रयोगकर्ता 30 छात्रों के समूह का यादृच्छिक ढंग से किसी विद्यालय से चयन करता है। इस अवस्था में तीन प्रयोगात्मक अवस्थाएं (Experimental Condition) हैं क्योंकि तीन विधियाँ हैं; जिनके प्रभावों का अध्ययन करना है। अब प्रयोगकर्ता 30 यादृच्छिक ढंग से (Randomly) चुने गये छात्रों को तीन, प्रायोगिक अवस्थाओं (Experimental Conditions) में यादृच्छिक ढंग से आवंटित (Ramdom Assignment) करके प्रयोग की कार्यवाही शुरू करेगा। प्रयोज्यों का चयन यादृच्छिक ढंग से (ramdomly) करने से तथा उनका विभिन्न अवस्थाओं में यादृच्छिक आवंटन (Random Assignment) करने से प्रयोज्यों के बीच उम्र, यौन, बुद्धि, शैक्षिक स्तर आदि बहिरंग चरों से उत्पन्न वैयक्तिक विभिन्नता का समान्यतः साम्य हो जाता है। और तब उसका प्रभाव आश्रित चर या DV पर विशिष्ट रूप से नहीं पड़ पाता है।

5.6 एक अच्छे अथवा समृद्ध शोध अभिकल्प के मानदण्ड (Criteria for Rich Research Design or Requirement for a Good Research Design)

समृद्ध शोध अभिकल्प वही हो सकता है जो शोध प्रश्नों के पर्याप्त उत्तर प्रस्तुत करने में समर्थ हो। कोई भी संचालित या परिचालित शोध अभिकल्प का कोई भी विशिष्ट उदाहरण नहीं है, जो अच्छे शोध अभिकल्प के मॉडल पर पूर्ण रूप से फिट (उपयुक्त / ठीक) बैठता हो हालाँकि शोधकर्ता लगभग अपना पूरा प्रयास करते हैं कि पर्याप्त या समृद्ध या अच्छे शोध अभिकल्प का निर्माण या विकास किया जाय। अच्छे शोध के लिए निम्नलिखित मानदण्ड हैं—

1. शोध के प्रश्नों तथा शोध परिकल्पनाओं में सामाञ्जस्य- शोध के प्रश्नों के उत्तर स्वरूप प्रस्तुत परिकल्पनाओं का पर्याप्त परीक्षण शोध अभिकल्प के द्वारा हो जाना चाहिए।
2. पर्याप्त यादृच्छीकरण (Randomization) का अवसर :

   शोध अभिकल्प में जहाँ तक सम्भव हो यादृच्छीकरण की गुञ्जाइश होना चाहिए। जितनी ही यादृच्छीकरण की उपेक्षा की जाती है, उतना ही अभिकल्प कमजोर पड़ता जाता है।

पर्याप्त यादृच्छीकरण से तात्पर्य है—

(क) पात्रों का यादृच्छिक ढंग से चयन करना।

(ख) समूहों में पात्रों को यादृच्छिक ढंग से नियोजित करना

(ग) समूहों का यादृच्छिक ढंग से प्रायोगिक नियोजन करना।

अतः सांख्यकीय अनुमान का 'संभाव्यता सिद्धान्त' पूर्णतया यादृच्छीकरण पर ही आधारित रहता है।

3- पर्याप्त नियंत्रण का सुयोग —

प्रयोग चर अथवा स्वतंत्र चर का इस प्रकार नियन्त्रण करना कि विजातीय चरों को क्रियाशील होने का न्यूनतम अवसर हो।

4- उच्चस्तर की आंतरिक वैधता —

समृद्ध शोध अभिकल्प में स्पष्ट शोध - उद्देश्य, पूर्ण नियंत्रण तथा यादृच्छीकरण का गुण प्रचुर मात्रा में होता है। इन्हीं तीन गुणों के समावेश को आंतरिक वैधता कहते हैं।

5- उच्चस्तर की बाह्य वैधता —

समृद्ध शोध अभिकल्प में उच्च स्तर की बाह्य वैधता का गुण पाया जाता है। इसके अन्तर्गत प्रतिनिधित्व गुण तथा सामान्यीकरण का गुण आदि आते हैं। समृद्ध अभिकल्प द्वारा प्राप्त चरों के सम्बन्ध में निष्कर्षों में पूरी जनसंख्या का सम्पूर्ण जनसंख्या के स्तर पर सामान्यीकरण किया जा सकता है।

5.7 शोध अभिकल्प के प्रकार्य (Functions of Research Design)

शोध अभिकल्प का इसलिए निर्माण किया जाता है कि इसके द्वारा शोधकर्ता अपने शोध प्रश्नों के उत्तर यथा संभव, वैध, वस्तुगत तथा मितव्ययी ढंग से प्रस्तुत करने में समर्थ होता है।

कोई भी शोध अभिकल्प शोधकर्ता को दिशा देता है कि किस चरण का अनुसरण किया जाय । यह हमें भी बताता है कि किन वस्तुओं का अवलोकन किया जाय। कितने प्रकार के अवलोकन किये जाने चाहिए। जैसे कि निदर्शन का आकार कितना होना चाहिए, कितने निर्देशन का चुनाव किया जाना चाहिए। यह चरों को प्रतिस्थापित करने में सहायक होता है और बताता है कि चरों को कैसे परिचालित किया जाय। शोध अभिकल्प हमें यह भी बताता है चरों के बीच सम्बन्ध का परीक्षण कैसे किया जाय और कौन सांख्यकीय विधि चरों के बीच सम्बन्धों को मापने में उपयुक्त होती है। ''अन्तिम रूप से यह भी बताता है कि अवलोकनों के परिमाणकीय अथवा गुणात्मक प्रतिनिधियों को कैसे विश्लेषित किया जाय। यह विश्लेषण के माध्यम से निकाले गये सम्भावित निष्कर्षों की रूपरेखा भी तैयार करता है।''[14]

इस प्रकार शोध योजना के द्वारा वह ऐसे अनुभव सिद्ध प्रमाणों को संकलित करता है, जो शोध समस्या से सम्बद्ध हों। फिर उन्हें ऐसी कल्पनाओं के रूप में प्रस्तुत कर देता है, जो परीक्षणीय हो जायें। ऐसी उपकल्पनाएं चरों के पारस्परिक सम्बन्ध इंगित करती हैं। अभिकल्प इन्हीं चरों के पारस्परिक सम्बन्धों के पर्याप्त परीक्षण के लिए भूमिका प्रस्तुत करता है।

अभिकल्प के द्वारा निम्न दिशाएँ निश्चित हो जाती हैं।[15]

(क) किस प्रकार का परीक्षण किया जाय ?

(ख) निरीक्षण कैसे किया जाय ?

(ग) इन निरीक्षणों के परिमाणात्मक तथ्यों का विश्लेषण कैसे किया जाय?

संक्षेप में, एक समृद्ध अभिकल्प यह निश्चित कर देता है कि —

(क) निरीक्षण की अभीष्ट संख्या क्या रहे ?

(ख) कौन-सा चर सक्रिय चर रहे? तथा कौन-सा नियोजित चर (Assigned Variable) रहे ?

इस प्रकार शोधकर्ता सक्रिय चर का परिचालन करता है तथा आरोपित चर का द्विपांक्तिक वर्गीकरण (Dichotomise), त्रिपांक्तिक वर्गीकरण (Trichotomise) अथवा कई समूहों में वर्गीकरण (Categorise) कर नियंत्रित करने में समर्थ होता है।

(ग) किस प्रकार के सांख्यिकीय विश्लेषण को व्यवहार में प्रयुक्त किया जाय? तथा

(घ) इस सांख्यिकीय विश्लेषण द्वारा कौन-कौन से सम्भावित निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं?

इस प्रकार यह पूरी शोध व्यवस्था को नियमबद्ध एवं अनुशासित करता है। इसलिए, संक्षेप में, शोध अभिकल्प को तथ्यों का अनुशासन' (Discipline of Facts) कहा जाता है।

उदाहरणस्वरूप— ''श्रुतलेखन (Dictation)सीखना शिक्षण विधि तथा पात्र की बुद्धि की अंत: क्रिया पर निर्भर करता है। इसके लिए अभिकल्प निदर्श (Design Paradigm) निम्नलिखित प्रकार बनाया जायेगा जो 2 × 2 तात्विक विश्लेषण का अभिकल्प होगा।

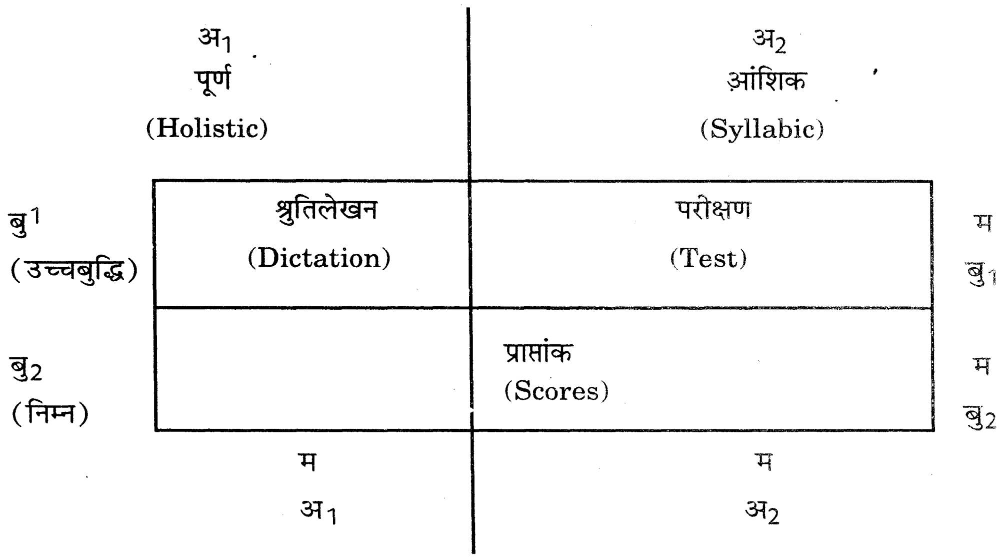

2 × 2 तात्विक निदर्श

(2 × 2 Factorical Paradigm)

यहाँ, विधियाँ $अ_1$ = पूर्ण विधि (Holistic Method)

$अ_2$ = आंशिक विधि (Syllabic Method)

बुद्धि $बु_1$ = उच्च बुद्धि वाले छात्र

$बु_2$ = निम्न बुद्धि वाले छात्र

स्वतन्त्र चर = बुद्धि (नियंत्रित : $बु_1$ उच्च तथा $बु_2$ निम्न वर्गों में नियोजित)

शिक्षण विधि = परिचालित : $अ_1$ तथा $अ_2$

पूर्ण विधि आंशिक विधि

आश्रित चर = श्रुतिलेखन प्राप्तांक

Dependent Variable = Dictation Scores

इस शोध-निदर्श (Design Paradigm) से निम्नलिखित निर्देशन मिलते हैं—

(क) इसमें पात्र के रूप में अधिक संख्या में छात्र (बच्चे) होने चाहिए, एक समूह (g) यदि 20 छात्र का हो, तो ऐसे चार समूह (4g), 80 छात्रों के होंगे।

(ख) समूह $अ_1$ तथा $अ_2$ के लिए छात्रों का यादृच्छिक ढंग (Random Assignment) से नियोजन होगा, पर समूह $बु_1$ तथा $बु_2$ के लिए ऐसा सम्भव नहीं, इनके लिए दो निम्न वर्गों को नियोजित किया जायेगा।

(ग) यह ध्यान रखना पड़ेगा कि एक पात्र का प्राप्तांक दूसरे को प्रभावित न करे।

(घ) तात्विक विश्वेषण या F - परीक्षण द्वारा तथ्य विश्लेषण किया जायेगा।

(ङ) अंत: क्रिया का भी मापन किया जायेगा।

इसी प्रकार, यदि इस निदर्श से एक चर 'बुद्धि' को निकाल दिया जाय, केवल एक चर 'विधि' को लेकर चला जाय तो इसके लिए 40 पात्रों के मात्र 2 समूहों (2g) की आवश्यकता होगी।

यदि शोध अभिकल्प तथा सांख्यिकीय विश्लेषण के लिए एक साथ योजना बना ली जाती है तो प्रदत्त विश्लेषण का काम आसान हो जाता है।

उदाहरणार्थ, एक चर वाले यादृच्छिक अभिकल्प (One Variable Randomised Design) के लिए जिसमें दो वर्गों का व्यवहार किया गया हो, जैसे विधि $अ_1$ $अ_2$ इनके प्राप्तांकों के दो सांख्यिकियों (दो मध्यमानों, दो मध्यांकों, दो प्रसारों, दो प्रतिशतों आदि) के अन्तर की सार्थकता (Test of Significance of Difference) की जाँच कर लेना पर्याप्त होगा। पर, उपर्युक्त 2×2 तात्विक निदर्श में अंत: क्रिया (बुद्धि × शिक्षण विधि) के अध्ययन के लिए ऐसा करना अपर्याप्त होगा, इसके लिए तात्विक विश्लेषण या F - परीक्षण करना होगा।

अन्त में संक्षिप्त रूप में यह चर्चा करना आवश्यक है कि शोध की अवस्थाएँ कितनी होती हैं तथा शोध समस्या का अध्ययन करते समय शोध प्रकल्प की अवस्था कहाँ आती है तथा इसकी रूपरेखा कब और कैसी होनी चाहिए—

5.8 शोध अभिकल्पित करने की अवस्थाएं (Phases in Research Designing)

राम अहूजा के अनुसार शोध प्रक्रिया छह अवस्थाओं में गुजरती है अथवा किसी भी शोध प्रक्रिया की छह अवस्थाएं होती हैं- जो कि निम्नलिखित हैं—16

1. अध्ययन की जाने वाली समस्या या विषय को निश्चित करना।
2. शोध अभिकल्प की रूपरेखा तय करना
3. प्रतिदर्श (Sample) की योजना बनाना। (संम्भाव्यता अथवा असम्भाव्यता अथवा दोनों का संयोग)
4. दत्त संकलन (Data collection)
5. दत्त विश्लेषण (संपादन, संकेतन, प्राक्रियाकरण, सारणीयन)
6. प्रतिवेदन तैयार करना

चित्र के माध्यम से उपरोक्त अवस्थाओं को निम्नलिखित रूप से प्रदर्शित कर सकते हैं—

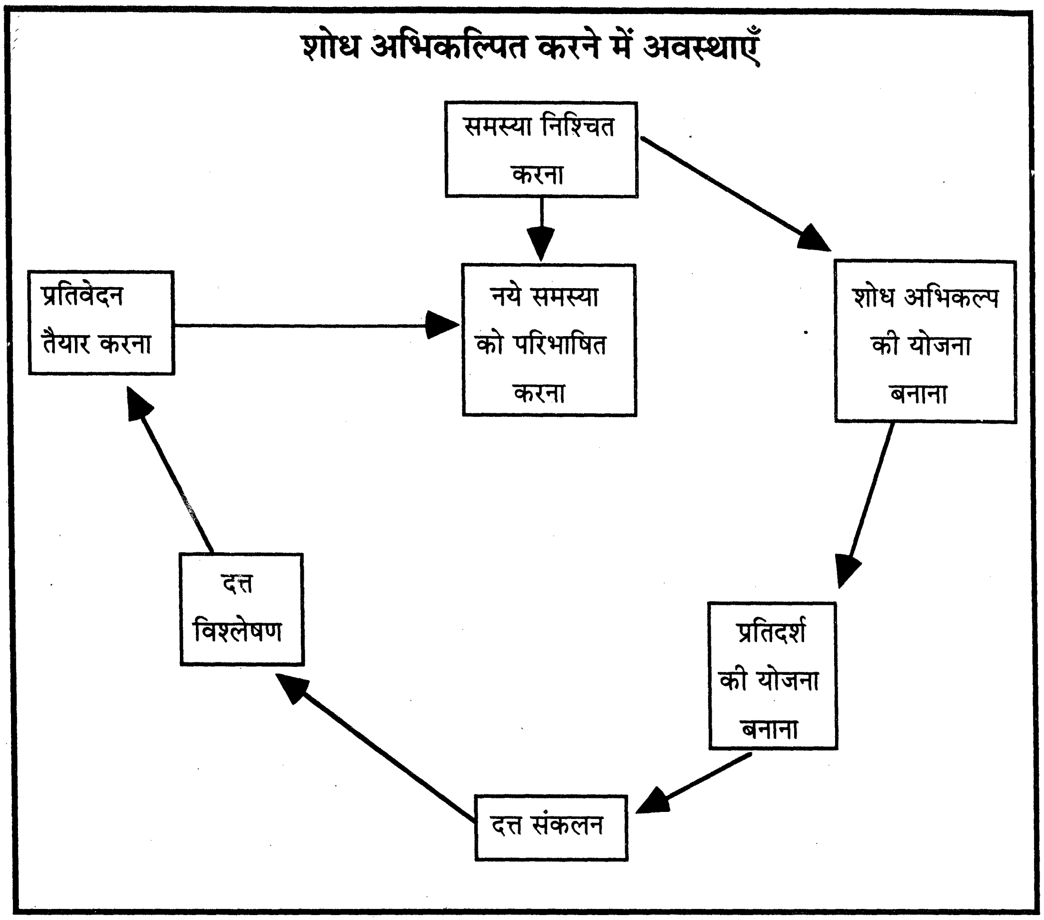

कुछ विद्वान किसी भी शोध में केवल चार चरणों या अवस्थाओं की बात करते हैं जो निम्नलिखित हैं—

(i) समस्या चयन अवस्था

(ii) शोध अभिकल्प अवस्था

(iii) अनुभाविक (Empirical) अवस्था

(iv) व्याख्यात्मक अवस्था (Interpretative Phase)

इन चार अवस्थाओं को निम्नलिखित रूप से चित्रांकित कर सकते हैं—

शोध प्रक्रिया

समस्या चयन अवस्था

1. शोध रूचि एवं विचार
समस्या का चयन करना, उद्देश्यों का वर्णन करना
अवधारणात्मक प्ररुपों को प्रस्तुत करना।
प्रस्तावों / उपकल्पनाओं का निर्माण करना।

2. **शोध अभिकल्पित करने की अवस्था**

(i) चयनित समस्या के अवधारणाओं एवं चरों को विशिष्टकृत अथवा निश्चित करना

(ii) अवधारणाओं को परिचालित करना जो चरों के मापन में सहायक होता है।

(iii) दत्त विश्लेषण के विधि का चयन

प्राथमिक दत्त (Primary Data) | द्वितीयक दत्त

- सर्वेक्षण (Survey)
- प्रयोग (Experiment)
- क्षेत्र अध्ययन (Field Study)
- केस अध्ययन (Case Study)
- अन्तर्वस्तु विश्लेषण (Content Analysis)

प्रश्नावली | अनुसूची | साक्षात्कार | अवलोकन

(iv) प्रतिदर्श (Sampling)
(कौन एवं कितने वस्तु/विषय अवलोकित करने होंगे।)

3. **आनुभाविक अवस्था (Emperical Phase)**

(i) दत्त संकलन (Data Collection)

(ii) दत्त प्रक्रियाकरण (Data Processing)
(संपादन, संकेतन, सारणीयन)

4. **व्याख्यात्मक अवस्था (Interpretive Phase)**

(i) दत्त विश्लेषण (Data Analysis)

(ii) प्रतिवेदन लेखन (Report Writing)

5.9 सारांश

1. शोध अभिकल्प अनुसंधान या शोध करने के लिए बनी हुई एक ऐसी योजना (Plan) तथा संरचना होती है, जिसके द्वारा समस्याओं का उत्तर प्राप्त किया जाता है।

2. शोध अभिकल्प के मूलभूत दो उद्देश्य होते हैं, प्रथम-शोध प्रश्नों के सही उत्तर ढूंढ़ना दूसरा - प्रसरणों को नियन्त्रित करते हुए शोध समस्या से सम्बन्धित आनुभाविक प्रमाण उपलब्ध कराना। पहला उद्देश्य एक वर्णनात्मक उद्देश्य है तथा दूसरा उद्देश्य एक तकनीकी उद्देश्य है।

   प्रसरणों को नियन्त्रित करने के तीन सिद्धान्त हैं — प्रथम-क्रमबद्ध प्रसरण की वृद्धि, द्वितीय - अशुद्धियों के प्रसरण का न्यूनीकरण तथा अन्तिम - विजातीय क्रमबद्ध प्रसरण का नियंत्रण विजातीय चरों को नियन्त्रित करने की छह विधियाँ हैं। (1) विलोपन, (2) स्थिरता (3) संतोलन (4) प्रतिसंतोलन (5) विजातीय चर को स्वतन्त्र चर के रूप में बदलना (6) यादृच्छीकरण।

3. अच्छे शोध अभिकल्प के मुख्य मानदण्ड हैं—

   1. शोध के प्रश्नों तथा शोध परिकल्पनाओं में सामञ्जस्य
   2. पर्याप्त यादृच्छीकरण का अवसर
   3. पर्याप्त नियन्त्रण का सुयोग
   4. उच्च स्तर की आंतरिक वैधता
   5. उच्च स्तर की बाह्य वैधता

4. कोई भी शोध अभिकल्प शोधकर्ता को दिशा देता है कि किस चरण का अनुसरण किया जाय, किन वस्तुओं का अवलोकन किया जाय, कितने प्रकार का अवलोकन किया जाय, चरों को कैसे परिचालित किया जाय, चरों के बीच सम्बन्ध का परीक्षण कैसे किया जाय, आदि प्रकार्य का निष्पादन कैसे करना है।

5.10 बोध प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

शोध अभिकल्प की अवधारणा एवं परिभाषा का वर्णन कीजिए तथा शोध अभिकल्पित करने की अवस्थाओं के बारे में समझाइये ?

लघु उत्तरीय प्रश्न

प्र०1 शोध अभिकल्प के क्या प्रकार्य हैं ? विश्लेषित कीजिए।

प्र०2 शोध अभिकल्प के उद्देश्य अथवा सिद्धान्त की व्याख्या कीजिए।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. अभिन्यूनीय (MAXMICON) सिद्धान्त के अन्तर्गत निम्नलिखित से कौन सा सिद्धान्त है ?

अ- क्रमबद्ध प्रसरण की वृद्धि

ब- अशुद्धियों के प्रसरण का न्यूनीकरण

स- विजातीय क्रमबद्ध प्रसरण का नियन्त्रण

द- उपरोक्त सभी

2. 'पैराडाइम : सम आल्टरनेटिव्स ऑफ सोशियोलोजिकल रिसर्च', किसका लेख है ?

अ- फ्रेड, एन करलिंगर

ब- स्टुअर्ट चैम्पियन

स- मटील्डा व्हाइट रिले

द- कोई नहीं

3. विजातीय चरों को नियन्त्रित करने के लिए निम्नलिखित में से कौन सी विधि नहीं है ?

अ- विलोपन

ब- स्थिरता

स- संतोलन

द- उदात्तीकरण

4. ''शोध अभिकल्प शोध के लिए कल्पित एक योजना, एक संरचना तथा एक प्रणाली है, जिसका एक मात्र प्रयोजन शोध सम्बन्धी प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करना तथा प्रसरणों का नियन्त्रण करना होता है'' यह परिभाषा निम्नलिखित में से किस लेखक द्वारा दी गयी है?

अ- फ्रेड एन० करलिंगर

ब- आर० एल० एकॉफ

स- स्टुअर्ट चैम्पियन

द- पी० बी० यंग

5. 'डिजाइन ऑफ सोशल रिसर्च' पुस्तक के लेखक कौन हैं ?

अ- पी० वी० यंग

ब- जे० सी० टाउनसेण्ड

स- आर० एल० एकॉफ

द- फ्रेड एन० करलिंगर

5.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1- द

2- स

3- द

4- अ

5- स

5.12 सूची एवं सन्दर्भ (Notes and References)

1. जे० सी० टाउनसेण्ड : इन्ट्रोडक्शन टू इक्सपेरीमेण्टल मेथड न्यूयार्क, मैकग्राहिल (1953)।

2. डब्लू० जे० गुडे० एण्ड पी० के० हॉट, मेथड्स इन सोशल रिसर्च, न्यूयार्क, मैकग्राहिल, 1952.

3. पी० वी० यंग, एण्ड सी० एफ० शिम्ड; साइन्टिफिक सोशल सर्वेज एवं रिसर्च, एन इन्ट्रोडक्शन टू द बैकग्राउन्ड, कान्टेन्ट, मेथेड्स, प्रिन्सपल्स, एण्ड एनिलसिस ऑफ सोशल स्टडीज, प्रिन्टाइस-हाल ऑफ इण्डिया प्राइवेट, नई दिल्ली चौथा एडीशन, 1996 पृष्ठ 131.

4. पी० वी० यंग, वही, 131.

5. ई० ए० सचमैन; द प्रिन्सिपल ऑफ रिसर्च डिजाइन इन जॉन टी० डाबी द्वारा संपादित एन इन्ट्रोडक्शन टू सोशल रिसर्च, 1954 द स्टेकवेल कम्पनी, 1954 पृष्ठ 254.

6. रसेल एल० एर्काफ; डिजाइन ऑफ सोशल रिसर्च, युनिवर्सिटी ऑफ शिकागों, 1953 पृष्ठ 5.

7. फ्रेड एन० करलिंगर; फाउन्डेशन ऑफ विहैवियरल रिसर्च, हाल्ट रिनेहार्ट एण्ड विन्सटन इन क; एन० वाई० 1964, पृष्ठ 275.

8. देवेन्द्र ठाकुर; रिसर्च मेथडोलोजी इन सोशल साइन्सेज; दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1993 पृष्ठ 163-164.

9. देवेन्द्र ठाकुर, वही पृष्ठ 164.

10. मटील्डा व्हाइट रिले; सोशियोलोजिकल रिसर्च I, ए केस एप्रोच, हरकोर्ट, ब्रेस एण्ड वर्ल्ड, 1963 पृष्ठ 7-29.

11. गोपाल जी प्रसाद; रिसर्च मेथेडोलोजी इन विहैवियरल साइन्सेज, भारती भवन, पटना 1992 पृष्ठ-195..

12. देवेन्द्र ठाकुर; वही, पृष्ठ - 165

13. गोपाल जी प्रसाद; वही, पृष्ठ - 197.

14. देवेन्द्र ठाकुर; वही, पृष्ठ-166.

15. गोपाल जी प्रसाद; वही, पृष्ठ-199.

16. राम अहूजा; रिसर्च मेथड्स, रावत पब्लिकेशन जयपुर, 2003, पृष्ठ 125.

इकाई 6 शोध अभिकल्प के प्रकार

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 अन्वेषणात्मक अथवा निरूपणात्मक शोध अभिकल्प

6.2.1 उद्देश्य

6.2.2 विधियां

6.3 व्याख्यात्मक अनुसंधान अभिकल्प

6.4 वर्णनात्मक शोध अभिकल्प

6.4.1 वर्णनात्मक शोध अभिकल्प के प्रकार

6.4.2 वर्णनात्मक शोध अभिकल्प के चरण

6.5 अन्वेषणात्मक एवं वर्णनात्मक शोध अभिकल्प में अन्तर

6.6 सर्वेक्षण शोध अभिकल्प

6.6.1 स्थिर समूह तुलना अभिकल्प

6.6.2 पैनल अभिकल्प

6.6.3 लाभ एवं दोष (सर्वेक्षण शोध अभिकल्प)

6.7 वैयक्तिक (केस) अध्ययन अभिकल्प

6.7.1 वैयक्तिक अध्ययन के चरण

6.8 सारांश

6.9 बोध प्रश्न

6.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

6.11 सूची एवं सन्दर्भ

6.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :

- शोध अभिकल्प के प्रकार का उल्लेख कर सकेंगे।
- मैनहीम द्वारा उल्लिखित तीन प्रकार के शोध अभिकल्पों - अन्वेषणात्मक, व्याख्यात्मक तथा वर्णनात्मक शोध अभिकल्प पर टिप्पणी कर सकेंगे।
- अन्य विद्वानों द्वारा वर्णित शोध अभिकल्प पर टिप्पणी कर सकेंगे।
- शोध अभिकल्प के गुण तथा दोषों का वर्णन कर सकेंगे।

6.1 प्रस्तावना

प्रत्येक शोध का विशिष्ट उद्देश्य घटनाओं का विभिन्न ढंग से अध्ययन करना, विश्लेषण करना तथा व्याख्या करना होता है। इसके विशिष्ट उद्देश्यों के आधार पर विभिन्न समाज वैज्ञानिकों द्वारा वर्णित शोध अभिकल्पों (जैसे मेनहीम ने तीन प्रकार के शोध अभिकल्प का उल्लेख तथा उनके साथ ब्लैक एवं चैम्पियन ने तीन अन्य प्रकार शोध अभिकल्पों का जिक्र किया है। इन अभिकल्पों का वर्णन एवं उपयोग इस इकाई में प्रस्तावित है। इन अभिकल्पों) के बीच में स्पष्ट अन्तर भी होते हैं तथा इनकी उपयोगिता के महत्व में भी अन्तर होते हैं, कौन से अभिकल्प सबसे अधिक महत्वपूर्ण एवं उपयोगी होते हैं उनके लाभ एवं दोष भी उनमें निहित होते हैं। इन बिन्दुओं का उल्लेख इस इकाई में प्रस्तावित है।

6.2 अन्वेषणात्मक अथवा निरूपणात्मक शोध अभिकल्प (Exploratory or Formulative Research Design)

जब शोधकर्ता को अध्ययन की जाने वाली घटना या समस्या के बारे में पर्याप्त सूचना उपलब्ध नहीं होती है अथवा दूसरे शब्दों में घटना अथवा समस्या के बारे में शोधकर्ता को बिलकुल या सीमित ज्ञान होता है तब इस शीघ्र अभिकल्प का प्रायः प्रयोग किया जाता है। इस अनुसन्धान प्ररचना या अभिकल्प का उद्देश्य अज्ञात तथ्यों की खोज करना अर्थात् तथ्यों के बारे में नवीन अन्तर्दृष्टि प्राप्त करना है ताकि यथार्थ समस्या का निर्माण कर उपकल्पना बनाई जा सके। किसी संरचनात्मक अध्ययन से पूर्व अनुसन्धानकर्ता द्वारा किसी प्रकरण के बारे में जानकारी प्राप्त करने, अवधारणाओं का स्पष्टीकरण करने, अग्रिम अनुसंधान के लिए प्राथमिकताओं का पता लगाने, यथार्थ परिस्थिति में अनुसंधान करने की व्यावहारिक सम्भावनाओं का पता लगाने अथवा महत्वपूर्ण समस्याओं का पता लगाने इत्यादि उद्देश्यों की पूर्ति के लिए भी इस प्रकार अनुसंधान किया जाता है।

संक्षिप्त शब्दों में

जब शोध का उद्देश्य किसी सामाजिक घटना में अन्तर्निहित कारणों को ढूढ़ना होता है, तो इसके लिए निर्मित शोध की प्रत्याकृति को अन्वेषणात्मक अभिकल्प कहते हैं।

उदाहरण के लिए–केबिल चैनलों के युवा छात्रों पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन। इस सन्दर्भ में समस्या के कितने परिणाम का अन्वेषण करना है अथवा छात्रों के कितने प्रतिशत, केबिल चैनल को देखते हैं, किस प्रकार के कार्यक्रमों को पसन्द करते हैं, कार्यक्रम देखने की आवृत्ति कितनी है, उनके अध्ययनों पर केबिल देखने का कितना प्रभाव पड़ता है, अन्तः परिवार सम्बन्धों पर कितना प्रभाव पड़ता है आदि। **सभी नहीं परन्तु अधिकाधिक गुणात्मक होता है, जैसे** – शैक्षिक संस्थाओं में हड़तालों पर किया जाने वाला शोध। शोधकर्ता जब इस प्रकार के अध्ययन का चुनाव करता है तो गुणात्मक विचार से सम्बन्धित इस समस्या के बारे में अध्ययन करता है न कि इसका कि कितनी संख्या में छात्र हड़ताल पर रहते हैं। वह यह अन्वेषण करता है कि किस प्रकार के छात्र आन्दोलन का आरम्भ करते हैं अथवा आन्दोलन पर जाने के लिए छात्रों को अभिप्रेरित करते हैं, किस विषय अथवा मुद्दों के लिये वे हड़ताल करते हैं, किस प्रकार का और किन परिस्थितियों का वे हड़ताल के लिए समर्थन चाहते अथवा मांगते हैं आदि। इस प्रघटना के अध्ययन के लिए स्वभावतः भिन्न प्रकार का अभिकल्प बनाया जाता है। जो केवल भिन्न ही नहीं बल्कि कम समय में और कम खर्चे में अधिक से अधिक सूचनाएं प्रदान कर सके।

6.2.1 उद्देश्य

इस प्रकार अन्वेषणात्मक अनुसंधान का प्रमुख उद्देश्य अध्ययन के लिए समस्या का निर्माण करना अथवा अनुसंधान के लिए उपकल्पनाओं का निर्माण करना है। वस्तुत: ये दोनों किसी भी शोध के प्रमुख चरण माने जाते हैं। अत: अन्वेषणात्मक शोध अभिकल्प इनमें सहायता प्रदान करता है। यह एक ऐसी आधारशिला प्रदान करता है जो अग्रिम रूप से शोध की प्राथमिकताओं का पता लगाने में सहायक होता है। इस सन्दर्भ में सेल्टिज, जहोदा, कूक तथा ड्यूश का कहना है।[2] कि ''अन्वेषणात्मक शोध अभिकल्प उस अनुभव को प्राप्त करने के लिए आवश्यक है जो अधिक निश्चित शोध हेतु सम्बद्ध उपकल्पना के निरूपण में सहायक होगा।''

सरनताकोस (Sarantakos) के अनुसार निम्नलिखित कारणों के लिए अन्वेषणात्मक अध्ययन अपनाया जाता है [3]

1. औचित्य (Feasibility) : अध्ययन किये जाने वाले मुद्दों के विषय में प्रश्न प्रमाणित, लाभप्रद और उचित है या नहीं इसका पता लगाना।
2. सुविदितीकरण (Familiarization) : शोध कर्ता को मुद्दे या विषय के सामाजिक प्रसंग या सन्दर्भ में परिचित कराना जैसे - सम्बन्धों, मूल्यों, मानकों, शोध विषय से सम्बन्धित कारकों के बारे में विस्तृत जानकारी।
3. नये विचार (New Ideas) : शोध मुद्दे या विषय पर नये विचारों, दृष्टिकोणों एवं मतों को उत्पन्न करना जो समस्या को ठीक से समझने में सहायता करेगा।
4. उपकल्पना का निर्माण (Formulation of problem) : चर एक दूसरे से सम्बन्धित है या नहीं इसको प्रदर्शित करना।
5. परिचालनीकरण (Operationalization) : अवधारणाओं को उनकी संरचना की व्याख्या द्वारा और संकेतों के पहचानने के द्वारा परिचालित करना। इसके अतिरिक्त कई अन्य सामाजिक वैज्ञानिकों ने अन्वेषणात्मक शोध के अलग-अलग उद्देश्यों को निर्धारित किया है।

ई. बेबी (Earl Babbie) का कहना है कि अन्वेषणात्मक अध्ययन निम्नलिखित तीन उद्देश्यों के लिए व्यवहार में लाया जाता है।[4]

(1) शोधकर्ता की जिज्ञासा को संतुष्ट करने और अधिकतम समझने की इच्छा करने के लिए ।

(2) लिये गये अधिक विस्तृत अध्ययन के औचित्य का परीक्षण करने के लिए।

(3) किसी अन्य प्रतिस्थापित अध्ययन की प्रयुक्त विधि को विकसित करने के लिए ।

दूसरी तरफ **जिकमण्ड** ने अन्वेषणात्मक शोध के तीन उद्देश्यों का उल्लेख किया है।[5]

(1) परिस्थिति का निदान करना।

(2) विकल्पों को छांटना

(3) नये विचारों की खोज करना,

इनके अनुसार परिस्थिति निदान समस्या की प्रकृति और इसके विभिन्न आयामों के अन्वेषण को स्पष्ट करता है। यह शोध सम्बोधों के परीक्षण के लिए उपयोग में भी लाया जाता है। जो शोध प्रविधियों में सहायता करता है वह नये विचार उत्पन्न करने के लिए भी प्राय: उपयोग में

लाया जाता है जैसे-कारखाने के कर्मचारियों के उत्पादन लाभ बढ़ाने के लिए, असंतोष को कम करने के लिए अथवा संघर्ष को भी कम करने के लिए, सुरक्षा में सुधार आदि के लिए सुझाव।

अनेक बार अनुसंधान समस्या के बारे में शोधकर्ता को कम या सीमित जानकारी होती है, अर्थात् शोधकर्ता को इसके सामाजिक महत्व, सैद्धान्तिक पहलुओं, व्यावहारिक स्वरूप तथा इससे सम्बन्धित विश्वसनीय आंकड़ों की उपलब्धता के बारे में कोई ज्ञान नहीं होता। ऐसी स्थिति में निम्नलिखित तीन विधियाँ सहायक हो सकती हैं।

6.2.2 विधियाँ

(1) सम्बन्धित सामाजिक विज्ञान अथवा अन्य सम्बन्धित साहित्य का पुनरीक्षण

(2) अध्ययन समस्या से सम्बन्धित अनुभवी व्यक्तियों का सर्वेक्षण

(3) अर्न्तदृष्टि - प्रेरक उदाहरणों का विश्लेषण

शोधकर्ता अथवा कोई भी उपरोक्त में से एक अथवा अधिक विधियों का प्रयोग कर सकता है। जिस विधि का भी प्रयोग किया जाय उसमें लचीलेपन की प्रकृति होनी चाहिए। ऐसी स्थिति में अन्वेषणात्मक शोध अभिकल्प में लचीलापन आवश्यक होता है क्योंकि किसी भी समस्या के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए शोधकर्ता को शोध प्रविधियों में बार-बार परिवर्तन के लिए तैयार रहना चाहिए। तभी अधिकृत जानकारी मिल पाती है।

साहित्य का पुनरीक्षण

साहित्य का पुनरीक्षण सबसे सरल एवं लाभदायक विधि है। जिसके द्वारा अनुसंधान समस्या को स्पष्ट किया जा सकता है। इससे शोधकर्ता को अन्य विद्वानों द्वारा प्रतिपादित अनेक अवधारणाओं एवं सिद्धान्तों को अपने अध्ययन क्षेत्र में लागू करने का अवसर मिलता है। उदाहरण के लिए प्रोफेसर 'योगेश अटल' का **'प्रोजेक्ट क्लैप'** (Project CLAPP) पर लेख (जो कि सतीश सबरवाल द्वारा 'ग्राम से परे' में प्रमुख लेख है) अन्वेषणात्मक अध्ययन है क्योंकि, उन्होंने अपने वृहद समाजशास्त्रीय अध्ययन 'लोकल कम्यूनिटीज एण्ड नेशनल पालीटिक्स, 1971 को आधार बनाया है, जो कि संचार स्तर एवं राजनीतिक सहभागिता का अध्ययन है। योगेश अटल ने अपने इस शोध लेख में अन्वेषणात्मक शोध अभिकल्प का प्रयोग किया है जिसका संक्षिप्त वर्णित निम्नलिखित प्रकार से है—

(1) अध्ययन की समस्या

इनके अध्ययन का उद्देश्य संचार के विकास की स्थानीय समुदायों के राष्ट्रीय समाज से विशिष्ट रूप राजनीतिक क्षेत्र में संवियोजन में क्या भूमिका है? विभिन्न संचारात्मक ताने-बाने में स्थित लोगों की गैर स्थानीय परन्तु राष्ट्रीय राजनीतिक जीवन में सहभागिता किस स्तर की है? क्या सामुदायिक सन्दर्भ तथा इसके विकास के स्तर राजनीतिक सहभागिता को निर्णायक रूप में प्रभावित करते हैं तथा इस सहभागिता की प्रकृति क्या है? अर्थात् संक्षिप्त शब्दों में इनके शोध का उद्देश्य संचार के बहुविध विकास के प्रभाव का स्थानीय समुदायों के राजनीतिक व्यवहार पर अध्ययन करना है।

(2) उपकल्पनाएं : अध्ययन के दो महत्वपूर्ण चर संचार और राजनीतिक सहभागिता हैं। इसमें हम संचार को स्वतन्त्र चर मान सकते हैं तथा राजनीतिक सहभागिता को आश्रित चर या प्रतिक्रिया चर मान सकते हैं।

उपकल्पनाओं का आधार दामले (Damle), डियूश (Deutsch), जैकब तथा टोस्कानो (Jacob and Toscano) तथा सकराम (Schramm) के अध्ययन थे। इसमें निम्नलिखित उपकल्पनाओं का निर्माण हुआ था—

''लोगों की चेतना की मात्रा तथा उसका प्रकार, उनकी राजनीतिक चेतना की मात्रा तथा स्वरूप निर्धारित करते हैं।''

इस उपकल्पना को अनेक परस्पर सम्बन्धित प्रस्तावनाओं के रूप में परिसीमित किया गया है ये प्रस्तावनाएं निम्नलिखित थीं—

(क) चेतना की मात्रा संचार साधनों के प्रभावन (Exposure) पर आश्रित है।

(ख) संचार साधनों के प्रमुख प्रभावन के लिए निम्नलिखित बातें अनिवार्य हैं—

समुदाय के सन्दर्भ में

(अ) समुदायों के मध्य अन्तः संचार हितों की सामान्यता सुगम हो जाती है।

(ब) जनसंख्या में उच्च साक्षरता तथा विभिन्नीकृत व्यावसायिक संरचना।

व्यक्तियों के सन्दर्भ में

(अ) बाहरी जगत से सम्पर्कों की अधिक पुनरावृत्ति।

(ब) उच्च साक्षरता

(स) जो व्यक्ति संचार-साधनों से प्रभावित या अनावृत्ति हैं वे अपेक्षाकृत गतिहीन जनसंख्या के लिए संचार के अभिकरण का कार्य करते हैं।

(द) नगरों में विशेष रूप से शिक्षित जनसंख्या के संचार-साधन प्रसारण में प्रभावशाली होते हैं। ग्रामीण में समाचार संचार अभिकरण के माध्यम द्वारा विलम्ब से पहुँचते हैं।

(य) व्यक्तिगत सम्पर्क के आधार पर चेतना सूचना के सन्दर्भ में चयनात्मक होती है।

(3) **क्षेत्र का चुनाव —** प्रोफेसर योगेश अटल ने अपने अध्ययन का क्षेत्र उत्तर प्रदेश के आगरा नगर के चारों ओर 100 मील चुना। एक ही प्रशासनिक जिले तथा चुनाव क्षेत्र में तीन प्रकार के समुदायों का संचार विकास के स्तर के आधार पर इन्होंने चुनाव किया जो निम्नलिखित प्रकार से थे—

(अ) **लघु समुदाय —** (Small Community) – लघु समुदाय से अभिप्राय संचार की दृष्टि से पिछड़े हुए समुदाय, ग्रामीण प्रकृति तथा छोटे-छोटे आकार वाले समुदाय से है। **खोरिया खुर्द** को लघु समुदाय के रूप में चुना गया।

(ब) **सम्पर्क समुदाय** (Link Community) – यह संचार सूत्र की दृष्टि से लघु तथा केन्द्रों का केन्द्र (बड़े केन्द्र) के बीच का समुदाय है। **जिरासमी गाँव को सम्पर्क समुदाय** के रूप में चुना गया।

(स) **केन्द्रों का केन्द्र समुदाय** (Centre of Centres Community)— लघु समुदाय तथा सम्पर्क समुदाय की अपेक्षा संचार की दृष्टि से विकसित तथा अधिकांशतः नगरीय समुदाय को इसके लिए चुना गया। **एटा** नगर को इस समुदाय के लिए चुना गया।

(4) **चुनाव की विधि** — (Selection Procedure) – चुनाव का आधार 1961 ई० के जनगणना रिपोर्ट को बनाया गया। इसके आधार पर सबसे पहले केन्द्रों का केन्द्र समुदाय का चुनाव किया गया इसके पश्चात् सम्पर्क समुदाय तथा अन्तिम में लघु समुदाय का चुनाव किया गया।

(5) **निदर्शन** — (Sampling) – सूचनादाताओं का चुनाव 1967 ई० की संशोधित मतदाता सूची से किया गया। 150 सूचनादाताओं से सूचना एकत्र की गयी।

(6) **तथ्य संकलन की प्रविधि** (Technique of Data Collection)–तथ्यों का संकलन पैनल अध्ययन प्रविधि द्वारा किया गया। 215 व्यक्तियों के पैनल से दो बार चुनाव से पूर्व तथा एक बार चुनाव के तुरन्त बाद साक्षात्कार द्वारा सूचनाएँ एकत्र की गयी। स्लिप विश्लेषण का भी प्रयोग किया गया। सूचनाओं का संकलन चार शोधकर्ताओं द्वारा किया गया। सूचना संकलन का आधार साक्षात्कार अनुसूची थी। इसके अतिरिक्त दैनिक लाग (Daily Log) तथा अवलोकन नोट्स का प्रयोग किया गया।

(7) **तथ्यों का विश्लेषण** — यांत्रिक विधि द्वारा तथ्यों का विश्लेषण कर विज्ञाप्ति तैयार की गयी।

भारत में होने वाले अधिकांश अध्ययन अन्वेषणात्मक प्रकृति के हैं । इसमे लचीलेपन की प्रकृति होती है। उपरोक्त उदाहरण हमने इसलिए दिया है कि योगेश अटल ने इससे पूर्व साहित्य के आधार पर अपने अनुसंधान के अभिकल्प का निर्माण किया। योगेश अटल के इस लेख को डॉ० धर्मवीर महाजन ने अपनी पुस्तक 'सोशल रिसर्च मेथड्स' में संदर्भित किया है तदनुसार अन्वेषणात्मक शोध प्ररचना को समझने हेतु हमने उपर्युक्त लेख को संदर्भित किया है। योगेश अटल के "प्रोजेक्ट क्लैप" के उदाहरण द्वारा केवल अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्रचरना को ही स्पष्ट नहीं किया जा सकता, अपितु इससे अनुसंधान की सम्पूर्ण प्रक्रिया तथा इसके चरणों का पता लगता है।

अनुभव सर्वेक्षण — (Experience Surgery) अनुभव सर्वेक्षण का उद्देश्य समस्या से सम्बन्धित अन्तर्दृष्टि प्राप्त करना है और विभिन्न चरों के बीच क्या सम्बन्ध है यह भी स्पष्ट हो जाता है। इस सन्दर्भ में अनुभवी व्यक्तियों के साक्षात्कार से यथार्थ तस्वीर सामने आती है तथा नवीन विचार प्राप्त होते हैं। अधिक सांख्यकीय आंकड़ें अन्तदृष्टि प्राप्त करने में अथवा अन्तदृष्टि विकसित करने के लिए पर्याप्त नहीं होते हैं । उदाहरण स्वरूप-जनजातीय समाज में परिवर्तन की मात्रा एवं प्रकृति के बारे में जन जातीय कल्याण अधिकारी के साथ साक्षात्कार से जितना यथार्थ ज्ञान प्राप्त हो सकता है उतना सांख्यकीय आंकड़ों द्वारा नहीं।

अन्तर्दृष्टि - प्रेरक अनुभव — (Insight Stimulating Experiences)– यदि ऐसे अनुभवी व्यक्तियों की सहायता उपलब्ध न हो अथवा सीमित या विश्वसनीय सूचना उपलब्ध होने में संदेह हो तो अन्तर्दृष्टि प्रेरक उदाहरण की काफी सहायक सिद्ध हो सकते हैं । इसमें कुछ चयनित उदाहरणों का अध्ययन किया जाता है। उदाहरणस्वरूप सिगमण्ड फ्रायड की महत्वपूर्ण सैद्धान्तिक अर्न्तदृष्टि द्वारा कुछ मरीजों के साथ गहन अध्ययन द्वारा अर्न्तदृष्टि प्राप्त करना। उसी प्रकार से मानवशास्त्रियों द्वारा जनजाति विशेष की संस्कृति को गहन अध्ययन से न केवल समान अन्य जनजातियों की संस्कृति का पता चलता है बल्कि आधुनिक व्यक्ति के बारे में अर्न्तदृष्टि प्राप्त हो सकती है।

6.3 व्याख्यात्मक अनुसंधान अभिकल्प (Explanatary Research Design)

हेनरी मेनहीन द्वारा उल्लेखित यह दूसरा शोध अभिकल्प ह। राम अहूजा के अनुसार ''व्याख्यात्मक अथवा कारण -सम्बन्धी शोध मुख्य रूप से किसी घटना के बारे में कारणों (Causes) अथवा 'क्यों' से सम्बन्धित है। इसमें परिवर्तन के कारकों की तुलना सम्मिलित नहीं होती है।[6] व्याख्यात्मक अनुसंधान का प्रमुख उद्देश्य आश्रित चर की व्याख्या करना है। यह व्याख्या उसको प्रभावित करने वाले स्वतन्त्र या व्याख्यात्मक चरों द्वारा की जाती है। इसलिए यह शोध एक प्रकार का कारण - सम्बन्धी (Causal) अध्ययन है जिसमें दोनों को ज्ञात करने का प्रयास किया जाता है। इस प्रकार अनुसंधान विशिष्ट उपकल्पनाओं के परीक्षण तथा विभन्न प्रकार के चरों में पाये जाने वाले सम्बन्धों को ज्ञात करने के लिए किया जाता है। अर्थात् इसका प्रयोग कारण एवं प्रभाव के सम्बन्धों को प्रमाणित करने के लिए किया जाता है। सामाजिक घटनाओं के जटिल स्वरूप के कारण कभी-कभी किसी आश्रित चर की व्याख्या सीधे स्वतन्त्र या व्याख्यात्मक चरों से सम्भव नहीं हो पाती है। अनेक सामाजिक प्रघटनाएं या परिस्थितियां इस प्रकार की भी हो सकती हैं कि दोनों प्रकार के चरों के बीच अंतर्वर्ती चर (Intervening variable) होते हैं जो स्वयं स्वतन्त्र चरों से प्रभावित होते हैं और उसके विपरीत आश्रित चर को प्रभावित करते हैं। दोनों स्थितियों को निम्नलिखित चित्रांकन द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है।

कारण		प्रभाव
स्वतन्त्र चर (A)		आश्रित चर (B)
स्वतन्त्र चर (A)	अन्तर्वर्ती चर (IV)	आश्रित चर (B)

उदाहरण के रूप में प्रो० राम अहूजा ने ''महिलाओं के विरुद्ध हिंसा'' पर शोध किया और न केवल हिंसा के प्रकारों जैसे—अपराधिक हमला, मारना-पीटना, अपहरण, हत्या, दहेज हत्या, गाली, गलौज आदि का वर्णन किया बल्कि पुरुषों द्वारा की जाने वाली हिंसा जो कि उनके व्यक्तित्व लक्षण के कारण होती है जैसे प्रबलता, संदेह, महिलाओं के ऊपर अधिकार की प्रवृत्ति आदि और परिस्थितिकीय कारकों जैसे - संसाधन सम्पन्नता, शराब पीने की प्रवृत्ति, कुव्यवस्थापन, तनाव अथवा दबाव इत्यादि का भी वर्णन किया। यहाँ पर उपकल्पना की प्रकृति व्याख्यात्मक है जो कि दो अथवा अधिक चरों के बीच के सम्बन्ध को अभिव्यक्त करती है। यहाँ केवल यही नहीं उपकल्पित किया गया कि A, B से सम्बन्धित है बल्कि A का कुछ विशिष्ट प्रभाव B पर है। दूसरे शब्दों में, हम कह सकते हैं कि B, A का परिणाम है अथवा A कारण और B प्रभाव अथवा परिणाम है।

इस शोध अभिकल्प को हम राजनीतिक आधुनिकीकरण के उदाहरण द्वारा और अच्छे तरीके से स्पष्ट कर सकते हैं। मान लिया जाय राजनीतिक विकास या आधुनिकीकरण आश्रित चर B है, जिसको स्वतन्त्र चरों द्वारा समझना है। ऐसे स्वतन्त्र चर कई हो सकते हैं जो राजनीतिक आधुनिकीकरण को प्रभावित कर सकते हैं, हम यहाँ पर पाँच स्वतन्त्र चरों का उल्लेख कर रहे हैं। जैसे — साक्षरता (Literacy), जनसंचार का प्रभाव तादात्म्य (Identification), राजनीतिक समाजीकरण, उच्च गातशालता (लम्बवत), ये पाँचों चर स्वयं में अकेले अथवा सामूहिक रूप से राजनीतिक आधुनिकीकरण को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण हो सकते हैं। परन्तु ऐसा भी सम्भव है कि ये पाँचों चर राजनीतिक आधुनिकीकरण को सीधे प्रभावित न कर पहले राजनीतिक जागरूकता, राजनीतिक प्रभाविता-भावना (Sense of Political efficacy) तथा राजनीतिक सहभागिता को विकसित करते हैं। ये तीनों चर अन्तर्वर्ती चर (Intervening veriable) हैं

जो राजनीतिक आधुनिकीकरण को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण हो सकते हैं। इस प्रकार के अध्ययनों में स्वतन्त्र चरों के साथ-साथ अन्तवर्ती चरों को नियन्त्रित कर इनके द्वारा आश्रित चर पर पड़ने वाले प्रभाव को ज्ञात करने का प्रयास किया जाता है। इस दृष्टि से देखा जाय तो यह शोध अभिकल्प प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प के अत्यन्त निकट हो जाता है।

इस शोध के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण यह है कि इसकी सम्पूर्ण अनुसंधान प्रक्रिया औपचारिक एवं संरचित होती है तथा जिस सामग्री की आवश्यकता होती है वह पूर्णतया परिभाषित होती है। सामान्यतया आंकड़ों का विश्लेषण गणनात्मक होता है। इस प्रकार अन्वेषणात्मक अनुसंधान अपने लचीलेपन एवं गुणात्मक प्रकृति होने के कारण व्याख्यात्मक शोध से भिन्न है। यहाँ तक कि अन्वेषणात्मक शोध द्वारा प्राप्त निष्कर्ष काल्पनिक भी हो सकते हैं जबकि व्याख्यात्मक शोध द्वारा प्राप्त निष्कर्ष निर्णायक प्रकृति के होते हैं।

इस प्रकार व्याख्यात्मक शोध वैज्ञानिक व्याख्याओं की ही भाँति है जो सामान्यतया एक या अनेक कारणों एवं उनके एक या अनेक प्रभावों के सम्बन्धों के अध्ययन पर बल देता है।

6.4 वर्णनात्मक शोध अभिकल्प (Descriptive Research Design)

हेनरी मेनहीन द्वारा उल्लिखित यह तीसरा शोध अभिकल्प है। जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट होता है कि इस अभिकल्प का उद्देश्य एक व्यक्ति, एक समुदाय, एक समाज, एक घटना अथवा अन्य दूसरी इकाई को निरीक्षण के अन्तर्गत वर्णित करना है। इसके लिए दो प्रमुख आवश्यकताएँ होती हैं—(क) पक्षपात से बचना (ख) अनुसंधान में मितव्ययिता के साथ-साथ अधिक से अधिक विश्वसनीयता।''[7]

प्रो० गोपाल जी प्रसाद के अनुसार— ''वर्णनात्मक शोध अभिकल्प का मुख्य उद्देश्य चुनी गयी कुछ सामाजिक समस्याओं के सम्बन्ध में पूर्ण एवं यथार्थ तथ्यों को प्राप्त करना होता है।''[8]

इस शोध के दो प्रमुख लक्ष्य होते हैं। प्रथम पक्षपात कम से कम हो, दूसरा विश्वसनीयता (तथ्यों की) अधिक से अधिक हो। तथ्यों की विश्वसनीयता का अर्थ है कि यदि अध्ययन की पुनरावृत्ति की जाये तो वैसा ही विवरण पुनः प्रस्तुत हो जाये।

वर्णनात्मक शोध को इस प्रकार समझा जा सकता है कि ''वर्णनात्मक शोध वह शोध है जिसका उद्देश्य समस्या के सम्बन्ध में पूर्ण, यथार्थ एवं विस्तृत तथ्यों की जानकारी प्राप्त करना है। इसमें वास्तविक तथ्यों का संकलन किया जाता है और इन तथ्यों के आधार पर समस्या का वर्णनात्मक विवरण अथवा चित्रण प्रस्तुत किया जाता है।''

प्रो० राम अहूजा के शब्दों में — ''वर्णनात्मक शोध अभिकल्प का प्रमुख लक्ष्य घटनाओं, प्रघटनाओं और परिस्थितियों का वर्णन करना है। चूँकि यह वर्णन वैज्ञानिक अवलोकनों के आधार पर बनाया जाता है इसलिए कारण-सम्बन्धी शोध की तुलना में अपेक्षा की जाती है कि यह वर्णन अधिक से अधिक यथार्थ और संक्षिप्त होता है।''[9]

कुछ महत्वपूर्ण उदाहरण

वर्णनात्मक शोध अभिकल्प के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं— महिलाओं के विरुद्ध घरेलू हिंसा की प्रकृति एवं परिमाण, युद्ध विधवाओं के व्यवस्थापन की समस्याएं, छात्रावासों में रहने वाले अन्तः वासी छात्रों की उपसंस्कृति, विभिन्न संगठनों द्वारा संचालित एक्जिट पोल्स जो मतदाता के मत देने के प्रतिमान का वर्णन

करते हैं। इस शोध के द्वारा समुदाय का चित्रण, इसके सदस्यों के आयु वितरण, राष्ट्रीय तथा धार्मिक पृष्ठभूमि, भौतिक तथा मानसिक स्वास्थ्य तथा शिक्षा के स्तर पर अथवा सामुदायिक सुविधाओं, मकानों के प्रकार, उपलब्ध पुस्तकालयों, अपराधों की संख्या एवं प्रकृति, सामाजिक संगठनों की संरचना तथा व्यवहार के प्रमुख प्रतिमानों आदि विविध विषयों का अध्ययन किया गया है और किया जाता है। जनजातियों का विभिन्न मानवशास्त्रियों एवं समाजशास्त्रियों द्वारा किया गया अध्ययन वर्णनात्मक शोध अभिकल्प है। विभिन्न विश्वविद्यालयों के छात्रों में नशे की आदत का अध्ययन जो कि भारत सरकार के समाज कल्याण विभाग के सौजन्य द्वारा 1976 में और फिर 1986 और 1996 में किया गया था यह वर्णनात्मक शोध का महत्वपूर्ण उदाहरण है।

6.4.1 वर्णनात्मक शोध अभिकल्प के प्रकार — (Types of Descriptive Research Design)

शोध की संरचना के वर्णन के आधार पर इसके दो प्रकार हो सकते हैं—10

(i) गुणात्मक (Qualitative)

(ii) परिमाणात्मक (Quantitative)

(i) गुणात्मक वर्णन — (Qualitative Description)—संस्कृति, प्रतिमानों अथवा सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन की प्रक्रियाओं तथा उसके तत्वों से सम्बन्धित अध्ययन, जैसे प्रथाएं, मानदण्ड अथवा मूल्यों, सामाजिक संरचना एवं संगठन अथवा मानव व्यवहारों के प्रतिमानों का अध्ययन सामान्य प्रकृति का गुणात्मक वर्णन है। आरम्भिक सामाजशात्रियों अथवा मानवशास्त्रियों द्वारा इस क्षेत्र में किया गया योगदान प्रकृतया बहुत ही सामान्य और समष्टिवादी है। विशिष्ट क्षेत्रों से सम्बन्धित गुणात्मक वर्णन का महत्वपूर्ण उदाहरण—मीड का अध्ययन है जो उन्होंने विभिन्न संस्कृतियों में बच्चों के पालन-पोषण व्यवहार एवं प्रक्रिया पर किया है। गुणात्मक विश्लेषण ऐतिहासिक विधि अथवा तुलनात्मक विधि की सहायता से प्राप्त होता है। जो किसी संस्कृति अथवा समाज और उनके अंगों के उत्पत्ति और विकास की प्रक्रियाओं को समझने में सहायक होता है। हालांकि वर्णनात्मक अध्ययन किसी एक विधि तक सीमित नहीं होता है। फिर भी अवलोकन विधि विशेषतया सहभागी अवलोकन विधि का प्रयोग सामान्यतया सूचना एवं संकलन के लिए किया जाता है। **लिण्ड का 'मिडिल टाउन' का अध्ययन (Lynd's study of Middle Town)** अथवा व्हाइट का 'स्ट्रीट कार्नर सोसाइटी' का अध्ययन (Whyte's study of street corner society) गुणात्मक वर्णनात्मक शोध अभिकल्प का विशिष्ट एवं महत्वपूर्ण उदाहरण है जिसे समाजशास्त्रियों ने उपयोग किया है तथा अपने अध्ययन में इस शोध अभिकल्प का विकास किया है। सहभागी अवलोकन विधि के अलावा समाजशास्त्रियों ने अन्य विधियों का भी प्रयोग गुणात्मक वर्णनात्मक अभिकल्प के लिये किया है। जैसे — औपचारिक तथा अनौपचारिक साक्षात्कार, डायरियों का अध्ययन अथवा तथ्य/दत्त संकलन के द्वितीयक स्रोत आदि सूचनाएँ जो विभिन्न स्रोतों द्वारा संकलित की जाती हैं उन्हें संयुक्त कर अनुमान निकाला जाता है।

(ii) परिमाणात्मक वर्णन (Quantitative Description)

यह प्रश्नावली विधि, संरचित साक्षात्कार, अनुसूची अथवा किसी दूसरी संरचित विधि द्वारा प्राप्त किया जाता है। इस प्रकार का वर्णन मानव जीवन के विभिन्न क्षेत्रों को आच्छादित एवं बन्द

करती है। जिसे विभिन्न संवर्गों के अन्तर्गत व्यवस्थित किया जा सकता है। ये निम्नलिखित है—

उदाहरण स्वरूप —(i) व्यक्तियों समूहों, अथवा समुदायों की विशेषताओं का वर्णन

इस वर्णन के अन्तर्गत व्यक्तियों की आयु का वितरण, उनकी प्रजातीय पृष्ठभूमि, जाति, आयु, व्यवसाय, राष्ट्रीयता अथवा धर्म आते हैं। इसमें समूहों और समुदायों, उनकी सामाजिक - आर्थिक दशा, सांस्कृतिक प्रतिमान, अभिवृत्ति आदि भी सम्मिलित होती है।

(ii) **सुविधाओं का वर्णन करना—** इस प्रकार का वर्णन प्रति कमरे में रहने वाले व्यक्तियों की औसत संख्या, उनके रहने की दशाएं, स्कूल एवं अस्पताल की उपलब्धता आदि। पुनः प्रति व्यक्ति कैलोरी भोजन की व्यवस्था जो उनकी प्रस्थिति के अनुसार होती है। कैलोरी, भोजन के प्रकार तथा भौतिक वस्तुओं की उपलब्धता एवं उनके प्रकार आदि के वर्णन इसके अन्तर्गत आते हैं।

(iii) **स्वभावों का वर्णन —** समाजशास्त्र में व्यक्ति के विभिन्न प्रकार के स्वभावों के अनेक अध्ययन वर्णन के लिए हुए हैं जैसे — सिनेमा हाल में फिल्म देखने की आदत, छात्रों के पढ़ने का स्वभाव, खेलने की आदत आदि। यह अध्ययन विभिन्न समयों के सन्दर्भ में हुए हैं जैसे- नियमित रूप से, अवसरों पर अथवा कभी-कभी।

(iv) **लोगों की अभिवृत्तियों का वर्णन करने वाले अध्ययन —** आधुनिक जनतंत्र के उदय होने के पश्चात् यह बात सामान्य हो गयी है कि जनता की समाज के विकास में अथवा शासन के क्रिया कलापों में अधिकतम सहभागिता बढ़ रही है। समाजशास्त्रियों अथवा मनोवैज्ञानिकों द्वारा लोगों के मत को जानने और राजनीतिक दलों, शासन, सामाजिक, आर्थिक व्यवस्थाओं, सांस्कृतिक मूल्यों के प्रति उनकी अभिवृत्ति पर अनेक अभिवृत्तीय अध्ययन किये गये हैं इन अभिवृत्तीय अध्ययनों के आधार पर कोई वर्णन कर सकता है। किसी समुदाय के कितने प्रतिशत लोग किसी विषय पर क्या विचार रखते हैं, अथवा दी हुई जनसंख्या में से कितने लोग किसी विशिष्ट विषय पर विशिष्ट विचार रखते हैं, उदाहरणस्वरूप, कोई या शोधकर्ता यह विवेचित कर सकता है कि उत्तर प्रदेश में मुसलमानों का अधिकतम प्रतिशत सपा या बसपा के पक्ष में मतदान करता है तथा मुसलमानों में से अधिकतम लोग भाजपा को न तो पसन्द ही करते हैं और न ही उसके पक्ष में मतदान करते हैं। दूसरा उदाहरण-लखनऊ में अधिकतम प्रतिशत जनसंख्या अटल बिहारी बाजपेयी (भाजपा) के पक्ष में मतदान करती है तुलनात्मक अन्य दलों जैसे कम्युनिस्ट पार्टी के पक्ष में बहुत ही कम मतदान करती है। समान प्रकार से दूसरा उदाहरण दे सकते हैं कि बीमित व्यक्तियों की संख्या में से विभिन्न आयु समूहों में से प्रत्येक वर्ष कितने व्यक्तियों की मृत्यु होती है तथा उसके बदले उसे कितना बीमा लाभ देना पड़ता है इस आधार पर बीमा कम्पनी यह भविष्य कथन कर सकती है कि अगले वर्ष में उसे कितनी राशि मृत्यु कवरेज के रूप में देना पड़ेगा। अन्य उदाहरण- भारतवर्ष के पड़ोसी देश में यदि जनसंख्या बढ़ रही है तथा उसकी दर अनुमानित है तो भारतवर्ष की योजनाओं को दृष्टिगत रखते हुए कोई यह भविष्य कथन कर सकता है कि पंचवर्षीय योजनाओं में जनसंख्या वृद्धि की दर से कितने विद्यालयों, महाविद्यालयों, राशन की दुकानों अथवा अस्पताल एवं अस्पताल शैया की आवश्यकता होगी। इस प्रकार भविष्य कथन के अलावा वर्णनात्मक अध्ययन व्यक्तियों की आवश्यकताओं का मूल्यांकन तथा विकासीय योजनाओं को बनाने में सहायता करता है।

6.4.2 वर्णनात्मक शोध अभिकल्प के चरण

सेल्टिज, जहोदा, कूक एवं अन्य 11 ने वर्णनात्मक शोधों के निम्नलिखित चरणों का उल्लेख किया है—

(1) अध्ययन के उद्देश्यों का निर्धारण

(2) तथ्यों के संकलन की विधियों की प्ररचना

(3) निदर्शन का चयन

(4) सामग्री का संकलन तथा परीक्षण

(5) परिणामों का विश्लेषण

इस प्रकार वर्णनात्मक अध्ययनों का प्रथम चरण अध्ययनों के उद्देश्यों को पूर्णत: स्पष्ट करना है ताकि उपयुक्त सामग्री का संकलन किया जा सके। तत्पश्चात् सामग्री संकलन हेतु प्रविधियों के चयन का प्रश्न सामने आता है। शोध की समस्या तथा समग्र की प्रकृति को सामने रखते हुए यह निर्णय लिया जाता है कि प्र ावित अध्ययन हेतु कौन सी प्रविधि सर्वाधिक उपयुक्त होगी। एक बार एक से अधिक प्रविधियों को साथ प्रयोग में लाया जाता है। वर्णनात्मक अध्ययन निदर्शन पर आधारित होते हैं तथा उपयुक्त निदर्शन पद्धति एवं निदर्शन के आकार के बारे में पूर्व निर्णय लिया जाना अनिवार्य है। मुख्यत: सम्भावित निदर्शन प्रविधि का प्रयोग किया जाना अधिक उचित माना जाता है। सामग्री का संकलन त्रुटिरहित होना चाहिए एवं विश्वसनीयता को बनाये रखने हेतु यथा सम्भव प्रयास किये जाने चाहिए। संकलित सामग्री का विश्लेषण एवं परीक्षण भी सावधानी पूर्वक किया जाना चाहिए। सामग्री का वर्गीकरण नियोजित होना चाहिए तथा उपयुक्त सांख्यकीय प्रविधियों द्वारा इसका विश्लेषण किया जाना चाहिए। परिणामों का विश्लेषण करके निष्कर्ष (finding) निकाले जाते हैं तथा अन्य व्यक्तियों के लिए प्रभावशाली प्रतिवेदन तैयार किया जाता है।

6.5 अन्वेषणात्मक एवं वर्णनात्मक शोध अभिकल्प में अन्तर (Difference between Exploratory and Descriptive Research Design)

सामान्यत: कई बार अन्वेषणात्मक शोध प्रकल्प और वर्णनात्मक शोध प्रकल्प को एक ही मान लिया जाता है परन्तु एक ही मानना पूर्णतया अवैज्ञानिक एवं शोध के उद्देश्यों के अनुसार गलत है। अन्वेषणात्मक शोध अभिकल्प एवं वर्णनात्मक शोध प्रकल्प को निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर विभेदीकृत किया किया जा सकता है—

1. वर्णनात्मक शोध का उद्देश्य घटनाओं, प्रघटनाओं, समस्याओं का मात्र वर्णन है, जबकि अन्वेषणात्मक शोध का उद्देश्य नवीन खोज से सम्बन्धित है।

2. सामान्यीकरण की दृष्टि से दोनों में भिन्नता है।

3. वर्णनात्मक शोध का उद्देश्य सम्पूर्ण घटना का चित्र प्रस्तुत करना है जबकि अन्वेषणात्मक शोध मुख्यत: किसी समस्या का निरूपण करने अथवा उपकल्पनाओं का निर्माण करने में सहायक होता है।

4. वर्णनात्मक अध्ययन हेतु समस्या के बारे में पहले से पर्याप्त पूर्व ज्ञान उपलब्ध होना अनिवार्य है जबकि अन्वेषणात्मक अध्ययन हेतु ऐसा आवश्यक नहीं है।

5. वर्णनात्मक शोध की प्रकृति कठोर (rigid) होती है। जबकि, अन्वेषणात्मक शोध की प्रकृति लचीली (Flexible) होती है।

6. निदर्शन की दृष्टि से वर्णनात्मक शोध सम्भावित निदर्शन पर आधारित होता है, वर्णनात्मक अध्ययनों में दैव निदर्शन का ही अधिकतर प्रयोग किया जाता है। जबकि अन्वेषणात्मक अध्ययन मुख्यत: असम्भावित निदर्शन पर आधारित होता है।

7. वर्णनात्मक शोध की सांख्यिकीय विश्लेषण हेतु पूर्व नियोजित रूपरेखा होती है जबकि अन्वेषणात्मक अध्ययन में सांख्यिकीय विश्लेषण हेतु कोई पूर्व योजना नहीं होती।

8. वर्णनात्मक शोध में सामग्री के संकलन हेतु असंरचित एवं सोची-समझी प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है जबकि अन्वेषणात्मक शोध में सामग्री संकलन हेतु असंरचित प्रविधयों का प्रयोग किया जाता है।

9. वर्णनात्मक अध्ययन में शोध के संचालन हेतु पूर्व निर्णय लिये जाते हैं, जबकि अन्वेषणात्मक शोध में शोध के संचालन हेतु पूर्व निर्णय नहीं लिये जाते हैं।

उपरोक्त तीनों मूलभूत शोध अभिकल्पों (अन्वेषणात्मक, व्याख्यात्मक और वर्णनात्मक शोध अभिकल्प) के अतिरिक्त मेनहीम[12] और ब्लैक एवं चैम्पियन[13] ने तीन अन्य प्रकार के शोध अभिकल्पों को विभेदीकृत किया है।

1) सर्वेक्षण शोध अभिकल्प

2) वैयक्तिक अध्ययन शोध अभिकल्प

(3) प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प

यहाँ पर हम केवल पहले दो शोध अभिकल्पों (सर्वेक्षण शोध अभिकल्प और वैयक्तिक अध्ययन शोध अभिकल्प) का वर्णन करेंगे तथा अन्तिम शोध अभिकल्प का विस्तृत वर्णन अगली इकाइयों में करेंगे।

6.6 सर्वेक्षण शोध अभिकल्प(Survey Research Design)

बैंक स्ट्राम एवं हर्श[14] ने सर्वे शोध को सन्दर्भित किया है जिसे वह 'क्षेत्र शोध' भी कहते हैं। इसके अनुसार "व्यक्तियों की अधिक जनसंख्या में से कुछ लोगों के साक्षात्कार के द्वारा जो सूचनाएँ संकलित या इकट्ठी की जाती है" क्षेत्र शोध कहलाती हैं।

सामाजिक शोध अभिकल्प के समान सर्वेक्षण अभिकल्प के भी चार लक्ष्य होते हैं— (i) वर्णन (ii) अन्वेषण (iii) व्याख्या (iv) प्रायोगिकता। सर्वेक्षण शोध अभिकल्प का महत्व निर्दशन पर निर्भर होता है। जैसे (i) अध्ययन में चुने गये व्यक्तियों की संख्या (ii) उनके प्रतिनिधित्वामक चरित्र (iii) उनके द्वारा दी गई सूचना की विश्वसनीयता। एक उदाहरण के द्वारा इसको समझा जा सकता है— जैसे

(पल्स पोलियो के प्रति मुस्लिमों की अभिवृत्ति या दृष्टिकोण)

शिक्षित एवं निरक्षर मुस्लिम पुरुष और महिलाएँ जो कि ग्रामीण और शहर में रहते हुए विभिन्न व्यवसायों में संलग्न विभिन्न आर्थिक वर्गों से सम्बन्धित मुस्लिम जनसंख्या में से निदर्शन के आधार पर चयनित

करके उनसे साक्षात्कार किया जा सकता है और अनुसूची के आधार पर तथ्यों या प्रदत्तों का संकलन किया जा सकता है। सांख्यिकी परीक्षण के लिए परिमाणात्मक रूप से विश्लेषित किया जा सकता है। सह सम्बन्धात्मक और क्रास टेबुलर विश्लेषण के आधार पर यह अध्ययन मुस्लिमों में पल्स पोलियों के प्रति भावना को मूल्यांकित कर सकता है कि इसके प्रति उनका नकारात्मक दृष्टिकोण किस कारण से है। नकारात्मक अभिवृत्ति का कारण उनकी चिन्ताएं, आय, रूढ़िवादिता और सामाजिक आर्थिक परिप्रेक्ष्य में आधुनिक दृष्टिकोण का अभाव आदि हो सकता है। इसमें से कुछ उपकल्पना सत्य साबित हो सकती है तथा कुछ असिद्ध भी हो सकती है।

इस प्रकार इस अभिकल्प में जनसंख्या में व्यक्तियों या वस्तुओं के किसी गुण के वितरण तथा आयतन (Incidence) का पता लगाया जाता है। **सर्वेक्षण शोध अभिकल्प के निम्नलिखित दो प्रकार हैं—**

6.6.1 स्थिर समूह तुलना अभिकल्प (Static Group Comparision Design)

चूँकि सर्वेक्षण शोध अभिकल्प अप्रयोगात्मक अभिकल्प की श्रेणी में आता है। तदनुसार यह अभिकल्प पूर्व प्रयोगात्मक अभिकल्प (Pre-Experimental design) के समूह तुलना अभिकल्प पर आधारित है। इस अभिकल्प का प्रयोग चरों में सम्बन्धों की व्याख्या तथा उसके आयतन का अध्ययन करने के लिए किया जाता है। इस अभिकल्प में दो या दो से अधिक तुलनात्मक समूह होते हैं जो X (विवेचन Treatment) पर मूल्य (value) के रूप में परिभाषित होते हैं। बाद में इन दोनों समूहों की तुलना O (आक्षितचर) के अवलोकन पर की जाती है। इस अभिकल्प का संकेतन निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता है।

$$\frac{X_1 \text{------} O_1}{X_1 \qquad\quad O_2}$$

उदाहरण के रूप में — इस शोध में— व्यक्ति की आय पर उसकी व्यवस्था का क्या प्रभाव पड़ता है का शोधकर्ता अध्ययन करना चाहता है। मान लिया जाय कि शोधकर्ता व्यवसाय (X) के आधार पर दो समूह तैयार करता है। — वकीलों का समूह तथा मेडिकल डाक्टरों का समूह तथा O यहाँ आय का माप बतला रहा है। यदि दोनों तुलनात्मक समूह आपस में आय की माप पर सार्थक सूत्र से भिन्न पाये जाते हैं तो शोधकर्ता इस निष्कर्ष पर पहुँच सकता है कि व्यवसाय का प्रभाव व्यक्ति की आय पर पड़ता है। परन्तु इस ढंग के विरोध में कई बातें सामने आ सकती है (i) समूह समकक्ष नहीं हैं (ii) आय उनकी मेहनत एवं अभिरुचि के आधार पर निर्भर करती है। (ii) समय क्रम का दोष क्योंकि एक ही समय यहाँ अवलोकन होता है।

6.6.2 पैनल अभिकल्प (Panel Design)

पैनल अभिकल्प में उपर्युक्त अभिकल्प दोषों जैसे समय-क्रम के दोष को यथासम्भव दूर करने का प्रयास किया जाता है। इस अभिकल्प में दो या दो से अधिक बारी में X तथा O पर आँकड़े संग्रहीत किये जाते हैं। जिसका परिणाम यह होता है कि इसमें भिन्न-भिन्न समय क्रम तथा X एवं O में उन अन्तरालों में होने वाले परिवर्तनों की वैज्ञानिक व्याख्या सम्भव हो पाती है। इस अभिकल्प का संकेतन निम्नलिखित प्रकार से किया जाता है।

$$\frac{X_{1.1}\ X_{1.2}\ X_{1.3}\ O \text{ ---- } X_{1.2}\ X_{1.3}\ O \text{ ---- } X_{12}O}{X_{2.1}\ X_{2.2}\ X_{2.3}\ O \text{ ---- } X_{2.2}\ X_{2.3}\ O \text{ ---- } X_{2.2}O}$$

इस संकेतन में प्रत्येक X में दो - दो छोटे अंक हैं। पहले अंक द्वारा चर के स्तर का पता लगाया जाता है जैसे, यौन (Sex) चर के लिए पुरुष तथा महिला। पुरुष को (1) तथा महिला को (2) के द्वारा दिखलाय जा सकता है। इस तरह के अभिकल्प में ऊपर वाले सभी X का पहला (1) है। अत: ये सिर्फ पुरुषों पर प्राप्त आंकड़े माने जायें। उसी तरह शोध में नीचे वाले सभी X का पहला अंक (2) है। अत: ये सिर्फ महिलाओं पर प्राप्त आंकड़े माने जायेंगे। X के दूसरे अंक द्वारा उन प्रमुख चरों की पहचान की जाती है। जिन पर आंकड़ों का संकलन किया जाता है। अभिकल्प के अनुसार X_1, X_2, X_3 तथा O पर आंकड़े एक बारी में (या एक साक्षात्कार में) संग्रह किये जाते हैं। X_2, X_3 तथा O पर आंकड़े दूसरी बारी में या दूसरे साक्षात्कार में संग्रह किये जाते हैं। और इसी तरह से X_3 तथा O पर आंकड़े तीसरी बारी में संग्रह किये जाते हैं। इस प्रकार इस अभिकल्प से यह स्पष्ट होता है कि इसमें आंकड़े X तथा O पर भिन्न - भिन्न समयों में संग्रह किये जाते हैं। इसे निम्नलिखित उदाहरण द्वारा अधिक स्पष्ट रूप से समझाया जा सकता है।

मान लिया जाय कि कोई शोधकर्ता ''पुरुष एवं महिलाओं का वोटिंग व्यवहार का आयतन (Incidence) तथा वितरण, व्यक्तियों के सामाजिक-आर्थिक स्तर तथा उनके रोजगार स्तर द्वारा किस ढंग से सम्बन्धित है'' का अध्ययन करना चाहता है। इस अध्ययन को इस अभिकल्प के अनुसार निम्नलिखित प्रकार से किया जायेगा। इस अध्ययन में पुरुष (X_1) तथा महिला (X_2) दो स्तर के प्रतिदर्श (Sample) होंगे। सामाजिक - आर्थिक स्तर के सन्दर्भ में पुरुषों एवं महिलाओं को तीन-तीन श्रेणियों में बाँटा जायेगा।

उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर पुरुष वर्ग ($X_{1.1}$)

मध्यम सामाजिक - आर्थिक स्तर पुरुष वर्ग ($X_{1.2}$)

निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर पुरुषवर्ग ($X_{1.3}$)

इसी तरह,

उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर पुरुष वर्ग ($X_{2.1}$)

मध्यम सामाजिक - आर्थिक स्तर पुरुष वर्ग ($X_{2.2}$)

निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर पुरुषवर्ग ($X_{2.3}$)

इस अध्ययन में वोटिंग व्यवहार (O) आश्रित चर का उदाहरण है। प्रतिदर्श में रोजगार के दो स्तर हो सकते हैं—

महिलाओं में —

रोजगार में लगी महिलाएँ ($X_{2.2}$)

तथा बेरोजगार महिलाएँ ($X_{2.3}$)

शोधकर्ता सामाजिक - आर्थिक स्तर के तीनों श्रेणियों के पुरुष एवं महिलाओं के वोटिंग व्यवहार का अध्ययन करने के लिए साक्षात्कार लेगा और फिर इस प्रक्रिया को 1 वर्ष या 2 वर्ष या 6 महीना या $1^{1/2}$ वर्ष के बाद दोहरायेगा। इसी ढंग से शोधकर्ता को समय बीतने के साथ X के O पर पड़ने वाले प्रभावों का पता चल जाता है तथा साथ ही साथ वह एक निश्चित निष्कर्ष पर भी पहुंचने में समर्थ हो जाता है। जैसे ''वह इस निष्कर्ष पर पहुँच सकता है कि वोटिंग व्यवहार में उच्च सामाजिक आर्थिक स्तर के लोगों द्वारा अन्य दोनों स्तर के लोगों की तुलना में कम अभिरुचि दिखलायी पड़ती है तथा बेरोजगार व्यक्ति

रोजगार में लगे व्यक्तियों की अपेक्षा वोटिंग कार्यक्रम में अधिक रुचि लेते हैं।[14] अर्थात वोट करने में बेरोजगार व्यक्ति अधिक प्रतिबद्ध दिलचस्पी लेते हैं, क्योंकि उनमें अनिश्चितता की भावना तथा साथ-ही-साथ अपेक्षा की भावना रहती है।

6.6.3 लाभ एवं दोष—(सर्वेक्षण शोध अभिकल्प)

सर्वेक्षण शोध अभिकल्प के कुछ लाभ तथा परिसीमाएं (दोष) भी हैं जिन्हें हम निम्नलिखित रूप में विवेचित कर सकते हैं—

(1) कम लागत में इस शोध अभिकल्प द्वारा उत्तरदाताओं से सूचनाएं मिल सकती हैं जिसे प्रश्नावली साक्षात्कार विधि द्वारा सम्पन्न किया जा सकता है।

(2) दत्त संकलन में लचीलापन संभव है । प्रश्नावली, अनुसूची, साक्षात्कार और अवलोकन विधि द्वारा शोधकर्ता वैध सूचना प्राप्त कर सकता है।

(3) सर्वेक्षण के द्वारा शोधकर्ता सिद्धान्तों का परीक्षण या सत्यापन कर सकता है कि कोई सैद्धान्तिक संकेत उत्तरदाताओं या जनता द्वारा सही साबित होता है, अथवा नहीं। अर्थात् जाँच द्वारा यह सिद्ध होता है कि लोग किसी सिद्धान्त का समर्थन करते हैं या उसे अस्वीकार करते हैं।

(4) सर्वेक्षण शोध द्वारा समष्टि के बारे में (जनसंख्या के बारे में) अनेकों प्रकार की सूचनाएं एक साथ मिल जाती हैं। अत: इस शोध की पहुँच (क्षेत्र) अन्य अभिकल्पों की तुलना में अधिक है।

(5) इस शोध अभिकल्प में परिशुद्धता अधिक होती है क्योंकि प्राय: इस अभिकल्प में अधिक संख्या में पात्रों (Subjects) का उपयोग सम्भव है। इन लाभों के अतिरिक्त इस अभिकल्प की अपनी परिसीमाएँ या दोष भी हैं जो निम्नलिखित हैं—

(1) यह उत्तरदाताओं के वास्तविक संवेगों या भावनाओं को सही रूप में संकेतित नहीं कर पाता है। अभिवृत्ति अथवा मत वास्तविक अथवा असत्य भी हो सकते हैं। एक व्यक्ति धार्मिक सद्‌भावना या सामाजिक समरसता के पक्ष में अभिव्यक्ति करता है परन्तु वह वास्तव में धार्मिक कट्‌टर पंथी या जातिवादी भी हो सकता है।

(2) इस अभिकल्प द्वारा सूक्ष्म/गहन रूप से अध्ययन सम्भव नहीं है। शोधकर्ता केवल जनसंख्या संवेगों का बनावटी प्रक्षेपण प्राप्त कर सकता है।

(3) शोधकर्ता का व्यक्तिगत उत्तरों पर कोई नियंत्रण नहीं रहता है। वैध उत्तर प्राप्त करना संदेहास्पद होता है। उत्तरदाता या तो भ्रामक उत्तर देता है या वह तय कर लेता है कि कुछ प्रश्नों का उत्तर नहीं देना है।

6.7 वैयक्तिक अध्ययन अभिकल्प (Case Study Design)

यह एक ऐसा अभिकल्प है जिसमें वैयक्तिक केस का अध्ययन किया जाता है। इस अभिकल्प में किसी स्वतन्त्र चर में न तो किसी प्रकार का जोड़-तोड़ (चातुर्य Manipulation) ही किया जाता है और न ही उसमें परिवर्तन की उम्मीद की जाती है बल्कि वर्तमान या बीती हुई दशाओं पर विचार किया जाता है। इस अभिकल्प में अध्ययन की इकाई एक व्यक्ति हो सकता है, एक परिवार या एक सामाजिक समूह हो सकता है। इसमें इस ढंग से आंकड़े संग्रह किये जाते हैं जिससें अध्ययन की जाने वाली वस्तु का

एकात्मक स्वरूप (Unitary character) बना रहता है। ऐसा नहीं होता है कि अध्ययन किये जा रहे किसी एक समूह को या परिवार को फिर छोटे-छोटे विभिन्न विवेचन समूहों में बाँट दिया जाए।

इस विधि में आंकड़ों के संग्रह और विश्लेषण के लिए लम्बे अन्तराल (अवधि) और अनेक विधियों की आवश्यकता होती है।

6.7.1 वैयक्तिक अध्ययन के चरण

यिन के अनुसार[15] केस अध्ययन अभिकल्प में निम्नलिखित चरण सम्मिलित हैं—

(i) **अधिमूल्यांकन** — (परियोजना के बारे में) जैसे (An overview) उस केस अथवा केसों के बारे में अन्य जानकारियाँ, अध्ययन का उद्देश्य, अध्ययन की जाने वाली इकाई की विशेषताएँ आदि।

(ii) **क्षेत्र क्रिया विधि** — (Field Procedure)— जैसे अध्ययन किये जाने वाले केस या केसों को चुनना, अध्ययन की जाने वाली इकाई या इकाइयों के मूल्यांकन प्राप्त करने के मार्ग।

(iii) **प्रश्नों को तैयार करना** — (Preparing Questions) —अध्ययन में पता लगाने के लिए तथा विवरण के लिए जो आवश्यकताएं होती है।

(iv) **तत्वों का निर्धारण करना** जैसे—(Determining elements) शैली, रूपरेखा इत्यादि प्रतिवेदन तैयार करने के लिए जो आवश्यकता पड़ती है।

इस अभिकल्प का महत्वपूर्ण दोष यह है कि इसके द्वारा वैयक्तिक केस का मात्र वर्णनात्मक अध्ययन होता है अन्य अध्ययन नहीं ।

6.8 सारांश

हेनरी मेनहीम ने तीन प्रकार के शोध अभिकल्पों का उल्लेख किया है—

1. अन्वेषणात्मक शोध अभिकल्प, 2. व्याख्यात्मक शोध अभिकल्प 3. वर्णनात्मक शोध अभिकल्प।
जब शोध का उद्देश्य किसी सामाजिक घटना के अन्तर्निहित कारणों को ढूँढ़ना होता है तो इसके लिए अन्वेषणात्मक शोध अभिकल्प का प्रयोग होता है।

अन्वेषणात्मक शोध अभिकल्प का उद्देश्य — परिस्थिति का निदान करना, विकल्पों को छाँटना और नये विचारों की खोज करना होता है। प्रोफेसर योगेश अटल ने अपने प्रसिद्ध लेख (प्रोजेक्ट क्लैप पर) तथा वृहद समाजशास्त्रीय अध्ययन (लोकल कम्यूनिटीज एण्ड नेशनल पालिटिक्स, 1971) में इस शोध अभिकल्प का प्रयोग किया है। जब कारण सम्बन्धी (Causal) अर्थात् स्वतन्त्र चर एवं आश्रित चरों में पाये जाने वाले सम्बन्धों को ज्ञात करने का प्रयास किया जाये तब व्याख्यात्मक शोध अभिकल्प का प्रयोग होता है। इसका प्रमुख उद्देश्य आश्रित चर की व्याख्या करना है।

वर्णनात्मक शोध अभिकल्प का प्रमुख लक्ष्य घटनाओं, प्रघटनाओं और परिस्थितियों का वर्णन करना है इसका उद्देश्य समस्या के सम्बन्ध में पूर्ण, यथार्थ एवं विस्तृत तथ्यों की जानकारी प्राप्त करना है। इसके लिए दो प्रमुख आवश्यकताएँ हैं (अ)-पक्षपात से बचना (ब)- अनुसंधान में मितव्ययिता के साथ-साथ अधिक से अधिक विश्वसनीयता।

वर्णनात्मक शोध अभिकल्प के दो प्रकार हैं —

(1) गुणात्मक 2- परिमाषाणात्मक

इन तीनों अभिकल्पों के अतिरिक्त मेनहीन और ब्लैड एवं चैम्पियन ने तीन अन्य प्रकार के शोध अभिकल्पों को विभेदीकृत किया है। 1-सर्वेक्षण शोध अभिकल्प 2- वैयक्तिक अध्ययन शोध अभिकल्प 3- प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प।

शोध अभिकल्प के प्रकार

6.9 बोध प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्र०- शोध अभिकल्प कितने प्रकार का होता है ? अन्वेषणात्मक शोध अभिकल्प का वर्णन कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

प्र०-1 अन्वेषणात्मक तथा वर्णनात्मक शोध अभिकल्प के बीच अन्तर को स्पष्ट कीजिए।

प्र०-2 वर्णनात्मक अभिकल्प को स्पष्ट करते हुए इसके प्रकारों का वर्णन कीजिए।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्र०-1 योगेश अटल ने अपने प्रोजेक्ट क्लैप (Project CLAPP) लेख में किस शोध अभिकल्प का प्रयोग किया है?

अ- अन्वेषणात्मक शोध अभिकल्प

ब- व्याख्यात्मक शोध अभिकल्प

ग- वर्णनात्मक शोध अभिकल्प

घ- प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प

प्र०-2 योगेश अटल ने अपने अध्ययन के क्षेत्र में लघु समुदाय के रूप में किस गाँव को चुना ?

अ- वृन्दावन

ब- खोरिया खुर्द

ग- बिठूर

द- सिकन्दरपुर

प्र0-3 'साइण्टिफिक सोशल सर्वे एण्ड रिसर्च पुस्तक के लेखक कौन हैं ?

अ- गुड एवं हाट

ब- देवेन्द्र ठाकुर

ग- पी० वी० यंग

घ- गोपाल जी प्रसाद

प्र०-4 हेनरी मेनहीम द्वारा उल्लिखित निम्नलिखित में से कौन सा शोध अभिकल्प नहीं है?

अ- अन्वेषणात्मक

ब- व्याख्यात्मक

ग- निदानात्मक

द- वर्णनात्मक

प्र०-5 वर्णनात्मक शोध अभिकल्प के प्रकारों में निम्नलिखित में से कौन सा प्रकार नहीं है ?

अ- गुणात्मक

ब- परिमाणात्मक

स- विश्लेषणात्मक

द- उपरोक्त सभी

6.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1- अ

2- ब

3- स

4- स

5- स

6.11 सूची एवं सन्दर्भ (Notes and References)

1- हेनरी मेनहीम; सोशियोलोजिकल रिसर्च : फिलॉसफी एण्ड मेथ्ड्स, द डारसी प्रेस, इलीनवायस, 1977 : पृष्ठ 158-175.

2- क्लेयर सेल्टिज, मेरी जहोदा, मार्टन डयूश एण्ड स्टअर्ट, डब्लू. कूक; रिसर्च मेथड्स इन सोशल रिलेशन्स, 1959, पृष्ठ 52, हाल्ट रिनेहार्ट एण्ड विन्सटन, इन्क, न्यूयार्क।

3- एस. सरनताकोस, सोशल रिसर्च (द्वितीय संपादन); मेकमिलन प्रेस, लन्दन, 1998.

4- एर्ल. बेबी: द प्रेक्टिस ऑफ सोशल रिसर्च (आठवां संपादन); वुड्सवर्थ पब्लिशिंग कम्पनी, अल्बनी, न्यूयार्क, 1998 पृष्ठ 90.

5- विलियम जिकमण्ड; विजनेस रिसर्च मेथड्स, द ड्राइडेन प्रेस, शिकागो, 1988 पृष्ट-73.

6- राम अहूजा; रिसर्च मेथड्स, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2003 पृष्ठ - 133.

7- देवेन्द्र ठाकुर; रिचर्स मेथेडोलोजी इन सोशल साइन्सेज; दीप एण्ड दीपा पब्लिकेशन, नई दिल्ली 1993 पृष्ठ - 172

8- गोपाल जी प्रसाद ; रिसर्च मेथेडोलोजी इन विहैवियरल, साइन्सेज, भारती भवन, पटना, 1992 पृष्ठ-190.

9- राम अहूजा; रिसर्च मेथड्स, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2003, पृष्ठ-131.

10- देवेन्द्र ठाकुर; रिसर्च मेथेडोलोजी इन सोशल साइन्सेज; दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1993, पृष्ठ-172

11- क्लेयर सेल्टिज, मेरी जहोदा, मार्टन ड्यूरा, एण्ड स्टुअर्ट, डब्लू. कूक; रिसर्च मेथड्स इन सोशल रिलेशन्स, हाल्ट रिनेहार्ट एण्ड विन्सटन, 1959.

12- हेनरी मेनहीम; सोशियो लोजिकल रिसर्च : फिलॉसफी ऐण्ड मेथेड्स, द डारसी प्रेस, इलीन्वायेस, 1977 पृष्ठ 177-201

13- जेम्स ए० ब्लैक एण्ड डीन जे० चैम्पियन ; मेथेड्स एण्ड इश्यूज इन सोशल रिसर्च, जॉन विले, न्यूयार्क 1976; पृष्ठ 84-104.

14- अरुण कुमार सिंह; मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ; मोतीलाल बनारसीदास, वारणसी, दिल्ली, पटना आदि 2001, पृष्ठ 117.

15- आर. के. यिन; केस स्टडी रिसर्च : डिजाइन, एण्ड मेथेड; सेज पब्लिकेशन, न्यूवरी पार्क सी. ए. 1991- 70.

इकाई 7 प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 प्रयोगात्मक शोध अभिकल्पः अवधारणा एवं परिभाषा

7.3 प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प निदर्श (पैराडाइम)

7.4 चर (परिवर्त्य)

- 7.4.1 स्वतन्त्र चर
- 7.4.2 आश्रित चर
- 7.4.3 नियन्त्रित चर
- 7.4.4 अन्तर्वर्ती चर
- 7.4.5 जैविक चर
- 7.4.6 सक्रिय चर
- 7.4.7 आरोपित चर
- 7.4.8 अविच्छिन्न चर अथवा सतत चर
- 7.4.9 विच्छिन्न चर
- 7.4.10 गुणात्मक चर अथवा अश्रेणीबद्ध चर
- 7.4.11 परिमाणात्मक चर अथवा श्रेणीबद्ध चर
- 7.4.12 उद्दीपन चर
- 7.4.13 प्रतिक्रिया चर
- 7.4.14 व्यवहार चर
- 7.4.15 प्रासंगिक चर
- 7.4.16 अप्रासंगिक चर

7.5 साक्ष्यों के प्रकार

- 7.5.1 सह-परिवर्तन साक्ष्य
- 7.5.2 चरों के घटने का समय क्रम साक्ष्य
- 7.5.3 साक्ष्य जिसने विजातीय चरों के प्रभाव को नियन्त्रित कर लिया है

7.6 सारांश

7.7 बोध प्रश्न

7.8 वस्तुनिठ बोध प्रश्नों के उत्तर

7.9 सूची एवं सन्दर्भ

7.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप

- प्रयोगात्मक शोध अभिकरण की सारगर्भित एवं बृहद जानकारी पर टिप्पणी कर सकेंगे।
- प्रयोगात्मक अभिकरण प्रयुक्त विभिन्न चरों के बारे में विवेचना कर सकेंगे।
- प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प से सम्बन्धित साक्ष्यों एवं इनके प्रकारों की व्याख्या कर सकेंगे।

7.1 प्रस्तावना

समाजशास्त्र की नींव रखने वाले प्रारम्भिक समाजशास्त्रियों जैसे अगस्त काम्टे, ईमाइल दुर्खीम और मैक्स वेबर ने सामाजिक घटना की वैज्ञानिक जांच की महत्वपूर्ण और आवश्यक विधि के रूप में तथा विभिन्न चरों के बीच कार्य कारण सम्बन्धों को स्थापित करने में प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प को प्रभावशाली ढंग से महत्व दिया है प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प सें सम्बन्धित कुछ महत्वपूर्ण चर हैं जिनके बारे में ज्ञान प्राप्त करना और उनका उपयोग सामाजिक प्रघटनाओं के अनुसार करना एक महत्वपूर्ण पहलू है। प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प में साक्ष्यों का अत्यन्त महत्व है जो सत्यता की जांच करने में सहायक होता है। किस प्रकार का साक्ष्य किस घटना में सहायक होता है उसके बारे में जानकारी इस इकाई में प्रस्तावित है।

7.2 प्रयोगात्मक शोध अभिकल्पः अवधारणा एवं परिभाषा

प्रयोग का अभिप्राय शोध का वह भाग है जिसमें चरों को परिचालित किया जाता है और दूसरे चरों पर होने वाले उनके प्रभाव को अवलोकित किया जाता है। इस प्रकार, प्रयोग नियंत्रित दशाओं के अन्तर्गत नये अथवा बिल्कुल नवीन अवलोकनों द्वारा जानकारी या ज्ञान प्राप्त करने के लिए क्रियाविधि है। जब एक वैज्ञानिक सामान्य अवलोकन द्वारा दी हुई समस्या में सम्भव संचालित कारकों का पता लगाने में असमर्थ हो जाता है तब वह प्रयोग का सहारा लेता है । सामान्य अवलोकन और प्रयोग में मूलभूत अन्तर यह होता है कि प्रयोग में अवलोकन नियंत्रित स्थितियों के अन्तर्गत किया जाता है और सामान्य अवलोकनों में नहीं।

चैपिन — के अनुसार प्रयोग का आरम्भ तब माना जाता है जब दशाओं के साथ वास्तविक मानवीय हस्तक्षेप होता है जोकि अवलोकन के अर्न्तगत घटना को निधार्रित करती हैं। उपरोक्त कथन से प्रतीत होता है कि प्रयोगात्मक विधि का मौलिक नियम यह है कि एक समय में स्थिति को भिन्न किया जाता है और आश्रित चरों पर पड़ने वाले प्रभाव को देखा जाता है अर्थात यहां पर एक अथवा अन्य चरों के अन्तर्गत सामान्य कारण और प्रभाव स्थितियों का सृजन किया जाता है कारणों को परिचालित किया जाता है और आश्रित चरों पर पड़ने वाले उनके प्रभाव को अवलोकित किया जाता है, जबकि अन्य दशाओं को दृढ़तापूर्वक स्थिर रखा जाता है।

समाजशास्त्र की नींव रखने वाले आरम्भ के समाजशास्त्रियों जैसे अगस्त काम्टे, ईमाइल दुर्खीम और मैक्स वेबर ने भी वैज्ञानिक जाँच को महत्वपूर्ण और आवश्यक विधि के रूप में तथा विभिन्न चरों के बीच कार्य कारण सम्बन्धों को स्थापित करने में प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प को प्रभावशाली ढंग से महत्व दिया है। यह इसलिए भी है कि भौतिक विज्ञानों के साथ-साथ यहां तक कि समाज विज्ञानों के क्षेत्रों में यह एक ऐसी विधि है जो सकारात्मक परिणाम देने में महत्वपूर्ण समझी जाती है।

प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प अपने उद्देश्य, संरचना एवं क्रिया विधियों के आधार पर पूर्व के अन्य शोध अभिकल्पी अन्वेषणात्मक शोध अभिकल्प एवं वर्णनात्मक शोध अभिकल्प से भिन्न है । प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प का उद्देश्य कार्य – कारण उपकल्पना का परीक्षण करना है जो कि उच्च रूप से संरचित होती है।''

देवेन्द्र ठाकुर के अनुसार – कार्य करण उपकल्पना दो अथवा दो से अधिक चरों के बीच कारण और प्रभाव के सम्बन्ध को अभिव्यक्त करती है।''

प्रयोगात्मक अभिकल्प से सम्बन्धित कुछ अवधारणाओं की चर्चा एवं व्याख्या करने से पहले यह आवश्यक है कि इसको एक निश्चित परिभाषा में विशिष्ट रूप से संकलित किया जाय। इस दृष्टि से अभी तक चैपिन द्वारा दी गयी परिभाषा सर्वोत्तम परिभाषा मानी जाती है जिन्होंने इस अभिकल्प पर पूरी एक पुस्तक ही लिखी है।

गोपालजी प्रसाद के अनुसार – ''शोध परिकल्पनाओं के आधार पर चरों को नियंत्रित अवस्था में रखकर उनके अध्ययन तथा मापन द्वारा सामाजिक घटनाओं को सुव्यवस्थित करने की रूपरेखा को प्रयोगात्मक अभिकल्प कहते हैं।''[2]

समाज वैज्ञानिक **चैपिन** ने इस सम्बन्ध में कहा है कि –

''समाज वैज्ञानिक शोधों, प्रायोगिक अभिकल्प की संकल्पना के नियन्त्रित परिस्थिति में निरीक्षण द्वारा मानवीय सम्बन्धों के सुव्यवस्थित अध्ययन की ओर संकेत करते हैं।''[3]

करलिंगर के अनुसार – प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प की सबसे बड़ी विशेषता है परिस्थितियों का प्रत्यक्ष नियंत्रण, जिसमें शोध... म से कम एक स्वतंत्र चर पर अवश्य नियंत्रण रखता है तथा उसे परिचालित करता है।

7.3 प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प निदर्श (पैराडाइम) (Paradigm of Experimental Research Design)

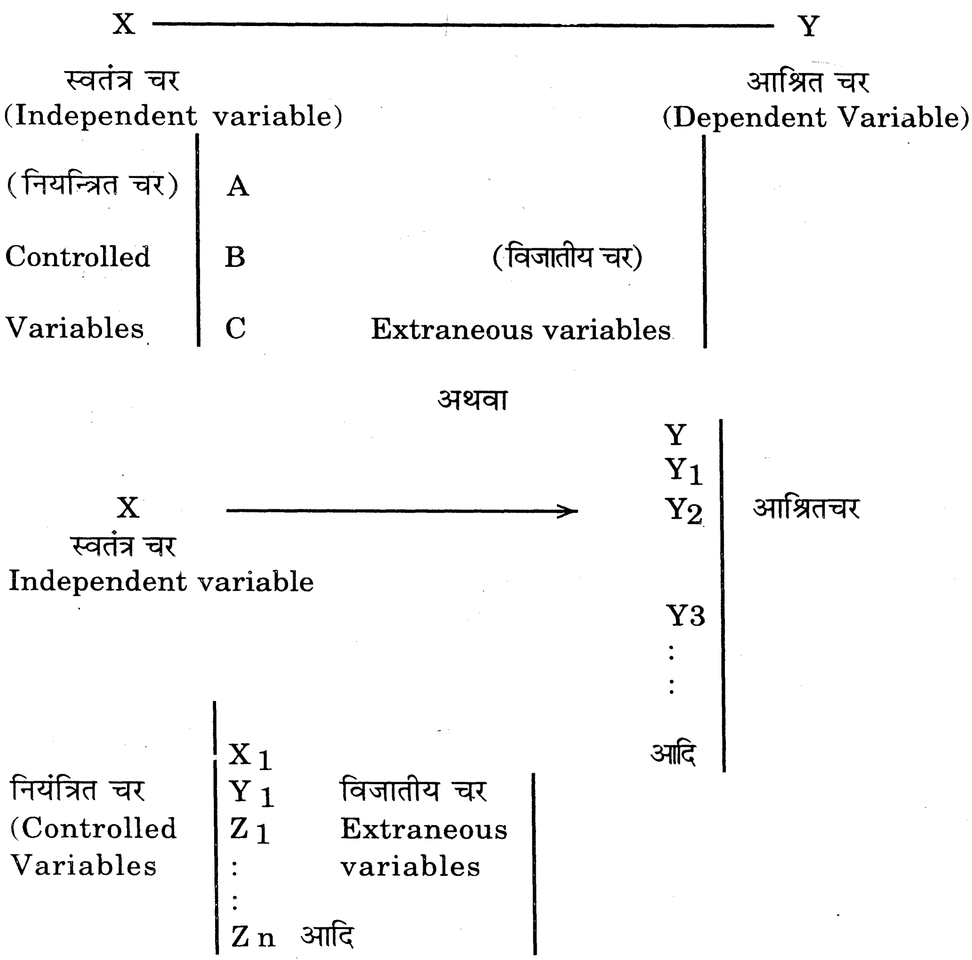

(क) चर अथवा चरों के प्रकार का सम्बोध : — समाज विज्ञान में किसी भी अध्ययन की वैज्ञानिकता, चरों को स्पष्ट कर देने तथा उन पर पर्याप्त नियंत्रण करने पर निर्भर करती है इसलिए किसी भी शोध की वैज्ञानिक रूपरेखा निर्धारित करने के लिए चरों का स्वरूप स्पष्ट कर देना आवश्यक होता है।

7.4 चर (Variable)

''प्राणी के शीलगुणों (Traits) तथा कुछ ऐसी ही अन्य विशेषताएं जिन्हें माप कर प्राप्तांकों में प्रस्तुत किया जा सके, उन्हें ही चर कहते हैं।''[5] 'चर' को परिवर्त्य या परिवर्ती भी कहते हैं, क्योंकि वे निरन्तर परिवर्तनशील रहते हैं। ये आन्तरिक तथा बाह्य परिवेशों के ऐसे तत्व होते हैं जो प्राणी, मनुष्य या पशु के व्यवहारों को किसी दिशा में निरन्तर प्रभावित करते रहते हैं।

लीओ पोस्टमैन एवं जेम्स पी. ईगन के अनुसार — ''चर किसी परिवेश के ऐसे तत्व होते हैं जो वर्तमान परिस्थिति में परिवर्तन उत्पन्न करते हैं और उसके विभिन्न मूल्य हो सकते हैं।''[6]

इसी प्रकार फ्रेड एन करलिंगर कहते हैं कि "एक चर एक गुण है जो विभिन्न मूल्यों को ग्रहण करता है।"[7]

प्राणी के किसी भी व्यवहार में परिवर्तन के मूल में एक कारण-तत्व (Cause Antecedent Factor) होता है जो उस व्यवहार में परिवर्तन को निर्धारित करता है अथवा किसी कारण तत्व से प्रभावित होकर ही प्राणी में विशिष्ट व्यवहार परिवर्तन होता है। ऐसा व्यवहार परिवर्तन परिणाम प्रभाव (effect consequent factor) कहलाता है। शोध का मूल उद्देश्य ऐसे ही (कारण तत्व) तथा प्रभाव या परिणामतत्व का वैज्ञानिक अवलोकन या मापन होता है। मापन सहवर्ती परिवर्तनों (Concomitant variations) के रूप में भी किया जाता है पर कारण प्रभाव सम्बन्ध के रूप में किया गया मापन ही यथार्थ एवं प्रतिपन्न होता है इसे क्रियात्मक सम्बन्ध का मापन (Measurement of functional relationship) कहते हैं। समाज विज्ञानों के लिए ऐसा मापन ही आदर्श होता है परन्तु इसके लिए परिष्कृत पद्धतिशास्त्र, पर्याप्त नियंत्रण तथा चरों के स्वरूप का स्पष्ट ज्ञान आवश्यक होता है।

एक ओर 'कारण-तत्व' (Cause factor) उद्दीपन चरों (Stimulus variables) के अनेक प्रकार हो सकते हैं, जैसे किसी उद्दीपन का मूल्य (Stimulus value), गुण (Quality), तीव्रता (Intensity), बारम्बारता (frequency), अवधि (Duration), मात्रा (Quantity), जटिलता (Complexity) आदि।

और दूसरी ओर 'प्रभाव-तत्व' प्रतिक्रिया चरों (Response variables) के विभिन्न स्वरूप हो सकते हैं, जैसे - प्रतिक्रिया का मूल्य (Response value), तीव्रता (Intensity), दिशा (Direction) प्रतिक्रिया काल (Reaction Time, latency), बारम्बारता (Frequency) आदि।

उद्दीपन-चर तथा प्रतिक्रिया चर के पारस्परिक यथार्थ सम्बन्ध को ही प्रकार्यात्मक सम्बन्ध (Functional relation) कहते हैं। इसमें शोधकर्ता निश्चित रूप से यह कह सकता है कि कोई उद्दीपन की अमुक मात्रा से कितनी मात्रा की अमुक प्रतिक्रिया प्रकट करेगा। चरों के बीच प्रकार्यात्मक सम्बन्ध स्थापित कर उनका मापन करना शोध की उच्चतम उपलब्धि मानी गयी है।

विज्ञानों में ऐसे क्रियात्मक या प्रकार्यात्मक सम्बन्ध का प्रतिपन्न मापन (Precise Measurement) अधिकांशत: सम्भव हो जाता है यथा रसायन विज्ञान में $C_6 H_{12} O_6$ = 6 कार्बन + 12 हाइड्रोजन + 6 आक्सीजन ग्लूकोज का अणुसूत्र = ग्लूकोज

अथवा सरलतम रूप से इसको समझ सकते हैं जल के सूत्र द्वारा

H_2O = 2 हाइड्रोजन + 1 आक्सीजन = 1 अणु जलवाष्प

परन्तु सामाजिक विज्ञानों में प्रकार्यात्मक सम्बन्ध एक आदर्श माना जाता है जिसकी प्राप्ति कम ही हो पाती है क्योंकि सामाजिक विज्ञानों में चरों का स्वरूप अतिगत्यात्मक (Highly dynamic) रहता है फिर भी प्रकार्यात्मक सम्बन्ध की यथासम्भव खोज करना तथा मापन करना शोधकर्ता का प्रधान उद्देश्य रहता है।

सामाजिक विज्ञानों में उद्दीपन और प्रतिक्रिया के सम्बन्ध को निम्नलिखित प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है।

$R = f(s)$

प्रतिक्रिया = उद्दीपन

अर्थात् कोई व्यवहार (प्रतिक्रिया चर) किसी उद्दीपन (उद्दीपन चर) के कार्यरूप में घटित होता है। इसका रूप गणितीय होता है अर्थात् यह गुणनफल (Multiple), वर्ग (Square), योग (addition), अनुपात (Proportion), लघु गुणक अनुपात (Log. Ratio) आदि की संक्रियाओं में मापकर व्यक्त किया जा सकता है। परन्तु उद्दीपन एवं प्रतिक्रिया के बीच महत्वपूर्ण इकाई प्राणी (Organism) होता है। इसको इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है।

'उद्दीपन प्रतिक्रिया' (S-R) के स्थान पर उद्दीपन प्राणी प्रतिक्रिया (S-O-R) के रूप में।

परिणाम स्वरूप कोई व्यवहार (प्रतिक्रिया चर), किसी उद्दीपन (उद्दीपन चर) तथा उसके साथ घटित अन्तवर्ती चर (Intervening variable) के रूप में प्रकट होता है।

सूत्ररूप में

$$R = f(I.V.) \text{ and } (S)$$

मानव स्तर पर प्रयोगपात्र का स्वास्थ्य, लिंगभेद, उम्र, थकान की मात्रा (Amount of fatigue) बुद्धिस्तर (Level of I.Q.) पूर्व अनुभूतियां (Past experiences) आदत (Habit)आदि अंतर्वर्ती चर कहलायेंगे।

पशुओं के स्तर पर प्रणोदन की तीव्रता (Intensity of DRIVE) जैसे - भूख - 24 घंटों तक भोजन से वंचित रहने की अवस्था, प्यास - 12 घंटों तक पानी से वंचित रहने की अवस्था, यौनावेग - 96 घंटों तक विपरीत लिंग प्रणाली से अलग रहने की अवस्था।

एक पशु द्वारा 20 प्रयत्नों की अभ्यास आदि की आंतरिक अवस्था को अंतर्वर्ती चर (Intervening variable) कहा जायेगा । इन्हें प्राणी चर (Organismic variable) तथा यदा-कदा पात्र चर (subject variable) भी कहते हैं।

प्रयोगात्मक शोध विधि का उद्देश्य इन्हीं चरों का प्रयोगशाला की नियंत्रित परिस्थिति में अवलोकन तथा मापन के द्वारा कारण प्रभाव (Cause - effect relation) अथवा प्रकार्यात्मक सम्बन्ध की स्थापना करना होता है।

चरों के प्रकार

7.4.1 स्वतंत्र चर (Independent variable)

शोधकर्ता जिस कारक या तत्व को अथवा जिस दशा को प्रयोग की योजनानुसार अपनी इच्छा के अनुसार परिचालित करता है और उससे उत्पन्न प्रभावों का मापन करता है उसे स्वतंत्र चर कहते हैं।

लीओ पोस्टमैन ऐण्ड जेम्स पी0 ईगन के अनुसार — प्रयोगात्मक शोध में जिस कारण तत्व को शोधकर्ता स्वतंत्र से रूप से परिचालित करता है और उसके प्रभावों को आश्रित चर के रूप में निर्धारित करता है, उसे ही स्वतंत्र चर कहते हैं।[8]

उदाहरणार्थ प्रकाश प्रकम्पन की मात्रा (Intensity of light waves), थकान का प्रभाव (Effect of fatique), विश्राम की मात्रा (extent rest pause) , परिणाम का ज्ञान (Knowledge of result) , पुरस्कार या दण्ड की मात्रा (Amount of reward and punishment) , पौधे को दिया जाने वाला पौष्टिक पदार्थ एवं उसकी मात्रा आदि स्वतंत्र चर हैं। इन्हें प्रयोगकर्ता द्वारा उद्दीपन के रूप में परिचालित किया जाता है अथवा किया जा सकता है अर्थात् यदि प्रयोग द्वारा इनमें से किसी का प्रभाव पात्र के शिक्षण (learning) अथवा कक्षा में छात्रों की सीखने की स्थिति में सुधार के लिए नयी

विधियों का प्रयोग एवं इनका प्रभाव देखा जाय तो सुधार के लिए अपनायी गयी विधियों को हम स्वतंत्र चर कहेंगे तथा सुधार की मात्रा को आश्रित चर कहेंगे।

अतः **क्लीफोर्ड टी मार्गन और रिचर्ड ए किंग के अनुसार —** "स्वतंत्र चर एक ऐसी दशा है जिसको प्रयोगकर्ता स्वयं उत्पन्न करता है अथवा जिसका वह स्वयं चयन करता है।"[9]

प्रयोग में प्रयोगकर्ता प्रायः एक बार एक ही स्वतंत्र चर के बदलते हुए प्रभावों का निरीक्षण नथा मापन करता है।

इस अर्थ में स्वतंत्र चर को 'प्रयोगात्मक चर' (Experimental variable) भी कहते हैं यही चर उद्दीपन (Stimulus) के रूप में कारण तत्व (Antecedent) का कार्य करता है। इस अर्थ में इसे उद्दीपन चर (Stimulus variable) भी कहते हैं।

अतः स्वतंत्र चर उद्दीपन की एक परिस्थिति होती है जिसे प्रयोगकर्ता प्रयोग के लिए स्वेच्छा से स्वयं उत्पन्न करता है तथा इसे परिचालित भी करता है।

7.4.2 आश्रित चर (Dependent Variable)

"स्वतंत्र चर के कारण उत्पन्न विभिन्न परिवर्तनों को जिन्हें प्रयोगकर्ता परिणाम या प्रभाव के रूप में मापता है उन्हें आश्रित चर कहते हैं।"[10]

स्वतंत्र चर को परिचालित करने के पश्चात् परिस्थितियों में होने वाले प्रभाव एवं प्रभाव की मात्रा को ही हम आश्रित चर कहते हैं। अतः **डी. अमातो** के अनुसार —

"पात्र के व्यवहारों के रूप में प्रकट कोई भी चर जिसका मापन प्रयोगकर्ता कर लेता है और इसके आधार पर परिचालित स्वतंत्र चर का मूल्यांकन करता है, आश्रित चर कहलाता है।

टाउनसेण्ड के अनुसार — "जिस क्रम में स्वतंत्र चर को प्रभाव डालने दिया जाता है प्रभाव शून्य रखा जाता है, अथवा घटाया बढ़ाया जाता है उसी क्रम में आश्रित चर उत्पन्न होते हैं, अदृश्य होते हैं अथवा घटते बढ़ते हैं।"[12]

प्रयोग विधि से प्रयोगकर्ता आश्रित चर (चरों) की परिस्थितियों की ही व्याख्या करता है तथा उनके सम्बन्ध में भविष्य कथन करता है। उदाहरण स्वरूप प्रकाश प्रकंपन की मात्रा-भेद के स्वतंत्र चर से उत्पन्न आंखों पर पड़ने वाले विभिन्न प्रभावों, विभिन्न रंगों तथा अरंगों की संवेदना आदि आश्रित चर हैं। इसी प्रकार किसी प्रलोभन के प्रभाव से खरगोश की भूल भुलैया सीखना, अर्थपूर्ण सामग्री के कारण किसी बच्चे के ध्यान विस्तार में वृद्धि, पुरस्कार देने पर बच्चे की प्राप्तांक या उपलब्धि में वृद्धि, पौधे को समयानुकूल पौष्टिक तत्व देने के पश्चात् होने वाली वृद्धि आदि आश्रित चर कहलायेंगे।

उद्दीपन के पश्चात् प्रतिक्रिया होती है अर्थात व्यवहार परिवर्तन को हम प्रतिक्रिया चर (Response variable) भी कहते हैं।

7.4.3 नियंत्रित चर (Controlled Variable)

किसी भी प्रयोग की यर्थाथता (exactness), वैधता (validity) तथा विश्वसनीयता (reliability) नियंत्रित चरों को प्रयोग कला में स्थिर या प्रभावशून्य रखने पर निर्भर करती है। प्रयोग में यह आवश्यक हो जाता है कि अन्य सभी विजातीय (extraneous) चरों को जो स्वतंत्र चर के समान ही होते हैं नियंत्रित अवस्था में रखा जाए। नियन्त्रित होकर ये विजातीय चर प्रभावशून्य हो जाते हैं और स्वतंत्र चर का प्रभाव आश्रित चरों में शुद्ध रूप से प्रकट होता है।

क्लीफोर्ड टी मार्गन एण्ड रिचर्ड ए. किंग के अनुसार — स्वतंत्र चर के समान अन्य सभी चर जो सम्भवत: किसी स्वतंत्र चर के साथ घटित होकर उसके प्रभाव को शुद्ध नहीं रहने देते इसलिए जिनको नियंत्रण के द्वारा प्रभावशून्य या स्थिर रखना पड़े, नियन्त्रित चर कहलाते हैं। ऐसे चर को ही विजातीय चर (Extranious Variable) अथवा स्थिर चर (Constant Variable) कहते हैं । प्रयोग में इसी व्यवस्था को प्रयोग का नियन्त्रण कहते हैं।

7.4.4 अन्तर्वर्ती (चर) (Intervening variable)

अन्तवर्ती चर की संकल्पना प्रस्तुत करने का श्रेय प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक क्लार्क एल. हल को है।

अंतवर्ती चर एक ऐसी परिकल्पित अवधारणा है जो स्वतंत्र चर के नियन्त्रण में रहता है पर इसका प्रत्यक्ष निरीक्षण सम्भव नहीं होता। परोक्ष रूप से स्वतंत्र चर के माध्यम से ही इस चर का निरीक्षण तथा मापन सम्भव होता है।

हल के अनुसार — ''अन्तवर्ती चर प्राणी की ऐसी काल्पनिक आन्तरिक अवस्था है जो स्वतंत्र चर के समान सीधे कार्य करता है, पर अदृश्य रहता है।''[14]

उद्दीपन तत्व (स्वतंत्र चर) तथा प्रतिक्रिया तत्व (आश्रित चर) के बीच पात्र की काल्पनिक अवस्था के रूप में अदृश्य रूप से कार्य करने के कारण इसे 'मध्यवर्ती चर' भी कहते हैं।

अन्तर्वर्ती चरों के उदाहरण - भूख, प्यास, यौन आवेग (Sex passion), प्रणोदन (Drive), पुरस्कार (Reward), दण्ड (Punishment), प्रलोभन (Incentive), नींद, थकान, (Fatique), स्वास्थ्य आदि आंतरिक अवस्थाएं ; आदत (habit-strength), चिंता (Anxiety), अवरोधन (Inhibition) आदि मनोवैज्ञानिक अवस्थाएं ।

7.4.5 जैविक चर (Organismic variable)

मैक गीगन के अनुसार — ''प्राणी के स्तर पर अपेक्षाकृत ऐसी स्थिर विशेषताएं, जो स्वतंत्र चर के समान कार्य करती है जैविक चर कहलाती हैं ऐसी विशेषताओं के अन्तर्गत उनके दैहिक या शारीरिक गुण जैसे यौन भेद, आंखों का रंग, ऊँचाई, बजन, शारीरिक गठन आदि आते हैं तथा मनोवैज्ञानिक गुण, जैसे - बुद्धि स्तर, शिक्षा स्तर, चिंता, स्नायु विकृति, पूर्वाग्रह आदि आते हैं।''[15]

प्रयोग विधि से इनके अध्ययन तथा मापन के लिए ऐसे दो भिन्न समूहों को चुननर पड़ता हैं जिनमें कोई जैविक चर मात्रा भेद (Different amount) या स्तर भेद (Different level) से वर्तमान रहे अथवा एक समूह में इसकी उपस्थिति तथा दूसरे में अनुपस्थिति रहे ।

बेण्टन जे. अण्डरबुड के अनुसार — ''पात्रों में अपेक्षाकृत स्थिर गुण या विशेषताओं के रूप में निरन्तर वर्तमान रहने तथा उनकी प्रतिक्रियाओं को प्रभावित करने के कारण इन्हें पात्र चर (Subject variable) भी कहते हैं।''[16]

ऐसे चर को मनोवैज्ञानिक **बुडवर्थ** (R.S. Woodworth) ने **'कारण चर'** या **'पूर्वगामी चर' (Antecedent variable)** कहा है।

शिक्षा, मनोविज्ञान, समाज-विज्ञान आदि व्यावहारिक विज्ञानों के शोध में प्रयोजन के अनुसार स्वतंत्र और आश्रित चरों के कई अन्य प्रकार भेद किये गए हैं । इनमें प्रमुख निम्नलिखित रूप से उल्लेखनीय हैं।

7.4.6 सक्रिय चर (Active variable)

''प्रयोग में अन्तर्वर्ती चर को यदि स्वतंत्र चर के रूप में परिचालित कर उससे उत्पन्न प्रभावों का

निरीक्षण तथा मापन आश्रित चर के रूप में किया जाय तो ऐसे अर्न्तवर्ती को सक्रिय चर कहेंगे।''[17] उदाहरणस्वरूप भूख के प्रणोदन (Hunger Drive) को लिया जा सकता है । प्रयोगकर्ता को प्रयोग के पहले इसकी औपचारिक या कार्यात्मक परिभाषा निर्धारित कर लेनी पड़ेगी। जैसे नौकर को 24 घंटे भोजन से वंचित रखने की अवस्था फिर भूख को 3-3 अथवा 6-6 घंटों के परिमाण में परिचालित कर उससे उत्पन्न प्रभावों को चर के रूप में मापा जायेगा।

7.4.7 आरोपित चर (Assigned variable)

''ऐसे चर जिन्हें स्वतंत्र चर के रूप में परिचालित नहीं किया जाता बल्कि जिनका किसी गुण या विशेषता के अनुसार मात्र चयन कर लिया जाता है, उन्हें आरोपित चर कहते हैं। ''[18]

उदाहरणार्थ - उच्च वर्ग या निम्न वर्ग, उच्च बुद्धि स्तर (High level of intelligence) या निम्न बुद्धि स्तर (Low level of intelligence); अधिक चिंता, कम चिंता; अधिक भूख, कम भूख; अधिक खुशी, कम खुशी; अधिक बोलना, कम बोलना आदि हैं।

तात्विक अभिकल्प (Factorial Design) द्वारा एक ही प्रयोग में दो स्वतंन्त्र चरों को किसी गुण या विशेषता के आधार पर चुन लिया जाता है। एक स्वतंत्र चर का परिचालन किया जाता है, एवं दूसरे स्वतंत्र चर का परिचालन नहीं किया जाता है। परिचालित नहीं किये जाने वाले स्वतंत्र चर को ही आरोपित चर कहते हैं।

7.4.8 अविच्छिन्न अथवा सतत चर (Continuous variable)

''ऐसे चर जिनका स्वतंत्र चर के रूप में किसी आयाम पर छोटी इकाई में मापन सम्भव हो जाए, अविछिन्न चर कहलायेंगे।''[19]

उदाहरण के लिए , समय को लिया जा सकता है अथवा मित्रों के समूह में मित्रों के बीच सम्बन्धों की निकटता। समय का किसी उन्नत मापक यंत्र द्वारा छोटी से छोटी इकाई में यथार्थ मापन सम्भव है।

प्रयोग शाला में एक यंत्र हिप क्रोनोस्कोप (Hipp Chronoscope) के द्वारा एक सेकेण्ड के हजारवें अंश (मिली सेकण्ड) की इकाई में इसका आसानी से मापन किया जाता है। इसको स्वतंत्र चर के रूप में परिचालित करने पर **पात्र के प्रतिक्रिया काल** को ही अविच्छिन्न चर कहते हैं। इसका प्राकृतिक विज्ञानों में आसानी से उपयोग किया जाता है जहां पर उन्नत मापन यंत्र उपलब्ध है तथा कम से कम जटिलता और परिवर्तनहीनता है। परन्तु सामाजिक विज्ञानों में ऐसे अविच्छिन्न या अनवरत चर प्रायः कम ही मिलते हैं।

7.4.9 विच्छिन्न चर (Discontinuous variable or Discrete variable)

''ऐसे चर जिन्हें केवल उनकी उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति के रूप में ही व्यक्त किया जा सके, अथवा केवल दो ही विपरीत आयाम (Dichotomy) सम्भव हों, विच्छिन्न चर कहलाते हैं।''[20] जैसे सुख-दुख, लड़का-लड़की, छात्र - छात्रा, उत्तीर्ण-अनुत्तीर्ण, जीतना-हारना, जीवित-मृत, सफल-असफल, संतुष्ट-असंतुष्ट आदि । द्विपाक्ति आयाम (Dichotomous Dimensions) वाले चर विच्छिन्न चर हैं। इस सन्दर्भ में प्रख्यात समाजशास्त्री द्वारा दिए गए सम्बोध 'प्रतिमान चर' (Pattern-variable) को हम उदाहरणार्थ व्यक्त कर सकते हैं। 1951 में टाल्काट पारस सन्स और ई. ए. शिल्स ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "Towards a General Theory of Action" में एक निबन्ध (Values,

Motives and Systems of Action) प्रकाशित किया जिसमें प्रतिमान चर को सन्दर्भित किया गया है। इस योजना के अनुसार कर्ता के समक्ष कुछ वैकल्पिक जोड़े उपलब्ध होते हैं। किसी सामाजिक स्थिति में वह व्यवहार या क्रिया करने के पूर्व इन जोड़ों में से किसी एक को अपने व्यवहार या क्रिया के लिए चुनता है। क्रिया मूल्यों द्वारा निर्धारित होती है, जिसके आधार पर दो पक्षों में एक पक्ष का चुनाव किया जाता है और दूसरे को अस्वीकृत किया जाता है।

प्रो. पार्सन्स और शिल्स ने प्रतिमान चर के पांच जोडों (Five dichotomies) की योजना प्रस्तुत की है, यथा

(1) सार्वभौमिक बनाम विशिष्टतावादी

(2) जन्म परक बनाम उपलब्धिपरक

(3) भावनात्मकता बनाम भावात्मक तटस्थता

(4) एक पक्षीय बनाम बहुपक्षीय

(5) स्वहित बनाम सामूहिक हित

इ॰ प्रकार प्रो. लिपसेट ने अपनी पुस्तक The First New Nation 1964 में दो अतिरिक्त जोड़ों अथवा प्रतिमान चर की चर्चा की है (1) कारकीय (Instrumental) बनाम सांसिद्धिकी (Consumatory Ends) साधन (means) बनाम साध्य (ends) (2) समतावादी (Egalitarian) बनाम अभिजनवादी (Elitist) व्यक्तित्व (Personality) बनाम पद।

अर्थात इस प्रकार हम समझ सकते हैं कि उपरोक्त चरों में केवल दो विपरीत आयाम हैं जिनको हम पृथक अथवा असतत (Discrete) चर भी कह सकते हैं।

7.4.10 गुणात्मक चर अथवा अश्रेणीबद्ध चर (Qualitative or Unordered variable)

ऐलेन एल. एडवर्ड के अनुसार — "कोई भी गुण या विशेषता जिसे परिमाण भेद या मात्रा भेद में श्रेणीबद्ध नहीं किया जा सके उसे ही गुणात्मक अथवा अश्रेणीबद्ध चर कहते हैं।"[21] एडवर्ड के ही अनुसार, इन्हें अश्रेणीबद्ध चर इसलिए कहते हैं कि इनमें मूल्यों (Values) या परिमाणों (Quantities) का अन्तर केवल प्रकार भेद (Kinds) में रखा जाता है । मात्रा भेद (Degree) में नहीं।

उदाहरणार्थ यौन, राष्ट्रीयता, धार्मिक विश्वास, ईमानदारी, अंतमुर्खता (Introversion) बर्हिमुखता (Extroversion) आदि ऐसे ही चर हैं।

7.4.11 परिमाणात्मक चर अथवा श्रेणीबद्ध चर (Quantitative or ordred variable)

एडवर्ड के अनुसार — "ऐसे चर जिन्हें परिमाण (Quantity) या मात्रा भेद (Degree) के क्रम में श्रेणीबद्ध किया जा सके, परिमाणात्मक चर कहलाते हैं।"[22] एडवर्ड के अनुसार -उदाहरणार्थ - बुद्धिलब्ध,(I.Q.) प्रतिक्रिया काल (Reaction time) आदि । परिमाणात्मक चर को श्रेणीबद्ध चर इस अर्थ में कहते हैं कि इसके सम्भावित मूल्य या मात्रा को चाहे वे अविच्छिन्न हों या विच्छिन्न किसी निरन्तर परिमाप (Continuam) पर रखा जा सकता है। इसमें बराबर, कम या अधिक के मान में सदा एक सा सम्बन्ध रहता है।

जैसे बुद्धिलब्ध को नापा जा सकता है कि कौन-सा व्यक्ति Super Genius या Genius या कौन-सा व्यक्ति Super Intelligent or Intelligent है या कौन से व्यक्ति के पास सामान्य से ऊपर या सामान्य बुद्धिलब्धि है। इसकी आई क्यू परीक्षण के माध्यम से मापन किया जा सकता है।

7.4.12 उद्दीपन चर (Stimulus Variable)

ऐलेन एल. एडवर्ड के अनुसार[23] — वस्तुओं के सामान्य वर्ग जिनका हम अवलोकन करते है, उनको उद्दीपन के परिवेश, परिस्थिति अथवा दशाओं से सम्बद्ध करते हैं, उनको हम उद्दीपन चर के रूप में व्यक्त कर सकते हैं ।

अर्थात् ऐसे स्वतंत्र चर जिन्हें उद्दीपन के रूप में परिचालित किया जा सके उन्हें उद्दीपन चर कहते हैं।

उद्दीपन चर की स्वतंत्र चर के शीर्षक के अन्तर्गत हमने विस्तृत रूप से चर्चा की है। उद्दीपन चर के तीन प्रमुख प्रकार भेद बहुधा मिलते हैं —

(क) परिवेश चर (Environmental Variable)

(ख) कार्य चर (Task Variable)

(ग) निर्देशन चर (Instructional Variable)

7.4.13 प्रतिक्रिया चर (Response Variable)

एलेन एल. एडवर्ड के अनुसार — "प्रतिक्रिया चर के अर्न्तगत स्वतंत्र चर के रूप में पात्र की किसी एक प्रतिक्रिया को परिचालित कर यह देखा जाता है कि उसकी दूसरी प्रतिक्रियाओं पर क्या प्रभाव पड़ जाता है।"[24]

परिचालित प्रतिक्रिया स्वतंत्र चर का कार्य करती है तथा उससे प्रभावित पात्र की अन्य प्रतिक्रियाएं आश्रित चर के रूप में घटित होती हैं।

प्रतिक्रिया चर को भी हमने आश्रित चर के अन्तर्गत विस्तृत रूप से वर्णित किया है।

उदाहरण स्वरूप, विद्यालय में आने वाले छात्रों की उपस्थिति बढ़ाने में प्रचार्य द्वारा अपनाई जाने वाली विधि को स्वतंत्र चर एवं उपस्थिति बढ़ने (संख्या) को हम प्रतिक्रिया चर या आश्रित चर कहते हैं।

7.4.14 व्यवहार चर (Behavioural Variable)

एडवर्ड के अनुसार - "पात्र (Subject) की कुछ ऐसी प्रतिक्षेप क्रियाएं (Reflexive Actions) या आंशिक व्यवहार (Molecular Behaviour), जिन्हें स्वतंत्र चर के रूप में परिचालित किया जा सके, व्यवहार चर कहलाते हैं।"[25]

जैसे - पलक गिरने का प्रतिक्षेप (Eye Blinking Reflex), घुटने मुड़ने का प्रतिक्षेप (Knee Jerk Reflex), उंगली फैलाने एवं सिकोड़ने का प्रतिक्षेप (Finger Flexion and Contraction) ।

जैसे - कोई टुकड़ा किसी व्यक्ति के आँख के पास से गुजर रहा हो उस समय एकाएक आँख बन्द हो जाती है अथवा यदि आप कुत्ते को डंडे से मारते हैं तब वह भौंकता है, इसको भी व्यवहार चर के रूप में हम समझ सकते हैं।

दूसरी ओर पात्र की कुछ ऐसी जटिल प्रतिक्रियाएं जिन्हें व्यापक व्यवहार (Molar Behaviour) के रूप

परिचालित किया जा सके, व्यवहार चर कहलायेंगे। जैसे -समस्या समाधान (Problem Solving), आधिपत्य (Dominance), नेतृत्व, सामाजिक समायोजन आदि व्यापक व्यवहारों को भी व्यवहार चर कह सकते हैं।

7.4.15 प्रासंगिक चर (Relevant Variable)

एडवर्ड के अनुसार - ''स्वतंत्र चर के समान ऐसे अतिरिक्त सूक्ष्म चर, जो अनियन्त्रित रहकर आश्रित चर या चरों को प्रभावित कर सकते हैं प्रासंगिक चर कहलाते हैं '' ऐसे चरों को प्रयोग में पूर्णत: नियन्त्रित करना आवश्यक हो जाता है। इन्हें ही विजातीय चर भी कहते हैं। इस चर को विस्तृत रूप में विजातीय चर उप शीर्षक के अर्न्तगत समझ सकते हैं जिसका उल्लेख इसी इकाई में हमने किया है।

प्रयोग के पूर्व, प्रयोग अभिकल्प में ही ऐसे चरों का रूप स्पष्ट कर, इन्हें पर्याप्त नियन्त्रण के द्वारा प्रभावशून्य या स्थिर बना देना पड़ता है अन्यथा शुद्धता नष्ट हो जाती है और प्रयोग निष्कर्ष दोषपूर्ण हो जाते हैं।

उदाहरणार्थ: पुरस्कार का पात्र या छात्र पर की उपलब्धि पर प्रभाव । यहां पुरस्कार स्वतंत्र चर है पर उसके साथ क्रियाशील अन्य चर जैसे - पुरस्कार की मात्रा, उसका महत्व, किस स्थिति में पुरस्कार दिया गया है , पुरस्कार का प्रकार, पात्र का प्रतिक्रियाकाल, पुरस्कार का सामाजिक मूल्यांकन आदि ऐसे चर हैं जो उपलब्धि को प्रभावित कर सकते हैं अत: इन्हें प्रासंगिक चर कहेंगे। इनका पूर्ण नियन्त्रण सम्भव होने पर प्रयोग शुद्ध कहलाता है।

7.4.16 अप्रासंगिक चर (Irrelevant Variable)

स्वतंत्र चर के अतिरिक्त कुछ ऐसे भी चर होते हैं जो उसके साथ क्रियाशील रहते हैं पर जिनका प्रभाव प्रतिक्रिया चर अथवा आश्रित चरों पर शून्य के समान होता है अथवा उसका प्रभाव तटस्थता के रूप में व्यक्त प्रतीत होता है। उन्हें ही अप्रासंगिक चर कहते हैं। जैसे प्रासंगिक चर में दिये गये उदाहरण में पुरस्कार के छात्र की उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव में, साथ-साथ कुछ ऐसे चर भी कार्य करते हैं जैसे छात्र की लम्बाई, आर्थिक-परिस्थिति, धर्म, राजनैतिक झुकाव आदि ऐसे चर हैं जिनका प्रभाव शून्य समझा जाता है। इन्हें अप्रासंगिक चर कहते हैं।

उपरोक्त चरों के प्रकार एवं उनकी परिभाषा तथा उदाहरण का वर्णन हमने इसलिए किया है क्योंकि प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प में इनका प्रयोग सामान्यत: होता है । अत: प्रयोग में किस चर का उपयोग कहां किस दशा या परिस्थति में होगा एवं उसका परिचालन एवं प्रभाव किस रूप में होगा इसका स्पष्ट विवरण हम चरों के प्रकारों एवं उनके सम्बोध को ठीक से समझाने के पश्चात् देने में समर्थ होंगे।

7.5 साक्ष्यों के प्रकार (Types of Evidences)

अवधारणा —इसकी चर्चा हम पहले ही कर चुके हैं कि प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प का उद्देश्य कारण सम्बन्धी उपकल्पना का परीक्षण करना है। इसका उद्देश्य यह दिखाना है कि दो कारक एक दूसरे से किस हद तक सम्बन्धित हैं अथवा नहीं हैं। यदि हैं तो किस हद तक एक कारक दूसरे कारक पर प्रभाव डालता है।

जब कभी शोधकर्ता अथवा निरीक्षणकर्ता को इस प्रकार के कारण सम्बन्धी अनुमान (Casual Inference) का चित्रांकन करने की इच्छा होती है जो कि घटनाओं के घटित होने की तथा इनकी प्रकृति की व्याख्या करता हो अथवा चरों के बीच के सम्बन्ध को व्यक्त या विवेचित करता हो, तब शोधकर्ता को घटनाओं (Events) के बारे में कुछ मूर्त तथ्यात्मक सूचना की आवश्यकता होती है जो कि साक्ष्यों (Evidence) के रूप में प्रस्तुत की जा सकती है। इसलिए साक्ष्य घटनाओं से सम्बन्धित तथ्यात्मक सूचना है जो कि विशिष्ट अनुमानों के चित्रांकन में निहित तर्क को प्रस्तुत करता है। वे अनुमानों को

युक्तिसंगत ठहराते हैं। इस प्रकार के साक्ष्य आंकड़ा संकलन की किसी भी विधि द्वारा संकलित किये जा सकते हैं । प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प प्रदर्शनों के माध्यम से चरों के सम्बन्ध को सत्यापित, सिद्ध अथवा असिद्ध करता है। जैसे स्वतंत्र चर में परिवर्तन उत्पन्न करके और इसके परीक्षण के द्वारा कि यह आश्रित चरों में परिवर्तन उत्पन्न करता है कि नहीं। इसलिए प्रयोगों द्वारा निकाला गया अनुमान अन्य विधियों द्वारा संकलित सूचनाओं के आधार पर निकाले गए अनुमान की तुलना में अत्याधिक ठोस एवं विश्वसनीय होता हैं।

साक्ष्य तीन प्रकार के होते हैं जो कारण सम्बन्धी उपकल्पना (Causal Hypothesis) के परीक्षण में प्रासंगिक हैं।[27]

7.5.1 सह परिवर्तन साक्ष्य (Evidences of Concomitant Variation)

सहपरिवर्तन का अभिप्राय एक दूसरे के साथ चलने का है अर्थात् एक में यदि परिवर्तन होता है तब दूसरे में भी परिवर्तन होता है अर्थात् यदि एक गतिमान होता है तब दूसरा भी गतिमान होता है ।

यदि दो चर X और Y साथ साथ रूपान्तरित होते हैं अथवा साथ-साथ घटित होते हैं तब हम यह मान सकते हैं कि दोनों के बीच में कुछ कार्यकारण सम्बन्ध (Causal Relationship) है अथवा कम से कम कुछ साहचर्य तो है ही । जब भी दो घटनाओं अथवा विशेषताओं के बीच सह सम्बन्ध होता है तब एक में अन्तर होने से हम दूसरे में अन्तर पायेंगे। जैसे - ऊँचाई और भार (वजन) एक दूसरे के साथ परिवर्तित होते है। इसका अभिप्राय यह है कि ऊँचाई में वृद्धि होने से वजन में भी वृद्धि होगी अथवा ऊँचाई में कमी होने से भार में भी कमी आयेगी। जब इस प्रकार का परिवर्तन अधिक संख्या के अवलोकनों से पाया जाता है तब हम यह दावा कर सकते हैं कि यह परिवर्तन साक्ष्य पूर्ण रूप से सही है।

एक समाज वैज्ञानिक के रूप में हम इस प्रकार के अन्तर को सामाजिक घटनाओं के किसी भी युग्म में प्राप्त कर सकते हैं। उदाहरण स्वरूप सामाजिक प्रस्थिति और बाल अपराध के बीच अथवा जन घनत्व और बाल अपराध की दर के बीच अथवा उच्च मध्यम वर्ग और उनके बच्चों की सफलता का प्रतिशत या निम्न आय वर्ग और उनके बच्चों की सफलता का प्रतिशत, बिहार के विभिन्न शहरों के बाल अपराध दर का अध्ययन और उनकी (बाल अपराधियों की) सामाजिक, आर्थिक पृष्ठिभूमि, यह प्रकट कर सकते हैं कि जिन शहरों में जन घनत्व अधिक होता है वहां पर बाल अपराध अधिक होते हैं और निम्न आर्थिक प्रस्थिति के लोगों में बाल अपराध की दर अधिक पायी जाती है। इस उदाहरण से हम यह अनुमान निकाल सकते हैं कि निम्न आर्थिक दशाएं बाल अपराध का सम्भावित कारण हैं और इसमें जन घनत्व का भी योगदान होता है अथवा जन घनत्व का अधिक होना भी अपराध बढ़ाने में सहायक होता है।

हम पुनः अनुमान निकाल सकते हैं कि सशक्त कानूनों के अभाव अथवा सक्षम एवं कुशल पुलिस व्यवस्था का अभाव भी बाल अपराध बढ़ाने में अतिरिक्त कारक हो सकते हैं जो कि बाल अपराध दर बढ़ाने में संभाव्य या प्रासंगिक दशा के रूप में कार्य करती है।

दूसरे उदाहरण से भी हम इसको समझ सकते हैं कि डाक्टर अपने मरीजों के परीक्षण में यह पाता है कि यकृत (Liver) के दुष्कार्य (Malfunctioning) से पीड़ित व्यक्तियों का पाचन तन्त्र बार- बार खराब होता है।

इस प्रकार यकृत की दुष्कार्य की दशा के अर्न्तगत, विशिष्ट प्रकार का भोजन खाना पाचन तन्त्र की खराबी का सम्भावित कारण हो सकता है।

विभिन्न प्रकार के कार्य - कारण सम्बन्धों अथवा विभिन्न प्रकार के साहचर्य के लिए हमें विभिन्न प्रकार के साक्ष्यों की आवश्यकता होती है, उपरोक्त सह परिवर्तन साक्ष्य के दो प्रकार होते हैं । (अ) सकारात्मक (ब) नकारात्मक

सकारात्मक सहपरिवर्तन साक्ष्य — दो चर ए और बी हैं। ए और बी के बीच सम्बन्ध को सकारात्मक प्रकार का सम्बन्ध हम तब कह सकते हैं जब ए के मूल्य में वृद्धि होने से बी के मूल्य में वृद्धि होती है अथवा ए के मूल्य में कमी होने से बी के मूल्य में कमी होती है।

नकारात्मक सह सम्बन्ध (Negative Concomitant Relation) सह-सम्बन्ध के नकारात्मक प्रकार में जब ए का मूल्य बढ़ता है तब बी का मूल्य घटता है अथवा जब ए का मूल्य घटता है तब बी का मूल्य बढ़ता है अर्थात स्वतंत्र चर के विपरीत आश्रित चर की प्रतिक्रिया होती है।

ए = स्वतंत्र चर, बी = आश्रित चर अर्थात् जब स्वतंत्र चर (ए) का मूल्य बढ़ता है तब आश्रित चर (बी) का मूल्य घटता है और जब स्वतंत्र चर (ए) का मूल्य घटता है तब आश्रित चर (बी) का मूल्य बढ़ता है, अर्थात् दोनों में विपरीत सम्बन्ध प्रकट होता है। इसे हम नकारात्मक सह- सम्बन्ध परिवर्तन साक्ष्य कहते हैं।

सह परिवर्तन की विधि चरों के बीच कारण एवं प्रभाव के सम्बन्ध को प्रमाण उपलब्ध तो नहीं कराती है परन्तु जब सह परिवर्तन की मात्रा अधिक होती है तो यह निश्चित रूप से सम्बन्ध की सम्भावना हेतु सुझाव देती है।

इस प्रकार के साक्ष्य को प्राप्त करने के लिए (जैसे सहपरिवर्तन का साक्ष्य), एक स्वतंत्र चर के स्कोर अथवा दूरी के मापन की हमें आवश्यकता होती है और तत्पश्चात् स्वतंत्र चर की आवृत्ति अथवा स्कोर (प्राप्तांक) अथवा अनुरूप (सह-सम्बन्धी) मापन की आवश्यकता होती है । यदि स्वतंत्र चर के साथ-साथ आश्रित चर में भी व्यवस्थित रूप से परिवर्तन होता है तब हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि दोनों चर एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। उदाहरण स्वरूप हम यह मान सकते हैं कि पिता की सामाजिक आर्थिक प्रस्थिति के साथ छात्र का कक्षा में भूमिका निष्पादन भी परिवर्तित होता है अथवा छात्रों के राजनीतिक समाजीकरण की मात्रा बढ़ने से उनकी राजनीतिक सहभागिता में वृद्धि होती है। इस प्रकार के अध्ययनों के लिए हमें छात्र की कक्षा में उपलब्धि पर मापन प्राप्त करना पड़ता है और उसके पिता के सामाजिक-आर्थिक स्थिति के लिए सह-सम्बन्धी (अनुरूप) मापन भी प्राप्त करना पड़ता है। इसी प्रकार राजनीतिक सहभागिता के मापन के साथ हमें उसके सहसम्बन्धी स्कोर को खोजना पड़ता है जो राजनीतिक समाजीकरण की मात्रा को दर्शाता है।

7.5.2 चरों के घटने का समय क्रम साक्ष्य (Evidence of Time Order of the Occurrence of Variable)

समय क्रम साक्ष्य, कारण-कार्य सम्बन्ध के बारे में अनुमानों के लिए प्रासंगिक दूसरे प्रकार का साक्ष्य है। कोई भी घटना एक कारण के रूप में जब तक प्रकल्पित प्रभाव के पूर्व प्रकल्पित कारण घटित नहीं हो जाते हैं अथवा प्रभाव के साथ एक ही समय नहीं घटित हो जाते हैं, दूसरे के कारण के बारे में विचार नहीं किया जा सकता है। यदि एकल घटना में भी यह प्रभाव के पश्चात घटित होती है तब भी इसको एक कारण के रूप में विचार नहीं किया जा सकता है। उदाहरण के रूप में —

एक व्यक्ति मलेरिया या अन्य बीमारी से पीड़ित है जो केवल बीमारी के संक्रमण के पश्चात वह प्राप्त किया है। उसी प्रकार एक व्यक्ति निश्चित राजनीतिक विचारों, मूल्यों, विचारधाराओं के बारे में प्रथमतया सीखता है और तब किसी राजनीतिक विचार धारा की तरफ राजनीतिक अभिमुखन विकसित करता है इस प्रकार उपरोक्त उदाहरण से हम समय क्रम सम्बन्ध के बारे में अनुपात को आसानी से चिंत्राकित कर सकते हैं। दूसरे शब्दों में यदि हम एक व्यक्ति के वैवाहिक सामंजस्य पर बचपन के अनुभवों के प्रभाव अथवा प्रौढ़ अवस्था में पेशे के निष्पादन का अध्ययन कर रहे हैं, तब यह पता लगाना कठिन होगा कि अनुभव बचपन अथवा प्रौढ़ अवस्था का है या नहीं है या किस अवस्था का है। कभी- कभी यह कल्पित करने में कठिनाई होती है कि कारण प्रभाव से पूर्व घटित हुआ है या नहीं हुआ है। प्रतिसम (Symmetrical) सम्बन्ध में इस प्रकार के सम्बन्धों को स्थापित करने में और भी कठिनाई सामने आती है। देवेन्द्र ठाकुर के अनुसार - जब कभी दो सम्बन्धित चर अन्तरपरिवर्तनीय रूप से कारण एवं प्रभाव के रूप में प्रकार्य करते हैं तो उसे प्रतिसम सम्बन्ध कहा जाता है।''[29]

सामाजिक विज्ञान में प्रतिसम सम्बन्ध का एक प्रमुख उदाहरण, जी. सी. होमान्स द्वारा दी गई उपकल्पना है जो निम्नलिखित रूप में व्यक्त की गई है। ''एक समूह में एक व्यक्ति की श्रेणी जितनी ही उच्चतर होती है उतने ही उसके क्रियाकलाप समूह के मानदण्डों के अधिक निकट व अनुरूप होते हैं। यहां 'व्यक्ति की श्रेणी' (Rank of Person) को स्वतंत्र चर के रूप में लिया गया है और समूह के मानदण्डों से उसके क्रिया कलापों की निकटता को आश्रित चर के रूप में लिया गया है।

प्रतिसम सम्बन्ध के बारे में हम निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि —

(अ) प्रतिसम कारण सम्बन्धी सम्बन्धों (Symmetrical Casual Relationship) को सामाजिक प्रघटना में बार-बार पाया जाता है।

(ब) फिर भी यह एक कारक के दूसरे कारक पर पड़ने वाले प्रभाव पर केन्द्रीभूत करना उपयोगी एवं सुविधाजनक है।

(स) कारण एवं प्रभाव के बीच अन्तर को विभेदीकृत करने में यह स्थापित करने में उपयोगी होता है कि यह कल्पित करते हुये कि दोनों एक साथ घटित नहीं होते हैं (दो घटनाओं में प्रथमतया कौन सा घटित होता है)।

उपरोक्त उदाहरण में यह स्पष्ट है कि श्रेणी में वृद्धि 'कारण' है एवं मानदण्डों के प्रति अनुरूपता में वृद्धि 'प्रभाव' है। इस प्रकार कारण सम्बन्ध को हम आसानी से स्थापित कर सकते हैं कि श्रेणी में वृद्धि होने से अनुरूपता में वृद्धि होती है एवं श्रेणी में कमी होने से अनुरूपता में कमी आती है। इसके विपरीत हम यह भी मान सकते हैं कि जिस व्यक्ति के क्रियाकलापों में समूह के मानदण्डों के अनुरूप निकटता में वृद्धि अथवा मानदण्डों के प्रति उसके क्रिया कलाप की निकटता में वृद्धि होती है, उस समूह में उस व्यक्ति की श्रेणी में भी वृद्धि होती है।

7.5.3 साक्ष्य, जिसने विजातीय चरों के प्रभाव को नियंत्रित कर लिय है (Evidence that the effect of the Extraneous variables have been controlled)

''विजातीय चरों के नियन्त्रण से अभिप्राय **मैक गीगन** के अनुसार ''विजातीय चर स्वतंत्र चर की तरह ही होते हैं और स्वतंत्र चर के साथ-साथ क्रियाशील रहते हैं अत: प्रयोग में एक या एक से अधिक

निर्धारित स्वतंत्र चर को छोड़कर साथ के अन्य सभी विजातीय चरों का व्यवस्थापन या विनियमन ही विजातीय चरों का नियंत्रण कहलाता है। प्रयोग में ऐसे विजातीय चरों के नियन्त्रण की असफलता प्रयोग निष्कर्ष को गड़बड़ बना देती है और प्रयोगकर्ता को अनर्थकारी परिणाम ही हाथ लगता है।''30

विजातीय चर कौन-कौन तत्व (factor) हो सकते हैं यह प्रयोग के उद्देश्य तथा प्रयोग अभिकल्प (Design of experiment) पर निर्भर करता है। शोधकर्ता का उद्देश्य प्रयोगिक चर के प्रभाव में अभिवृद्धि करना होता है और उसके विपरीत विजातीय चरों के प्रभाव को न्यूनीकृत करना होता है। उसका यह भी उद्देश्य होता है यदि किसी अन्य अस्थायी अथवा संयोग कारक का प्रभाव कहीं दिखाई पड़े तो उसे भी न्यूनीकृत कर दिया जाये।

इस प्रकार यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि किसी भी शोध अभिकल्प का मुख्य तकनीकी उद्देश्य प्रसरणों का नियंत्रण (Control of Variance) करना होता है। शोध अभिकल्प, विशेष रूप से प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प इस प्रकार से संरचित किया जाता है जो कि शोधकर्ता को सक्षम बनाता है कि वह व्यवस्थित प्रसरण की अभिवृद्धि कर सके, विजातीय चरों को नियंत्रित कर सके तथा त्रुटि प्रसरण को न्यूनीकृत कर सके।

इस प्रकार प्रयोग का सार तत्व एक वैज्ञानिक विधि के रूप में प्रतीक का नियंत्रण है। निरीक्षण के अन्तर्गत प्रयोगिक दशा की तुलना में जो तत्व नियंत्रित किया जाता है वह प्रभाव कारक होता है जिससे अवलोकित परिणामों को उत्पन्न किया जा सकता है। विभिन्न प्रकार के कारक होते हैं जो सम्भाव्य निर्धारित करने वाली दशाओं अथवा कारण के रूप में कार्य कर सकते हैं परन्तु वे विजातीय के रूप में जाने जाते हैं और इसलिए इनको नियंत्रित करना होता है । इन प्रभावों के निष्कासन के विभिन्न तरीके होते हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि उन सामान्य सम्भाव्य कारकों की चर्चा की जाये जो निष्कर्षों को प्रभावित करते हैं अथवा प्रायोगिक अध्ययनों के प्रभावों को प्रभावित करते हैं । कुछ बड़ी निर्धारक दशाएं होती हैं जो प्रायोगिक चर के प्रभावों को किसी न किसी रूप में संकुचित करती हैं अथवा शोध अध्ययनों की आन्तरिक वैधता में हस्तक्षेप करती हैं, वे निम्नलिखित हैं —

1. इतिहास 2. परिपक्वन (Maturation) 3. मापन प्रक्रिया का प्रभाव अथवा परीक्षण करते समय प्रभाव 4. माध्यम (Instrumentation) अथवा उपकरण 5. चयन ।

7.6 सारांश

1. प्रयोग नियन्त्रित दशाओं के अन्तर्गत नये अथवा बिल्कुल नवीन अवलोकनों द्वारा जानकारी प्राप्त करने के लिए एक क्रियाविधि है।

2. प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प अपने उद्देश्य, संरचना एवं क्रिया विधियों के आधार पर पूर्व के अन्य शोध अभिकल्पों मुख्यत: अन्वेषणात्मक एवं वर्णनात्मक शोध अभिकल्प से भिन्न है। प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प का उद्देश्य कार्य कारण उपकल्पना का परीक्षण करना है जो कि उच्च रूप से संरचित होती है। इसमें नियंत्रण एवं चरों के परिचालन की अवधारणा होती है।

प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प की सबसे बड़ी विशेषता है - परिस्थितियों का प्रत्यक्ष नियंत्रण, जिसमें शोधकर्ता कम से कम एक स्वतंत्र चर पर अवश्य नियंत्रण रखता है तथा उसे परिचालित करता है।

3. प्राणी के शीलगुणों तथा कुछ ऐसी ही अन्य विशेषताएं जिन्हें मापकर प्राप्तांकों में प्रस्तुत किया जा सके उन्हें ही चर कहते हैं अर्थात् चर किसी परिवेश के ऐसे तत्व होते हैं जो वर्तमान परिस्थिति में परिवर्तन उत्पन्न करते हैं और उसके विभिन्न मूल्य हो सकते हैं ।

4. चर के विभिन्न प्रकार होते हैं जैसे स्वतंत्र चर, आश्रित , नियंत्रित चर, अन्तर्वर्ती चर, जैविक चर तथा स्वतंत्र चर एवं आश्रित चर के अन्य प्रकार भेद अर्थात सक्रिय चर, आरोपित चर, अविच्छिन्न चर, विच्छिन्न चर, गुणात्मक अथवा अश्रेणीबद्ध चर, परिमाणात्मक अथवा श्रेणी बद्ध चर, उद्दीपन चर, प्रतिक्रिया चर, व्यवहार चर, प्रासंगिक चर, अप्रासांगिक चर आदि।

4. साक्ष्य घटनाओं से सम्बन्धित तत्थ्यात्मक सूचना है जो कि विशिष्ट अनुमानों के चित्रांकन में निहित तर्क को प्रस्तुत करता है और वे अनुमानों को युक्तिसंगत ठहराते हैं । साक्ष्य तीन प्रकार के होते हैं -

1. सहपरिवर्तन साक्ष्य 2. चरों के घटित होने का समय क्रम का साक्ष्य 3. साक्ष्य जिसने विजातीय चरों के प्रभाव को नियंत्रित कर लिया है।

7.7 बोध प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

साक्ष्य क्या है? साक्ष्य के प्रकारों का उदाहरण सहित वर्णन कीजिये ।

लघु उत्तरीय प्रश्न

(1) सह परिवर्तन साक्ष्य की व्याख्या कीजिए।

(2) चर क्या है? चरों के कितने प्रकार हैं ? केवल उनका नाम लिखिये ।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्र0 (1) 'इक्सपेरीमेण्टल डिजाइन इन सोशियोलाजिकल रिसर्च ' पुस्तक के लेखक कौन हैं?

(अ) हेनरी ई. गैरेट (ब) लीओ पोस्टमैन एण्ड जे. पी. ईगन

(स) डी अमातो (द) स्टुअर्ट चैम्पियन

प्र0 (2) रिसर्च मेथेडोलोजी इन सोशल साइन्सेज पुस्तक के लेखक कौन हैं?

(अ) चैम्पियन (ब) देवेन्द्र ठाकुर (स) पी. वी. यंग (द) गुडे एवं हाट

प्र0 (3) साक्ष्य के कितने प्रकार होते हैं ?

(अ) एक (ब) दो (स) तीन (द) चार

प्र0 (4) स्वतन्त्र चर के कारण उत्पन्न विभिन्न परिवर्तनों को जिन्हें प्रयोगकर्ता परिणाम या प्रभाव के रूप में मापता है कौन सा चर कहलाता है ?

(अ) आश्रित चर (ब) नियन्त्रित चर (स) जैविक चर (द) आरोपित चर

प्र0 (5) पारसन्स और शिल्स द्वारा प्रतिपादित प्रतिमान चर कौन सा चर है?

(अ) श्रेणीबद्ध चर (ब) विच्छिन्न चर (स) अश्रेणीबद्ध चर (द) अविच्छिन्न चर

7.8 वस्तुनिष्ठ बोध प्रश्नों के उत्तर

(1) द (2) ब (3) स (4) अ (5) ब

7.9 सूची एवं सन्दर्भ

प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प —

1. देवेन्द्र ठाकुर : रिसर्च मेथेडोलोजी इन सोशल साइन्सेज, दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन, नई दिल्ली 1993, पृष्ठ 178
2. गोपाल जी प्रसाद : रिसर्च मेथेडोलोजी इन विहैवियरल साइन्सेज 1992 पृष्ठ 28
3. चैपिन : एक्सपेरीमेन्टल डिजाइन इन सोशियोलोजिकल रिसर्च, पृष्ठ 28 हार्पर एण्ड रो, न्यूयार्क , 1947 पब्लिकेशन
4. फ्रेड एन करलिंगर – फाउन्डेशन आफ बिहैवियरल, रिसर्च हाल्ट रिनेहार्ट 1964 पृष्ठ 290
5. हेनरी ई. गैरेट; स्टेटिसटिक्स इन साइकालोजी लान्गमैन ग्रीन एण्ड कम्पनी एण्ड एजूकेशन, 1947
6. लीओ पोस्टमैन एण्ंउ जेम्स पी. ईगन : इन्ट्रोडक्शन टू एक्सपेरीमेन्टल साइकालोजी पब्लीकेशन (1949)
7. फ्रेंड एन. करलिंगर : फाउन्डेशन्स आफ बिहैवियरल रिसर्च हाल्ट रिनेहार्ट 1964 पृष्ठ 32
8. क्लीफोर्ड टी. मार्गन एण्ड रिचर्ड ए. किंग : इन्ट्रोडक्शन टू सइकोलोजी (1971) मैकग्राहिल बुक कम्पनी, न्यू यार्क
9. गोपाल जी प्रसाद : रिसर्च मेथेडोलोजी इन बिहैवियरल साइन्सेज 1992 पृष्ठ 81
10. डी अमातो : इक्सपेरीमेटल साइकालोजी (1970)
11. टाउनसेण्ड : इन्ट्रोडक्शन टू इक्सपेरीमेन्टल मेथड (1953) पृष्ठ 52
12. क्लीफोर्ड टी. वही (1971)
13. हल : लर्निंग (1967)
14. मैक गीगन : इक्सपेरीमेन्टल साइकालोजी (1969) प्रेन्टाइस हाल आफ इन्डिया 1969 नई दिल्ली
15. बेन्टन जे. अन्डरवुड : इक्सपेरीमेन्टल साइकालोजी अपलेन्स सेन्चुरी क्राफ्टस न्यूयार्क (1966)
16. गोपाल जी प्रसाद : वही पृष्ठ 21
17. गोपाल जी प्रसाद : वही पृष्ठ 22
18. गोपाल जी प्रसाद : वही पृष्ठ 22
19. गोपाल जी प्रसाद : वही पृष्ठ 22
20. ऐलेन एल. इडवर्ड : इक्सपेरीमेन्टल डिजाइन इन साइकालोजिकल रिसर्च (1968) हाल्ट रिनेहार्ट एण्ड विन्सटन, न्यूयार्क
21. ऐलेन एल इडवर्ड : उपरोक्त वही
22. ऐलेन एल. इडवर्ड : उपरोक्त वही

23. ऐलेन एल . इडवर्ड : उपरोक्त वही
24. ऐलेन एल . इडवर्ड : उपरोक्त वही
25. ऐलेन एल. इडवर्ड : उपरोक्त वही
26. देवेन्द्र ठाकुर : वही पृष्ठ 181
27. देवेन्द्र ठाकुर : वहीं पृष्ठ 181
28. देवेन्द्र ठाकुर : वही पृष्ठ 182
29. मैक गीगन : वही

इकाई 8 प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प के तार्किक आधार एवं प्रकार

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 प्रयोगात्मक अभिकल्प का तार्किक आधार

8.3 सहमति विधि

8.4 भिन्नता विधि

8.5 भिन्नता एवं सहमति (समता) की सम्मिलित विधि

8.6 सह परिवर्तन विधि

8.7 अवशेष विधि

8.8 प्रायोगिक शोध अभिकल्प के प्रकार

8.8.1 पश्चात् परीक्षण प्रायोगिक शोध अभिकल्प

8.8.2 पूर्व पश्चात् प्रायोगिक शोध अभिकल्प

8.8.3 तत्पश्चात् तत्परिणामी प्रायोगिक शोध अभिकल्प

8.9 सारांश

8.10 बोध प्रश्न

8.11 वस्तुनिष्ठ बोध प्रश्नों के उत्तर

8.12 सूची एवं सन्दर्भ

8.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प के तार्किक आधारों का विश्लेषण कर सकेंगे।
- प्रायोगिक शोध अभिकल्प के प्रकारों की व्याख्या एवं उप प्रकारों की विवेचना कर सकेंगे।
- तत्पश्चात् तत्परिणामी प्रायोगिक शोध अभिकल्प एवं तत्पश्चात् तत्परिणामी प्रायोगिक शोध अभिकल्प निदर्श (पैराडाइम) पर टिप्पणी कर सकेंगे।

8.1 प्रस्तावना

अभिकल्प के विकास में एक महत्वपूर्ण तार्किक आधार का योगदान है जो समाज विज्ञान में इसके उपयोग एवं महत्व को दर्शाता है तथा सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि तैयार करता है। कुछ घटनाएं ऐसी होती हैं जो घट चुकी होती हैं। उनके प्रयोगात्मक अध्ययन के लिए तथा कुछ घटनाएं घटित होने के पहले तथा

उसके घटित होने के बाद और प्रायोगिक तथा नियन्त्रित समूह के अध्ययन से सम्बन्धित प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प के कुछ महत्वपूर्ण प्रकार भी होते हैं जिसके आधार पर चरों के कार्य कारण सम्बन्ध अर्थात् कारण एवं प्रभाव का मापन होता है। ऐसे प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प समाज विज्ञान को वैज्ञानिकता प्रदान करते हैं । शोध अभिकल्पों का वर्णन इस इकाई में प्रस्तावित है।

8.2 प्रयोगात्मक अभिकल्प का तार्किक आधार (Logical Base of Experimental Research Design)

प्रसिद्ध दार्शनिक जॉन स्टुअर्ट मिल (John Stuard Mill) 1874 के अन्वेषण के अधिनियम (Canons of Discovery) से ही वास्तव में प्रयोगात्मक अभिकल्प का विकास हुआ है। इसी सिद्धान्त के द्वारा प्रयोगात्मक अभिकल्प के निर्माण के लिए तार्किक आधार मिलता है जिसके द्वारा तथाकथित कारण और प्रभाव के सम्बन्ध को निर्धारित किया जा सकता है । जे. एस. मिल द्वारा निर्धारित अन्वेषण के अधिनियम पाँच हैं जो कि निम्नलिखित हैं —

8.3 सहमति विधि (Method of Agreement)

इस विधि के अन्तर्गत शोधकर्ता ऐसी दो या दो से अधिक प्रघटनाओं की प्रयोग परिस्थितियां (Instances) निरीक्षण के अन्तर्गत लेता है जिसमें कोई एक समान तत्व दिखाई देता हो। प्रत्येक बार वह उनमें से केवल उन चरों की खोज करता है जो उन परिस्थितियों में उपस्थित हों।

निष्कर्षस्वरूप वह यह निश्चय करता है कि जब कोई आश्रित चर उपस्थित रहता है तो उसका कारण कोई एक स्वतंत्र चर होता है अर्थात् उनमें (कारण एवं प्रभाव में) सहमति का सम्बन्ध है। जैसे —

ABC → OPQ

BDC → PRQ

ADC → ORQ

अत: C → Q

अथवा एक कुत्ता और एक बछड़ा दो भिन्न जाति के प्राणियों को नियमित रूप से उनकी प्रकृति के अनुसार भोजन दिया जाता है परन्तु उन दोनों को कई दिन का जूठा चावल दिया जाता है उस चावल को खाने के बाद दोनों को पेचिस हो जाती है। अत: इस विधि के आधार पर निष्कर्ष है कि जूठे चावल देने के कारण दोनों को पेचिस हो जाना अथवा इसको दूसरे उदाहरण से समझ सकते हैं कि एक तोता और एक खरगोश दो भिन्न जाति के प्राणी अपने पिंजड़े में ऑक्सीजन के अभाव से मर जाते हैं। इससे निष्कर्षतया हम कह सकते हैं कि ऑक्सीजन का अभाव ही दोनों के मरने का कारण है।

8.4 भिन्नता विधि (Method of Difference)

इस विधि के अन्तर्गत सभी प्रकार की समानता वाले दो समूहों को चुन लिया जाता है। प्रथम समूह को स्वतंत्र चर के रूप में परिचालित किया जाता है। दूसरे को नियंत्रित रखा जाता है यदि परिचालन के कारण पहले समूह पर कोई प्रभाव या परिवर्तन दिखाई पड़ता है तथा दूसरे नियंत्रित वाले समूह पर

नहीं तो इसका कारण स्वतंत्र चर समझा जाता है।

उदाहरण के लिये —

ABC → OPQ (प्रयोगात्मक समूह - परिचालित)

AB → OQ (नियंत्रित समूह)

अत: C = P

अथवा दो कुत्ते एक ही समान वजन तथा स्वास्थ्य की परिस्थिति में लिये जाते हैं उन्हें समान परिस्थिति में रखा जाता है पर एक को विभिन्न (C) प्रकार का भोजन दिया जाता है तो उसका आकार और वजन (P) बढ़ जाता है अत: इस वृद्धि का कारण (C) विशिष्ट प्रकार का भोजन है।

अथवा दूसरे उदाहरण से इसको हम समझ सकते हैं। दो छात्र एक समान बुद्धिलब्धि तथा स्वास्थ्य की परिस्थिति में लिये जाते हैं। उन्हें उसी कक्षा में समान रूप से पढ़ाया जाता है पर एक को (प्रथम) शिक्षक अलग से ट्यूशन पढ़ाते हैं तथा दूसरे को केवल विद्यालय की कक्षा में ही पढ़ाते हैं। परीक्षा में पास होने पर प्रथम छात्र को अधिक अंक मिलता है तथा दूसरे छात्र को उससे कम अंक मिलता है । अत: प्राप्तांक में अन्तर का कारण ट्यूशन है।

8.5 भिन्नता एवं सहमति (समता) की सम्मिलित विधि (Joint Method of Difference and agreement)

इस विधि द्वारा —

सभी प्रकार की समानता वाले चार समूहों को चुन लिया जाता है। किन्हीं दो समूहों को स्वतंत्र चर के रूप में परिचालित किया जाता है तथा दो समूहों को नियंत्रित रखा जाता है। फिर शोध कर्ता यह पता लगाता है कि क्या दो या दो से अधिक परिस्थितियों में कोई तत्व समान है। पुन: यह पता लगाता है कि या इन्हीं परिस्थितियों के अनुपस्थित रहने पर वह तत्व भी अनुपस्थित हो जाता है? इन्हीं दो परिस्थितियों के अनुसार वह कोई निष्कर्ष निकालता है।

उदाहरणर्थ —	प्रथम परिस्थिति (समता)			द्वितीय परिस्थिति
	ABC	—	POR	LK – BD
	DFC	—	MOR	QN – SZ
	GEC	—	LOR	SP – TX

अत: C= R

अर्थात् उदाहरण के लिये — दो कुत्ते बीमार हैं और दोनों में एक बात की समता रही है कि दोनों ने एक विशिष्ट प्रकार का भोजन किया था। दो अन्य कुत्ते स्वस्थ हैं। इनमें भी उनकी तरह हर बात की समता है। निष्कर्षतया हम कह सकते हैं कि पहले प्रकार का विशिष्ट भोजन ही कुत्तों की बीमारी का कारण है।

8.6 सहपरिवर्तन विधि (Method of Concomitant Variation)

इस विधि के अन्तर्गत शोधकर्ता स्वतंत्र चर में एक नियमित ढंग से परिवर्तन करता है। यदि स्वतंत्र चर के परिवर्तन से आश्रित चर में भी साथ-साथ परिवर्तन दिखाई पड़े, तो दोनों को एक दूसरे से सम्बन्धित माना जायेगा । यह सह परिवर्तन सीधा (Directly) या विपरीत दिशा में (Inversely) में किसी भी प्रकार का हो सकता है।

अर्थात्

LM (1 n) → uv (1 w)

LM (2 n) → uv (2 w)

LM (3 n) → uv (3 w)

LM (4 n) → uv (4 w)

अत:, n → w अर्थात् n के कारण w घटित होता है।

उदाहरण स्वरूप, एक छात्र के भोजन तत्व में परिवर्तन के रूप में एक विशिष्ट पौष्टिक तत्व दिया जाने लगा उस विशिष्ट पौष्टिक तत्व के देने के प्रभाव स्वरूप उस छात्र का वजन धीरे-धीरे बढ़ने लगा अर्थात्

स्वतंत्र चर = विशिष्ट पौष्टिक तत्व (n)

आश्रित चर = वजन (w)

अर्थात् स्वतंत्र चर में परिवर्तन होने से छात्र के वजन अर्थात् आश्रित चर में साथ साथ परिवर्तन होने लगा। इसी को सह परिवर्तन विधि कहते हैं जो कि सीधे दिशा में है ।

इसके अतिरिक्त विपरीत दिशा में उदाहरण के लिए—

उस पौष्टिक तत्व की मात्रा एवं गुण में धीरे-धीरे कमी की गयी फलस्वरूप छात्र का वजन धीरे -धीरे कम होता गया इसको विपरीत दिशा में सह परिवर्तन विधि कह सकते हैं।

8.7 अवशेष विधि (Method of Residue)

इस विधि के अन्तर्गत शोध कर्ता किन्हीं परिस्थिति या प्रघटना में से चरों का इस प्रकार निष्कासन करता है कि कुछ तत्व शेष बच जाते हैं जिन्हें एक दूसरे का निर्धारक तत्व माना जाता है-

उदाहरण के लिये —

M	→	N		
P	→	R		O → Q (अनुमानित)
S	→	T		

अर्थात् MPSO → NRTQ में यदि M → N का निर्धारण करता है, P → R का निर्धारण करता है तथा S → T का निर्धारण करता है तो उनमें से बीच में बचे हुए तत्वों में, निष्कर्षस्वरूप O → Q का निर्धारण करेगा।

जे. एस. मिल द्वारा दिया गया उपरोक्त तार्किक आधार प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प के लिए उपयोगी है । फिर भी इसको अंधान्धु (Blindly) अथवा बिना ठीक से ध्यान दिये उपयोग नहीं किया जा सकता है। प्रत्येक उपागम की अपनी आवश्यकताओं की प्रकृति एवं दशाएं होती हैं । यदि विचारपूर्वक इस बिन्दु पर ध्यान नहीं दिया जाये तो फलस्वरूप अनुचित अथवा अवैज्ञानिक निष्कर्ष बहुत ही आसानी से निकाला जा सकता है अर्थात् उपागम की आवश्यकता को देखते हुए इस विधि का तद्नुसार उपयोग किया जाय तभी उपयुक्त एवं वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालना सम्भव होगा।

8.8 प्रायोगिक शोध अभिकल्प के प्रकार (Types of Experimental Research Design)

प्रायोगिक शोध अभिकल्प के तीन निदर्श अथवा प्रकार मिलते हैं—

1) पश्चात्- परीक्षण प्रयोगिक शोध अभिकल्प (After only experiment design)

2) पूर्व पश्चात् प्रयोगिक शोध अभिकल्प (Before after experiment design)

3) तत्पश्चात् तत्परिणामी प्रयोग अभिकल्प (Ex-post facto Experiment Design)

8.8.1 पश्चात् परीक्षण प्रायोगिक शोध अभिकल्प (After only Experiment Design)

इस प्रकार के प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प में एक प्रायोगिक समूह एवं एक नियंत्रित समूह होता है। इस अभिकल्प में सभी प्रकार के समान गुण एवं विशेषताओं वाले दो समूहों को चुन लिया जाता है। एक समूह को प्रयोगात्मक समूह में रखा जाता है तथा दूसरे समूह को ही परिचालित किया जाता है एक निश्चित समय या अवधि के लिए विशिष्ट ढंग से प्रयोगात्मक समूह को प्रायोगिक चर द्वारा परिचालित किया जाता है उसके बाद दोनों समूहों नियन्त्रित समूह एवं प्रायोगिक समूह की तुलना की जाती है यदि प्रायोगिक समूह में कुछ भिन्नता या अन्तर मिलता है तो परिचालित किये जाने वाले प्रायोगिक चर को ही कारणात्मक चर मान लिया जाता है जो आश्रित चर में परिवर्तन या अन्तर के लिए कल्पित माना जाता है।

साधारण शब्दों में प्रयोग समूह को परिचालित कर इसके किसी एक तत्व के सम्बन्ध में परिवर्तन किया जाता है और उसमें उत्पन्न प्रभावों का मापन किया जाता है। इस प्रकार यदि नियंत्रित समूह का प्रयोग समूह से अन्तर हो जाता है तो उसका कारण उसी परिवर्तित तत्व को माना जाता है। उदाहरण स्वरूप—

1. सम्भाषण और कक्षा सहभागिता विधि के द्वारा शिक्षण के पश्चात् यदि छात्रों के कक्षा निष्पादन में कोई अन्तर उत्पन्न होता है तो यह मान लिया जाता है कि जिस कक्षा में सम्भाषण और कक्ष सहभागिता विधि द्वारा शिक्षण दिया गया उसमें प्रयोगात्मक चर या कारणात्मक चर का प्रभाव छात्रों के कक्षा निष्पादन पर पड़ा तथा जिस कक्षा में यह विधि नहीं अपनायी गयी उसे नियंत्रित समूह मान कर दोनों में तुलना के पश्चात् यह निष्कर्ष निकाला गया कि प्रयोगात्मक चर ही परिवर्तन के लिए उत्तर दायी है।

2. समान विशेषता वाले दो गांवों को चुना गया जिनमें जनसंख्या- नियन्त्रण के साधन नहीं अपनाये जाते थे तथा दोनों गांवों में कोई विद्यालय भी नहीं था तथा वहां के लोगों में साक्षरता की कमी

भी थी । एक गांव को नियन्त्रित समूह तथा दूसरे गांव को प्रायोगिक समूह मानकर दूसरे समूह में विद्यालय की स्थापना की गयी। कुछ वर्षों बाद पाया गया कि प्रायोगिक समूह वाले गांवों में जनसंख्या नियन्त्रण के साधन लोग अपनाने लगे तथा साक्षरता की दर में वृद्धि हो गयी है। दोनों गांवों की विशेषताओं को मापने के पश्चात् जो अन्तर पाया गया उस अन्तर का कारणात्मक तत्व प्रायोगिक चर को माना गया।

पश्चात् परीक्षण प्रयोगात्मक अभिकल्प की चरणबद्ध प्रक्रिया को निम्नलिखित सारणी के माध्यम से अभिव्यक्त कर सकते हैं।

सारणी

	चरण	प्रायोगिक समूह	नियन्त्रित समूह
1.	समूह का प्राथमिक चुनाव	हाँ	हाँ
2.	पूर्व परीक्षण	नहीं	नहीं
3.	प्रायोगिक चरों का प्रदर्शन (प्रभावन)	हाँ	नहीं
4.	अनियंत्रित घटनाओं का प्रदर्शन	हाँ	हाँ
5.	पश्चात् परीक्षण	हाँ (y_2)	हाँ $(y^1{}_2)$
	मापन की तुलना	d = Y2	$-y^1{}_2$

1 और 2 i.e. परिवर्तन = d

चूँकि इस अभिकल्प में स्वतंत्र कारणात्मक चर को नियन्त्रित समूह पर परिचालित न करके प्रायोगिक चर पर परिचालित किया गया। चूँकि यह माना गया कि दोनों समूहों की गुण एवं विशेषताएं मूल रूप से समान हैं इसलिए दोनों समूहों के बीच के अन्तर के पीछे आश्रित चर पर यह निष्कर्ष निकाला गया कि यह परिवर्तन कारणात्मक चर के कारण हुआ।

यह क्रियाविधि दो प्रकार साक्ष्यों का प्रबन्ध करता है—

(1) सह परिवर्तन साक्ष्य (2) समय क्रम का साक्ष्य

तीसरे प्रकार के साक्ष्य की पूर्ति के लिए जो विजातीय (बहिरंग) चरों के प्रभाव का नियंत्रण है यह कहा जा सकता है कि इस प्रकार के अभिकल्प में यह माना जाता है चूँकि इस प्रकार चरों के प्रभाव को किसी भी समूह पर नियंत्रित करने के लिए कोई प्रयत्न नहीं किया जाता है। इसलिए दोनों समूहों का चयन समान गुणों एवं लक्षणों के आधार पर किया जाता है अथवा मापन के समय भी बाहरी घटनाओं द्वारा पड़ने वाले प्रभावों की उपेक्षा की जाती है। इससे यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि दोनों समूहों के अन्तिम मापन के बीच का अन्तर (प्रयोगिक (y2) और नियन्त्रित $(y^1{}_2)$ प्रायोगिक व्यवहार के कारण है।

पश्चात् परीक्षण अभिकल्प की कमियां

(1) यह शोध अभिकल्प प्रायोगिक चर और अन्य विजातीय चरों के बीच अन्त: किया के प्रभाव की सम्भावना की उपेक्षा करता है।

(2) इस अभिकल्प की दूसरी कमी यह है कि यह निश्चित अथवा निर्धारित करने में कठिनाई होती है कि जो भी प्रभाव उत्पन्न किया गया अथवा अन्तर परिवर्तन पाया गया वह परिचालित कारण के द्वारा उत्पन्न हुआ अथवा प्रायोगिक समूह के अपने दूसरे अनुभव भी हैं।

(3) इस अभिकल्प की अन्य कमी यह भी है यह जान पाना अत्यन्त कठिन है कि दोनों समूह बिल्कुल एक समान हैं तथा दोनों के गुण एवं विशेषताएं बिल्कुल एक दूसरे के समान हैं। बिना पूर्व परीक्षण के हम यह नहीं जान सकते कि शोध की आरम्भिक अवस्था में दोनों समूह के गुण कहां तक वास्तव में समान हैं अथवा समान नहीं हैं।

8.8.2 पूर्व-पश्चात्-प्रायोगिक शोध अभिकल्प (Before - After Experiment Design)

इस प्रकार के अभिकल्प में जिस किसी समूह का चयन किया जाता है उसी समूह का अध्ययन किसी विशिष्ट परिस्थिति में रखने के पूर्व तथा उसके बाद किया जाता है। अध्ययन द्वारा पूर्व तथा पश्चात् की अवस्थाओं मे पाये गये अन्तर का कारण उस परिस्थिति को माना जाता है जिस विशिष्ट परिस्थिति में रखकर स्वतंत्र चर या चरों द्वारा परिचालन के कारण उसमें अन्तर पाया गया है।

जैसे कि इसके नाम से ही प्रतीत होता है कि इसमें न केवल प्रायोगिक चर की व्युत्पत्ति बाद आश्रित चर का मापन किया जाता है बल्कि प्रायोगिक चर द्वारा व्युत्पन्न किये जाने से पहले आश्रित चर का मापन किया जाता है। इस प्रकार इसमें निम्नलिखित चरण सम्मिलित होते हैं—

चरण — (अ) प्रायोगिक समूह का निर्माण अथवा प्रायोगिक समूहों एवं नियत्रित समूहों दोनों का निर्माण। एक से अधिक समूह के उपयोग के मामले में यह व्यक्तियों के चयन और उनका विभिन्न समूहों में नियोजन यादृच्छीकरण अथवा समेलित विधि से किया जाता है।

(ब) पूर्व परीक्षण

(स) प्रायोगिक चर का प्रदर्शन या प्रभावन

(द) अनियत्रित चरों का स्वयंमेव प्रदर्शन

(य) अन्तिम परीक्षण अथवा मापन

एक समूह अथवा विभिन्न समूहों के अध्ययन पर आधारित पूर्व पश्चात् प्रायोगिक अभिकल्प के अनेक प्रकार होते हैं। विभिन्न समूहों का प्रयोग, परिपक्वन प्रभाव (Maturation effect), दिशा प्रभाव (The direction effect) और प्रायोगिक चर प्रभाव को पृथकतया मापन के लिए बनाया जाता है। भिन्न प्रकार के समूहों तथा भिन्न चरणों का प्रयोग यथार्थता की मात्रा को निर्धारित करने के लिए सम्मिलित किया जाता है जिसके साथ दो या अधिक चरों के बीच कारणात्मक सम्बन्ध स्थापित किया जा सके।

इसके उप प्रकार कुछ भी हों यह मूलतया पश्चात् परीक्षण प्रायोगिक शोध अभिकल्प से भिन्न होता है क्योंकि इसमें प्रायोगिक चरों के उत्पन्न किये जाने से पहले पूर्व परीक्षण की विशेषता का समावेश होता है। इस प्रकार के अभिकल्प में व्यक्तियों का चयन एवं आवंटन विभिन्न समूहों के लिए अथवा दोनों समूहों को समान बनाने के लिए यादृच्छीकरण अथवा समेलित विधि के द्वारा किया जाता है जो कि पूर्व परीक्षण द्वारा सदृश अनुरूप कर लिया जाता है।

जहां कहीं भी एकल समूह अध्ययन हो, अथवा दो या अधिक समूहों का अध्ययन हो, पूर्व परीक्षण कर लिया जाता है। एक समूह पूर्व पश्चात् प्रायोगिक अभिकल्प में केवल पूर्व परीक्षण एवं पश्चात्

परीक्षण के बीच के मापन द्वारा जो अन्तर पाया जाता है यह मान लिया जाता है कि यह परिवर्तन प्रायोगिक चर के कारण उत्पन्न हुआ है। अन्तर परिवर्तनीय समूहों या एक अथवा अधिक नियंत्रित समूहों के पूर्व पश्चात् प्रायोगिक अभिकल्प में समूहों की समानता एवं परिवर्तन के मापन के सुनिश्चित करने के पूर्व परीक्षण किया जाता है।

उपयोगिताएं — इस प्रकार पूर्व परीक्षण की निम्नलिखित उपयोगिताएं हैं—

(1) यह समूहों की आरम्भिक तुलनात्मकता की स्थापना में सहायक होता है।

(2) पूर्व परीक्षण के मापन तथा पश्चात् परीक्षण के मापन में तुलना के पश्चात् अन्तर अथवा परिवर्तन को आसानी से पता लगाया जा सकता है और कारणात्मक सम्बन्ध की पहचान की जा सकती है।

प्रकार (उप प्रकार) — पूर्व पश्चात् प्रायोगिक शोध अभिकल्प के दो उप प्रकारों का उल्लेख नीचे दिया जा रहा है जिसमें उपरोक्त उल्लिखित चरणों का विस्तृत उल्लेख किया गया है।

(अ) एकल समूह पूर्व पश्चात् प्रायोगिक अभिकल्प (Before after experiment with a single group)— जब किसी युक्ति के कारण दो समूहों का निर्माण सम्भव नहीं हो पाता है तब इस प्रकार के शोध अभिकल्प का अनुसरण किया जाता है। इसमें चार चरण (1) प्रतिदर्श का चुनाव (2) पूर्व परीक्षण (3) प्रायोगिक चर का प्रदर्शन (प्रभावन) और (4) पश्चात् परीक्षण सम्मिलित होता है । बार्कर (Barker), डेम्बो और लेविन (Dembo and Lewin, 1941) ने इस प्रकार के अभिकल्प का प्रयोग किया है जैसे कि पूर्व पश्चात् प्रायोगिक अभिकल्प, बिना नियंत्रित समूह के और केवल एक प्रायोगिक समूह का उपयोग युवा बच्चों के खेल पर निराशा के प्रभाव के अध्ययन के लिए किया। इसमें प्रयोगकर्ता ने एक-एक बच्चे को सामान्य खिलौने के साथ आधे घंटे तक खेलने की अनुमति दी और रचनात्मकता पैमाने पर बच्चे की रचनात्मकता की मात्रा को रिकार्ड किया। उसके बाद उन्हें नये खिलौने के सेट को उसी कक्ष में दूसरे भाग में खेलने के लिये दिया गया। पुनः कुछ समय पश्चात् जब बच्चे नये खिलौने के साथ खेलने में पूर्णतया संलग्न हो गये तब प्रयोगकर्ताओं ने एक-एक बच्चे को पुरानी जगह जहाँ बच्चे सामान्य खिलौने के साथ खेले थे वहां पर बैठा दिया। बच्चे पतली जाली के पीछे केवल उन नये खिलौनों को देख सकते थे परन्तु खेलने की अनुमति नहीं थी। उनके मौलिक खिलौने के साथ खेलने की रचनात्मकता को पुनः रिकार्ड किया गया। खिलौने खेलने के पूर्व मौलिक खिलौने के साथ खेलने की और पूर्व निराशा तथा पश्चात् निराशा की अवधि में रचनात्मकता की दर में अन्तर को, निराशा से उत्पन्न हुए अनुभव द्वारा अवनति की मात्रा को साक्ष्य के रूप में लिया गया।

इस अभिकल्प के चरणों एवं संरचना को निम्नलिखित रूप से प्रदर्शित किया जा सकता है।

सारणी

एकल समूह पूर्व पश्चात् प्रायोगिक अभिकल्प

	चरण	केवल प्रायोगिक समूह
1.	व्यक्तियों का प्राथमिक चुनाव और समूहों का निर्माण	हाँ
2.	पूर्व परीक्षण	हाँ (y1)
3.	प्रायोगिक चरों का प्रदर्शन (प्रभावन)	हाँ
4.	अनियंत्रित घटनाओं का प्रदर्शन	हाँ
5.	पश्चात् परीक्षण	हाँ (y 2)
	मापन की तुलना 1 और 2 = d (अन्तर)	d = y2 - y1

पूर्व पश्चात- प्रायोगिक अभिकल्प की कमियां Limitations of Before After Experimental Research Design

(1) इस विधि की कमी यह है कि पूर्व परीक्षण के प्रभाव एवं परिपक्वन प्रभाव अथवा सीखने के प्रभाव को प्रायोगिक चर के प्रभाव से अलग नहीं किया जाता है। (2) इसकी दूसरी कमी यह है कि पूर्व परीक्षण एवं पश्चात् परीक्षण के बीच जो भी विजातीय चर स्थान ग्रहण करते हैं अथवा उनका प्रभाव पड़ता है उनको नियंत्रित नहीं किया जाता है। (3) कैम्पबेल के अनुसार वह समूह जो प्रायोगिक चर के साथ अनुभव जन्य है तथा वह समूह जिसका प्रायोगिक चर के साथ अनुभव नहीं है दोनों समूह की तुलना वैज्ञानिक वैधानिकता की न्यूनतम शर्त अथवा आवश्यकता है यही तुलना कर पाना इस विधि में कठिनाई युक्त है।

लाभ — इन कमियों के बावजूद यह विधि केवल पश्चात् विधि की तुलना में श्रेष्ठ एवं उत्तम है क्योंकि इस विधि में (1) पूर्व परीक्षण के कारण जो आश्रित चर में समूह की आरम्भिक स्थिति स्पष्ट कर देता है (2) इसमें वही समूह प्रयोग होता है पूर्व परीक्षण एवं पश्चात् परीक्षण के बाद समूह का अन्तर नहीं होने पाता है। इस विधि के द्वारा एक नियंत्रित समूह एवं दो नियन्त्रित समूहों का भी अध्ययन किया जाता है जिसकी चर्चा हम अगली इकाई (इकाई 5) में विस्तार से करेंगे।

8.8.3 तत्पश्चात् तत्परिणामी प्रयोगिक शोध अभिकल्प (Ex-Post facto experiment design)

इस अभिकल्प में वर्तमान से पीछे की ओर अतीत में किसी घटना का कारण ढूँढने का प्रयास रहता है। अत: ऐसे अभिकल्प का उपयोग किसी ऐतिहासिक घटना के अध्ययन के लिए ही किया जाता है। इसमें भी दो समूहों का चयन किया जाता है । एक में कोई घटना अतीत में घटित हो चुकी रहती है। समान गुण एवं विशेषता वाले दूसरे समूह में ऐसी घटना नहीं घटी रहती है। इन दोनों समूहों के अध्ययन की परिस्थिति या कारण के सम्बन्ध में तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। ऐसे तुलनात्मक अध्ययन द्वारा यह पता लगाया जाता है कि घटना जिस समूह के साथ घटित हुई है उसके कारण तत्व क्या हो सकते हैं। ऐसे अभिकल्प में चरों का परिचालन सम्भव नहीं हो पाता है साथ ही साथ नियन्त्रण

का भी अभाव रहता है। संक्षेप में तत्पश्चात् तत्परिणामी प्रायोगिक अभिकल्प को निम्न प्रकार से समझ सकते हैं —

(क) इस शोध अभिकल्प में शोधकर्ता चरों के परिचालन (Manipulation) में असमर्थ रहता है क्योंकि ऐसे शोध में स्वतंत्र चर, प्रयोग चर अथवा प्रसरण बहुत पहले अतीत में घटित हो चुके रहते हैं।

(ख) शोधकर्ता यादृच्छिक ढंग से न तो पात्रों को परिचालित कर सकता है, न पात्रों को प्रयोग समूह में यादृच्छिक ढंग से आरोपित कर सकता है और न उन्हें प्रायोगिक निरूपण ही देने में समर्थ रहता है।

(ग) शोधकर्ता आश्रित चरों के निरीक्षण से ही प्रारम्भ कर अतीत की ओर घटित स्वतंत्र चर या प्रयोग चर की खोज करता है।

इस प्रकार की विधि का प्रयोग अथवा उपयोग केवल वर्गीकरण शोध (Taxonomic Researches) के लिए जिनमें उद्देश्य घटित कारण चरों की खोज करना, उनका मात्र वर्गीकरण करना, तथा प्राकृतिक प्रघटना का मापन करने के लिए होता है।

सामान्य शब्दों में 'Ex-Post Facto,' का शब्दिक अर्थ होता है From what is done after ward अर्थात् किसी घटना या परिस्थिति के घटित हो जाने पर बाद में किया गया अध्ययन। यह निरीक्षण की आगमन विधि (Inductive Method of Observation) पर आधारित रहता है। इसको निम्न प्रकार से परिभाषित किया जा सकता है—

कर लिंगर के अनुसार — ''तत्पश्चात् तत्परिणामी प्रायोगिक शोध एक शोध है जिसमें चर कार्यशील (घटित) हो चुका होता है। शोधकर्ता किसी आश्रित चर या चरों के अवलोकन से अध्ययन प्रारम्भ करता है तब वह स्वतंत्र चर का अनु-निरीक्षण करता है जिससे आश्रित चरों के रूप में प्रकट उसके प्रभावों तथा इन दोनों चरों के पारस्परिक सम्बन्धों का वह पता लगा सके।''

इससे स्पष्ट है कि इस प्रायोगिक शोध में शोधकर्ता स्वतंत्र चर का परिचालन तथा नियन्त्रण नहीं कर सकता क्योंकि यह प्राकृतिक घटना के रूप में पहले ही घटित हो चुकी होती है अत: इसके परिणाम स्वरूप प्रकट परिस्थिति (चरों) का ही उसे अनुनिरीक्षणात्मक अध्ययन करना होता है।

ई. ग्रीन बुड के अनुसार ''तत्पश्चात् तत्परिणामी प्रायोगिक शोध में किसी उद्दीपन (स्वतंत्र चर) के पहले से कार्यशील (घटित) हो चुकने के बाद शोधकर्ता पीछे की ओर नियन्त्रण द्वारा अध्ययन करता है और ऐसी परिस्थिति का पुनर्निर्माण करता है, जो सम्भवत: प्रायोगात्मक परिस्थिति (स्वतंत्र चर) रही थी।''

तत्पश्चात तत्परिणामी प्रायोगिक शोध अभिकल्प निदर्श (Paradigm) (Paradigm of Ex-Post Facto Experimental Research)

X ———————————————— Y

स्वतंत्र चर — आश्रित चर

(अज्ञात) — (ज्ञात)

अथवा

X — Y

X_1 ———————————————— Y_9

स्वतंत्र चर	Y_2
X_2	Y3
X3	:
:	:
:	yn
Xn (अज्ञात)	आश्रितचर (ज्ञात)

इस विधि को एक उदाहरण के द्वारा समझा जा सकता है।

उदाहरण — शोध की समस्या है: क्या सिगरेट पीने से फेफड़े का कैंसर होता है? इस शोध का स्वरूप Ex -post facto है। पहले फेफड़े के कैंसर वाले पात्रों के समुदाय (y) के आश्रित चर का अवलोकन किया गया फिर इससे पीछे की ओर इसके अनेकों कारणों (X, X1, X2, X3 .....Xn) का अवलोकन किया गया परन्तु जटिलता के कारण तथा नियन्त्रण के अभाव में (X, X1, X2, X3 .....Xn) स्वतंत्र चरों के पर्याप्त एवं वैज्ञानिक नियत्रण की संभावना संदिग्ध रह जाती है । शोध कर्ता, आसानी से प्राप्त सबसे अधिक संभावित कारण (X2) सिगरेट पीने की अधिकता को ही स्वीकार कर लेता है। इसका दूसरा उपयुक्त उदाहरण है — बाल अपराध (Juvenile deliquencies) के लिए कारण तत्व (स्वतन्त्र चर) सांस्कृतिक आदर्श/प्रतिमान को अनेकों सम्भावनाओं में से चुन लेना।

इस शोध का उत्कृष्ट उदाहरण = "अमेरिका में इंडियाना विश्वविद्यालय के तीन जन्तु वैज्ञानिकों किन्से, पोमराय तथा मार्टिन ने अपने संयुक्त राष्ट्र के 12,000 से ऊपर पुरु षों एवं महिलाओं के यौन व्यवहारों का अध्ययन किया है।"

पश्चात् परिणामी प्रायोगिक शोध के गुण (Merits of Ex-Post Facto Experimental Research) — 1. शिक्षा, समाजशास्त्र, सांस्कृतिक मानव विज्ञान (Cultural Anthropology) आदि व्यावहारिक विज्ञानों के क्षेत्र में जहां शुद्ध रूप से प्रयोगात्मक शोध सम्भव नहीं हो पाते, यही शोध सुलभ हो पाता है, क्योंकि इनमें शोध की परिस्थितियां (चर) घट चुकी होती हैं। शोध ज्ञात परिणामों (Known effects) से पीछे की ओर अज्ञात कारणों की ओर करना होता है। निपुण या अच्छे शोधकर्ताओं द्वारा पश्चात् परिणामी शोध की विधि से कई महत्वपूर्ण अध्ययन हुए हैं जिनमें उच्च स्तर की वैधता एवं विश्वसनीयता है। जियान पियाजे (Jean Piaget) द्वारा बच्चों की चिन्तन क्रिया सम्बन्धी शोध इस प्रायोगिक शोध का एक उपयुक्त एवं विश्वसनीय उदाहरण है।

2. जिस परिस्थिति में शुद्ध रूप से प्रयोगात्मक अध्ययन सम्भव नहीं होता (अर्थात जहाँ स्वतंत्र चर/चरों का शोधकर्ता द्वारा परिचालन अथवा नियंत्रण (Manipulation or control) सम्भव नहीं हो पाता वहां परिस्थितियों (स्वतंत्र चर अथवा आश्रित चर) के कारण कार्य सम्बन्ध के रूप में अध्ययन करने की एक मात्र शोध प्रचना (Methodological strategy) पश्चात् परिणामी शोध (Expost Factor experimental research) ही है।

पश्चात् परिणामी शोध के दोष (Demerits of Ex Post facto research) — उपयुर्क्त गुणों एवं त्रिशेषताओं के होते हुए भी इस शोध में सबसे बड़ा दोष यही है कि इसमें समय तथा स्वतंत्र चर पर शोधकर्ता का कोई नियन्त्रण सम्भव नहीं होता। अत: चरों के सम्बन्ध के दोषपूर्ण निष्कर्ष प्राप्त हो जाते हैं। इस दोष को 'हेत्वाभास'' दोष कहते हैं जिसका रूप अग्र प्रकार होता है- इसके बाद, इसके कारण स्वरूप उत्पन्न (After this; therefore, caused by this) लैटिन भाषा में इसे 'Fallacy of post hoe, ergo propter hoe' कहते हैं। इसका भी शाब्दिक अर्थ होता है ''इसके बाद, अत: इसके कारण'' उदाहरणार्थ यह निष्कर्ष कि ''बाल अपराधी इसलिये बाल अपराधी है कि उसके विद्यालय में अनुशासन का अभाव है अथवा पारिवारिक माहौल अव्यवस्थित है। 'हेत्वाभास' दोष इंगित करता है । इस दोष से बचने का उपाय इस प्रायोगिक दोष में कम ही है।

2. जैसे अन्य प्रयोगात्मक शोध में सावधानी से विपरीत परिकल्पनाओं (Testable alternative hipothesis) का निर्माण करना सम्भव होता है, इस शोध में सम्भव नहीं हो पाता है। इसके जटिल घटनाक्रमों के लिए अनेकों परिकल्पनाओं की सम्भावना रहती है अत: शोधकर्ता आसानी से सबसे अधिक सम्भावित किसी परिकल्पना अथवा व्याख्या को ही निष्कर्ष रूप में स्वीकार कर लेता है। अत: इस प्रकार के निष्कर्ष में वैज्ञानिक मूल्य की कमी रह जाती है।

8.9 सारांश

(1) जॉन स्टुअर्ट मिल द्वारा प्रतिपादित अन्वेषण का अधिनियम (Canons of Discovery) 1874 प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प को तार्किक आधार प्रदान करता है। जे. एस. मिल द्वारा निर्धारित अन्वेषण के पांच अधिनियम हैं - (1) सहमति विधि (2) भिन्नता विधि (3) भिन्नता एवं समता (सहमति) की सम्मिलित विधि (4) सहपरिवर्तन विधि (5) अवशेष विधि

(2) प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प के तीन प्रकार हैं-- (अ) पश्चात् परीक्षण प्रयोग अभिकल्प (ब) पूर्व पश्चात् प्रयोग अभिकल्प (स) तत्पश्चात् तत्परिणामी प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प ।

(अ) पश्चात् परीक्षण अर्थात् केवल पश्चात् प्रयोग शोध अभिकल्प में एक प्रायोगिक समूह एवं एक नियन्त्रित समूह होता है। दोनों समूहों के गुण एवं विशेषताएं समान होती हैं। प्रायोगिक समूह को परिचालित किया जाता है तथा नियन्त्रित समूह को नियन्त्रित दशा में रखा जाता है। परिचालन के बाद प्रायोगिक समूह एवं नियन्त्रित समूह के अन्तर का मापन किया जाता है।

(ब) पूर्व पश्चात् प्रायोगिक अभिकल्प में जिस किसी समूह का चयन किया जाता है उसी समूह का अध्ययन किसी विशिष्ट स्थिति में रखने के पूर्व तथा उसके पश्चात् किया जाता है। पूर्व तथा पश्चात् की अवस्थाओं में पाये गये अन्तर का कारण उस परिस्थिति को माना जाता है जिस विशिष्ट परिस्थिति में रखकर स्वतंत्र चर या चरों द्वारा परिचालन के कारण उसमें अन्तर पाया गया ।

(स) तत्पश्चात् तत्परिणामी अभिकल्प में दो समूहों का चयन किया जाता है। एक समूह में कोई घटना अतीत में घटित हो चुकी होती है। समान गुण अथवा विशेषता वाले दूसरे समूह में ऐसी घटना नहीं घटी

रहती है। इन दोनों समूहों का अध्ययन तुलनात्मक विधि द्वारा किया जाता है। ऐसे अभिकल्प में चरों का परिचालन तथा नियन्त्रण सम्भव नहीं होता है।

8.10 बोध प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

(1) प्रयोगात्मक अभिकल्प की अवधारणा को समझाइये तथा इसके तार्किक आधार कौन--कौन से हैं ? विश्लेषित कीजिये ।

लघु उत्तरीय प्रश्न

(1) पश्चात् परीक्षण (केवल पश्चात्) प्रायोगिक शोध अभिकल्प का वर्णन कीजिए ।

(2) पूर्व पश्चात् प्रायोगिक शोध अभिकल्प के चरण एवं प्रकार की व्याख्या कीजिए।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प का तार्किक आधार निम्नलिखित में से कौन सा नहीं है?

(अ) सहमति विधि (ब) अवशेष विधि (स) विश्लेषण विधि (द) सहपरिवर्तन विधि

2. (Canons of discovery) "कैनन्स ऑफ डिसकवरी" के लेखक कौन हैं?

(अ) अरस्तू (ब) जे. एस. मिल (स) चैम्पियन (द) जहोदा एवं कूक

3. जे. एस. मिल द्वारा प्रतिपादित अन्वेषण के कितने अधिनियम हैं?

(अ) दो (ब) तीन (स) चार (द) पाँच

4. प्रायोगिक शोध अभिकल्प के कौन से प्रकार निम्नलिखित में से नहीं हैं?

(अ) पश्चात् परीक्षण अभिकल्प (ब) पूर्व पश्चात् परीक्षण अभिकल्प

(स) तत्पश्चात् तत्परिणामी अभिकल्प (द) सांख्यकीय विधि ।

5. किस प्रायोगिक शोध अभिकल्प में समान विशेषताओं एवं गुण वाले दो समूहों का चयन किया जाता है तथा एक को प्रयोगात्मक समूह एवं दूसरे को नियन्त्रित समूह को श्रेणी में रखा जाता है।

(अ) पूर्व पश्चात् प्रायोगिक शोध अभिकरण (ब) केवल पश्चात् प्रायोगिकशोध अभिकरण

(स) ऐतिहासिक शोध अभिकरण (द) तत्पश्चात् तत्परिणामी शोध अभिकरण

8.11 वस्तुनिष्ठ बोध प्रश्नों के उत्तर

1. स 2. ब 3. द 4. द 5. ब

8.12 सूची एवं सन्दर्भ

1. देवेन्द्र ठाकुर : रिसर्च मेथडोलोजी इन सोशल साइन्सेज, दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन, नईं दिल्ली, 1993, पृष्ठ 191

2. देवेन्द्र ठाकुर : वही पृ0 191

3. देवेन्द्र ठाकुर : वही पृष्ठ 193

4. डी. कैम्पबेल : रेलीवेन्ट टू दी वैलीडिटी आफ एक्सपेरिमेन्ट्स इन सोशल सेटिंग, साइक्लोजिकल बुलेटिन पृष्ठ 281-302

5. फ्रेंड एन. करलिंगर, फाउन्डेशन ऑफ बिहैवियरल रिसर्च, दाता रिनहार्ट एण्ड विन्सटन इनक. एन. वाई. 1964, पृष्ठ 360

6. ई. ग्रीनवुड : एक्सपेरीमेन्टल साइकालोजी: ए स्टडी इन टू मेथड 1945, कोलम्बिया यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयार्क

7. अल्फ्रेंड सी. किन्स: वारडेल बी. पामराय, एण्ड क्लाइड ई. मार्टिन : ''सेक्सुअल बिहैवियर आफ हयूमन मेल (1948) सेक्सुअल विहैबियर आफ ह्यूमन फीमेल (1953) डब्लू. वी. सान्डर्स कम्पनी फिलाडेल्फिया।

इकाई 9 प्रायोगिक शोध के लिए कुछ मूल्यवान अथवा समृद्ध शोध अभिकल्प निदर्श

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 शोध अभिकल्प निदर्श

9.3 दो से अधिक यादृच्छिक समूह अभिकल्प

9.4 बहु समूह यादृच्छिक पात्र अभिकल्प

9.5 यादृच्छिक सादृश्य समूह अभिकल्प

9.6 सादृश्य पूर्व पश्चात् नियन्त्रित समूह अभिकल्प

9.7 अनुरूपित पूर्व पश्चात् यादृच्छिक स्वरूप अभिकल्प

9.8 तीन समूह स्वरूप प्रयोग समूह एवं नियन्त्रित समूह अभिकल्प

9.9 चार समूह स्वरूप प्रयोग समूह एवं नियत्रित समूह अभिकल्प

9.10 2 × 2 तात्विक (Factorial) अभिकल्प निदर्श

9.11 केवल यादृच्छीकृत समेलित (सादृश्य) पश्चात् परीक्षण नियन्त्रित समूह शोध अभिकल्प

- 9.11.1 तालिका 01
- 9.11.2 तालिका 02
- 9.11.3 तालिका 03

9.12 पूर्व परीक्षण पश्चात् परीक्षण नियन्त्रित समूह शोध अभिकल्प

- 9.12.1 लाभ
- 9.12.2 तालिका 04
- 9.12.3 तालिका 05
- 9.12.4 तालिका 06

9.13 यादृच्छीकृत एक मार्गीय एनोवा (ANOVA) शोध अभिकल्प

- 9.13.1 तालिका 07

9.14 यादृच्छीकृत अवरुद्ध एक मार्गीय एनोवा अभिकल्प

- 9.14.1 तालिका 08
- 9.14.2 तालिका 09

9.15 ‘सारांश

9.16 बोध प्रश्न

9.17 बोध प्रश्नों के उत्तर

9.18 सूची एवं सन्दर्भ

9.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :

- शोध अभिकल्प के विभिन्न निदर्श (पैराडाइम) के विषय में विवेचना कर सकेंगे।
- दो अथवा दो से अधिक अथवा समूह यादृच्छिक पात्र अभिकल्प पर टिप्पणी कर सकेंगे।
- पूर्व पश्चात, नियन्त्रित समूह, अनुरूपित पूर्व पश्चात्, यादृच्छिक सादृश्य समूह इत्यादि शोध अभिकल्प निदर्शों का वर्णन कर सकेंगे।

9.1 प्रस्तावना

कुछ महत्वपूर्ण शोध पद्धतिशास्त्र वैज्ञानिकों ने प्रयोगात्मक शोध से सम्बन्धित अनेक ऐसे मूल्यावान प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प निदर्शों की रचना की है जिनके आधार पर विभिन्न पात्रों, समूहों, घटनाओं का प्रयोगात्मक अध्ययन सम्भव होता है। वह सत्र अथवा समूह एकल, दो या दो से अधिक यादृच्छिक, अनुरूपित समेलित और एक मार्गीय भी हो सकता है। यह प्रयोग समूह और नियन्त्रित समूह भी हो सकता है। स्थितियों एवं घटनाओं का अध्ययन विभिन्न अभिकल्पों के आधार पर होता है। इस इकाई में विभिन्न प्रकार के प्रयोगात्मक अभिकल्प निदर्श दिये गये हैं जो समाज विज्ञान में विभिन्न प्रकार के पात्रों एवं समूह के अध्ययन के लिए सहायक होगा तथा अध्ययन को वैज्ञानिकता प्रदान करेगा।

9.2 शोध अभिकल्प निदर्श (Research Design Para digm 1)

प्रयोगात्मक शोध के लिए कुछ मूल्यवान अथवा समृद्ध शोध अभिकल्प (A few rich Research designs of Experimental Research)

यूनिट 4 में वर्णित प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प के अतिरिक्त शोध के उद्देश्यों के अनुसार अन्य कई मूल्यवान शोध अभिकल्प हैं जो आवश्यकतानुसार उपयोग में लाये जाते है। इन शोध उद्देश्यों तथा परिकल्पनाओं की आवश्यकता के अनुसार शोध अभिकल्प का निर्दर्श (Paradigm) सरल अथवा जटिल हो सकता है ये शोध अभिकल्प निदर्श निम्नलिखित हैं—

प्रयोग समूह-नियन्त्रित समूह - यादृच्छिक पात्र अभिकल्प (अथवा दो यादृच्छिक समूहों का शोध अभिकल्प)

प्रयोग समूह नियन्त्रित समूह यादृच्छिक पात्र अभिकल्प अथवा (दो यादृच्छिक समूहों का शोध अभिकल्प) (Expt. Group - control Group - randomised SB Design) —

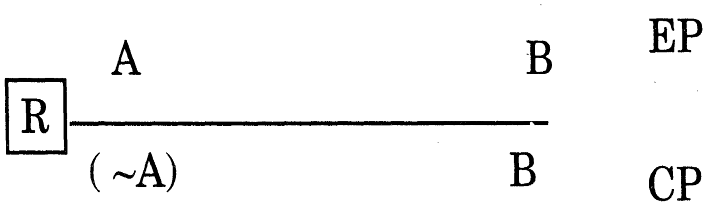

प्रायोगिक शोध के लिए कुछ मूल्यवान अथवा समृद्ध शोध अभिकल्प निदर्श

यहाँ (R) = पात्रों का प्रयोग समूह तथा नियंत्रित समूह में यादृच्छिक रीति से नियोजन ।

A = स्वतंत्र चर (जिसका परिचालन किया जायेगा)।

B = आश्रित चर (जो स्वतंत्र चर के कारण उत्पन्न होगा)

(~A) = नियन्त्रित समूह जिसका परिचालन नहीं

EP = प्रयोग समूह जिसे रेखा के ऊपर दिखाया गया है।

CP = नियन्त्रित समूह जिसे रेखा के नीचे दिखाया गया है।

समाज विज्ञान के अन्तर्गत, प्रारम्भिक स्तर पर शोध कार्य के लिए यह एक आसान एवं लोकप्रिय शोध अभिकल्प है। इसे दो यादृच्छिक समूहों का अभिकल्प कहते हैं (It is known as Two randomised group design)

उपरोक्त निदर्श के अनुसार -

पहले शोधकर्ता उस जनसंख्या की समष्टि रूप से व्याख्या करता है जिसके सम्बन्ध में उसे अध्ययन करना है। फिर उसके एक प्रतिनिधि अंश का यादृच्छिक रीति से चयन कर लेता है। माना कि सम्पूर्ण जनसंख्या में से 80 प्रतिनिधि (पात्र) का चयन करता है। पुन: इस यादृच्छिक प्रतिदर्श (Random Sampling) को भी दो यादृच्छिक समूहों-

प्रथम (1) EP प्रयोग समूह के लिए 40 पात्र और (2) CP नियंत्रित समूह के लिए 40 पात्र में विभक्त कर लिया जाता है।

फिर स्वतंत्र चर को केवल EP प्रयोग समूह पर ही परिचालित किया जाता है और उससे उत्पन्न परिवर्तनों का अध्ययन निरीक्षण तथा मापन किया जाता है जिसे हम आश्रित चर का अध्ययन कहते हैं।

उदाहरणार्थ (परिणाम का ज्ञान) Knowledge of Result का पात्र के सीखने (S's Learning) पर कैसा प्रभाव पड़ता है इसका अध्ययन करना है।

उसके लिए उपरोक्त शोध अभिकल्प निदर्श के अनुसार —

1. पात्रों के लिए उपयुक्त शिक्षण कार्य का नियोजन किया जायेगा। (Learning task assignments)

2. इस नियोजित कार्य के करने का क्या परिणाम होता है इसका ज्ञान प्रत्येक बार EP प्रयोग समूह को दिया जायेगा परन्तु CP नियन्त्रित समूह को परिणाम का ज्ञान नहीं दिया जायेगा।

3. दोनों समूहों का नियोजित कार्य एक विशिष्ट शिक्षण विधि के द्वारा सम्पन्न कराया जायेगा।

4. विशिष्ट शिक्षण भी एक निश्चित सीमा (Criterion limit) तक कराया जायगा।

5. सम्पूर्ण अध्ययन 'AB - BA' के प्रति संतुलित क्रम (Counter balance order) में व्यवस्थित रहेगा जैसे -

अवस्था	A परिणाम का ज्ञान	B परिणाम का ज्ञान शून्य	B परिणाम का ज्ञान शून्य	A परिणाम का ज्ञान
समूह	EP (प्रयोग समूह)	CP (नियन्त्रित समूह)	CP (नियन्त्रित समूह)	EP (प्रयोग समूह)
निरीक्षण सं.	50	50	50	50

इस प्रकार यदि प्रयोग समूह में परिणाम का ज्ञान दिये जाने पर शिक्षण की मात्रा बढ़ जाती है तो निश्चित रूप से यह माना जायेगा कि यह वृद्धि परिणाम के ज्ञान के कारण है। उपरोक्त दोनों समूहों के औसत प्राप्तांकों से टी- परीक्षण के द्वारा सार्थकता की जांच कर ली जायेगी।

यदि किसी निर्दिष्ट जनसंख्या में से यादृच्छिक विधि से पात्रों का प्रतिदर्श (Sampling) चुना गया है तो बाह्य वैधता (External validity) उच्च स्तर की होगी और पात्रों की संख्या यदि बढ़ा दी जाये तो यह और समृद्ध प्रयोग अभिकल्प बनने के साथ ही इसमें उच्च स्तर की आन्तरिक वैधता होगी। जहाँ पात्रों का यादृच्छिक चयन सम्भव नहीं अर्थात् जहां संख्या बहुत कम होती है वहां एक छोटे प्रतिदर्श पर ही इस अभिकल्प द्वारा प्राप्त निष्कर्षों तथा ऐसे अन्य प्रतिदर्शों पर इसी अभिकल्प से भिन्न- भिन्न स्थान तथा भिन्न-भिन्न समय पर किये गये प्रयोग से प्राप्त निष्कर्षों में यदि परिकल्पित सम्बन्ध दिखाई पड़ता है तो इसमें उच्च स्तर की बाह्य वैधता होगी। ऐसे निष्कर्षों का सामन्यत: समाजीकरण भी किया जा सकता है जो कि बाद में सम्बोध एवं सिद्धान्त के रूप में स्थापित हो जाते हैं। सामाजिक वैज्ञानिक शोधों के लिए लिए यह एक आदर्श एवं मूल्यवान अभिकल्प सिद्ध हुआ है।

9.3 दो से अधिक यदृच्छिक समूह अभिकल्प (More than two randomised group design)

R	A_1	B	EP
	A_2	B	EP
	A_3	B	EP
	$(\sim A_4)$	B	CP

इसमें निदर्श एवं उसका संकेत शोध अभिकल्प निदर्श -1 जैसा ही है केवल (EP) प्रयोग समूह के लिए तीन समूहों A1, A2, A3 तथा नियन्त्रित समूह (CP) के लिए एक समूह (~A4) को रखा गया है। समूह (~A4) नियंन्त्रित समूह है जिसे परिचालित नहीं किया जायेगा। उपरोक्त तीनों प्रयोग समूहों (EPs) A1, A2, A3 को प्रयोग समूह के रूप में परिचालित किया जायेगा। अर्थात् इसके लिए कुल निदर्श की पात्र संख्या 160 होगी । 40 - 40 पात्र के तीन समूह प्रयोग समूह के रूप में तथा 40 पात्र नियन्त्रित समूह के रूप में।

तीनों समूहों के परिचालन के बाद इनके कार्यों का तुलनात्मक मापन कर देखा जायेगा कि इनमें कौन-सा समूह सबसे अधिक प्रभावशाली है और अन्य की प्रभावशीलता का क्रम क्या है। उपरोक्त प्रत्येक समूह का चयन यादृच्छिक ढंग से तथा पात्रों का चयन नियोजन भी यादृच्छिक ढंग से ही किया जायेगा । जैसे ऊपर ली गयी पात्र की संख्या प्रत्येक समूह के लिए समान है उसी प्रकार से समूह में पात्रों की संख्या भी समान होगी।

पात्रों की संख्या एवं समूहों की संख्या में वृद्धि से इस शोध अभिकल्प में आन्तरिक एवं बाह्य दोनों की वैधता बढ़ जाती है।

प्रायोगिक शोध के लिए कुछ मूल्यवान अथवा समृद्ध शोध अभिकल्प निदर्श

9.4 बहु समूह यादृच्छिक पात्र अभिकल्प (Multi group randomised subject design)

R	A_1	B	EP
	A_2	B	EP
	A_3	B	EP

इस शोध अभिकल्प में शोध अभिकल्प निदर्श - 2 की अपेक्षा नियन्त्रित समूह न रखकर दो या दो से अधिक प्रयोग समूह (EP) रखे जाते हैं और उन्हें प्रयोग समूह के रूप में परिचालित किया जाता है। सभी समूहों में पात्रों का यादृच्छिक चयन तथा नियोजन किया जाता है प्रत्येक समूह में पात्रों की संख्या भी समान होती है अर्थात इसमें केवल प्रयोग समूहों (EPs) की संख्या में वृद्धि कर दी जाती है। आपस में नियत्रित समूह (CP) का कार्य तुलनात्मक ढंग से सम्पन्न करते हैं । समूहों का तुलनात्मक ढंग से अध्ययन करने पर स्वतंत्र चर की शक्ति का तुलनात्मक मापन भी हो जाता है।

इन समूहों की सार्थकता की जांच डंकन परीक्षण (Duncan test) द्वारा की जाती है।

9.5 यादृच्छिक सादृश्य समूह अभिकल्प (Randomised matched group design)

M R	A	B	EP
	(~A)	B	CP

M = समूहों का सादृश्यीकरण (Matching of groups)

R = यादृच्छिक चयन (Random selection)

इस शोध अभिकल्प के अनुसार प्रयोग समूह (EP) तथा नियन्त्रित समूह (CP) का यादृच्छिक चयन किया जायेगा पर साथ-साथ दोनों समूहों का सादृश्यीकरण (Matching) किसी अन्य चर पर किया जायेगा । प्रयोग समूह एवं नियन्त्रित समूह के यादृच्छिक चयन को (R)से इंगित किया गया है एवं दोनों समूहों EP और CP का सादृश्यीकरण (M) से इंगित किया गया है । अत: प्रयोग समूह तथा

नियन्त्रित समूह का यादृच्छिकरण तथा सादृश्यीकरण रहेगा, (M_R) और इन दोनों समूहों में केवल प्रयोग समूह के स्वतंत्र चर का परिचालन किया जायेगा, नियन्त्रित समूह में परिचालन नहीं किया जायेगा। जिसे हमने (~A) के रूप में उपर्युक्त में इंगित किया है, सादृश्यीकरण के द्वारा समूहों को नियोजित करने के कारण ऐसे अभिकल्प में आंतरिक वैधता और बढ़ जाती है। इनमें यदि प्रयोग समूह (EP) तथा नियन्त्रित समूह (CP) दो ही समूह रखे गये हैं तो प्रत्येक समूह में यादृच्छिक विधि से पात्रों का नियोजन किया जायेगा, कौन समूह प्रयोग समूह (EP) रहेगा कौन सा नियन्त्रित समूह (CP) रहेगा इसका भी नियोजन यादृच्छिक विधि से ही किया जायेगा। सम एवं विषम संख्या को एक एवं दूसरे समूह में नियोजित किया जा सकता है। इसके लिए निर्णय कई अन्य विधियों सिक्का उछाल कर लाटरी आदि द्वारा किया जाना आसान होगा। यदि दो से अधिक समूह रखना है तो इनके लिए समूहों का नियोजन यादृच्छिक संख्या सारणी के द्वारा करना होगा।

अध्ययन के पूर्व पात्रों का सादृश्यीकरण करना इस अभिकल्प निदर्श की महत्वपूर्ण विशेषता है । पात्रों द्वारा किसी भी विशिष्ट क्षेत्र में कार्य सम्पन्नता (निष्पादन) (Task Performance) या उनकी बुद्धि लब्धि के आधार पर उनका सादृश्यीकरण कर लिया जायेगा, ऐसे ही सादृश्य समूह से फिर यादृच्छीकरण कर प्रयोग समूह तथा नियंत्रित समूह दो समूह का चयन यादृच्छिक विधि से किया जायेगा। यदि कोई अन्य अथवा संयोग कारक (Chance factor) का पूर्णत: निष्कासन नहीं होता तो इन दोनों सादृश्य समूहों पर समान समूह को परिचालित कर उससे स्वतंत्र चर को क्रियाशील होने दिया जाता है फिर उससे उत्पन्न प्रभावों का आश्रित चर के रूप में मापन कर लिया जाता है।

इस अभिकल्प द्वारा शोध उस दशा में सफल होता है जब दोनों सादृश्य समूहों में उच्च सह सम्बन्ध (High Correlation) रहे ।

9.6 सादृश्य पूर्व पश्चात् नियंत्रित समूह अभिकल्प (Matched Before and after control group Design)

R	B_{Pre}	A	B_{Post}	EP
	B_{Pre}	(~A)	B_{Post}	CP

M R	B_{Pre}	A	B_{Post}	EP
	B_{Pre}	(~A)	B_{Post}	CP

इसमें पर्याप्त आंतरिक वैधता के साथ-साथ प्रचुर बाह्य वैधता का गुण पाया जाता है। इसका कारण इस अभिकल्प की पूर्व परीक्षण पश्चात् परीक्षण (Pretest - post test) की विशेषता है। इसमें पूर्व परीक्षण के लिए पात्रों का प्रयोग समूह में यादृच्छिक नियोजन किया जाता है जैसे कि उपरोक्त चित्रांकन में रेखा के ऊपर दर्शाया गया है। नियंत्रित समूह में भी यादृच्छिक नियोजन किया जाता है जैसे कि उपरोक्त चित्रांकन में रेखा के नीचे दर्शाया गया है और B आश्रित चर का मापन कर लिया जाता है । B पर दोनों समूहों की सादृश्यता की जाँच की जाती है बी का प्रायोगिक परिचालन किया जाता है। इसके बाद दोनों

समूहों का बी चर के लिए मापन कर लिया जाता है। अन्त में दोनों समूहों के अन्तर के लिये सार्थकता की स्वास्थ्यकीय जांच टी-परीक्षण या एफ परीक्षण कर लिया जाता है।

प्रायोगिक शोध के लिए कुछ मूल्यवान अथवा समृद्ध शोध अभिकल्प निदर्श

9.7 अनुरूपित पूर्व-पश्चात् यादृच्छिक स्वरूप अभिकल्प (Simulated Before After form Randomised Design)

इससे पहले वाले शोध अभिकल्प निदर्श -5 में पूर्व परीक्षण पश्चात् परीक्षण की जटिलता को दूर करने के लिए कॅम्पबेल तथा स्टैनले ने एक आसान सरल अभिकल्प की रचना की जो कि निम्नलिखित प्रकार से विवेचित है।

इसमें एक ही समूह को पूर्व परीक्षण द्वारा सुग्राही या संवेदी (Sensitive)बना देने का दोष नहीं होता और शोध अभिकल्प बोझिल भी नहीं होता।

R	A	B_{Post}
	B_{Pre}	

इस अभिकल्प में एक यही महत्वपूर्ण विशेषता है कि यह पूर्व पश्चात् अभिकल्प है जिसमें एक ही समूह की पूर्व एवं पश्चात् जांच न कर प्रयोग समूह के अनुरूपित एक दूसरे समूह (Simulated group) की ही पूर्व जांच कर ली जाती है। इसमें B_{Post} तथा B_{Pre} के मध्य की रेखा से तात्पर्य है कि ये दोनों दो समूह हैं एक प्रयोग समूह है और एक अनुरूपित समूह है। समूह B_{Pre} तथा समूह B_{Post} की तुलना की गयी है। इस प्रकार रेखा के नीचे B_{Pre} एक तुलनात्मक समूह का कार्य अभिकल्प में समूहों का यादृच्छिक नियोजन (Random assignment) शोध अभिकल्प निदर्श-5 की जटिलता को दूर करके, इसे एक वैज्ञानिक अभिकल्प की श्रेणी में खड़ा कर देता है। जिस परिस्थिति में किसी पूर्व परीक्षण की गुंजाइश नहीं होती अथवा ऐसा करना दोषपूर्ण समझा जाता है इस दशा में भी यह शोध अभिकल्प एक सरल एवं वैज्ञानिक अभिकल्प बन जाता है। उदाहरण स्वरूप ऐसे शोध जहां गरीबी में उन्मूलन सम्बन्धी कार्यक्रम में किसी नई विधि के प्रभाव का अध्ययन करना हो अथवा बाल अपराध के सुधार कार्य क्रम में किसी नवीन विधि के प्रयोग का अध्ययन करना हो तो पात्रों पर केवल एक ही बार जांच करनी है, क्योंकि ऐसे किसी पूर्व परीक्षण का प्रभाव न रह जाये, तो पूर्व जांच (Pre) एक अनुरूपित समूह (Simulated Group) पर ही की जाती है । यह अनुरूपित समूह रेखा के नीचे दर्शाए गए परिचालित प्रयोग समूह के सर्वथा समान रखने की चेष्टा की जाती है और यह कार्य यादृच्छिक नियोजन (Random Assignment) द्वारा किया जाता है । इसलिए इसका वैज्ञानिक मूल्य कम नहीं होता । अन्त में B_{Post} की जांच B_{Pre} की तुलना में कर ली जाती है।

इस अभिकल्प में यदि पात्रों के दो समूहों का एक ही समष्टि से यादृच्छिक चयन नहीं किया जाये अथवा दो समूहों में पात्रों को यादृच्छिक ढंग से नियोजित न किया जाये तो यह शोध अभिकल्प अवैधानिक एवं दोषपूर्ण बन जायेगा तथा इसमें दोनों आन्तरिक एवं बाह्य वैधता मूल्य का ह्रास हो जायेगा।

9.8 तीन समूह स्वरूप प्रयोग समूह एवं नियन्त्रित समूह अभिकल्प (Three group form - Experimental and control group design)

इस अभिकल्प का प्रस्तुतीकरण सर्वप्रथम **आर सोलोमन (R. Solomon, 1949)** ने किया । उनके अनुसार प्रत्येक दृष्टि से इसमें उच्च वैज्ञानिक मूल्य होता है।

R	B_{Pre}	A	B_{Post}	(EP)
	B_{Pre}	(~A)	B_{Post}	(CP-I)
	B_{Pre}			
		A	B_{Post}	(CP-II)

इसमें सर्व प्रथम यादृच्छिक विधि से तीन समूहों का चयन किया जाता है। इसमें यादृच्छिक विधि से एक समूह को प्रयोग समूह (EP), दूसरे समूह को प्रथम नियन्त्रित समूह (CP-I) तथा तीसरे समूह को द्वितीय नियंत्रित समूह (CP-II) के रूप में नियोजित किया जाता है। नियन्त्रित समूहों में नियंत्रित समूह I (CP-I) में स्वतंत्र चर का परिचालन नहीं होता (~A) पर CP-II में इसका परिचालन किया जाता है।

इस प्रकार CP-II ही वास्तविक नियन्त्रित समूह होता है। इससे अन्त: क्रिया का प्रभाव यदि कुछ है तो इसका निराकरण हो जाता है। अन्त: क्रिया का प्रभाव पूर्व परीक्षण (Pre test) के कारण पात्रों में सुग्राहिता या संवेदनीकरण (Sensitization) की वृद्धि आ जाती है। यदि CP-II में B_{Post} का मध्यमान (Mean) CP-I स्थित B_{post} के मध्यमान से सार्थक रूप से अधिक है तो यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि पूर्व परीक्षण से पात्रों के समूह की सुग्राहिता या संवेदनशीलता नहीं बढ़ी है, अर्थात ए (प्रयोग चर) पर अन्त:क्रिया का प्रभाव या सुग्राहिता का प्रभाव नहीं पड़ा है।

मान लिया जाय कि EP प्रयोग समूह का मध्यमान CP-I के मध्यमान से सार्थक रूप से अधिक है तो यह अंतर प्रयोग चर A के कारणस्वरूप न होकर अन्य विजातीय चरों के कारण भी हो सकता है। इसीलिए इसके समाधान हेतु प्रस्तुत अभिकल्प में एक अतिरिक्त नियंत्रित समूह CP-II का विधान किया गया है।

9.9 चार समूह स्वरूप प्रयोग समूह एवं नियन्त्रित समूह अभिकल्प (Four Group form Experimental and Control Group Design)

इस शोध अभिकल्प का भी प्रस्तुतीकरण **आर सोलोमन (R. Soloman, 1949)** द्वारा किया गया है। जिसे **डी. कैम्पबेल (D. Campbell, 1957)** आदि ने समाज विज्ञानों में शोध के लिए मूल्यवान एवं उत्तम माना है। अन्य प्रकार से यह शोध अभिकल्प शोध अभिकल्प निदर्श -7 की तरह ही होता है। केवल इसमें एक अधिक नियन्त्रित समूह (CP-III) जोड़ दिया जाता है और इस प्रकार शंका के

समाधानार्थ इसका वैज्ञानिक मूल्य बढ़ जाता है। इसमें यदि CP-II के स्थान पर प्रयोग समूह - ॥ (EP-II) कर दिया जाय तो इससे नियंत्रण का गुण तथा वैज्ञानिक मूल्य अन्य अभिकल्पों की अपेक्षा श्रेष्ठतम हो जाता है।

R	B_{Pre}	A	B_{Post}	EP	(प्रथम रेखा)	
	B_{Pre}	(~A)	B_{Post}	CP-I	(द्वितीय रेखा)	EP-II
		A	B_{Post}	(CP-II)	(तृतीय रेखा)	
		(~A)	B_{Post}	(CP-III)	(चतुर्थ रेखा)	

इस अभिकल्प की निम्न विशेषताएं इसे सर्वाधिक मूल्यवान एवं उत्तम अभिकल्प की पंक्ति में खड़ा कर देती हैं।

(क) जहां तक तुलनात्मक अध्ययन का सम्बन्ध है पहली दोनों रेखाओं और फिर दूसरी रेखाओं द्वारा यह कार्य संतोषजनक ढंग से सम्पन्न हो जाता है।

(ख) यादृच्छिक ढंग से सभी समूहों का नियोजन इन्हें सांख्यिकीय स्तर पर निश्चित रूप से समकक्ष एवं समतुल्य बना देता है।

(ग) प्रथम तीन रेखाओं की रचना यदि पूर्व परीक्षण द्वारा पात्रों में सुग्राहिता का प्रभाव का कार्य किया है तो इससे संभाव्य अन्त:क्रिया के प्रभाव का नियन्त्रण कर देता है।

(घ) प्रथम दोनों रेखाओं की रचना पूर्व इतिहास प्रौढ़ता का प्रभाव का नियन्त्रण करता है।

(ङ) चतुर्थ रेखा की रचना द्वारा B_{Pre} तथा B_{Post} के बीच उत्पन्न किसी प्रकार के अस्थाई सम सामयिक प्रभावों का भी पर्याप्त नियन्त्रण हो जाता है।

(च) एक वैज्ञानिक अभिकल्प के रूप में इसमें प्रचुर मात्रा में क्षमता (Strength) होती है

(छ) यदि प्रयोग समूह (EP) का B_{post} नियन्त्रित समूह - । (CP-I) के अपने मान से सार्थक रूप से अधिक है तथा नियन्त्रित समूह- ॥ (CP-II) का उक्त मान नियन्त्रित समूह- ॥। (CP-III) से सार्थक रूप में अधिक है। तो यह प्रयोग परिकल्पनाओं में उच्च स्तर की वैधता इंगित करता है।

किन्तु इसमें वस्तुत: दो प्रयोगों के अभिकल्प मिले होने के कारण जटिल होने की सम्भावना बन जाती है परिणामस्वरूप कुछ त्रुटियां भी प्रस्तुत हो सकती हैं।

(क) **व्यावहारिकता की कठिनाई :** एक ही साथ इसमें दो प्रयोगों को चलाना पड़ता है जो शोधकर्ता के लिए एक कठिन कार्य हो जाता है। इसके लिए समान गुण विशेषता वाले बहुत से पात्रों का चयन करना भी प्राय: कठिन कार्य हो जाता है।

(ख) **सांख्यिकीय कठिनाई :** इसमें वास्तविक रूप से चार समूह हो जाते हैं परन्तु प्राप्तांकों के चार पूर्ण (सेट) नहीं बनते हैं। अत: समूहों में संतुलन का अभाव रह जाता है । टी- परीक्षण में कठिनाई होती है और कोई समग्र सांख्यकीय जांच सम्भव नहीं होती फिर भी इस त्रुटि को दूर करने के लिए स्वयं **सोलोमन** ने B_{Post} के चार सेटों से 2×2 तात्विक प्रसरण विश्लेषण जांच (2 x 2 Factorial Analysis of variance) को ही उपयुक्त माना है।

(ग) **सामान्य उपयोग के लिए अनुपयुक्त** — अपनी जटिलता के कारण ऐसे अभिकल्प का सामान्य स्तर पर दैनिक उपयोग सम्भव नहीं होता। विशेष परिस्थितियों में ही इसका उपयोग निपुण शोधकर्ता द्वारा किया जाता है।

9.10 2×2 तात्विक अभिकल्प निदर्श (2x2 Factorical Paradigm)

जब किसी शोध में दो या दो से अधिक स्वतंत्र चरों को एक दूसरे के निकट साथ-साथ एवं पास-पास रखकर एक ही साथ परिचालित कर आश्रित चरों के रूप में उनके प्रभावों का अध्ययन करना होता है तो इस हेतु तात्विक प्रसरण विश्लेषण का शोध अभिकल्प उपयुक्त होता है। एफ. **जे. गोमन** के अनुसार इसमें दो या दो से अधिक स्वतंत्र चरों के लिए निर्दिष्ट मूल्यों का अध्ययन सभी संभव संयोजनों में किया जाता है। इस प्रकार प्राप्त आश्रित चरों से अग्रलिखित सूचनाएं उपलब्ध हो जाती हैं:

(अ) प्रत्येक स्वतंत्र चर का आश्रित चर पर क्या प्रभाव पड़ता है इसकी सूचना उपलब्ध हो जाती है तथा दूसरा

(ब) दो या दो से अधिक स्वतंत्र चरों के बीच में वो अन्तर्क्रिया होती है उसका विवरण या सूचना उपलब्ध हो जाती है।

दो स्वतंत्र चरों वाले ऐसे अभिकल्प में स्वतंत्र चर को सक्रिय चर (Active variable) के रूप में परिचालित किया जाता है और दूसरे को नियोजित चर (Assigned variable) के रूप में रखा जाता है।

इन समृद्ध शोध अभिकल्पों के अतिरिक्त कुछ और प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प बहुत ही महत्वपूर्ण तथा शोध में प्रयोग की दशाओं के लिए मूल्यवान एवं उपयोगी हैं। वैसे विस्तृत जानकारी के लिए प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प के सभी प्रकारों का उल्लेख एवं वर्णन **एन. एल. रोज द्वारा सम्पादित पुस्तक ''हैण्डबुक ऑफ रिसर्च ऑन टीचिंग'' में कैम्पबेल तथा स्टेनले (Campbell and Stanley 1963)** द्वारा लिखित अध्याय में मिलता है। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण एवं प्रासंगिक शोध अभिकल्पों की चर्चा हम निम्नलिखित प्रकार से उदाहरण एवं चित्रों के माध्यम से करेंगे-

9.11 केवल यादृच्छिक समेलित (सादृश्य) पश्चात् परीक्षण नियन्त्रित समूह शोध अभिकल्प (Randomised matched post-test only control group Research Design)

इस प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प में विजातीय चरों (extraneous variables) को नियंत्रित करने के लिए यादृच्छीकरण (Randomisation) तथा स्थिरता (Constancy) दोनों प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है। इस अभिकल्प का संकेतन (Notation) निम्नलिखित प्रकार से किया जाता है।

RM	X	01
RM		02

R = Randomization = यादृच्छीकरण अथवा यादृच्छिक चयन अथवा यादृच्छिक नियोजन

M = Matched = समेकित (सादृश्य)

X = वह संकेत विवेचन या प्रयोगात्मक चर जिसमें परिचालन किया गया है (जब कई विवेचनों की तुलना की जाती है तो उसे X1 X2 X3....., Xn से दिखलाया जायेगा।)

O = वह संकेत प्रेक्षण (observation) या मापन या परीक्षण जिसका कि प्रयोग किया गया है इंगित करता है। (जहां 0 की संख्या एक से अधिक होती है। वहां 01, 02, 03 ....On से दिखाया जायेगा जैसे इस अभिकल्प O1, O2 का प्रयोग आवश्यकतानुसार मापन एवं परीक्षण किया गया है।

इस अभिकल्प में दो समूह होते हैं और दोनों समूहों का प्रारम्भिक चयन समष्टि (जनसंख्या) से यादृच्छिक विधि से किया जाता है। फिर इन पात्रों को उस विजातीय चर पर समेलित (Matched) कर दिया जाता है जो आश्रित चर को प्रभावित कर सकते हैं। इसके बाद पात्रों का दो समूहों में यादृच्छिक नियोजन अथवा आवंटन या यादृच्छिक विभाजन कर दिया जाता है। फिर दोनों समूहों के निष्पादन (Performance) की माप आश्रित चर पर की जाती है और आश्रित चर के प्राप्तांकों के माध्यमों के अन्तर की सार्थकता टी-परीक्षण या मान विटनी परीक्षण द्वारा करके एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुंचा जाता है।

उदाहरणार्थ — मान लिया जाय कि प्रयोगकर्ता एक विशेष उपकल्पना की जांच के लिए प्रयोग करना चाहता है। उपकल्पना (Hypothesis) है आपस में सम्बन्धित शब्दों जैसे- विवाह, पति-पत्नी, सन्तान, परिवार, संस्कार आदि) की धारणा आपस में असम्बन्धित शब्दों (आसमान, साइकिल, मेज, वृक्ष विद्यालय आदि) के धारण से श्रेष्ठ होती है। मान लिया जाय कि प्रयोगकर्ता यादृच्छिक ढंग से 100 छात्रों में से 10 छात्र का चयन करता है। प्रयोगकर्ता यह सोचता है कि इस प्रयोग में पात्रों की बुद्धि एक प्रमुख विजातीय चर हो सकती है जो उनके धारण प्राप्तांकों (Retention scores) को प्रभावित कर सकता है अत: वह समेलन (सदृश्य) प्रविधि के आधार पर बुद्धि जैसे विजातीय चर को नियंन्त्रित करने का निश्चय करता है। अत: वह 10 पात्रों पर बुद्धि परीक्षण (I.Q.) क्रियान्वयन करके उनकी बुद्धिलब्धि ज्ञात कर लेता है जिसे निम्नलिखित तालिका 01 में दिखलाया गया है-

9.11.1 तालिका 01 — 10 पात्रों की बुद्धि लब्धि

पात्र संख्या	बुद्धि लब्धि
1	130
2	130
3	120
4	120
5	110
6	110
7	100
8	100
9	100
10	100

10 पात्रों के दो सादृश्य समूह में विभाजन की दृष्टि से तालिका 01 में पात्रों को बुद्धिलब्धि के रूप में श्रेणी क्रम (Rank order) करके प्रदर्शित किया गया है। इसके बाद 10 पात्रों को प्रयोगकर्ता 5 युग्म के रूप में निर्माण करेगा। पात्र संख्या 1 और 2 मिलकर एक युग्म बनायेंगें इसी प्रकार 3 और 4 मिलकर दूसरा युग्म, 5 और 6 मिलकर तीसरा युग्म, 7 और 8 मिलकर चौथा युग्म तथा अन्तिम पात्रों 9 और 10 मिलकर पांचवां युग्म बनायेंगे। इसके पश्चात् प्रत्येक बी समूह में यादृच्छिक विधि से नियोजित या आवंटित किया जायेगा।

प्रयोगकर्ता सिक्का उछालकर (Coin tossing) यादृच्छिक आवंटन या नियोजन कर सकता है। जैसे वह निर्णय कर सकता है कि सिक्का उछालने पर यदि चित (Head) आयेगा तो सम संख्यां वाले पात्र अर्थात पात्र संख्या 2, 4, 6, 8 और 10 समूह A में तथा पट आने पर (Tail) विषम संख्या वाले पात्र 1, 3, 5, 7, 9, समूह B में रहेंगे। इस तरह से प्रयोगकर्ता को पांच बार सिक्का उछालना होगा और तब जाकर समेलित पात्रों का दो समूह में यादृच्छिक नियोजन हो पायेगा।

जब समूह A और समूह B तैयार हो जायेगा तो वह पुन: सिक्का उछाल कर यह निश्चित कर लेगा कि इन दोनों समूहों में कौन प्रयोगात्मक समूह होगा तथा कौन नियंत्रित समूह होगा। मान लिया जाय कि समूह A नियन्त्रित समूह तथा B प्रयोगात्मक समूह के रूप में उभर कर आता है। इन सारी प्रक्रियाओं के बाद बनने वाले दोनों समूहों की रूपरेखा तालिका 2 के अनुसार होगी।

9.11.2 तालिका - 02

बुद्धिलब्धि पर समेलित पात्रों का यादृच्छिक आवंटन
(Random Assignment of Matched subjects on I.Q.)

समूह A पात्र संख्या	(सम्बन्धित शब्द समूह) बुद्धिलब्धि	समूह B पात्र संख्या	(असम्बिन्धित शब्द समूह) बुद्धिलब्धि
2	130	1	130
4	120	3	120
6	110	5	110
8	100	7	100
10	100	9	100
योग	560	योग	560

दोनों समूह तैयार हो जाने के बाद समूह 30 सम्बन्धित शब्दों की एक सूची एक विशिष्ट समय जैसे 10 मिनट तक याद करेगा और समूह B 30 असम्बन्धित शब्दों की एक सूची 10 मिनट तक याद करेगा। 2 दिन या 5 दिन बीतने के पश्चात् (जो समय प्रयोगकर्ता द्वारा निर्धारित किया गया है।) प्रयोगकर्ता सभी पात्रों क्रमश: A और B समूहों को याद किये गये सूची के शब्दों को याद (Recall) करने को कहेगा। इस तरह से प्रयोगकर्ता को प्राप्तांकों (Scores) का दो सेट प्राप्त हो जायेगा। तालिका 03 में ऐसे प्राप्तांकों (कल्पित आंकड़े) को प्रदर्शित किया गया है।

9.11.3 तालिका 03

समेलित दो समूह अभिकल्प में पात्रों द्वारा प्राप्त मूल अंक

(Raw scores for subjects in matched two group Design)

समूह A पात्र संख्या	(सम्बन्धित शब्द समूह) धारणा प्राप्तांक	समूह B पात्र संख्या	(असम्बिन्धित शब्द समूह) धारणा प्राप्तांक
2	14	1	10
4	12	3	8
6	10	5	9
8	11	7	5
10	10	9	6

तालिका 03 के आंकड़ों से समूह Aतथा समूह B में अन्तर की सार्थकता की जांच t परीक्षण से करके अथवा मानविटनी U परीक्षण (Mann-Whitney U. test) से करके प्रयोगकर्ता एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुँच सकेगा। यदि समूह A के उच्च माध्य से समूह Bके निम्न माध्य में सार्थक रूप से भिन्नता पायी जाती है तो प्रयोगकर्ता द्वारा बनायी गयी उपकल्पना को पूर्ण सर्मथन प्राप्त होगा।

प्रायोगिक शोध के लिए कुछ मूल्यवान अथवा समृद्ध शोध अभिकल्प निदर्श

9.12 पूर्व परीक्षण पश्चात् परीक्षण नियन्त्रित समूह शोध अभिकल्प (Pre-test Post-test Control Group Research Design)

यह शोध अभिकल्प प्रयोगात्मक शोध में काफी लोकप्रिय है। इस अभिकल्प में भी दो समूह होते हैं और दोनों समूह की आश्रित चर पर जांच विवेचन (Treatment) अर्थात × देने के पूर्व कर लिया जाता है और पुन: उसमें से एक समूह को × दिया जाता है तथा दूसरे समूह को उनसे वंचित रखा जाता है अन्त में दोनों समूह की माप आश्रित चर पर करके एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुँच जाता है इस अभिकल्प का संकेतन निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता है।

R O1	X	O2
R	O3	O4

उपरोक्त संकेतन से स्पष्ट है कि पात्रों का चयन प्रयोगकर्ता यादृच्छिक विधि से करता है तथा पुन: उसका दो समूहों में यादृच्छिक आवंटन या नियोजन करता है। इस अभिकल्प में एक नियन्त्रित समूह का उपयोग भी किया जाता है तथा एक प्रयोगात्मक अभिकल्प का भी । दोनों का चयन यादृच्छिक चयन विधि से ही किया जात है। दोनों समूहों का पूर्व परीक्षण कर लिया जाता है। प्रयोगात्मक समूह को परिचालन × किया जा।ा है नियन्त्रित समूह में परिचालन नहीं किया जाता है। इसके बाद दोनों समूहों का परीक्षण किया जाता है। इस परीक्षण के पश्चात् प्रयोगात्मक समूह और नियन्त्रित समूह में जो अन्तर आता है उसे हम × का प्रभाव मानते हैं जिसको प्रयोगकर्ता A परीक्षण द्वारा सांख्यकीय विश्लेषण के आधार पर प्राप्त करता है।

9.12.1 लाभ — चूँकि इस अभिकल्प में एक नियंत्रित समूह का भी उपयोग होता है अत: आन्तरिक वैधता (Internal valadity) को आघात पहुंचाने वाले कारक जैसे परिपक्वता (Maturation), समकालीन इतिहास (Contemporary history), चयन (Selection), सांख्यकीय परिगमन (Statistical regression) आदि नियन्त्रित हो जाते हैं। पात्रों का दो समूह में यादृच्छिक नियोजन (Random assignment) हो जाने के कारण चयन पूर्वाग्रह (Selection bias) तथा प्रयोगात्मक नश्वरता (Experimental mortality) जैसे प्रतिकूल प्रभाव डालने वाले कारक भी इसमें नियन्त्रित रहते हैं। पात्र को पूर्व परीक्षण देने में उसमें विशेष अनुभव उत्पन्न हो जाते हैं जिसका विशेष लाभ पश्चात् परीक्षण में उन्हें हो जाता है। चूँकि इस शोध अभिकल्प में लाभ प्राप्तांक (gain score) के माध्यों के अन्तर का सांख्यकीय विश्लेषण पर अन्तिम निर्णय लिया है। (पश्चात् परीक्षण से प्राप्त लाभ प्राप्तांक में से पूर्व पश्चात् का प्राप्तांक घटाकर प्राप्त होने वाले प्राप्तांक को ही माध्य का अन्तर कहा जाता है।) अत: पश्चात् परीक्षण में पूर्व परीक्षण के अनुभव से उत्पन्न विशेष लाभ इसमें स्वमेव शामिल हो जाते हैं ।

त्रुटियाँ- इसलिए इस अभिकल्प में परीक्षण प्रभाव जैसे कारक जिनका प्रयोग की आन्तरिक वैधता पर भी प्रभाव पड़ता है नियन्त्रित नहीं हो पाते हैं। ऐसे प्रभावों को अलग कर सांख्यिकीय विश्लेषण करने का इस अभिकल्प में कोई प्रावधान नहीं है, यह इस शोध अभिकल्प की एक मुख्य त्रुटि दृष्टिगोचर होती है।

उदाहरणार्थ — मान लिया जाय कि प्रयोगकर्ता राजकीय कर्मचरियों (समूह ग) की कार्यालय लेखा कार्यक्षमता पर प्रशिक्षण के प्रभाव का अध्ययन इस शोध अभिकल्प द्वारा करना चाहता है मान लिया जाय शिक्षा विभाग के 100 कर्मचारियों में से 10 कर्मचारियों का चयन यादृच्छिक विधि से करता है इसके पश्चात् इन 10 कर्मचारियों को वह सिक्का उछाल करके दो समूहों में यादृच्छिक विधि से आवंटित या नियोजित कर देगा। पुन: सिक्का उछालकर अर्थात् यादृच्छिक विधि से वह यह निर्णय कर लेगा कि इन दोनों समूहों में कौन सा प्रयोगात्मक समूह होगा और कौन सा नियत्रित समूह होगा। इन दोनों समूहों के कार्यालय कार्यक्षमता की जाँच अथवा परीक्षण पहले ही कर ली जायेगी जो अनुसूची, प्रश्नावली, साक्षात्कार , अवलोकन आदि विधियों द्वारा की जा सकती है। इससे पूर्व परीक्षण का प्राप्तांक प्राप्त कर लिया जायेगा । इसे 01 तथा 03 कहा जायेगा।

तालिका नं0 4 के माध्यम से मान लिया जाय कि पूर्व परीक्षण प्राप्तांक निम्नवत है (ये आंकड़े कल्पित हैं)

9.12.2 तालिका 04

समूह A तथा समूह B का पूर्व परीक्षण प्राप्तांक

समूह A	(सम्बन्धित शब्द समूह)	समूह B	(असम्बिन्धित शब्द समूह)
पात्रसंख्या	प्राप्तांक	पात्र संख्या	प्राप्तांक
1	60	6	64
2	62	7	62
3	70	8	66
4	74	9	72
5	62	10	60

तालिका 04 में A प्रयोगात्मक समूह है तथा B नियंत्रित समूह है। दोनों का पूर्व परीक्षण प्राप्तांक इसमें प्रदर्शित किया है। अब मान लिया जाय कि समूह A को दो सप्ताह का कार्यालय लेखा कार्यक्षमता पर विशिष्ट प्रशिक्षण सचिवालय प्रशिक्षण केन्द्र में दिया जाता है और समूह B (नियन्त्रित समूह) के कर्मचारियों को इस प्रकार का कोई अलग से प्रशिक्षण नहीं दिया जाता है। समूह A के दो सप्ताह विशिष्ट प्रशिक्षण के समाप्त होने पर इन दोनों समूहों समूह A (प्रयोगात्मक समूह) तथा समूह B (नियन्त्रित समूह) की पुनः कार्यालय लेखा कार्य क्षमता का परीक्षण लिया जाता है। इस परीक्षण को पश्चात् परीक्षण कहा जाता है (अर्थात् O2 एवं O4) । इस परीक्षण के पश्चात् दोनों समूहों के प्राप्तांकों को तालिका नं0 5 में निम्नवत प्रदर्शित किया जा सकता है। (आंकड़े कल्पित हैं)

प्रायोगिक शोध के लिए कुछ मूल्यवान अथवा समृद्ध शोध अभिकल्प निदर्श

9.12.3 तालिका 05

समूह A तथा समूह B का पश्चात् परीक्षण प्राप्तांक

समूह A	(प्रयोगात्मक समूह)	समूह B	(नियंत्रित समूह)
पात्रसंख्या	प्राप्तांक	पात्र संख्या	प्राप्तांक
1	75	6	65
2	77	7	62
3	80	8	66
4	84	9	73
5	75	10	61

पश्चात् परीक्षण प्राप्तांक प्राप्त कर लेने के पश्चात् प्रयोगकर्ता × का प्रभाव (प्रशिक्षण का प्रभाव) तथा उससे मिलने वाले लाभ प्राप्तांक को ज्ञात करने के लिए पश्चात् परीक्षण प्राप्तांक में से पूर्व प्रशिक्षण प्राप्तांक को घटा देता है। इसके बाद प्रयोगकर्ता प्रत्येक पात्र का लाभ प्राप्तांक ज्ञात करके उसका t परीक्षण द्वारा सांख्यिकीय विश्लेषण करेगा और एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचेगा।

तालिका नं0 06 में प्रत्येक पात्र का लाभ प्राप्तांक (Gain score) निम्नवत प्रदर्शित किया गया है।

9.12.4 तालिका नं0 6 समूह A तथा समसूह B का लाभ प्राप्तांक

समूह 'A'				समूह 'B'			
पात्र संख्या	पूर्व परीक्षण प्राप्तांक	पश्चात् परीक्षण प्राप्तांक	लाभ प्राप्तांक	पात्र संख्या	पूर्व परीक्षण/ प्राप्तांक	पश्चात् परीक्षण/ प्राप्तांक	लाभ प्राप्तांक
1	60	75	15	1	64	65	1
2	62	77	15	2	62	62	0
3	70	80	10	3	66	66	0
4	74	84	10	4	72	73	1
5	62	75	13	5	60	61	1

9.13 यादृच्छीकृत एक मार्गीय एनोवा शोध अभिकल्प (Randomised one way ANOVA Research Design)

इस शोध अभिकल्प में तीन या तीन से अधिक समूह के पात्र संचालित किये जाते हैं परन्तु स्वतंत्र चर एक ही होता है जिसके मूल्य अलग अलग होते हैं । इस शोध अभिकल्प का संकेतन निम्नवत किया जाता है।

R X1 O1

R X2 O2

R X3 O3

उपरोक्त संकेतन यह स्पष्ट करता है कि इस शोध अभिकल्प में तीन समूह हैं जिनका समष्टि या जनसंख्या में से यादृच्छिक चयन किया जाता है। इसमें तीन से अधिक का समूह हो सकती है। तीनों समूहों का विवेचन (treatment) अर्थात ×अलग-अलग दिया जाता है अर्थात इस अध्ययन में स्वतंत्र-चर के तीन मूल्य होंगे और प्रत्येक मूल्य के अन्तर्गत एक-एक समूह कार्यरत रहेगा। पात्रों का इन तीनों समूहों में आवंटन यादृच्छिक विधि से किया जायेगा। इसके बाद तीनों समूहों की माप आश्रित चर पर की जायेगी (O1, O2, तथा O3) इसके पश्चात् इन तीनों समूहों का आश्रित चर पर के प्राप्तांकों (Scores) का माध्य (Mean) ज्ञात कर उसकी सार्थकता की जाँच F परीक्षण द्वारा की जायेगी।

उदाहरण के रूप में — मान लिया जाय कि प्रयोगकर्ता , तीन विधियों से समाजशास्त्र पढ़ाने जाने का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण पर क्या प्रभाव पड़ता है, का अध्ययन करना चाहता है। तीन स्वतंत्र चर हैं जिनका परिचालन तीन प्रकार से करेंगे। प्रथम परिचालन भाषण विधि के द्वारा, दूसरा परिचर्चा विधि द्वारा और तीसरा प्रदर्शन विधि द्वारा। इस अध्ययन के लिए प्रयोगकर्ता 100 छात्रों में तीस छात्रों का यादृच्छिक विधि से चयन करता है जिसे पुनः वह तीन समूहों में बराबर-बराबर (अर्थात 10- 10) यादृच्छिक विधि से आवंटित करता है। इस प्रकार से तीन समूह अर्थात समूह A, समूह B और समूह C तैयार हो जाते हैं। प्रत्येक समूह में पात्रों की संख्या दस-दस होगी। प्रयोगकर्ता पुनः यादृच्छिक विधि से जो कि सिक्का उछालकर भी किया जा सकता है यह निश्चित कर लेगा कि किस समूह को किस विधि द्वारा समाजशास्त्र पढ़ाया जायेगा। प्रत्येक समूह को 10 दिनों तक उन विधियों द्वारा समाजशास्त्र पढ़ाकर 12वें दिन तीनों समूहों के समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण की माप की जायेगी। इस तरह प्रयोगकर्ता को प्राप्तांकों के तीन सेट मिल जाएंगे। तालिका नं. 7 में उपरोक्त विधि अपनाने के पश्चात् प्राप्तांकों का जो सेट प्राप्त होता है, को प्रदर्शित किया गया है।

9.13.1 तालिका - 07

समूह A, B, तथा C द्वारा विशिष्ट प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण की माप पर मिले प्राप्तांक (आंकड़े कल्पित हैं) —

भाषण विधि समूह A		परिचर्चा विधि समूह B		प्रदर्शन विधि समूह C	
पात्र संख्या	प्राप्तांक	पात्र संख्या	प्राप्तांक	पात्र संख्या	प्राप्तांक
1	75	11	40	21	60
2	63	12	37	22	54
3	71	13	10	23	65
4	28	14	24	24	40
5	60	15	34	25	37
6	66	16	22	26	64
7	67	17	28	27	25
8	85	18	17	28	22
9	80	19	20	29	16
10	35	20	26	30	25

प्रायोगिक शोध के लिए कुछ मूल्यवान अथवा समृद्ध शोध अभिकल्प निदर्श

अर्थात् तीन विधियों द्वारा प्रयोगकर्ता को उपरोक्त प्राप्तांक प्राप्त हुए जिसमें भाषण विधि द्वारा अधिकतम, प्रदर्शन विधि द्वारा प्रशिक्षण से प्राप्तांक दूसरे क्रम में तथा सबसे न्यूनतम प्राप्तांक परिचर्चा विधि द्वारा प्रशिक्षण के बाद प्राप्त हुआ। इन आँकड़ों से समूह F परीक्षण ज्ञात करके यह आसानी से ज्ञात किया जा सकता है कि समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण पर इन तीन विधियों का कितना प्रभाव पड़ा, जो भी प्रभाव पड़ा उनमें कितनी सार्थकता है।

9.14 यादृच्छीकृत अवरुद्ध एक मार्गीय एनोवा अभिकल्प (Randomized blocked one way ANOVA design)

यह अभिकल्प भी यादृच्छीकृत एक मार्गीय एनोवा अभिकल्प के समान ही बहु समूह अभिकल्प है । अन्तर की दृष्टि से इस अभिकल्प में विजातीय चरों का नियन्त्रण यादृच्छीकरण के साथ-साथ स्थिरता का प्रयोग किया जाता है। इस अभिकल्प की मूल विशेषता यह है कि इसमें पात्रों की जनसंख्या या समष्टि में से यादृच्छिक विधि से चयन करके उसे उस विजातीय चर पर समान बना लिया जाता है जो विजातीय चर को सीधे प्रभावित कर सकता है। इस प्रक्रिया को (Blocking) अर्थात अवरुद्ध करना कहते हैं। इसके पश्चात् पात्रों को विभिन्न प्रयोगात्मक समूहों में यादृच्छिक विधि से आवंटित या नियोजित कर दिया जाता है । प्रत्येक समूह को विवेचन × या स्वतंत्र चरों द्वारा परिचालित किया जाता है । उसे नाद × का मापन O1. O2. O3 आश्रित चर पर कर लिया जाता है इस प्रकार का संकेतन निम्नवत हो सकता है—

RB	X1	O1
RB	X2	O2
RB	X3	O3

उपरोक्त अभिकल्प में तीन ही दिखाये गये हैं वैसे इस अभिकल्प में तीन से अधिक भी समूह हो सकते हैं। स्वतंत्र चर × के परिचालन के पश्चात् O1, O2, O3 के मापन (आश्रित चर पर पड़ने वाले प्रभाव) द्वारा ज्ञात कर लिया जाता है कि इनके बीच सार्थक अन्तर है या नहीं और उसी के अनुसार प्रयोगकर्ता किसी निश्चित निष्कर्ष पर पहुँच सकता है।

उदाहरण के रूप में — मान लिया जाय कि जैसे पिछले अभिकल्प में उदाहरणार्थ बतलाया गया है कि तीन अलग-अलग विधियों से समाजशास्त्र पढ़ाए जाने का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण पर क्या प्रभाव पड़ता है। इस प्रघटना का प्रयोगकर्ता अध्ययन करना चाहता है । इस अध्ययन में स्वतंत्र चर के तीन मूल्य (Values) बताये गये हैं जो तीन विधियों द्वारा परिचालित किया जाता है — (1) भाषण विधि (Lecture method) । (2) परिचर्चा विधि (Discussion method) (3) प्रदर्शन विधि (demonstration method) समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण इस अध्ययन में आश्रित चर है प्रयोगकर्ता को इस अध्ययन में पात्रों के सामाजिक-आर्थिक स्तर के रूप में विजातीय चर का आभास होता है जो आश्रित चर को प्रकारान्तर से प्रभावित कर सकता है अत: वह पात्रों के सामाजिक-आर्थिक स्तर को देखते हुए तीन सामाजिक आर्थिक स्तर के उच्च मध्य और निम्न के अनुसार उनका चयन यादृच्छिक विधि से करेगा। यदि प्रयोगकर्ता मान लिया जाय कि 30 पात्रों का चयन करने के लिए योजना बनाता है तो वह प्रत्येक सामाजिक-आर्थिक स्तर से पात्रों का चयन यादृच्छिक विधि से करेगा । निम्नवत तालिका नं0 8 में प्रत्येक सामाजिक-आर्थिक स्तर से चुने गये पात्रों की संख्या को दिखाया गया है।

9.14.1 तालिका 08

तीन सामाजिक-आर्थिक स्तर से चुने गये पात्रों की संख्या

सामाजिक-आर्थिक स्तर	
उच्चतम	9
मध्यम	12
निम्न	9

पात्रों को सामाजिक-आर्थिक स्तर के रूप में अवरुद्ध (Blocking) कर लेने के बाद इन पात्रों को तीन समूहों में यादृच्छिक विधि से अर्थात् सिक्का उछालकर चित- पट समूह (Head-Tail) के अनुसार नियोजित कर दिया जायेगा। जिसे तालिका 9 में व्यवस्थित किया गया है-

9.14.2 तालिका 09

तीन सामाजिक आर्थिक स्तर के पात्रों का तीन समूहों में यादृच्छिक नियोजन या आवंटन

सामाजिक आर्थिक स्तर	भाषण विधि समूह समूह A	परिचर्चा विधि समूह B	प्रदर्शन विधि समूह C
उच्च	3	3	3
मध्यम	4	4	4
निम्न	3	3	3

इस प्रकार से प्रत्येक समूह में (अर्थात तीनों समूहों में) 10-10 पात्र हो जाएंगें पुन: सिक्का उछालकर विधियों का चयन कर लेगा कि किस समूह को किस विधि से पढ़ाया जायेगा।

अब मान लिया जाय कि इस सिक्का उछालने की प्रक्रिया के पश्चात् प्रयोगकर्ता इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि समूह को भाषण विधि द्वारा, समूह B को परिचर्चा विधि द्वारा तथा समूह C को प्रदर्शन विधि द्वारा पढ़ाया जायेगा। प्रत्येक समूह को सम्बन्धित विधियों द्वारा एक सप्ताह तक एक निश्चित समय (मान लिया जाय कि प्रत्येक दिन 3-3 घंटा) में प्रशिक्षण दिया जायेगा। एक सप्ताह बीतने के पश्चात् प्रत्येक समूह की समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण की क्षमता की जाँच (O1, O2, O3) की जायेगी। तीनों समूहों के प्राप्तांकों में अन्तर की सार्थकता की जांच F परीक्षण द्वारा करके प्रयोगकर्ता एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुँच सकता है। इसके आधार पर विभिन्न विधियों का प्रभाव समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण में आये हुए प्रभाव के रूप में प्राप्त किया जा सकता है तथा यह भी ज्ञात किया जा सकता है कौन-सी विधि सबसे प्रभावी है।

प्रायोगिक शोध के लिए कुछ मूल्यवान अथवा समृद्ध शोध अभिकल्प निदर्श

9.15 सारांश

विभिन्न विद्वानों एवं सामाजिक वैज्ञानिकों ने स्थिति एवं परिस्थिति के अनुसार उपयोग होने वाले कई प्रकार के प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प निदर्शों का निर्माण किया है जो अत्यन्त मूल्यवान एवं समृद्ध शोध अभिकल्प निदर्श हैं। आवश्यकतानुसार यादृच्छिक ढंग से समूहों का चयन हो जो दो या दो से अधिक हो सकता है अथवा प्रायोगिक एवं नियन्त्रित समूह की आवश्यकता हो । आवश्यकतानुसार इन समूहों के पात्रों का नियोजन उपयुक्त निदर्श के आधार पर किया जाता है।

इसके लिये निम्न प्रकार के समृद्ध शोध अभिकल्प निदर्श की रचना हुई है। जैसे - प्रयोग समूह नियन्त्रित समूह, यादृच्छिक पात्र अभिकल्प अथवा दो यादृच्छिक समूहों का शोध अभिकल्प, दो से अधिक यादृच्छिक समूह अभिकल्प, बहु समूह यादृच्छिक पात्र अभिकल्प, यादृच्छिक-सादृश्य समूह अभिकल्प, सादृश्य पूर्व पश्चात् नियन्त्रित समूह अभिकल्प, अनुरूपित पूर्व पश्चात् यादृच्छिक स्वरूप अभिकल्प, तीन अथवा चार समूह स्वरूप प्रयोग समूह एवं नियन्त्रित समूह अभिकल्प, 2×2 तात्विक अभिकल्प निदर्श सन्दर्भ । **एन. एल. गेज** द्वारा सम्पादित पुस्तक ''हैण्डबुक आफ रिसर्च ऑन टीचिंग '' में कैम्पवेल तथा स्टैनले द्वारा लिखित अन्य शोध अभिकल्प निदर्श जैसे- केवल यादृच्छीकृत समेलित पश्चात् परीक्षण नियंत्रित समूह शोध अभिकल्प जो कई तालिकाओं एवं सारणी द्वारा स्पष्ट किया गया है। पूर्व परीक्षण पश्चात् परीक्षण नियन्त्रित समूह शोध अभिकल्प तथा इसके लाभ जो कई तालिकाओं एवं सारणी के माध्यम से स्पष्ट किया गया है, यादृच्छिकृत एक मार्गीय एनोवा शोध अभिकल्प यादृच्छिक तालिका सहित का उल्लेख एवं वर्णन किया गया है।

9.16 बोध प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प के लिए मूल्यवान अथवा समृद्ध शाध अभिकल्प निदर्श में से किन्हीं दो शोध अभिकल्प निदर्श की व्याख्या कीजिये।

अथवा

दो यादृच्छिक समूहों के शोध अभिकल्प का वर्णन कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. सादृश्य पूर्व पश्चात् नियन्त्रित समूह अभिकल्प का वर्णन कीजिए।
2. यादृच्छीकृत एक मार्गीय एनोवा शोध अभिकल्प निदर्श को समझाइये।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. अनुरूपित पूर्व पश्चात् यादृच्छिक स्वरूप अभिकल्प की रचना किस शोध वैज्ञानिक ने की?

(अ) कैम्पवेल तथा स्टैनले (ब) फ्रेंड एन करलिंगर (स) चैम्पियन (द) एकोफ

2. तीन समूह स्वरूप प्रयोग समूह अभिकल्प का प्रस्तुतीकरण किसने किया ?

(अ) कैम्पबेल तथा स्टैनले (ब) आर. सोलोमन (स) एफ. जे. गीरान (द) एकोफ

3. चार समूह स्वरूप प्रयोग समूह एवं नियन्त्रित समूह अभिकल्प की अवधारणा किसने विकसित की?

(अ) आर. सोलोमन (ब) फ्रेड एन करलिंगर (स) स्टैनले (द) कैम्पबेल

4. ''हैण्डबुक आफ रिसर्च एण्ड टीचिंग'' पुस्तक को किसने सम्पादित किया है?

(अ) कैम्पबेल तथा स्टैनले (ब) एन.एल. गेज (स) सोलोमन (द) चैम्पियन

5. निम्नलिखित शोध अभिकल्प निदर्श में से किस निदर्श में विजातीय चरों को नियन्त्रित करने के लिए यादृच्छीकरण तथा स्थिरता दोनों प्रविधियों का चयन व प्रयोग किया जाता है?

(अ) केवल यादृच्छीकृत पश्चात् परीक्षण नियन्त्रित समूह शोध अभिकल्प

(ब) पूर्व परीक्षण पश्चात् परीक्षण नियन्त्रित समूह शोध अभिकल्प

(स) 2 × 2 तात्विक अभिकल्प निदर्श (द) बहु समूह यादृच्छिक पात्र अभिकल्प

9.17 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. अ 2. ब 3. अ 4. ब 5. अ

9.18 सूची एवं संदर्भ

1. गोपालजी प्रसाद : रिसर्च मेथेडोलोजी इन विहैवियरल साइन्सेज, भारती भवन, पटना, 1992
2. गोपाल जी प्रसाद : वही 1992
3. एफ. जी. मैकगीगन : इक्सपेरीमेन्टल साइकालोजी : ए मेथेडोलाजिकल, इन्ट्रोडक्शन प्रेन्टाइस हाल आफ इण्डिया, नई दिल्ली
4. कैम्पबेल एण्ड स्टेनले इन एन. एल. गेज : हैन्डबुक आफ रिसर्च आन टीचिंग

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टंडन मुक्त विश्वविद्यालय

MASY-03/MASW-04
सामाजिक अनुसंधान

खण्ड

3

आंकड़ा संकलन की प्रविधियाँ

इकाई 10

अवलोकन

इकाई 11

साक्षात्कार

इकाई 12

अनुसूची

इकाई 13

प्रश्नावली

इकाई 14

एकल अध्ययन (वैयक्तिक अध्ययन) पद्धति

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

परामर्श समिति

प्रो० देवेन्द्र प्रताप सिंह — अध्यक्ष
कुलपति
उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद

डॉ० एच० सी० जायसवाल — कार्यक्रम संयोजक
परामर्शदाता
उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इला०

डॉ० आर० के० बसलस — सचिव
कुल सचिव
उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद

विशेषज्ञ समिति

प्रो० वी० के० पंत — विषय विशेषज्ञ
से०नि०आचार्य एवं विभागाध्यक्ष
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

प्रो० डी० पी० सक्सेना — विषय विशेषज्ञ
से० नि० आचार्य
गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

प्रो० पी० एन० पाण्डेय — विषय विशेषज्ञ
आचार्य एवं पूर्व विभागाध्यक्ष
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

डा० मंजूलिका श्रीवास्तव — संरचनात्मक विषय विशेषज्ञ
स्ट्राइड, इग्नू, नई दिल्ली

पाठ्यक्रम लेखन समिति

PGSY-03 : – *सामाजिक अनुसंधान*

खण्ड एक : डॉ० वी० एन० मिश्र, प्रवक्ता कालीचरण कालेज, लखनऊ 4 इकाई (आकारगत 3)
खण्ड दो : डॉ० जय शंकर पाण्डेय, प्रवक्ता डी० ए० वी० कालेज, कानपुर 5 इकाई (आकारगत 4)
खण्ड तीन : डॉ० विजय कुमार वर्मा, प्रवक्ता, बी०एस०एन० वी०पी०जी० कालेज, लखनऊ 5 इकाई
खण्ड चार : डॉ० विजय कुमार वर्मा, प्रवक्ता बी०एस०एन० वी०पी०जी० कालेज, लखनऊ 4 इकाई
खण्ड पाँच : अनूप कुमार सिंह, प्रवक्ता, डी० ए० वी० कालेज, कानपुर 5 इकाई
सम्पादन : प्रो० वी० के० पंत

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित, इस कार्य के किसी भी अंश की उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की लिखित अनुमति के बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुति अनुमन्य नहीं है।

दूरस्थ शिक्षा परिषद, नई दिल्ली के सहयोग से प्रकाशित।

खण्ड 3 का परिचय – आंकड़ा संकलन की प्रविधियाँ

यह खण्ड आंकड़ा संकलन की प्रविधियों से सम्बंधित है। सामाजिक अनुसंधान का उद्देश्य, किसी घटना के सम्बन्ध में वैज्ञानिक निष्कर्ष तक पहुँचना होता है। वैज्ञानिक निष्कर्ष काल्पनिक तथ्यों से सम्बंधित न होकर वास्तविक तथ्यों से सम्बन्धित होते हैं। अतः सामाजिक अनुसंधान में प्रमाणसिद्ध तरीकों के अनुसार आंकड़ा अथवा आंकड़ों का संग्रह किया जाता है।

किसी घटना से सम्बन्धित प्रामाणिक जानकारी जिससे आप किसी निष्कर्ष पर पहुँच सकें, अथवा सिद्धान्त की जांच कर सकें, आंकड़ा अथवा समंक कहलाता है। यह जानकारी, ज्ञान अथवा उपलब्ध सामग्री, आंकड़ों या सूचनाओं के रूप में होती है। सामाजिक विज्ञान में आंकड़ा संकलन के लिए विशिष्ट प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है अर्थात् आंकड़ा संकलन के कुछ मान्यता प्राप्त व व्यवस्थित तरीके होते हैं, जिनसे विश्वसनीय सूचनाएं प्राप्त की जा सकती हैं। प्रविधियाँ, वे मान्यता प्राप्त एवं व्यवस्थित तरीके हैं, जिनसे अध्ययन विषय के संदर्भ में विश्वसनीय सूचनायें प्राप्त की जा सकती हैं। समाज वैज्ञानिक अनुसंधान में अध्ययन विषय की प्रकृति अथवा उद्देश्य अथवा उपलब्ध संसाधनों को ध्यान में रखकर किसी एक विशिष्ट प्रविधि अथवा एकाधिक प्रविधियों के माध्यम से आंकड़ा संकलन किया जाता है।

आंकड़ा संकलन की दो प्रविधियाँ मानी जाती हैं। इनमें से एक को आंकड़ा संकलन की प्राथमिक प्रविधि तथा दूसरे को आंकड़ा संकलन की द्वितीयक प्रविधि,कहते हैं। आंकड़ा की प्राथमिक प्रविधि क्षेत्र से आंकड़ों के प्रत्यक्ष रूप से संग्रह करने से सम्बंधित है, जबकि आंकड़ा संकलन की द्वितीयक प्रविधि, आंकड़ों के अप्रत्यक्ष तरीके के संग्रह करने से सम्बन्धित हैं। प्राथमिक प्रविधियों में प्रमुख रूप से अवलोकन, साक्षात्कार, अनुसूची, प्रश्नावली तथा एकल अध्ययन की प्रविधियां शामिल की जाती हैं। द्वितीयक प्रविधि में अभिलेखागारों से सामग्री एकत्रित करना, पूर्व में घटित किसी घटना से सम्बन्धित व्यक्तियों के पत्र, डायरी अथवा समाचार पत्रों में छपी खबर को शामिल किया जाता है।

आंकड़ा संकलन की द्वितीयक प्रविधि के माध्यम से उन घटनाओं का अध्ययन किया जाता है जो भूतकाल में घटित हो चुकी हैं। समाजशास्त्र में ऐतिहासिक पद्धति के द्वारा किये गये अध्ययनों में भी द्वितीयक प्रविधि का बखूबी इस्तेमाल किया जाता है। उदाहरण के लिये, मान लीजिये यदि आपको 1920-21 के किसी किसान आंदोलन का अध्ययन करना है तो आप इस तथ्य से बखूबी परिचित होंगे कि उस समय की घटनाओं को जानने के लिए प्राथमिक प्रविधियों का इस्तेमाल नहीं किया जा सकता। इसकी प्रमुख वजह यह है कि उस घटना से सम्बंधित लोग आज हमारे बीच नहीं हैं अतः उस घटना को जानने के लिए हमें उस समय के समाचार पत्रों अथवा अभिलेखागारों की मदद लेनी होगी। आंकड़ा संकलन की द्वितीयक प्रविधि मुख्यतः ''इतिहास'' विषय से सम्बन्धित है क्योंकि उसे 'अतीत का विज्ञान' कहा जाता है। समाजशास्त्र में भी अतीत की घटनाओं से सम्बन्धित अध्ययन के लिये द्वितीय प्रविधियों का इस्तेमाल किया जाता है।

इस खण्ड में हम अवलोकन, साक्षात्कार, अनुसूची तथा प्रश्नावली, आंकड़ा संकलन की इन चार प्रविधियों की चर्चा करेंगे तथा इसके साथ ही एकल अध्ययन विधि पर भी प्रकाश डालेंगे।

इकाई – 1 में हम 'अवलोकन' या निरीक्षण प्रविधि का अध्ययन करेंगे। 'अवलोकन' का आशय, घटनाएँ जिस रूप में होती है उसका कार्य-कारक सम्बन्धों के अधार पर यथार्थ निरीक्षण एवं वर्णन करने से है। स इकाई के अन्तर्गत हम अवलोकन की परिभाषा व इसकी विषेशताओं की चर्चा करेंगे, तत्पश्चात् इसके ारों (स्वरूपों) की चर्चा करेंगे। अवलोकन के विधिक प्रकारों के अन्तर्गत नियंत्रित, अनियंत्रित ोकन, सहभागी अवलोकन तथा असहभागी अवलोकन के गुण व दोषों के विषय में ज्ञान प्राप्त करेंगे।

अवलोकन, सहभागी अवलोकन तथा असहभागी अवलोकन के गुण व दोषों के विषय में ज्ञान प्राप्त करेंगे। तत्पश्चात् इसी इकाई में हम अर्द्ध सहभागी अवलोकन व सामूहिक अवलोकन के विषय में चर्चा करेंगे। अंत में इसी इकाई के अन्तर्गत अवलोकन विधि के महत्व पर प्रकाश डालते हुए इसकी सीमाओं की भी चर्चा करेंगे। इस प्रकार हम इस इकाई–1 में 'अवलोकन' के सभी आयामों (पक्षों–पर) चर्चा करते हुए इससे सम्बन्धित ज्ञान प्राप्त करेंगे।

इकाई –2 में हम आपको 'साक्षात्कार' के विषय में जानकारी प्रदान करेंगे। 'साक्षात्कार' व्यक्तिगत संपर्क द्वारा सूचना एकत्रित करने एवं उन्हें लिखने की ऐसी क्रमबद्ध प्रविधि है जिसमें दो या दो से अधिक व्यक्ति किसी विशिष्ट उद्देश्य को सामने रखकर परस्पर आमने–सामने होकर बातचीत, संवाद या उत्तर– प्रत्युत्तर करते हैं। अब आपको साक्षात्कार की परिभाषा व विशेषताओं के विषय में ज्ञान प्रदान करेंगे। इसके बाद इस इकाई के अन्तर्गत साक्षात्कार के उद्देश्यों की व्याख्या करते हुए इसके प्रकारों या स्वरूपों का अध्ययन करेंगे। साक्षात्कार के प्रमुख प्रकारों में हम आपको औपचारिक, अनौपचारिक तथा सामूहिक साक्षात्कार के विषय में जानकारी प्रदान करते हुए संरचित व असंरचित साक्षात्कार के गुणों व दोषों पर चर्चा करेंगे। इनके अन्य विविध स्वरूपों में चिकित्सकीय साक्षात्कार, केन्द्रित व पुनरावृत्ति साक्षात्कार के विषय में भी ज्ञान प्रदान करेंगे। इसी इकाई में हम आपको साक्षात्कार निर्देशिका की भी अपेक्षित जानकारी उपलब्ध करायेंगे। अंत में इस इकाई में हम साक्षात्कार विधि के महत्व की चर्चा करते हुए इसकी सीमाओं पर भी प्रकाश डालेंगे।

अब हम **इकाई –3** के अन्तर्गत हम 'अनुसूची' के उद्देश्यों, परिभाषा, व इसकी विशेषताओं की चर्चा करेंगे। 'अनुसूची' उन प्रश्नों के समूह का नाम है, जो साक्षात्कारी द्वारा दूसरे व्यक्ति से आमने–सामने की स्थिति में पूछकर भरे जाते हैं। इस प्रकार अनुसूची आंकड़ा संकलन की एक महत्वपूर्ण प्रविधि है। इसी इकाई के अन्तर्गत अनुसूची के प्रकारों में अवलोकन अनुसूची, मूल्यांकन अनुसूची, प्रलेख अनुसूची, तथा संस्था सर्वेक्षण अनुसूची का ज्ञान प्राप्त करेंगे। इसके बाद हम साक्षात्कार अनुसूची, के लाभ व सीमाओं की भी चर्चा करेंगे। तत्पश्चात् अनुसूची निर्माण की प्रक्रिया का अध्ययन करते हुए इसकी (साक्षात्कार) उपयोगिता व सीमाओं की भी व्याख्या करेंगे। इस प्रकार इस इकाई में हम साक्षात्कार विधि के विषय में अध्ययन करेंगे।

अब **इकाई–4** में हम 'प्रश्नावली' विधि पर अध्ययन करेंगे। 'प्रश्नावली' प्रश्नों की एक सूची है जिसका उत्तर उत्तरदाता स्वयं लिखकर शोधकर्ता को डाक द्वारा प्रेषित कर देता है। यह विधि कम समय में व्यापक एवं विस्तृत क्षेत्र से अधिक उत्तरदाताओं से सूचना संकलन की सर्वोत्तम विधि है। इस प्रकार प्रश्नावली के अर्थ का ज्ञान प्राप्त करने के बाद इसके उद्देश्यों पर एवं विशेषताओं पर प्रकाश डालेंगे। तत्पश्चात् प्रश्नावली के स्वरूपों / प्रारूपों का ज्ञान प्राप्त करेंगे। प्रश्नावली के विविध स्वरूपों में संरचित, असंरचित, अप्रतिबंधित (मुक्त) तथा प्रतिबंधित (बंद), चित्रमय, मिश्रित तथा डाक प्रेषित प्रश्नावली का अध्ययन करेंगे। अंत में प्रश्नावली के निर्माण के समय आवश्यक सावधानियों का अध्ययन करते हुए इस विधि के गुण एवं दोषों का ज्ञान प्राप्त करेंगे।

इकाई–5 में हम एकल अध्ययन (वैयक्तिक अध्ययन पद्धति) पर भी ज्ञान प्रदान करेंगे। इस इकाई में सर्वप्रथम हम 'एकल अध्ययन' की परिभाषा व इसकी विशेषताओं की चर्चा करेंगे, तत्पश्चात् एकल अध्ययन की कार्य प्रणाली की भी व्याख्या करेंगे। इस इकाई में हमने एकल अध्ययन में तथ्य संकलन के स्रोतों का भी वर्णन किया है। तत्पश्चात् हम इस पद्धति के गुण एवं दोषों पर प्रकाश डालेंगे। यद्यपि एकल अध्ययन पद्धति के अन्तर्गत किसी एक सामाजिक इकाई से सम्बंधित सभी पक्षों का व्यापक, सूक्ष्म तथा

गहन अध्ययन किया जाता है। अध्ययन की जाने वाली यह इकाई व्यक्ति, संस्था, समूह समुदाय, जाति, राष्ट्र या कोई भी घटना हो सकती है। एकल अध्ययन में तथ्य संकलन के दो स्त्रोत बताये गये हैं। पहला प्राथमिक स्त्रोत, जिसमें हम 'गहन साक्षात्कार' व 'सहभागी अवलोकन' को सम्मिलित करते हैं, जबकि द्वितीयक स्त्रोतों में हम जीवन-इतिहास, पत्र, डायरियां, फोटो एलबम, समाचार पत्र आदि को शामिल करते हैं। इस प्रकार इस इकाई में आप एकल अध्ययन (वैयक्तिक अध्ययन) के सभी आयामों का ज्ञान प्राप्त करेंगे।

इकाई 10 अवलोकन

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 अवलोकन की परिभाषा व इसकी विशेषताएं

10.3 अवलोकन के प्रकार

10.3.1 नियंत्रित एवं अनियंत्रित अवलोकन

10.3.2 सहभागी अवलोकन

10.3.3 असहभागी अवलोकन

10.3.4 अर्द्ध सहभागी अवलोकन एवं सामूहिक अवलोकन

10.4 अवलोकन विधि का महत्व एवं सीमाएं

10.5 सारांश

10.6 बोध प्रश्न

10.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

10.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप :

- अवलोकन और उसकी विशेषताओं की विवेचना कर सकेंगे।
- अवलोकन के विभिन्न प्रकारों की सूची बना सकेंगे।
- अवलोकन की उपयोगिता का उल्लेख कर सकेंगे।
- अवलोकन की सीमाओं का वर्णन कर सकेंगे।

10.1 प्रस्तावना

इस इकाई में 'अवलोकन' पर प्रकाश डालेंगे। चूंकि 'अवलोकन' आंकड़ा संकलन की एक महत्वपूर्ण पद्धति है जिसके माध्यम से हम अपेक्षित महत्वपूर्ण ज्ञान प्राप्त करते हैं। सामाजिक विज्ञान में 'अवलोकन' सर्वाधिक तथ्य संकलन की एक प्रविधि है। ''विज्ञान निरीक्षण से प्रारम्भ होता है और फिर सत्यापन के लिये अंतिम रूप से निरीक्षण कर ही लौटकर आना पड़ता है।'' ऐसा गुडे एवं हाट का कथन है। (Methods in Social Research. 1952)

कोई भी सामाजिक अनुसंधान कार्य तब तक अधिक सफलता प्राप्त नहीं कर पाता, जब तक कि उसमें निरीक्षण प्रविधि का प्रयोग न किया गया हो। हम स्पष्टत: कह सकते हैं कि प्राकृतिक विज्ञानों के सिद्धान्त मुख्यत: अवलोकन पद्धति की ही देन हैं, चाहे वह अवलोकन प्राकृतिक क्षेत्र में किया गया हो या

प्रयोगशाला में। वस्तुत: प्राकृतिक विज्ञान में ही नहीं, सामाजिक विज्ञान में भी 'अवलोकन' तथ्य संकलन एवं ज्ञान संग्रह की एक मौलिक विधि है। मनुष्यों के ज्ञान भंडार में, सामान्य व आकस्मिक अवलोकन से भी भारी वृद्धि हुई है। अत: आप इस इकाई में 'अवलोकन पद्धति' के स्वरूपों, गुणों, महत्व व सीमाओं के साथ-साथ इसकी विभिन्न शाखाओं में प्रति दिन हम आवलोकन करते रहते हैं और अपने ज्ञान में वृद्धि करते हैं।

10.2 अवलोकन की परिभाषा व इसकी विशेषतायें

इस इकाई में हम आपका परिचय 'अवलोकन' की अवधारणा से कराते हैं। 'अवलोकन' शब्द भाषा के 'Observation' का पर्यायवाची या हिन्दी रूपान्तरण है जिसका तात्पर्य देखना या अवलोकन करना या निरीक्षण करना होता है। संक्षेप में यदि कहा जाये तो निरीक्षण का तात्पर्य है— कार्यकारण अथवा पारस्परिक सम्बन्ध को जानने के लिए स्वाभाविक रूप से घटित होने वाली घटनाओं को सूक्ष्म रूप से देखना। 'अवलोकन' शब्द की परिभाषा को विविध समाज वैज्ञानिकों ने अलग-अलग रू पों में व्यक्त किया है—

प्रो० पी० पी० यंग (1954) ने अवलोकन को स्वाभाविक घटना का घटित होते समय नेत्रों द्वारा सुव्यवस्थित एवं सोद्देश्य अध्ययन कहा है।

प्रो० सी० ए० मोजर (1961) ने अवलोकन का तात्पर्य कानों अथवा वाणी के स्थान पर स्वयं अपनी दृष्टि का अधिकाधिक उपयोग करना, बताया है। अर्थात् इस विधि में शोधकर्ता कही- सुनी बातों पर विश्वास न कर घटनाओं को स्वयं देखकर समझने का प्रयास करता है।

आक्सफोर्ड कन्साइज शब्दकोश में भी इसे निम्न प्रकार प्रस्तुत किया गया है— घटनाएं कार्य-कारण अथवा पारस्परिक सम्बन्धों के सम्बन्ध में जिस रूप में उपस्थित होती हैं, का यथार्थ निरीक्षण एवं वर्णन हैं।

व्यापक अर्थों में अवलोकन की प्रक्रिया में हमारी सभी ज्ञानेन्द्रियां सक्रिय होती हैं।

सन्दर्भ का उल्लेख— जे० गाल्टुंग के अनुसार अवलोकन सभी प्रकार की इन्द्रियग्राह्य विषय-वस्तु का आलेखन है। लेकिन जब यह कहा जाता है कि अवलोकन में 'आँखों' का प्रयोग होता है। तब इसका अर्थ होता है कि शोधकर्ता सूचना प्राप्त करने के लिये दूसरों के वक्तव्य या रिपोर्ट पर निर्भर नहीं रहता, बल्कि वह घटना को स्वयं प्रत्यक्ष रूप से संप्रेषित करता है। या इसे हम यों कह सकते हैं कि प्रश्नावली व साक्षात्कार में शोधकर्ता को तथ्य संग्रह के लिए प्रश्नों को पूछकर शाब्दिक रूप में उत्तर प्राप्त करने होते हैं। लेकिन, इसके विपरीत ''अवलोकन विधि में वह स्वयं देखता है कि उसके उत्तरदाता क्या कर रहे हैं। इस प्रकार, अवलोकन मूल रूप से गैर शाब्दिक व्यवहार का अध्ययन है। अर्थात् इसमें शोधकर्ता यह देखता है कि लोग क्या कर रहे हैं, न कि यह कि वे क्या कह रहे हैं। अब आप समझ गये होंगे कि 'अवलोकन' की परिभाषा क्या है। अब आपको इसकी विशेषतायें बतायेंगे।

अवलोकन विधि की विशेषताएं :—

विभिन्न परिभाषाओं के आधार पर अवलोकन विधि की निम्नांकित विशेषताएं प्रकट होती हैं—

(1) सहजता — अवलोकन की प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें घटनाओं का अध्ययन उस समय किया जाता है, जिस समय वे घटित होती रहती हैं। अर्थात् घटनाएं स्वाभाविक रू प में स्वयं शोधकर्ता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से अवलोकित की जाती हैं।

(2) सूक्ष्म, गहन एवं उद्देश्यपूर्ण अध्ययन—अवलोकन विधि में अवलोकनकर्ता स्वयं घटनास्थल पर उपस्थित होता है अतः वह घटनाओं का सूक्ष्म व गहन अध्ययन कर सकता है। इसलिए वह उन्हीं तथ्यों का संकलन करता है जिनका सम्बन्ध उसके अध्ययन से है।

(3) मानवीय इन्द्रियों का प्रयोग—अवलोकन विधि में मानव इन्द्रियों का भी व्यवस्थित प्रयोग किया जाता है। इसमें अवलोकनकर्ता अपने कानों एवं वाणी का भी प्रयोग करता है, किन्तु नेत्रों का प्रयोग विशेषकर महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इस प्रविधि में नेत्रों का उपयोग अति महत्वपूर्ण है। अवलोकनकर्ता अपनी इन्द्रियों के प्रयोग द्वारा अध्ययन से सम्बन्धित आवश्यक जानकारियों को संग्रहीत कर लेता है।

(4) प्रत्यक्ष अध्ययन — अवलोकन विधि के अन्तर्गत अवलोकनकर्ता स्वयं ही अपने अध्ययन क्षेत्र में जाकर स्वयं अपनी उपस्थिति में घटना का अवलोकन / निरीक्षण करते हुए तथ्यों का संग्रहण करता है। यही प्रत्यक्ष अध्ययन अवलोकन विधि की एक प्रमुख विशिष्टता है।

(5) प्राथमिक सामग्री का संकलन— इस विधि में अवलोकनकर्ता घटनास्थल पर उपस्थित होकर घटनाओं के बारे में प्राथमिक स्तर की सूचनाएँ एकत्रित करता है जो अधिक विश्वसनीय होती हैं।

(6) निष्पक्षता— अवलोकन में अध्ययनकर्ता स्वयं अपनी आंखों से घटनाओं को भलीभांति देखता है, उन्हें वैज्ञानिक कसौटी पर कसता है। अतः उसका निष्कर्ष निष्पक्ष व वैज्ञानिक होता है, जिससे वह पक्षपात से बच जाता है।

(7) कार्य-कारण सम्बन्ध का पता लगाना—सामान्य अवलोकन व वैज्ञानिक अवलोकन में अंतर इतना होता है कि सामान्य अवलोकन में शोधकर्ता केवल घटनाओं को देखता है (एक दर्शक की तरह), परन्तु वैज्ञानिक अवलोकन में वह घटनाओं को देखकर उनके कारणों व परिणामों की भी खोज करता है जिनके आधार पर सिद्धान्त निर्माण की ओर बढ़ते हुए वास्तविकता का पता लगाया जा सकता है।

(8) सामूहिक व्यवहार का अध्ययन—अवलोकन प्रविधि की अंतिम व अत्यन्त महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इस प्रविधि का प्रयोग ''सामूहिक व्यवहार'' के अध्ययन के लिये किया जाता है। अतः अवलोकन प्रविधि, सामूहिक व्यवहार के अध्ययन की उत्तम विधि है।

(9) विचारपूर्वक किया जाने वाला अध्ययन—जहोदा का मत है कि अवलोकन प्रविधि में अवलोकनकर्ता स्वयं घटनाओं का विचारपूर्वक अध्ययन कर, अध्ययन विषय से सम्बन्धित तथ्यों का ही संग्रहण करता है । वह कही हुई या सुनी हुई बातों पर निर्भर नहीं रहता है। आइये, अब हम अवलोकन के प्रकारों से आपका परिचय कराते हैं।

10.3 अवलोकन के प्रकार

अवलोकन के विविध उद्देश्य है—अन्वेषण, उपकल्पना, निर्माण, उपकल्पना परीक्षण हेतु तथ्य संकलन, अन्य श्रोतों से प्राप्त आंकड़ों का सत्यापन आदि। इस प्रकार अवलोकन विधि के प्रमुख वर्गीकरण के आधार निम्नलिखित है।

(i) **स्थल - (क) क्षेत्र अवलोकन**—जो अनियंत्रित एवं स्वाभाविक परिस्थितियों में किये जाते हैं।

(ख) प्रयोगशाला अवलोकन—जो नियंत्रित एवं कृत्रिम दशा में किये जाते हैं।

(ii) **तीव्रता—(क) सामान्य अवलोकन**—जो हम सामान्य रूप से रोजमर्रे के जीवन में सूचना प्राप्ति के लिये करते हैं।

(ख) व्यवस्थित अवलोकन—वैज्ञानिक शोध में तथ्य संकलन की विधि के रूप में प्रयुक्त निरीक्षण।

(iii) **सहभागिता - (क) सहभागी अवलोकन**-जिसमें अवलोकनकर्ता तथ्य संकलन के लिये समूह का ही एक सदस्य (भले ही अस्थायी तौर पर) बनकर अध्ययन करता है।

(ख) असहभागी अवलोकन—इसमें बिना समूह की गतिविधियों में भाग लिये एक तटस्थ वैज्ञानिक शोधकर्ता के रूप में तथ्य संकलित किये जाते हैं।

(iv) **नियंत्रण- (क) नियंत्रित अवलोकन**-जब शोधकर्ता अपने विषय को नियंत्रित दशा में अवलोकित करता है। इसे संरचित अवलोकन भी कहते हैं।

(ख) अनियंत्रित अवलोकन—इसमें शोधकर्ता अनियंत्रित दशा में अवलोकन करता है इसे असंरचित अवलोकन भी कहा जाता है।

इसके अलावा कुछ अन्य प्रकार के अवलोकन हैं—

सामूहिक अवलोकन—इसमें किसी भी घटना / वस्तु का एक से अधिक व्यक्तियों द्वारा एक साथ अध्यायन किया जाता है।

अर्द्ध सहभागी अवलोकन—यह सहभागी व असहभागी अवलोकन के मध्य की स्थिति है ।

अब हम अवलोकन के प्रकारों की विस्तार से चर्चा करेंगे।

10.3.1 नियंत्रित एवं अनियंत्रित अवलोकन

नियंत्रित अवलोकन

नियंत्रित अवलोकन वस्तुत: नियंत्रित दशाओं में निरीक्षण की एक प्रक्रिया है, जिससे विश्वसनीय व पक्षपातरहित तथ्य संकलित किये जा सकें। यह विधि संरचित अवलोकन या प्रयोगशाला अवलोकन भी कही जा सकती है। इस प्रकार के अवलोकन में घटनाओं का व्यवस्थित व नियंत्रित दशाओं में अध्ययन किया जाता है। नियंत्रित अवलोकन में अध्ययनकर्ता स्वयं या घटना पर योजनाबद्ध रूप से नियंत्रण रखता है। इस विधि को पूर्व नियोजित अवलोकन, संरचित अवलोकन या व्यवस्थित अवलोकन भी कहते हैं। नियंत्रित अवलोकन में तथ्यों का संकलन निश्चित तथा पूर्व नियोजित योजनाओं द्वारा किया जाता है। वर्तमान में इस विधि का प्रयोग नेतृत्व, आक्रमण, उद्योगों में काम करने वाले श्रमिकों एवं शिशु गृहों के बच्चों के अध्ययन आदि के लिये किया जाता है। नियंत्रित अवलोकन में एक कृत्रिम वातावरण को तैयार कर शोधकर्ता, नियंत्रित दशाओं में घटना का अध्ययन कर तथ्य संकलन का कार्य करता है। इस प्रक्रिया में वह उन कारकों का भी नियंत्रण करने की कोशिश करता है जो पक्षपात उत्पन्न कर सकते हैं और जिनका सम्बंध अवलोकनकर्ता के व्यक्तित्व से होता है।

गुडे एवं हाट ने लिखा है कि ''इसमें नियंत्रण का अर्थ है अवलोकन पद्धति का मानकीकरण या कुछ स्थितियों में, परिवर्त्यों पर नियंत्रण।'' अवलोकन पद्धति के मानकीकरण का तात्पर्य ऐसी विधि के प्रयोग

से है जिससे उपयुक्त पक्षपात रहित एवं विश्वसनीय तथ्य संकलित किये जा सकें। ऐसा अवलोकित समूह व अवलोकनकर्ता दोनों पर नियंत्रण द्वारा किया जा सकता है।

पी. वी. यंग ने भी इन्हीं दो तथ्यों का वर्णन किया है—''जब हम शुद्ध वास्तविकता प्राप्त करने के लिए यांत्रिक परीक्षण या साधनों का प्रयोग करते हैं और अवलोकन की परिस्थितियों को मानकीकृत करते हैं।'' अर्थात् नियंत्रित अवलोकन में 2 प्रकार से नियंत्रण कर घटनाओं का अध्ययन किया जाता है।

(1) घटना पर नियंत्रण—हमें जिन घटनाओं का निरीक्षण करना है उन्हें नियंत्रित दशा में रखते हुए उनसे सम्बन्धित विविध कारकों को नियंत्रित करते हुए सामाजिक स्थिति में घटना का अवलोकन कर तथ्य संग्रहण किया जाता है।

(2) अवलोकनकर्ता पर नियंत्रण—इसमें स्वयं अवलोकनकर्ता पर ही नियंत्रण किया जाता है ताकि पक्षपात से बचा जा सके। यह नियंत्रण एक ओर निरीक्षणकर्ता को नियंत्रित कर व दूसरी ओर संपूर्ण अवलोकन पद्धति को मानकीकृत कर हम कर सकते हैं, जिससे अवलोकनकर्ता मनमाने व पक्षपातपूर्ण ढंग से अवलोकन न कर सके। इसके लिये हम अवलोकन अनुसूची, साक्षात्कार निर्देशिका, यांत्रिक उपकरण जैसे-कैमरा, टेपरिकार्डर आदि का प्रयोग कर सकते हैं। इस प्रकार से हम सीमित साधनों में कम व्यय एवं समय में अधिक प्रामाणिक एवं विश्वसनीय तथ्यों का संकलन, नियंत्रित अवलोकन द्वारा कर सकते हैं। इसके बाद आपका अनियंत्रित अवलोकन से परिचय कराते हैं।

अनियंत्रित अवलोकन — इसमें हम अनियंत्रित अवलोकन के विषय में चर्चा करेंगे। इस प्रकार की अवलोकन विधि में अध्ययनकर्ता / शोधकर्ता स्वयं पर एवं अध्ययन समूह व अवलोकन प्रक्रिया पर बिना नियंत्रण के घटनाओं का उनके स्वाभाविक रूप में निरीक्षण करता है। इस प्रकार.का अवलोकन न तो पूर्ण रूप से नियोजित होता है और न ही संरचित होता है। यह मुक्त स्थिति में अवलोकन है। इसे सामान्य, अनौपचारिक या असंरचित अवलोकन भी कहते हैं।

''गुडे एवं हाट'' ने लिखा है कि ''सामाजिक सम्बन्धों के विषय में जो कुछ भी ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है, वह अनियंत्रित अवलोकन द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। यह अवलोकन चाहे सहभागी हो या असहभागी हो।'' पी. वी. यंग ने व्याख्या की है कि ''अनियंत्रित अवलोकन में स्वाभाविक परिस्थितियों का अध्ययन कर तथ्य संग्रहित करते हुए सावधानी पूर्वक जांच करते हैं, इसमें यथार्थ उत्पन्न करने वाले यंत्रों का प्रयोग करने अथवा अवलोकित घटनाओं की शुद्धता की जांच करने का प्रयत्न नहीं किया जाता है।''

अनियंत्रित अवलोकन के 2 प्रमुख स्वरूप निम्न हैं- (1) सहभागी अवलोकन (2) असहभागी अवलोकन आइये, अब आपका सहभागी अवलोकन, इसकी विशेषताओं, गुण व दोषों से परिचय कराते हैं जो निम्न हैं—

10.3.2 सहभागी अवलोकन

सहभागी अवलोकन' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम 1924 ई० में प्रकाशित ''सोशल डिस्कवरी'' (Social Discovery) पुस्तक में ''लिंडमैन'' (Edward C. Lindman) ने किया, लेकिन उसके पूर्व भी इसका प्रयोग मानव शास्त्र एवं समाजशास्त्र में होता रहा है। **'रीवर्स'** (Rivers) ने इस विधि को 'गहन क्षेत्रीय कार्य' (Intensive field work) कहा है। इस तरह के क्षेत्रीय अध्ययनों के उदाहरण रूप में 'मैलिनोवस्की की ट्रोब्रियंड-द्वीप समूह का अध्ययन' व फर्थ (firth) का टीकोपिया (Tikopia) का अध्ययन एवं **ह्वाइट** (Whyte) का स्ट्रीट कार्नर सोसाइटी (Street Corner Society) अध्ययन तथा

अंडरसन का होबो (Hobo) का अध्ययन, आता है, जो सहभागी अवलोकन के महत्वपूर्ण उदाहरण हैं। "अवलोकन विधि का वह रूप, जिसमें शोधकर्ता अध्ययन किये जाने वाले समूह के एक आंतरिक सदस्य के रूप में समूह की गतिविधियों एवं कार्यकलापों में भाग लेता है। सामाजिक शोध की यह विधि सूक्ष्मदर्शक यंत्र की भांति शोधकर्ता को सामाजिक घटना का गहराई, निकटता तथा अति सूक्ष्मता से अध्ययन करने का अवसर प्रदान करती है।"

सहभागी अवलोकन की विशेषतायें (गुण), लाभ व दोष—सहभागी अवलोकन की निम्नलिखित विशेषतायें हैं—

(i) यह अनियंत्रित व मुक्त विधि है।

(ii) तथ्य संकलन की महत्वपूर्ण विधि है, जिसमें घटना का स्वाभाविक स्थिति में अध्ययन किया जाता है

(iii) इसमें शोधकर्ता दो भूमिकायें एक साथ अदा करता है; एक वैज्ञानिक अवलोकनकर्ता की दूसरी अस्थायी सहभागिता की या स्वीकृत सदस्य की।

(iv) तथ्य संकलन की दृष्टि से यह कई पद्धतियों का मिश्रित रूप बन जाता है।

लाभ — सहभागी अवलोकन के लाभों का वर्णन अग्रांकित है —

(i) समग्रात्मक दृष्टिकोण- इसमें अवलोकनकर्ता किसी समूह या समुदाय का एक संपूर्ण इकाई के रूप में अध्ययन करता है, किसी एक पक्ष या अंश का नहीं।

(ii) गहन अध्ययन—इसमें अवलोकनकर्ता द्वारा सहभागी अवलोकन के माध्यम से घटना का सूक्ष्म व गहन अध्ययन संभव होता है।

(iii) स्वाभाविक स्थिति— सहभागी अवलोकन के द्वारा उस समूह या घटना का उसकी स्वाभाविक स्थिति में अध्ययन किया जा सकता है। अत: यह विधि वास्तविकता का अध्ययन करने में सक्षम होती है।

दोष — अब आपको सहभागी अवलोकन के दोषों का ज्ञान प्रदान करेंगे। सहभागी अवलोकन पद्धति के कुछ नाकारात्मक पहलू भी हैं जो निम्नांकित हैं—

(i) आलेखन की समस्या — सहभागिक अवलोकन द्वारा घटना / समूह के अध्ययन के समय अवलोकनकर्ता आवश्यक जानकारी को उनके समक्ष नहीं लिख सकता है। अत: आलेखन की समस्या एक महत्वपूर्ण समस्या है।

(ii) भूमिका संघर्ष—अवलोकन के समय कभी-कभी अवलोकनकर्ता द्वारा संकट के समय अध्ययन समूह द्वारा एक ओर उससे सहायता की आशा की जाती है, और वहीं दूसरी ओर यदि वह सहायता करता है. तो अवलोकनकर्ता के नाते तटस्थ निरीक्षण की अपेक्षा की जाती है। ऐसी स्थिति उसके लिये भूमिका संघर्ष की स्थिति पैदा कर देती है।

(iii) वस्तुनिष्ठता की समस्या—गुडे व हाट ने कहा है कि अवलोकनकर्ता जितना अधिक भावनात्मक रूप से सहभागी बनता है, अध्ययन की वस्तुनिष्ठता उतनी ही कम हो जाती है।

(iv) स्तरीकृत समाज में कठिनाई

(v) पूर्ण सहभागिता कठिन—इसमें पूर्ण सहभागिता एक समस्या के रूप में होती है।

आइये, हम अब असहभागी अवलोकन, इसके लाभ व दोषों का ज्ञान प्राप्त करेंगे।

10.3.3 असहभागी अवलोकन

असहभागी अवलोकन अनियंत्रित अवलोकन का ही एक प्रकार है, जिसमें शोधकर्ता अध्ययन समूह के क्रियाकलाप में बिना भाग लिए, एक तटस्थ अवलोकनकर्ता की तरह घटनाओं का निरीक्षण करता है। वह समूह में एक बाहरी व्यक्ति एवं एक वैज्ञानिक शोधकर्ता के रूप में उपस्थित रहता है और उसकी गतिविधियों का अवलोकन करता है। कभी-कभी उसकी उपस्थिति से समूह अनभिज्ञ भी रहता है। जब अवलोकनकर्ता छिपकर, अज्ञात रूप से समूह के क्रियाकलाप का पर्यवेक्षण करता है।

''असहभागी अवलोकन, सामाजिक अन्वेषण की एक विधि जिसमें शोधकर्ता अध्ययन किये जाने वाले समूह की सक्रिय क्रियाओं में एक सदस्य की भांति भाग न लेकर मात्र एक तटस्थ दर्शक के रूप में समूह के व्यवहार को देखता-परखता है। इसे असहभागिक अवलोकन कहते हैं।

उदाहरण—स्पिज एवं बुल्फ (Spitz and Wolfe) ने नर्सरी स्कूल के बच्चों का अवलोकन इसी तरह एक तरफा शीशे के पीछे से किया था। असहभागी अवलोकन की पूर्ण सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि समूह उसकी (अवलोकनकर्ता की) उपस्थिति से कितना अनभिज्ञ है, तभी समूह की गतिविधियाँ अप्रभावित एवं सहज रह सकती है।

असहभागी अवलोकन के लाभ—

असहभागी अवलोकन के अनेक लाभों का प्रस्तुतीकरण निम्न हैं।

(i) अधिक वस्तुनिष्ठ विधि—अध्ययन समूह का सदस्य न होने के कारण शोधकर्ता द्वारा पक्षपात की संभावना न्यून रहती है व वस्तुनिष्ठता अधिक रहती है।

(ii) आलेखन की सुविधा—अवलोकनकर्ता द्वारा अध्ययन समूह का सदस्य न होने से घटना को देखकर उसका वस्तुनिष्ठता के साथ आलेखन संभव होता है।

(iii) कम खर्चीली व समय की बचत—सहभागी अवलोकन की अपेक्षा असहभागी अवलोकन में कम समय एवं कम धन में अध्ययन कार्य किया जा सकता है।

(iv) अधिक विश्वसनीयता—असहभागी अवलोकन की विधि से प्राप्त घटनाओं का निष्कर्ष स्वाभाविक रूप में व अधिक विश्वसनीय होता है।

(v) स्तरित समाज में संभव विधि—सहभागी अवलोकन स्तरित समाज में कठिन होता है। एक उपसमूह में पूर्ण सहभागिता उसे दूसरे उपसमूह में भाग लेने में बाधा पहुँचाती है जहां उसे विरोध का सामना करना पड़ता है। असहभागी अवलोकनकर्ता इस विरोध से बच सकता है। उसकी स्थिति दोनों विरोधी उपसमूहों के लिए समान होती है। गुणों के बाद अब आपको असहभागी अवलोकन के किंचित दोषों का ज्ञान देंगे।

दोष :— असहभागी अवलोकन के निम्न दोष भी हैं—

(i) गहन व गुप्त सूचनाओं की प्राप्ति के लिये असहभागी अवलोकन उपयुक्त विधि नहीं है।

(ii) विशुद्ध असहभागी अवलोकन कठिन एवं कभी-कभी असंभव भी होता है।

(iii) एक अजनबी व्यक्ति के प्रति समुदाय वालों का संदेहास्पद होना भी स्वाभाविक है। इसी कारण समुदाय सदस्यों के व्यवहारों में कृत्रिमता आ जाती है।

(iv) असहभागी अवलोकन में अवलोकनकर्ता, कई घटनाओं एवं क्रियाओं का महत्व समझने में

असफल होता है क्योंकि वह घटनाओं को अपने दृष्टिकोण से देखता है न कि भाग लेने वालों की दृष्टि से। अतः घटना का वास्तविक महत्व छिप जाता है।

इस इकाई में सहभागी व असहभागी अवलोकन के प्रत्येक पक्ष से आप परिचित हो गये होंगे। अब हम अर्द्धसहभागिता अवलोकन के विषय में चर्चा करेंगे।

आइये, आपको हम अर्द्धसहभागिक अवलोकन के विषय में ज्ञान प्रदान करेंगे।

10.3.4 अर्द्ध-सहभागिक अवलोकन एवं सामूहिक अवलोकन

पूर्ण सहभागी या पूर्ण असहभागी अवलोकन कभी-कभी संभव नहीं हो पाता है। इसलिये ''प्रो० गुडे एवं हॉट'' ने इन दोनों के मध्यवर्ती मार्ग़ को अपनाने का सुझाव दिया है, अर्थात ''समूह में शोधकर्ता की लगातार उपस्थिति उसे समूह की गतिविधियों में न्यूनाधिक रूप में भाग लेने के लिए प्रेरित करती है, उसका समूह के साथ कुछ न कुछ सम्बंध भी स्थापित हो जाता है। जिसे 'गुडे एवं हाट' ने ''अर्द्ध-सहभागी अवलोकन'' कहा है।

''अवलोकन की एक विधि, जिसमें अवलोकनकर्ता सहभागी व असहभागी दोनों प्रकार के अवलोकन के बीच की स्थिति को अपनाता है, अर्थात् अध्ययन किये जाने वाले संमुदाय की कुछ क्रियाओं में वह पूर्ण सहभागी की भूमिका अदा करता है, तो कहीं पर वह पूर्ण असहभागी बन जाता है।''

यह सहभागी अवलोकन की कठिनाइयों एवं असहभागी अवलोकन की शुष्क तटस्थता से बचने के लिए एक मध्यम मार्ग है। आप अब अर्द्ध सहभागी अवलोकन की अवधारणा से परिचित हो गये होंगे। अब सामूहिक अवलोकन पर चर्चा करेंगे।

सामूहिक अवलोकन—सामूहिक अवलोकन दो पद्धतियों नियंत्रित अवलोकन व अनियंत्रित अवलोकन का मिश्रित रूप है। इस प्रविधि के अन्तर्गत एक ही समस्या या सामाजिक घटना का निरीक्षण कई अनुसंधानकर्ताओं द्वारा होता है। इस विधि में प्रेक्षकों या अवलोकनकर्ता /अनुसंधानकर्ताओं का एक समूह किसी घटना का एक साथ अवलोकन करते हैं।

''**सिन पाओ यंग**'' (Hsin Pao Young — Fact finding with Rural People) के अनुसार—''यह नियंत्रित व अनियंत्रित निरीक्षण का सम्मिश्रण होता है। इसमें कई व्यक्ति मिलकर सामग्री एकत्रित करते हैं और बाद में एक केन्द्रीय व्यक्ति द्वारा उन सबकी देन का संकलन व उससे निष्कर्ष निकाला जाता है। सामूहिक अवलोकन के लिये बड़ी प्रशासनिक व्यवस्था, अधिक व्यक्ति एवं धन की आवश्यकता पड़ती है। सन् 1944 में 'जमैका' में वहाँ की स्थानीय दशाओं के अध्ययन के लिये इस प्रविधि को प्रयोग में लाया गया था। इस प्रकार ऐसे अवलोकन में कुछ अवलोकनकर्ताओं द्वारा घटना का 'अलग अलग' अध्ययन कराया जाता है तथा बाद में निष्कर्ष निकाला जाता है।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप यह महसूस कर रहे होंगे कि सहभागी, असहभागी, अर्द्धसहभागी व सामूहिक अवलोकन क्या है तथा इसकी अवधारणाओं को समझने में सफल हो गये होंगे। इसके बाद हम अवलोकन / निरीक्षण विधि, जो कि तथ्य संकलन की प्राथमिक संकलन की विधि है, के महत्व एवं सीमाओं पर प्रकाश डालेंगे। जिसका ज्ञान प्राप्त कर आप 'अवलोकन' पद्धति का अनुभव के साथ प्रयोग कर सकते हैं। सामाजिक शोध में तथ्य संकलन की एक प्रमुख विधि 'अवलोकन' का सही तरीके से प्रयोग आप तभी कर सकते हैं जब 'अवलोकन' की सभी विशेषताओं, इसके प्रकारों, गुणों व दोषों की जानकारी से भलीभांति परिचित होंगे।

10.4 अवलोकन विधि का महत्व एवं सीमाएँ

अब इस पद्धति का मूल्यांकन अन्य दूसरी विधियों के संदर्भ में जैसे-प्रश्नावली, साक्षात्कार आदि की तुलना में किया जा सकता है, अवलोकन पद्धति के प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैं —

(i) सरल एवं प्राथमिक विधि—यह विधि अत्यन्त सरल एवं अधिक प्राथमिक भी है चूंकि अवलोकन के लिये किसी विशेष प्रकार की पूर्व आवश्यकताएँ नहीं होती हैं।

(ii) अधिक विश्वसनीयता—अवलोकन विधि से प्राप्त आंकड़े दो कारणों के कारण विश्वसनीय होते हैं—

(a) शोधकर्ता द्वारा तथ्यों का प्रत्यक्ष निरीक्षण होता है।

(b) उनकी क्रिया व व्यवहार में परिवर्तन का आसानी से अवलोकन कर विश्वसनीयता को प्राप्त किया जा सकता है।

(iii) उपकल्पना के निर्माण में सहायक—अवलोकन विधि उपकल्पना के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान देती है। अवलोकन द्वारा प्राप्त अनुभवों का स्रोत उपकल्पना के निर्माण का मुख्य साधन है।

(iv) गहन सूचना प्राप्त करने में सहायक—अवलोकन विधि लंबे (गहन) संपर्क द्वारा सूचनाओं का संकलन करती है तथा इसमें अवलोकनकर्ता घटना से सम्बन्धित अर्थपूर्ण तथ्यों का संकलन करता है, तथा जो गहन सूचना प्राप्त करने में सहायक हैं।

(v) उत्तरदाताओं के बताने की क्षमता से मुक्त —

(vi) उत्तर देने की इच्छा पर निर्भर नहीं—प्रश्नावली या साक्षात्कार में यह भी आवश्यक है कि उत्तरदाता उत्तर देने के लिये तैयार एवं इच्छुक हो लेकिन अवलोकन में यह कठिनाई नहीं है। साक्षात्कार में व्यक्ति मिलने से इनकार कर सकता है, प्रश्नावली लौटाने में उत्तरदाता आनाकानी कर सकता है परन्तु अवलोकन में उत्तरदाता की इच्छा पर निर्भरता नहीं रहती है।

दोष एवं सीमाएं —

अवलोकन विधि का सामाजिक शोध में अपना एक पृथक् महत्व होते हुए भी इस विधि की अपनी कुछ सीमाएँ निम्न हैं—

(i) सीमित क्षेत्र— कई विषय एवं सूचनाएं ऐसी हैं, जिसका अवलोकन असंभव नहीं, तो कठिन अवश्य है जैसे—

(a) गुप्त एवं अत्यंत वैयक्तिक क्रियाएं—यौन व्यवहार, अपराधी व्यवहार, पारिवारिक संकट आदि।

(b) सूक्ष्म विषय, जिनका आंखों द्वारा अवलोकन संभव नहीं है। जैसे—मनोवृत्ति, विचार आदि।

(c) लंबे / दीर्घ काल तक चलने वाली घटनाएं, जिनका अवलोकन कठिन हो जाता है। उदा०-जीवन इतिहास से सम्बद्ध तथ्यों का संग्रहण इस विधि से असंभव है।

(ii) वस्तुनिष्ठता की समस्या — अवलोकन विधि में घटना का अध्ययन करते समय शोधकर्ता अपने विचारों व अनुभवों का समावेश अध्ययन में कर देता है जिसमें यथार्थता की कमी आ जाती है।

(iii) अवलोकन कहीं-कहीं निषिद्ध भी होता है अर्थात् प्रत्येक स्थान व समय पर अवलोकन संभव नहीं है।

उदाहरण — किसी प्रेमी-प्रेमिका के व्यक्तित्व व व्यावहारिक जीवन का निरीक्षण करना हो तो ऐसी स्थिति के लिये वह युगल जोड़ी तैयार न होगी।

(iv) भूतकालीन घटनाओं का भी निरीक्षण नहीं किया जा सकता है।

इस रूप में अवलोकन विधि की ये सीमाएं / दोष भी वैज्ञानिक अध्ययन के लिये बाधक बन जाते हैं।

इस इकाई में आपने 'अवलोकन' के विविध आयामों पर विस्तृत ज्ञान प्राप्त किया है, जिससे अब आप भलीभाँति यह समझ सकते हैं कि किसी परिस्थिति में, किसी घटना/वस्तु से सम्बन्धित अध्ययन करने के लिए कौन सी प्रविधि उपयुक्त होगी।

10.5 सारांश

इस इकाई में हमने 'अवलोकन' के संबोध को स्पष्ट करने का प्रयास करते हुए इसकी विशेषताओं का वर्णन किया है। विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रस्तुत परिभाषा को विश्लेषित करते हुए इसके विविध प्रकारों की भी चर्चा की है। अवलोकन के विविध प्रकारों में हमने नियंत्रित अवलोकन व अनियंत्रित अवलोकन पर प्रकाश डाला है। अवलोकन के अन्य स्वरूपों में हमने सहभागी व असहभागी अवलोकन की भी चर्चा की है, इसके गुण व दोषों का भी वर्णन इसी इकाई में किया है। इसी इकाई के अन्तर्गत हमने अर्द्ध-सहभागी अवलोकन या सामूहिक अवलोकन की भी चर्चा की है। इसके बाद अंत में हमने अवलोकन विधि का महत्व स्पष्ट करते हुए इसकी सीमाओं की भी व्याख्या की है। इस प्रकार आपने इस इकाई में अवलोकन का समग्र ज्ञान प्राप्त किया होगा, जिसकी सहायता से आप इस पद्धति का प्रयोग आवश्यकतानुसार कर सकते हैं।

10.6 बोध प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्नः-

प्र०1 अवलोकन पद्धति में किस इन्द्रिय का प्रयोग अधिक होता है—

(i) मुंह (ii) नेत्र (iii) कान (iv) पैर

प्र० 2 'ठोस अर्थ में अवलोकन में कानों तथा वाणी की अपेक्षा आँखों के प्रयोग की स्वतन्त्रता है। यह कथन किस विद्वान का है—

(i) मेजर (ii) पी. वी. यंग (iii) किम्बाल यंग (iv) बोगार्ड्स

प्र०3 'लिण्डमैन' ने सहभागी अवलोकन शब्द का प्रयोग किस पुस्तक में किया है—

(i) इन्ट्रोडक्टरी सोशियोलाजी (ii) सोशल रिसर्च (iii) सोशल डिस्कवरी

(iv) मेथड्स इन सोशल रिसर्च

प्र०4 ''विज्ञान का प्रारम्भ अवलोकन से होता है एवं इसकी पुष्टि के लिये अन्ततः अवलोकन पर ही लौटकर आना पड़ता है।'' कथन किसका है—

(i) सी० ए० मोजर (ii) गुडे एवं हाट (iii) पी. वी. यंग (iv) लुण्डवर्थ

लघुउत्तरीय प्रश्न :-

प्र०1 अवलोकन का अर्थ स्पष्ट कीजिये ?

प्र०2 सामूहिक अवलोकन से आप क्या समझते हैं ?

प्र०3 अर्द्ध सहभागी अवलोकन से आप क्या समझते हैं ?

प्र०4 नियंत्रित एवं अनियंत्रित अवलोकन का अर्थ स्पष्ट कीजिये ?

प्र०5 अवलोकन की विशेषताओं पर प्रकाश डालिये ?

प्र०6 किस प्रकार के अवलोकन में अवलोकनकर्ता उस अध्ययन समूह का सदस्य बनकर उसका अध्ययन करता है—

(i) असहभागी अवलोकन (ii) सहभागी अवलोकन (iii) सामूहिक अवलोकन

(iv) अर्द्ध-सहभागी अवलोकन

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्र०1 अवलोकन से आप क्या समझते हैं, सामाजिक अनुसंधान में अवलोकन के महत्व एवं इसके दोषों का विवेचन कीजिये ?

प्र०2 अवलोकन के विविध प्रकारों का वर्णन करते हुए इसकी उपयोगिता की व्याख्या कीजिये ?

10.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

उ० 1 (ii) नेत्र

उ० 2 (i) मोजर

उ० 3 (iii) सोशल डिस्कवरी

उ० 4 (ii) गुडे एवं हाट

उ० 5 (ii) सहभागी अवलोकन

इकाई 11 साक्षात्कार

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 साक्षात्कार की परिभाषा व विशेषतायें

11.2.1 साक्षात्कार के उद्देश्य

11.3 साक्षात्कार के प्रमुख प्रकार

11.3.1 औपचारिक, अनौपचारिक, सामुहिक साक्षात्कार

11.3.2 संरचित साक्षात्कार- लाभ एवं दोष

11.3.3 असंरचित साक्षात्कार, लाभ एवं दोष

11.3.4 चिकित्सीय साक्षात्कार, केन्द्रित साक्षात्कार, पुनरावृत्ति साक्षात्कार, साक्षात्कार-निर्देशिका

11.4 साक्षात्कार विधि का महत्व एवं दोष या सीमाएँ

11.5 सारांश

11.6 बोध प्रश्न

11.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

11.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप —

- साक्षात्कार का अर्थ व उसकी विशेषताओं पर टिप्पणी सकेंगे।
- साक्षात्कार के प्रमुख प्रकार की सूची बना सकेंगे।
- साक्षात्कार के महत्व का उल्लेख सकेंगे।
- साक्षात्कार पद्धति के दोषों का वर्णन कर सकेंगे।

11.1 प्रस्तावना

इस इकाई में हम तथ्य संकलन की प्रविधि 'साक्षात्कार' पर प्रकाश डालेंगें। चूंकि साक्षात्कार किसी भी विषय में व्यक्ति के द्वारा दिया गया मौखिक प्रत्युत्तर, जिसके आधार पर हम उसके विचारों व ज्ञान की सीमा व गुणवत्ता का आंकलन करते हैं, एक समाजशास्त्री के लिये 'साक्षात्कार' तथ्य संकलन की एक विशेष प्रविधि के रूप में है।

आलपोर्ट (Allport) ने इस संदर्भ में कहा है कि यदि आप जानना चाहते हैं कि किसी घटना विशेष के संदर्भ में लोग क्या महसूस करते हैं उनकी उस विषय विशेष में क्या सोच है, इसे जानने के लिये साक्षात्कार एक शाब्दिक प्रत्युत्तर है।

यह स्पष्ट है कि आप साक्षात्कार, इसकी विशेषताएं, इसके विविध प्रकारों, महत्व व सीमाओं के अध्ययन द्वारा अपने ज्ञान में वृद्धि कर इस योग्य हो जायेंगे कि सामाजिक जीवन में किसी समय / किसी क्षण, किसी बिन्दु विशेष के विषय में लोगों की जानकारी प्राप्त कर निष्कर्ष निकाल सकते हैं। अत: साक्षात्कार में अवलोकन से अलग हटकर प्रश्नों द्वारा अपेक्षित मौखिक प्रत्युत्तर प्राप्त कर सकते हैं। मनुष्यों के ज्ञान भंडार में वृद्धि साक्षात्कार विधि द्वारा की जाती है। साक्षात्कार सम्मुख वार्तालाप विनिमय है जिसमें एक अवलोकनकर्ता दूसरे व्यक्ति से सूचना प्राप्त करता है तथा आवश्यक जानकारियाँ संग्रहीत कर अपने ज्ञान में वृद्धि करता है ।

11.2 साक्षात्कार की परिभाषा व विशेषताएं

आइये, आपको अवधारणा व इसकी विशेषताओं का ज्ञान प्रदान करेंगें। सामाजिक अनुसंधान में तथ्य संकलन की प्रमुख विधि के रूप में साक्षात्कार महत्वपूर्ण विधि है। साक्षात्कार प्राथमिक सूचना संकलन की एक महत्वपूर्ण प्रविधि है जिसमें दो या दो से अधिक व्यक्ति परस्पर प्रश्नोत्तर के माध्यम से अन्त: क्रिया करते हैं। तथ्य संकलन की साक्षात्कार प्रविधि द्वारा व्यक्तियों की भावनाओं, उद्वेगों, प्रवृत्तियों का अध्ययन किया जा सकता है। इस प्रविधि में एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से वार्तालाप द्वारा सूचनाएं प्राप्त करता है अर्थात् ''साक्षात्कार सोद्देश्य वार्तालाप है। जिसमें एक व्यक्ति दूसरे से सूचना संकलित करता है''। साक्षात्कार की विविध समाज विद्वानों ने अलग-अलग व्याख्या की है—

मैकौबी एवं मैकोबी (1954) के अनुसार साक्षात्कार आमने-सामने की स्थिति में शाब्दिक अंत: क्रिया है जिसमें एक व्यक्ति या साक्षात्कारकर्ता दूसरे व्यक्तिं या व्यक्तियों से उनके विचार या विश्वास सम्बन्धी सूचनाएं जानने का प्रयत्न करता है। एफ० एन० कलिंजर (1964) ने साक्षात्कार को निम्न रूप में प्रस्तुत किया है, साक्षात्कार, अन्तर्वैयक्तिक एवं सम्मुख भूमिका की स्थिति है, जिसमें साक्षात्कारकर्ता दूसरे व्यक्ति या उत्तरदाता से ऐसे प्रश्न पूछता है, जो शोध समस्या के उद्देश्य के लिये उपयुक्त हों।

प्रो० पी० वी० यंग ने साक्षात्कार को एक ऐसी क्रमबद्ध विधि कहा है जिसके द्वारा एक व्यक्ति कम / अधिक कल्पना द्वारा अपेक्षाकृत अजनबी के जीवन में प्रवेश पाता है। इसका अर्थ यह है कि साक्षात्कार एक गहन विधि है। साधारण शब्दों में विभिन्न विधियों में साक्षात्कार एक ऐसी विधि है, जिसमें अधिक आंतरिक एवं संवेदनात्मक पक्ष जो बाहरी मुखौटे के पीछे छिपे होते हैं और इसीलिये अजनबी होते हैं, स्पष्ट किये जा सकते हैं।

वी० एम० पामर (1928) साक्षात्कार को दो व्यक्तियों के बीच एक सामाजिक स्थिति मानते हैं, जिनमें अन्तर्निहित मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया के अन्तर्गत यह आवश्यक है- कि दोनों व्यक्ति परस्पर उत्तर प्रत्युत्तर करते रहें, यद्यपि साक्षात्कार के सामाजिक शोध के उद्देश्य में सम्बंधित पक्षों से अध्ययन विषय के सम्बन्ध में काफी कुछ विविध उत्तर प्राप्त होने चाहिये।

प्रो० गुडे एवं व्हाट (1952) ने भी ''साक्षात्कार'' को मूल रूप में सामाजिक प्रक्रिया कहा है।

इस प्रकार सार रूप में हम कह सकते हैं कि साक्षात्कार व्यक्तिगत संपर्क द्वारा सूचना एकत्रित करने एवं उन्हें लिखने की ऐसी क्रमबद्ध प्रविधि है, जिसमें दो या दो से अधिक व्यक्ति किसी विशिष्ट उद्देश्य को सामने रखकर परस्पर आमने-सामने होकर बातचीत, संवाद या उत्तर प्रत्युत्तर करते हैं। अब आप साक्षात्कार की अवधारणा को समझ गये होंगे। आगे इसकी विशेषताओं की चर्चा करेंगें।

साक्षात्कार विधि की विशेषताएं — इसमें हम आपको साक्षात्कार की विशेषताओं के विषय में जानकारी देंगे। साक्षात्कार एक सोद्देश्य तथा व्यवस्थित वार्तालाप है, जिसमें प्रश्नकर्ता शोध-उद्देश्यों के अनुसार तथ्य, विश्वास, मनोवृत्ति, अनुभव एवं विचारों से सम्बद्ध सूचनाएँ उत्तरदाता से प्राप्त करता है। साक्षात्कार प्रविधि की निम्नांकित प्रमुख विशेषताएं हैं—

(i) साक्षात्कार प्रविधि की मुख्य विशेषता यह है कि इसमें दो या दो से अधिक लोगों का निकटतम संपर्क एवं वार्तालाप होता है। यह एक आवश्यक शर्त भी है।

(ii) साक्षात्कार में दो पक्ष, एक पक्ष (एक व्यक्ति), साक्षात्कारकर्ता की भूमिका निर्वाह करता है, दूसरा पक्ष (दूसरा व्यक्ति या दो से अधिक व्यक्ति) उत्तरदाता की भूमिका निर्वाह करता है।

(iii) इस पद्धति में आमने-सामने के प्राथमिक सम्बन्ध साक्षात्कारकर्ता व उत्तरदाता के बीच स्थापित किये जाते हैं।

(iv) साक्षात्कार विधि में आमने-सामने के सम्बन्ध किसी विशिष्ट उद्देश्य को ध्यान में रखकर ही स्थापित किये जाते हैं।

(v) सामाजिक अनुसंधानों एवं सामाजिक अध्ययन हेतु सामग्री संकलन की मौखिक प्रविधि के रूप में जानी जाती है।

(vi) साक्षात्कार एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया भी है, जिसके आधार पर साक्षात्कारकर्ता, उत्तरदाता से अधिक गहन व आंतरिक सूचनाएं प्राप्त कर सकता है।

(vii) साक्षात्कार तथ्य संकलन की स्वतंत्र प्रविधि मात्र न होकर अन्य प्रविधियों के साथ प्रयोग होने के कारण पूरक विधि भी है जैसे—अवलोकन पद्धति में साक्षात्कार विधि का प्रयोग एक पूरक विधि है।

11.2.1 साक्षात्कार के उद्देश्य

आइये अब हम साक्षात्कार की विशेषताओं के बाद इसके उद्देश्य की चर्चा कर ज्ञान प्रदान करेंगे। साक्षात्कार का प्रयोग विविध उद्देश्यों के लिये किया जाता है जैसे नौकरी में चुनाव के लिये, संस्था में प्रवेश के लिये, नेता से मिलने के लिये, चिकित्सा में निदान के लिये आदि। लेकिन सामाजिक शोध में साक्षात्कार विधि के निश्चित व विविध उद्देश्य निम्नांकित हैं—

लुण्डबर्ग ने साक्षात्कार के 2 प्रमुख उद्देश्यों का निर्धारण किया है—

(i) तथ्य संकलन (ii) उत्तरदाता के जीवन के भावात्मक पक्षों का अध्ययन।

मैकोबी एवं मैकोबी के अनुसार — साक्षात्कार के निम्न उद्देश्य हैं—

(i) तथ्य संकलन (ii) उपकल्पना का निर्माण (iii) अन्य स्त्रोतों से प्राप्त सूचनाओं का सत्यापन।

यहीं पर प्रो० पी० वी० यंग ने भी इसके उद्देश्य को निम्नरूप में वर्णित किया है—

(i) उपकल्पना का निर्माण।

(ii) उत्तरदाता की व्यक्तित्व सम्बन्धी सूचना

(iii) वैयक्तिक सूचना प्राप्त करना।

(iv) द्वितीयक तथ्यों का संकलन।

इसके अलावा हम साक्षात्कार के प्रमुख उद्देश्यों को निम्नलिखित रूपों में प्रस्तुत कर सकते हैं—

(i) आन्तरिक एवं व्यक्तिगत सूचना देना।

(ii) प्रत्यक्ष एवं आमने-सामने के संपर्क द्वारा सूचना देना।

(iii) प्राक्कल्पनाओं / उपकल्पना का निर्माण एवं समस्या का प्रारंभिक अन्वेषण।

(iv) समस्या से सम्बन्धित एवं विषय से सम्बद्ध प्राथमिक तथ्यों का संकलन करना।

(v) अन्वेषण, उपकल्पना निर्माण, वर्णन (तथ्य संकलन), पुनरीक्षण, स्पष्टीकरण आदि अन्य महत्वपूर्ण उद्देश्य हैं।

इस इकाई में आपने साक्षात्कार के उद्देश्यों का ज्ञान प्राप्त किया होगा।

11.3 साक्षात्कार के प्रमुख प्रकार

साक्षात्कार के उद्देश्यों के बाद अब आपको इसके प्रमुख स्वरूपों की जानकारी देंगे। साक्षात्कार विधि का वर्गीकरण विभिन्न आधारों पर प्रस्तुत किया जाता है, ये आधार निम्नलिखित हो सकते हैं, जैसे कार्य के दृष्टिकोण से, औपचारिकता के आधार पर, उत्तरदाताओं की संख्या के आधार पर आदि।

कार्य के दृष्टिकोण से साक्षात्कार के निम्नलिखित स्वरूप हो सकते हैं—

(i) उपचारात्मक साक्षात्कार :—इस प्रकार के साक्षात्कार में किसी सामाजिक समस्या, व्यक्तिगत विघटन या मानसिक रोग के पीछे छिपे कारणों का पता लगाकर उसके निदान का प्रयास किया जाता है।

(ii) अनुसंधान साक्षात्कार — इस प्रकार के साक्षात्कार में सामाजिक घटनाओं में कार्यकारण सम्बंध से जुड़े तथ्यों का संकलन किया जाता है। इसका प्रमुख उद्देश्य तथ्य संकलन व उपकल्पना परीक्षण है।

(iii) निदानात्मक साक्षात्कार — जब साक्षात्कार का उद्देश्य किसी विशेष सामाजिक समस्या के कारणों की खोज करना होता है, तब उसे हम निदानात्मक साक्षात्कार कह सकते हैं। इसके द्वारा साक्षात्कारकर्ता सामाजिक समस्या के पीछे प्रेरक कारणों को स्पष्ट करता है। इसके अलावा 'मोजर' (Moser) ने औपचारिकता के आधार पर साक्षात्कार को 2 स्वरूपों में व्यक्त किया है।

11.3.1 औपचारिक, अनौपचारिक, सामूहिक साक्षात्कार

औपचारिक साक्षात्कार

इस प्रकार का साक्षात्कार पूर्व नियोजित व पूर्व व्यवस्थित ढंग से किया जाता है जिसमें प्रश्नों का रूप, क्रम एवं ढंग प्रत्येक उत्तरदाता के लिये लगभग समान होता है। इसके द्वारा तुलनीय आंकड़े संकलित हो सकते हैं।

अनौपचारिक साक्षात्कार— इस साक्षात्कार स्वरूप में साक्षात्कारकर्ता को छूट होती है कि वह अनौपचारिक एवं असंरचित रूप में सूचनादाताओं से तथ्य संकलित कर सकता है यह लचीली प्रविधि है।

अब यहीं पर उत्तरदाताओं की संख्या के आधार पर साक्षात्कार दो प्रकार का हो सकता है—

(i) व्यक्तिगत साक्षात्कार—इस प्रकार के साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता केवल एक व्यक्ति से साक्षात्कार करता है।अधिकांश प्रकार के व्यक्तिगत (वैयक्तिक) साक्षात्कार इसी रूप में किये जाते हैं। ये नियंत्रित, अनियंत्रित, संरचित या असंरचित हो जाते हैं। इसमें गहन सूचना की प्राप्ति घनिष्ठ सम्बन्धों की स्थापना द्वारा ही संभव होती है। उदाहरण—मोहन की व्यक्तिगत जानकारी इसी पद्धति से संभव है।

(ii) सामूहिक साक्षात्कार — इसमें एक ही समय में एक से अधिक उत्तरदाताओं का सम्मिलित साक्षात्कार किया जाता है। 'मर्टन' ने सामूहिक साक्षात्कार की संरचना की चर्चा करते हुए कहा है कि शोधकर्ता ऐसी स्थिति में प्रशासनिक सुविधा के लिये समूह की बनावट एवं आकार को एक निश्चित सीमा में रखता है। जहाँ तक संभव हो, एक समान शैक्षणिक व बौद्धिक स्तर के व्यक्तियों का समूह होना चाहिए। समूह का आकार भी व्यवस्थानुकूल होना चाहिए।

सामूहिक साक्षात्कार के लाभ व हानियां—

लाभ—साक्षात्कार का प्रमुख लाभ, विस्तृत सूचना का क्षेत्र है। एक से अधिक व्यक्तियों से तुलनात्मक रूप में सूचनाएं पायी जाती हैं। इस स्थिति का दूसरा लाभ यह है कि विभिन्न व्यक्तियों में झिझक या संकोच की मात्रा भिन्न होती है अत: इस विधि में नि:संकोची व्यक्ति की देखा- देखी संकोची व्यक्ति भी अधिक सूचनायें देने लगता है। सामूहिक साक्षात्कार का एक लाभ यह भी है कि एक व्यक्ति की बातों को सुनकर दूसरे व्यक्ति को भी वैसी ही बातें याद आ सकती हैं। व्यक्तिगत स्थिति में जिन बातों को भूल जाने के कारण वह नहीं बताता, सामूहिक स्थिति में वे उसे याद आ जाती हैं।

हानि —सामूहिक साक्षात्कार की स्थिति में कभी-कभी उत्तरदाता अनियंत्रित, अधिक वाचाल व अधिक प्रभावी हो जाते हैं, इसका परिणाम यह होता है कि अगले व्यक्ति को वाचाल व्यक्ति के समक्ष अपनी बात को कहने का अवसर नहीं मिलता है। 'मर्टन' इस सीमा को 'नेता प्रभाव' कहा है।

सामूहिक साक्षात्कार में कई व्यक्तियों (उत्तरदाताओं) के एक साथ बोलने की संभावना बनी रहती है। अनुशासन का सिलसिला अनियंत्रित हो जाता है। सामूहिक साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता व सूचनादाता के बीच वह घनिष्ठ सम्बंध नहीं स्थापित हो सकता है जो वैयक्तिक स्थिति में संभव होता है। ऐसी स्थिति में लोग अपनी गुप्त बातों का प्रस्तुतीकरण नहीं कर पाते हैं, अत: गहन व गोपनीय सूचनाओं के संग्रहण के लिए यह विधि उपयुक्त नहीं है। यद्यपि इस प्रविधि में सूचनाओं का क्षेत्र व्यापक होता है, किन्तु गहन नहीं होता है।

इस इकाई में आपने साक्षात्कार के प्रमुख स्वरूपों औपचारिक, अनौपारिक, सामूहिक एवं व्यक्तिगत साक्षात्कार के विषय में ज्ञान प्राप्त किया। इसके बाद अब हम संरचित साक्षात्कार के गुण व दोषों की चर्चा करेंगे। संरचना के आधार पर साक्षात्कार के दो स्वरूप निम्न हैं—

11.3.2 संरचित साक्षात्कार-लाभ एवं दोष

यहाँ पर हम संरचित साक्षात्कार पर प्रकाश डालेंगे। संरचित साक्षात्कार को कभी-कभी हम नियंत्रित साक्षात्कार, मानकीकृत साक्षात्कार भी कह देते हैं। 'मोजर' इसे औपचारिक साक्षात्कार भी कहते हैं।

संरचित साक्षात्कार में संरचित एवं प्रामाणिक प्रश्न एवं प्रत्युत्तर की श्रेणियों का प्रयोग किया जाता है। इसमें उत्तरदाता व साक्षात्कारकर्ता दोनों ही सुनियोजित एवं सुनिश्चित प्रश्नों से बंधे होते हैं। इसके लिये निश्चित शब्दावली और निश्चित क्रम में प्रश्नों की व्यवस्था एवं पूर्व निश्चित एवं औपचारिक स्थिति में

साक्षात्कार संपादित होता है। इसके लिये प्राय: एक संरचित अनुसूची का प्रयोग किया जाता है। पूर्व निश्चित प्रश्न एवं यंत्र होने के कारण साक्षात्कार पर पूर्ण नियंत्रण होता है। साक्षात्कारकर्ता प्रत्यक्ष एवं निश्चित रूप से उत्तरदाताओं से प्रश्न पूछकर उत्तर प्राप्त करता है और उनका आलेखन भी निश्चित संरचित रूप में किया जाता है। साक्षात्कार प्रक्रिया में परिवर्तन की सुविधा एवं स्वतन्त्रता न्यून होती है, सभी कुछ एक पूर्व निश्चित एवं सुनिश्चित ढंग से चलता है। ऐसे साक्षात्कार में उत्तरदाताओं से समरूप प्रश्न पूछना समरूप स्थिति में तथ्य संकलन है। यद्यपि विशेष परिस्थितियों में साक्षात्कारकर्ता प्रश्नों की व्याख्या या अतिरिक्त प्रश्न भी कर सकता है, तथापि मौलिक रूप से साक्षात्कारी की यह स्वतंत्रता न्यूनतम होती है, ताकि साक्षात्कार प्रत्येक स्थिति में एक रूप हो।

अब अप संरचित साक्षात्कार के विषय में ज्ञान प्राप्त कर चुके होंगे, तथा उसके विषय में आवश्यक जानकारी भी प्राप्त कर ली होगी, इसके लाभ व हानि की चर्चा अब हम आगे करते हैं।

संरचित साक्षात्कार के लाभ —अब आपकी संरचित साक्षात्कार के गुण व दोषों से परिचय कराते हैं। इस प्रकार के साक्षात्कार के निम्न लाभ हैं—

(i) संरचित साक्षात्कार का प्रयोग, अधिक संख्या में उत्तरदाताओं से संपर्क के लिये किया जाता है।

(ii) इस प्रविधि द्वारा अधिक तुलनात्मक आंकड़ों का संग्रहण किया जा सकता है, वस्तुत: तुलनात्मकता के लिए एकरूपता आवश्यक है। प्रश्नों के स्वरूप, क्रम, ढंग आदि की एकरूपता के कारण इस विधि से तुलनात्मक तथ्य संकलित किये जाते हैं।

(iii) इस विधि से प्राप्त तथ्यों में विश्वसनीयता अधिक होती है। इसमें साक्षात्कारकर्ता द्वारा उत्पन्न पक्षपात की संभावना न्यून रहती है।

दोष — इस संरचित साक्षात्कार के किंचित दोष भी निम्न हैं—

(i) संरचित साक्षात्कार में लचीलापन (वार्तालाप का) समाप्त हो जाता है।

(ii) संरचित साक्षात्कार अति औपचारिक तथा अस्वाभाविक स्थिति में सूचनाओं के संकलन की महत्वपूर्ण विधि है।

(iii) संरचित स्थिति में साक्षात्कारकर्ता व उत्तरदाता के बीच वह घनिष्ठ सम्बन्ध भी नहीं स्थापित हो पाता है, जो गहन एवं व्यक्तिगत सूचनाओं एवं संवेदनात्मक प्रत्युत्तर के लिए आवश्यक है। जिससे सूचना का क्षेत्र सीमित हो जाता है।

(iv) इस साक्षात्कार में कृत्रिमता पूर्ण वातावरण दिखायी पड़ता है। स्वाभाविकता लुप्त प्राय होने लगती है।

इस इकाई में हमारे द्वारा प्रस्तुत संरचित साक्षात्कार के लाभ व दोषों का ज्ञान आपको प्राप्त हुआ होगा।

11.3.3 असंरचित साक्षात्कार लाभ एवं दोष

इसके बाद हम असंरचित साक्षात्कार पर प्रकाश डालेंगे। असंरचित साक्षात्कार को हम अनौपचारिक, अनियंत्रित एवं अमानकीकृत साक्षात्कार भी कहते हैं। गहन साक्षात्कार, वार्तालाप साक्षात्कार, केन्द्रित साक्षात्कार, पुनरावृत्ति साक्षात्कार, चिकित्सकीय साक्षात्कार आदि विधियाँ असंरचित साक्षात्कार की ही विभिन्न प्रविधियाँ है।

असंरचित साक्षात्कार में प्रश्नों का स्वरूप, भाषा, क्रम, आदि पूर्व निश्चित एवं पूर्व संरचित नहीं होता, परिणामस्वरूप साक्षात्कारकर्ता, उत्तरदाता सम्बन्ध एवं भूमिका अधिक अनौपचारिक एवं अनियंत्रित व लचीली होती है। इसमें साक्षात्कारकर्ता को स्वतन्त्रता रहती है। वह साक्षात्कार की आवश्यकता एवं अपनी कुशलता के आधार पर परिवर्तन के लिये भी स्वतन्त्र होता है। अत: उसकी भूमिका अनियंत्रित होती है। अप्रत्याशित एवं अनपेक्षित स्थितियों के लिये साक्षात्कारकर्ता अपने को तैयार रखता है। इस विधि का उपयोग उपकल्पना निर्माण एवं यंत्रों (जैसे-अनुसूची या प्रश्नावली) के निर्माण के लिये भी किया जाता है।

लाभ — इसके निम्नलिखित लाभ हैं—

(i) यह एक अधिक लचीली पद्धति है।

(ii) इस विधि द्वारा अधिक गहन एवं व्यक्तिगत सूचनाएं प्राप्त की जा सकती हैं।

(iii) अन्वेषणात्मक शोध में असंरचित साक्षात्कार विधि अति उपयोगी होती है।

(iv) इसके द्वारा अप्रत्याशित सूचनाओं का संकलन संभव है।

(v) इस विधि द्वारा अधिक स्वाभाविक स्थिति में सूचनाओं का संकलन होता है।

दोष— असंरचित साक्षात्कार पद्धति के लाभ के साथ-साथ किंचित दोष भी हैं, जो निम्नांकित हैं—

(i) इस विधि द्वारा प्राप्त आंकड़ों में तुलनीयता एवं एकरूपता की कमी रहती है।

(ii) इस पद्धति द्वारा प्राप्त सूचनाओं के वर्गीकरण एवं सांख्यिकीय विश्लेषण में कठिनाई होती है।

(iii) चूँकि यह पद्धति अनियंत्रित, अनौपचारिक तथा स्वतन्त्र होती है, इसलिये इसमें पक्षपात की संभावना प्रबल होती है।

(iv) इस विधि द्वारा विश्वसनीयता कम हो जाती है।

इस प्रकार आपने संरचित व असंरचित साक्षात्कार के गुण व दोषों का ज्ञान प्राप्त किया है। इसके बाद हम चिकित्सीय साक्षात्कार की चर्चा करेंगे जो निम्न है—

11.3.4 चिकित्सकीय साक्षात्कार

चिकित्सकीय साक्षात्कार का उद्देश्य उत्तरदाताओं के जीवन के गहनतम पक्षों की जानकारी प्राप्त कर समस्या के मूल कारण एवं निदान को खोजना है। केन्द्रित साक्षात्कार की तरह ही चिकित्सीय साक्षात्कार में भी व्यक्तियों के अनुभव पर प्रकाश डाला गया है। किन्तु साक्षात्कारकर्ता को उन अनुभवों की पूर्व जानकारी नहीं होती, जैसा कि केन्द्रित साक्षात्कार में होता है। चिकित्सीय साक्षात्कार में 'सामान्य अनुभवों' का वर्णन किया जाता है। जबकि वहीं केन्द्रित साक्षात्कार में 'विशिष्ट अनुभवों' के प्रभाव का अध्ययन होता है। इस विधि का सर्वाधिक उपयोग कैदियों, अपराधियों एवं रोगियों के अनुभव एवं जीवन इतिहास के विश्लेषण में होता है। इस प्रकार से चिकित्सकीय साक्षात्कार द्वारा तथ्यों का आवश्यक संग्रहण किया जा सकता है। इसके बाद हम आपको केन्द्रित साक्षात्कार के विषय में जानकारी प्रदान करेंगे।

केन्द्रित साक्षात्कार — अब चिकित्सीय साक्षात्कार के बाद हम आपको केन्द्रित साक्षात्कार के विषय में ज्ञान प्राप्त करायेंगे।

केन्द्रित साक्षात्कार को हम अर्द्ध संरचित साक्षात्कार कहते हैं, क्योंकि यह न तो पूर्णरूप से संरचित है न ही पूर्णतया असंरचित। इस पद्धति में साक्षात्कारकर्ता जहाँ उत्तरदाताओं को एक ओर अपने अनुभव प्रस्तुत करने के लिए स्वन्त्रता देता है, वहीं दूसरी ओर वह उनका ध्यान, विशेष अनुभवों की ओर केन्द्रित करने

का भी प्रयास करता है। इस कार्य के लिये वह साक्षात्कार-निर्देशिका का सहारा ले सकता है। इसमें आपको केन्द्रित साक्षात्कार की अवधारणा स्पष्ट हो गयी होगी।

पुनरावृत्ति साक्षात्कार— अब हम पुनरावृत्ति साक्षात्कार की चर्चा करेंगे।

इस प्रकार के साक्षात्कार में एक से अधिक बार समान उत्तरदाताओं या समान समूह का साक्षात्कार किया जाता है। परिवर्तनशील घटना एवं प्रक्रिया के अध्ययन के लिये, पुनरावृत्ति साक्षात्कार एक महत्वपूर्ण विधि है। इस विधि द्वारा विभिन्न कालों में चल रही प्रक्रिया एवं प्रवृत्ति को स्पष्ट किया जा सकता है।

1. 'लाजर्सफील्ड' (Lazersfield) एवं उसके सहयोगियों ने अमेरिकी राष्ट्रपति के चुनाव में मतदाताओं की निर्णय प्रक्रिया के विश्लेषण में इस विधि का उपयोग किया था। आपको पुनरावृति साक्षात्कार के विषय में पर्याप्त जानकारी हो गयी होगी ।

साक्षात्कार निर्देशिका — इसके बाद हम साक्षात्कार निर्देशिका का विश्लेषण करेंगे।

असंरचित एवं अनिर्देशित साक्षात्कार में अवलोकनकर्ता साक्षात्कार निर्देशिका का उपयोग करता है जिसमें लिखित रूप में साक्षात्कारी के लिये उन विषयों का उल्लेख रहता है, जिनके बारे में वह साक्षात्कार में प्रश्न पूछता रहता है। यह साक्षात्कारकर्ता को यह बताता है कि उसे किस सम्बंध में कैसा प्रश्न पूछना है । लेकिन साक्षात्कार-निर्देशिका, प्रश्नों की क्रमबद्ध सूची या साक्षात्कार अनुसूची नहीं है। दोनों में यही अंतर होता है कि अनुसूची की तरह निर्देशिका में निश्चित एवं क्रमबद्ध प्रश्न नहीं होते, अनुसूची में अंकित प्रश्नों को शब्दश: उसी क्रम में उत्तरदाता से पूछकर उत्तरों को आंकित किया जाता है। इस तरह प्रत्येक उत्तरदाता के लिए एक-एक अनुसूची की आवश्यकता पड़ती है। किन्तु निर्देशिका, प्रश्नों की व्यवस्थित सूची नहीं है, उसमें प्रमुख एवं आवश्यक बिन्दुओं तथा विषयों का उल्लेख होता है, जिसके आधार पर साक्षात्कारकर्ता प्रश्नों को तैयार करता है।

साक्षात्कार-निर्देशिका का उद्देश्य साक्षात्कारकर्ता को साक्षात्कार में सहायता देना है, निर्देशिका में दिये गये विषयों का विकास साक्षात्कारकर्ता पर निर्भर करता है। इसे पढ़ने के बाद आप साक्षात्कार निर्देशिका से परिचित हो गये होंगे। अब इसके कार्य पर प्रकाश डालेंगे।

साक्षात्कार - निर्देशिका के कार्य — प्रो० पी. वी. यंग ने इसके निम्नांकित प्रमुख कार्य बताये हैं—

(i) साक्षात्कारकर्ता द्वारा संचालित विभिन्न साक्षात्कार में एकरूपता लाना।

(ii) साक्षात्कारकर्ता से संकलित तथ्यों में एकरूपता एवं तुलनात्मकता लाना, जिससे, उपकल्पनाओं का परीक्षण हो सके।

(iii) अध्ययन के मूल विषय पर साक्षात्कारकर्ता का ध्यान जमाए रखने में सहायता करना।

(iv) साक्षात्कारकर्ता द्वारा अपनी इच्छानुसार निर्देशिका का सहारा लिया जाना चाहिये।

साक्षात्कार-निर्देशिका का ज्ञान प्राप्त कराने के बाद आपको साक्षात्कार विधि के महत्व एवं सीमाओं के विषय में ज्ञान प्रदान करेंगे।

11.4 साक्षात्कार विधि का महत्व एवं दोष या सीमाएं

साक्षात्कार प्रविधि का सामाजिक, खोज कार्यों में महत्व है। इसके महत्व का निर्धारण निम्नवत् है—

(i) **अमूर्त घटना का अध्ययन :**—साक्षात्कार के द्वारा हम अमूर्त व अदृश्य घटनाओं जैसे-मानसिक स्थिति, भावनाओं, धारणाओं, विचारों, संवेगों आदि का अध्ययन कर सकते हैं।

(ii) **सूचनाओं का सत्यापन :**—इस विधि में सूचनादाता द्वारा दी गई सूचनाओं की विश्वसनीयता एवं सत्यता की जांच साक्षात्कार के दौरान की जा सकती है।

(iii) **लचीली विधि:**—विषयवस्तु एवं संचालन दोनों ही दृष्टियों से यह तथ्यों के संकलन की एक लचीली विधि है।

(iv) **भूतकालीन घटना का अध्ययन :**—इस विधि द्वारा भूतकालीन घटनाओं एवं उनके प्रभावों का अध्ययन किया जा सकता है क्योंकि कुछ घटनाएं ऐसी होती हैं जिनकी पुनरावृत्ति संभव नहीं है। अत: उस समय उपस्थित लोगों से साक्षात्कार प्रक्रिया द्वारा भूतकालीन घटना की जानकारी की जा सकती है।

(v) **मनोवैज्ञानिक महत्व :**— साक्षात्कार विधि में साक्षात्कारकर्ता उत्तरदाता के उद्वेगों, विचारों, भावनाओं, धारणाओं आदि का आसानी से अध्ययन कर सकता है। साक्षात्कार के दौरान सूचनादाता द्वारा प्रकट किये गये भावों, चेहरे की मुद्राओं आदि के आधार पर उसके मनोवैज्ञानिक व्यवहार व मानसिक स्थिति का अध्ययन किया जा सकता है।

दोष या सीमाएं — इसके निम्नांकित दोष भी हैं —

(i) खर्चीली विधि होती है।

(ii) अधिक विस्तृत क्षेत्र में प्रयोग कठिन होता है।

(iii) मौखिक उत्तर पर अधिक विश्वास होता है।

(iv) एकरूपता की कमी दिखायी पड़ती है।

(v) गोपनीयता के आश्वासन की कमी होती है।

(vi) विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है।

(vii) उत्तरदाता के द्वारा वास्तविक जानकारी न देना भी एक कमी है।

(ix) पक्षपात पूर्ण निष्कर्ष की संभावना व कम विश्वासनीयता की प्राप्ति।

11.5 सारांश

इस इकाई के अन्तर्गत 'साक्षात्कार' प्रविधि पर प्रकाश डालते हुए इसके उद्देश्यों को स्पष्ट किया गया है। इसके उपरान्त इसमें इसकी विशेषताओं को व्याख्यायित किया गया है। विविध समाज वैज्ञानकों द्वारा प्रस्तुत साक्षात्कार की परिभाषा को भी स्पष्ट किया गया है। साक्षात्कार के प्रमुख प्रकारों की भी चर्चा की गयी है, जिसमें उपचारात्मक, निदानात्मक, अनुसंधान साक्षात्कार के प्रमुख स्वरूप हैं, इसके अलावा अन्य प्रमुख स्वरूपों में औपचारिक साक्षात्कार एवं अनौपचारिक साक्षात्कार की भी चर्चा की गयी है। सामूहिक साक्षात्कार एवं व्यक्तिगत साक्षात्कार की अवधारणा को भी विवेचित करते हुए इसके गुण एवं दोषों का भी जिक्र किया गया है। इसी इकाई के अन्तर्गत संरचित साक्षात्कार व असंरचित साक्षात्कार को स्पष्ट करते हुए इसके महत्त्व व सीमाओं का भी निर्धारण किया गया है। अंत में केन्द्रित साक्षात्कार, पुनरावृत्ति साक्षात्कार, चिकित्सीय साक्षात्कार की भी चर्चा की गयी है। इस प्रकार इस इकाई में साक्षात्कार से सम्बन्धित इसके सभी आयामों एवं पक्षों की चर्चा करते हुए इसके महत्व एवं दोषों पर भी चर्चा की गयी है।

11.6 बोध प्रश्न

(क) बहुविकल्पीय प्रश्न

प्र०-1 जब साक्षात्कार का उद्देश्य, किसी विशेष सामाजिक घटना या समस्या के कारणों की खोज करना होता है, तो उसे कहते हैं—

(i) अनुसंधान साक्षात्कार (ii) उपचारात्मक साक्षात्कार (iii) निदानात्मक साक्षात्कार

प्र०-2 किस प्रकार के साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता एवं उत्तरदाता दोनों ही सुनियोजित एवं सुनिश्चित प्रश्नों से बंधे होते हैं—

(i) संरचित साक्षात्कार (ii) सामूहिक साक्षात्कार (iii) असंरचित साक्षात्कार

प्र०-3 औपचारिक एवं अनौपचारिक साक्षात्कार में विभाजन किस वैज्ञानिक ने किया—

(i) लुण्डबर्ग (ii) पी. वी. यंग (iii) मोजर

प्र०-4 किस साक्षात्कार को अर्द्ध संरचित साक्षात्कार कहते हैं—

(i) पुनरावृत्ति साक्षात्कार (ii) चिकित्सकीय साक्षात्कार (iii) केन्द्रित साक्षात्कार

प्र०-5 किस साक्षात्कार में एक ही समय में एक से अधिक उत्तरदाताओं का साक्षात्कार किया जाता है—

(i) संरचित साक्षात्कार (ii) सामूहिक साक्षात्कार (iii) निदानात्मक साक्षात्कार

(ख) लघुउत्तरीय प्रश्न

प्र०-1 'साक्षात्कार' से आप क्या समझते हैं ?

प्र०-2 'संरचित साक्षात्कार' की व्याख्या कीजिये ?

प्र०-3 औपचारिक व अनौपचारिक साक्षात्कार की परिभाषा व अंतर स्पष्ट कीजिये?

प्र०-4 'अर्द्ध संरचित साक्षात्कार' पर प्रकाश डालिये ?

प्र०-5 सामूहिक साक्षात्कार पर एक संक्षिप्त निबंध लिखिए ?

(ग) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्र०1 साक्षात्कार के प्रकारों का वर्णन करते हुए इसकी अवधारणा को स्पष्ट कीजिये ?

प्र० 2 साक्षात्कार के स्वरूपों, संरचित साक्षात्कार व असंरचित साक्षात्कार को स्पष्ट करते हुए इसके गुण व दोषों की व्याख्या कीजिये?

11.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

उ० -1 (iii) निदानात्मक साक्षात्कार

उ०-2 (i) संरचित साक्षात्कार

उ०-3 (iii) मोजर

उ०-4 (iii) केन्द्रित साक्षात्कार

उ०-5 (ii) सामूहिक साक्षात्कार

इकाई 12 अनुसूची

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 अनुसूची की परिभाषा, उद्देश्य एवं विशेषताएँ

12.3 अनुसूची के प्रकार

12.3.1 अवलोकन अनुसूची, मूल्यांकन अनुसूची, प्रलेख अनुसूची, संस्था सर्वेक्षण

12.3.2 साक्षात्कार अनुसूची, लाभ व सीमाएं

12.4 अनुसूची निर्माण की प्रक्रिया

12.5 अनुसूची की उपयोगिता एवं सीमाएं

12.6 सारांश

12.7 बोध प्रश्न

12.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

12.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- अनुसूची की परिभाषा व विशेषताओं की विवेचना कर सकेंगे।
- अनुसूची के प्रकार के बारे में टिप्पणी कर सकेंगे।
- अनुसूची के महत्व व सीमाओं के विषय में उल्लेख कर सकेंगे।
- अनुसूची निर्माण की प्रक्रिया का वर्णन कर सकेंगे।

12.1 प्रस्तावना

सामाजिक शोध में शोध उपकरण के रूप में 'अनुसूची' एक प्रचलित नाम है। प्राथमिक तथ्यों के क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित संकलन के लिये यह एक उपयोगी उपकरण है। सामान्यत: 'अनुसूची' एक औपचारिक प्रपत्र है जिसमें संख्यात्मक एवं वर्णनात्मक आंकड़े भरे जाते हैं। शोध में तथ्य संग्रह की अनेक विधियों के आंकड़ों को अनुसूची के माध्यम से व्यवस्थित रूप से अंकित किया जाता है। इसके माध्यम से प्राथमिक सामग्री का संकलन किया जाता है। संरचित साक्षात्कार के लिये अनुसूची एक प्रमुख साधन है। इसलिये साक्षात्कार के लिये अनुसूची एक प्रमुख उपकरण है। इसीलिये इसे 'साक्षात्कार अनुसूची' भी कहा जाता है। यह तथ्य संग्रह की विधि को संरचित एवं नियंत्रित करने की दृष्टि से अति महत्वपूर्ण है। हम इस इकाई में 'अनुसूची' अवधारणा को स्पष्ट करते हुए इसकी विशेषताओं पर प्रकाश डालेंगे, तदुपरान्त अनुसूची के विविध प्रकारों जैसे-अवलोकन अनुसूची, साक्षात्कार अनुसूची, संस्था सर्वेक्षण अनुसूची

आदि का ज्ञान प्रदान करेगें। अंत में अनुसूची निर्माण की प्रक्रिया का वर्णन करते हुए इसकी उपयोगिता व सीमाओं का विश्लेषण करेंगे। इसी इकाई के अन्तर्गत 'अनुसूची' प्रविधि में साक्षात्कारकर्ता द्वारा प्रश्नों को उत्तरदाता से उसी के समक्ष पूछकर भरा जाता है जिससे वास्तविकता व यथार्थता की संभावना प्रबल रहती है। अब आप यह समझ गये होंगे कि अनुसूची के उद्देश्यों के अन्तर्गत किन संदर्भों का अध्ययन करना है, आगे हम अनुसूची के प्रकार, महत्व, सीमाओं पर प्रकाश डालेंगे।

12.2 अनुसूची की परिभाषा, उद्देश्य एवं विशेषताएँ

सर्वप्रथम आपको हम अनुसूची की परिभाषा का ज्ञान प्रदान करेंगे। 'अनुसूची' एक प्रपत्र है, जिसे शोधकर्ता / साक्षात्कारकर्ता तथ्य संकलन के उपकरण के रूप में प्रयुक्त करता है। सामान्यत: अनुसूची प्रश्नों की एक लिखित सूची है। जिसे अनुसंधानकर्ता अपने अध्ययन विषय की प्रकृति व उद्देश्य को ध्यान में रखकर तैयार करता है, जिससे कि उन प्रश्नों का उत्तर सम्बन्धित व्यक्तियों से मालूम किया जा सके और इस प्रकार आवश्यक सूचना एकत्रित करने की प्रक्रिया को एक व्यवस्थित रूप मिले।

अब आपको विविध समाज वैज्ञानिकों द्वारा प्रस्तुत 'अनुसूची' की परिभाषा से परिचित कराते हैं— प्रो० पी० वी० यंग (1954) ने 'अनुसूची' को एक औपचारिक तालिका, एक सूचीपत्र या प्रपत्र कहा है जो परिगणना का एक माध्यम होता है।

गुडे एवं व्हाट (1952) ने अनुसूची के विषय में बताया है कि 'अनुसूची' उन प्रश्नों के समूह का नाम है, जो साक्षात्कारी द्वारा दूसरे व्यक्ति के आमने-सामने की स्थिति को पूछकर भरे जाते हैं।

कलिंजर (1964) का मानना है कि 'अनुसूची' वैयक्तिक साक्षात्कार से सर्वेक्षण सामग्री संकलन का एक उपकरण है।

बोगार्ड्स (1936) ने भी 'अनुसूची' की परिभाषा को निम्न रूप में व्यक्त किया है—'अनुसूची' उन तथ्यों को प्राप्त करने की औपचारिक प्रणाली का प्रतिनिधित्व करती है जो वैषयिक रूप में हैं, तथा सरलता से प्रत्यक्ष योग्य है।

अब आप परिभाषाओं के ज्ञान से 'अनुसूची' की आवश्यकता से परिचित हो गये होंगे।

उद्देश्य — आइये, आपको हम सर्वप्रथम अनुसूची के आवश्यक उद्देश्यों से भली भांति परिचित करायेंगे—

(i) अनुसूची का मुख्य उद्देश्य प्रश्नों के उतर के माध्यम से ऐसे तथ्यों को एकत्रित करना है जो कि अध्ययन विषय की वास्तविकता को प्रकट करें अथवा उपकल्पना की जांच करने में सहायक सिद्ध हों।

(ii) अनुसूची का प्रमुख्र उद्देश्य प्रामाणिक, विश्वसनीय एवं वास्तविक सूचनाएं संकलित करना है।

(iii) इसका उद्देश्य गुणात्मक तथ्यों को संख्यात्मक तथ्यों में प्रकट कर उन्हें अनुमापन योग्य बनाना है।

(iv) अध्ययन समस्या के बारे में वैषयिक सूचना संकलित करना।

(v) तथ्यों का एक व्यवस्थित क्रम में संकलन करना ।

(vi) स्थानीय एवं क्षेत्रीय अध्ययन करने में सहायक।

(viii) इसमें सूचनाएं, हाथों हाथ उत्तरदाता से पूछकर कर साक्षात्कारकर्ता भरता है।

(ix) यह आवश्यक तथ्यों का बहिष्कार भी करती है।

विशेषताएं — अब उद्देश्यों के बाद आपको अनुसूची की विशेषताओं का ज्ञान-प्रदान करेंगे। जिसमें अनुसूची की निम्न विशेषताएं हैं —

(i) अनुसूची प्रश्नों की एक तालिका है।

(ii) अनुसूची अध्ययन-समस्या से सम्बन्धित शीर्षक, उपशीर्षक, एवं प्रश्नों से सम्बन्धित एक व्यवस्थित तथा वर्गीकृत सूची होती है।

(iii) साक्षात्कारकर्ता इस प्रश्नसूची को उत्तरदाता से पूछकर स्वयं भरता है।

(iv) इस प्रश्न तालिका का उपयोग आमने-सामने की स्थिति में व्यक्ति साक्षात्कार के लिये किया जाता है।

(v) इसे एक प्रपत्र अथवा फार्म के रूप में छपवाया जाता है। जिसमें क्रमबद्ध रूप से प्रश्न रखे जाते हैं।

(vi) इसे भरने के लिये साक्षात्कारकर्ता उत्तरदाता से प्रत्यक्ष/व्यक्तिगत एवं आमने-सामने का संपर्क करता है।

(vii) अनुसूची अध्ययनकर्ता द्वारा भरी जाती है।

(viii) अनुसूची का प्रयोग शिक्षित एवं अशिक्षित दोनों प्रकार के उत्तरदाताओं के लिये किया जाता है।

(ix) अनुसूची में प्रश्नों को एक निश्चित क्रम के अनुसार ही उत्तरदाता से पूछा जाता है, ताकि कोई भी प्रश्न छूटने न पाये।

(x) अनुसूची अवलोकन, साक्षात्कार तथा प्रश्नावली की विशेषताओं को समाहित करती है।

(xi) इस प्रकार यह (अनुसूची), साक्षात्कार के लिये प्रश्नों की एक व्यवस्थित तालिका भी है। और प्रत्युत्तर के अंकन के लिये एक उपकरण भी।

(xii) अनुसूची वास्तविक तथ्यों को संकलित करने का एक साधन होती है इसलिये उसमें आवश्यक यथार्थ तथ्यों का संकलन संभव होता है।

(xiv) यदि अनुसूची में प्रश्न, संक्षिप्त व वस्तुनिष्ठ होते हैं तो उसके उत्तर देने में उत्तरदाता को सुविधा रहती है।

अब आप पूर्णतया विशेषताओं को पढ़कर अनुसूची को समझ गये होंगें।

12.3 अनुसूची के प्रकार

इस इकाई में हम आपको अनुसूची के प्रकारों /स्वरूपों का ज्ञान प्रदान करेंगे। जिससे आप अपने ज्ञान भंडार में वृद्धि कर सकेंगे। अनुसूची के विविध प्रकारों का वर्णन कार्य के आधार पर किया गया है। जिसे प्रो० पी० वी० यंग ने प्रस्तुत किया है ये अनुसूची चार प्रकार की होती है—

(i) अवलोकन अनुसूची (ii) मूल्यांकन या निर्णयात्मक अनुसूची

(iii) प्रलेख अनुसूची (iv) संस्था -सर्वेक्षण अनुसूची

इसके अलावा साक्षात्कार के उपकरण के रूप में 'साक्षात्कार' अनुसूची है। आपको हम अवलोकन अनुसूची से परिचय कराने जा रहे हैं जो निम्न है।

12.3.1 अवलोकन अनुसूची, मूल्यांकन अनुसूची, प्रलेख अनुसूची, संस्था सर्वेक्षण

(i) अवलोकन अनुसूची— जब अनुसूची का उपयोग अवलोकन द्वारा प्राप्त तथ्यों के क्रमबद्ध आलेखन के लिये भी किया जाता है, तब इसे अवलोकन अनुसूची कहते हैं। अवलोकन में घटनाक्रम, व्यवहार पारस्परिक अंत: क्रिया के बारे में निरीक्षणकर्ता सूचनाएँ एकत्र करता है। इस अनुसूची का प्रयोग अवलोकनकर्ता अपने अवलोकन को लिखने के लिये करता है। इसमें सूचनादाता से प्रश्न नहीं पूछता है, वरन् घटनाओं का अवलोकन कर स्वयं ही प्रश्नों के उत्तरों को भर देता है। इस एक प्रकार से अवलोकन पथ प्रदर्शिका होती है। 'अवलोकन अनुसूची' का प्रयोग डोरोथी टांमस (Dorothy Thomas) और 'शार्लोट बुहलर' (Charlett Bhuler) द्वारा अपने अध्ययनों में किया गया था। इसमें एक निश्चित समय में व्यवहार के प्रकार एवं उसकी बारम्बारता को अंकित किया जाता है। इस प्रकार से आप महसूस कर रहे होंगे कि अनुसूची के कई स्वरूप होते हैं। जिसके विषय में आगे विस्तार से ज्ञान प्रदान करेंगे।

आइये, आपको हम अवलोकन अनुसूची की विशेषताओं को बतायेंगे। अवलोकन अनुसूची के कुछ प्रमुख गुण निम्नवत हैं—

(i) यह वस्तुपरक आलेखन को संभव बनाती है।

(ii) अवलोकन-अनुसूची संकलित तथ्यों को संख्यात्मक स्वरूप प्रदान करती है तथा वर्गीकरण एवं सारणीकरण के लिये मार्ग प्रशस्त करती है।

(iii) इसके द्वारा सीमित एवं आवश्यक तथ्यों के संकलन में सहायता मिलती है। अत: अवलोकन सुव्यवस्थित ढंग से चलता है।

(iv) यह अवलोकन प्रभावीकरण को संभव बनाता है।

(v) यह अवलोकन की दिशा निर्धारित करती है, इसीलिये इसे अवलोकन मार्ग दर्शिका भी कहते हैं।

(vi) यह अनुसंधानकर्ता को पुन: स्मरण की शक्ति प्रदान करती है।

(ii) मूल्यांकन या निर्णयात्मक अनुसूची — इस प्रकार की अनुसूची का प्रयोग किसी घटना / विषय के बारे में लोगों की अभिवृत्ति, राय, रु चि, पसन्द, विश्वास आदि के सांख्यिकीय मापन हेतु किया जाता है। सामाजिक समस्याओं एवं घटनाओं के मूल्यांकन, गुण निर्धारण तथा तुलनात्मक क्षमता जांचने के लिये भी इस प्रकार की अनुसूचियों का प्रयोग किया जाता है। समाजमितीय अध्ययनों, समाजशास्त्र एवं मनोविज्ञान में भी इनका काफी प्रयोग हुआ है। इसमें सूचनादाता की पसंद-नापसंद तथा पक्ष-विपक्ष के विचारों को जाना जाता है। उदाहरण के लिये-यदि हमें परिवार नियोजन कार्यक्रम को असफल बनाने वाले कारकों को या जाति प्रथा को प्रभावित करने वाले कारकों का मूल्यांकन करना हो तो मूल्यांकन अनुसूची उपयोग में लायी जा सकती है।

(iii) **प्रलेख अनुसूची** —इसके अन्तर्गत अब आप का परिचय प्रलेख अनुसूची से कराने जा रहे हैं। प्रलेख अनुसूची का प्रयोग प्रकाशित सामग्री से सूचना संकलन के लिये किया जाता है। वस्तुतः द्वितीयक स्रोतों जैसे व्यक्तिगत प्रलेख एवं सरकारी व गैर सरकारी प्रलेखों से सूचना-संकलन के कारण इन्हें 'प्रलेखीय अनुसूची' कहते हैं। 'प्रलेखीय अनुसूची' द्वितीयक स्रोतों से सामग्री-संकलन का उपकरण है। इस प्रकार की अनुसूची का उपयोग लिखित प्रलेखों जैसे आत्मकथा, डायरी, सरकारी / गैर सरकारी रिकार्ड जैसे लिखित स्रोतों से सूचना एकत्रित करने के लिए किया जाता है, इस अनुसूची की सफलता के लिये इसी कारण सम्बंधित सभी प्रलेखों तथा रिकार्डों को अधिक मात्रा में प्राप्त करना व देखना पड़ता है।

(iv) **संख्या सर्वेक्षण अनुसूची**—इसके बाद आप संस्था सर्वेक्षण अनुसूची का अध्ययन करेंगे। इस प्रकार की अनुसूची का प्रयोग किसी संस्था, संगठन जैसे-शिक्षा, सामाजिक संस्थाएँ या संगठन आदि के विशिष्ट पहलू के बारे में विवरण प्राप्त करने के लिये किया जाता है। इसका उद्देश्य संस्था या संगठन का मूल्यांकन भी हो सकता है या संस्था की विद्यमान समस्याओं का विश्लेषण भी।

प्रो. वी. पी. यंग ने स्पष्ट किया है कि "इन अनुसूचियों की रचना किसी संस्था के समक्ष उत्पन्न होने वाली अथवा उसमें विद्यामान समस्याओं की जानकारी के लिये की जाती है। वयस्क शिक्षा, शिक्षण संस्था आदि कार्यक्रम के मूल्यांकन/अध्ययन के लिये संस्था सर्वेक्षण अनुसूची का प्रयोग उपयोग होता है। यह अनुसूची किसी संस्था के सामने आने वाली समस्त समस्याओं का मूल्यांकन करने के उद्देश्य से बनायी जाती है। अब आप पूर्णतया अनुसूची के प्रकारों से परिचित हो गए होंगे, इसे पढ़कर आप अपने ज्ञान में वृद्धि कर सकेंगे।

12.3.2 साक्षात्कार अनुसूची, लाभ व सीमाएं

आइये आपका परिचय साक्षात्कार अनुसूची से करायें।

साक्षात्कार को व्यवस्थित व क्रमबद्ध रूप में संचालित करने के लिये साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया जाता है। सहायक सूचनाओं की प्राप्ति के लिये एवं संकलित सूचना की परीक्षा के लिये भी यह साक्षात्कार अनुसूची उपयोगी है। यह अनुसूची साक्षात्कारकर्ता द्वारा साक्षात्कार-उपकरण के रूप में प्रयुक्त प्रश्नों की तालिका है। जिसमें वह आमने-सामने की स्थिति में उत्तरदाता से पूछकर सूचनाएं भरता है। इसे ही साक्षात्कार अनुसूची कहते हैं। व्यक्तिगत रूप से सूचनादाता से मिलकर सम्बन्धित प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करना ही इस प्रकार की अनुसूची का प्रमुख उद्देश्य होता है।

लाभ—इस साक्षात्कार अनुसूची के प्रमुख लाभ निम्न हैं—

(i) इसके द्वारा विश्वसनीय व प्रामाणिक सूचनाएं प्राप्त होती है।

(ii) व्यक्तिगत संपर्क के कारण साक्षात्कारर्ता, उत्तरदाता को उत्तर देने के लिए प्रेरित कर सकता है।

(iii) इस विधि द्वारा प्राप्त सूचनाओं का सत्यापन भी हो जाता है।

सीमाएं— अब आपको हम साक्षात्कार अनुसूची की सीमाओं से परिचित कराते हैं जो निम्नलिखित हैं—

(i) इसमें उत्तरदाता से प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करते समय उत्तरदाता को सलाह, विचार -विमर्श कराने का समय नहीं मिल पाता है।

(ii) इसमें साक्षात्कारकर्ता द्वारा सूचनाओं को भरते समय पक्षपात होने की संभावना बनी रहती है।

(iii) कभी-कभी इस पद्धति द्वारा प्राप्त सूचनाएं यथार्थ से दूर व कम विश्वसनीय भी होती हैं।

(iv) इस विधि द्वारा एक सीमित व निश्चित क्षेत्र का अध्ययन संभव हो पाता है।

अब आप साक्षात्कार अनुसूची के गुण व दोषों को भला-भांति जान गये होंगे।

12.4 अनुसूची निर्माण की प्रक्रिया

इस इकाई में हम आपको अनुसूची निर्माण की प्रक्रिया से परिचित कराते हैं। जिसका अध्ययन कर आप यह भलीभांति जान जायेंगे कि अनुसूची के निर्माण के लिये किन प्रक्रियाओं से गुजरना पड़ता है। तो आइये, प्रस्तुत है अनुसूची निर्माण की प्रक्रिया के स्तर —

(i) सर्वप्रथम अध्ययन विषय का निर्धारण करते हुए विषय के किन पक्षों से संबंधित तथ्यों का संकलन किया जाये।

(ii) इसके बाद समस्या के प्रत्येक पहलू से सम्बन्धित कौन सी सूचनाएं प्राप्त करनी हैं, इसका निर्धारण किया जाता है।

(iii) इसके उपरांत प्रश्नों की भाषा, वाक्यों की रचना व उसकी वाक्य संख्या का निर्धारण किया जाता है।

(iv) इस निर्धारण के बाद प्रश्नों को एक व्यवस्थित क्रम में लगाया जाता है जिससे कि क्रमबद्ध रूप में सूचनाएं प्राप्त की जा सकें तथा प्राप्त सूचनाओं को आसानी से वर्गीकृत व सूचीबद्ध किया जा सके।

(v) इस स्तर के उपरांत अनुसूची की वैधता की जांच का कार्य किया जाता है। इसके लिये हम एक छोटे से निदर्शन पर उसकी जांच करते हैं जिससे शोध क्षेत्र में आने वाली दिक्कतों एवं आवश्यक कमियों का पता लगा लिया जाता है तथा उन कमियों का निराकरण करने के बाद उन्हें यथार्थ प्रयोग के लिये तैयार किया जाता है।

इस प्रकार से आपने देखा कि एक अनुसूची निर्माण की प्रक्रिया, विविध स्तरों पर संपादित होती है। अत: आपको स्पष्टत: ज्ञात हो गया होगा कि किसी भी अनुसूची निर्माण के लिये आवश्यक दशायें क्या हैं। विशेषताओं एवं उद्देश्यों से आपका परिचय प्रारंभ में ही कराया जा चुका है। इसके बाद आगे हम आपको अनुसूची की उपयोगिता व सीमाओं के विषय में ज्ञान प्रदान करेंगे।

12.5 अनुसूची की उपयोगिता एवं सीमाएं

इस इकाई के अन्तर्गत हम आपको अनुसूची की उपयोगिता व सीमाओं का ज्ञान प्रदान करेंगे। जिससे आपके ज्ञान भंडार में पर्याप्त वृद्धि हो सकेगी व आप इसकी सीमाओं का ज्ञान प्राप्त करके इसका बेहतर उपयोग कर सकने में सक्षम हो सकेंगे। अत: अब हम इसके निम्न गुणों / महत्वों / उपयोगिता का वर्णन कर रहे हैं।

उपयोगिता :-

(i) **ठोस व वास्तविक समंकों की जानकारी** — हम आपको बताना चाहते हैं कि अनुसूची के प्रयोग द्वारा अध्ययन विषय से सम्बन्धित ठोस व यथार्थ सूचनाओं का संग्रहण किया जा सकता है। इस प्रकार से समग्र के बारे में अध्ययनकर्ता को अभीष्ट जानकारी प्राप्त हो जाती है।

(ii) **समय की लेखबद्ध सामग्री**—इसमें प्रश्नों की अनुसूची पहले ही बनी रहने के कारण उत्तरदाता से कोई प्रश्न पूछने के लिये छूटता नहीं है।

(iii) **समय की बचत** — इसमें अनुसंधानकर्ता प्रश्नों को उत्तरदाता की उपस्थित में उसी के सामने भरता है जिससे शेष कार्य की संभावना न्यू हो जाती है।

(iv) **व्यक्तिगत संपर्क का प्रभाव**—अनुसूची द्वारा अध्ययन करते समय उत्तरदाता व प्रश्नकर्ता के बीच व्यक्तिगत सम्बन्ध बन जाने के कारण वह संकोच न करते हुए प्रश्नों का जबाव देता है जिससे प्रश्नकर्ता अपने व्यक्तित्व द्वारा उत्तरदाता को उत्तर देने के लिये प्रेरित करता रहता है।

(v) **प्रश्नों का क्रमबद्ध रूप में होना** — अनुसूची विधि में प्रश्नों का एक क्रम, निश्चित व व्यवस्थित होता है जिससे प्रश्नकर्ता को उत्तरदाता से प्रश्न करते समय किसी भी दिक्कत / कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता है।

(vi) प्राथमिक तथ्यों का संकलन भी अनुसूची द्वारा संभव हो जाता है।

(vii) इस प्रकार अनुसूची में प्रश्नों की क्रमबद्धता व सारणियाँ होने के कारण प्राप्त सूचाओं का सांख्यिकीय विश्लेषण सरलता से किया जा सकता है।

(viii) अनुसूची प्रक्रिया में प्रश्नकर्ता स्वयं उत्तरदाता के समक्ष उपस्थित होता है अत: वह अधिकतम उत्तर प्राप्त करने का प्रयास करता है। समय - समय पर प्रश्नकर्ता, उत्तरदाता को प्रेरित भी करता रहता है।

इस प्रकार से आपने अनुसूची की महत्ता का अध्ययन किया है, अत: अब आपको हम अनुसूची के दोषों से भी परिचय कराने जा रहे हैं। अनुसूची की निम्नांकित सीमाएं या दोष भी हैं—

दोष —

(i) **सार्वभौम प्रश्न के निर्माण में समस्या** — विभिन्न शैक्षणिक स्तर, भिन्न सामाजिक-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, आर्थिक विविधता, व्यवसाय भिन्नता आदि में अंतर के कारण अध्ययनकर्ता के सामने सार्वभौम अनुसूची के निर्माण की समस्या पैदा हो जाती है और इसके लिये अधिक शोध प्रवीणता, अर्न्तदृष्टि एवं अनुभव की आवश्यकता होती है। फिर यह भी अव्यावहारिक है कि प्रत्येक प्रकार के उत्तरदाताओं के लिये भिन्न - भिन्न अनुसूची का निर्माण किया जाये, इसके कारण एकरूपीय सारणीकरण व वर्गीकरण कठिन हो जाता है।

(ii) **पक्षपात की अधिकता**—अनुसूची द्वारा तथ्य संकलन में शोधकर्ता का व्यक्तित्व काफी हद तक पक्षपात को बढ़ाने में सहायक होता है। शोधकर्ता की प्रभावी भूमिका भी उत्तरदाता को नि:संकोच उत्तर देने में बाधा उत्पन्न करती है जिससे वास्तविक उत्तर न प्राप्त होने की दशा में अभिनति की संभावना बनी रहती है।

(iii) **अधिक धन व समय का उपयोग**—अनुसूची प्रणाली द्वारा सूचनाओं को एकत्र करने में धन श्रम एवं समय भी अधिक लगता है। कभी-कभी उत्तरदाता, प्रश्नकर्ता को विभिन्न प्रकार की असमर्थता बताकर उसे टालना चाहते हैं जिससे समय व धन दोनों ही अधिक लगता है।

(iv) इस विधि में संगठन सम्बन्धी समस्यायें भी सामने आती हैं, जब अनुसंधान का क्षेत्र व्यापक हो, उत्तरदाता दूर-दूर तक बिखरे हों। अत: अनुसूची का प्रयोग केवल सीमित क्षेत्र के लिये ही उपयोगी है, न कि विस्तृत क्षेत्र के लिये।

(v) अनुसूची प्रविधि अत्यधिक महंगी भी होती है, क्योंकि साक्षात्कार की व्यवस्था, सूचना एकत्रित करने, कार्यकर्ताओं को रखने तथा उन्हें प्रशिक्षित करने आदि में काफी धन व्यय करना पड़ता है। जो सामान्यत: लोग नहीं कर पाते हैं।

इस प्रकार इस इकाई में आपने अनुसूची का महत्व व दोषों का अध्ययन किया। अब आप इस योग्य हो गये हैं कि किसी भी स्थान विशेष/घटना के संदर्भ में प्रश्नों का एक प्रपत्र तैयार करके अनुसूची प्रश्नों का प्रयोग कर तथ्यों का संग्रहण कर सकते हैं। अत: अब आप पूर्णतया अनुसूची के सभी आयामों से परिचित हो गये हैं तथा आप अपने ज्ञान में अपेक्षित व आवश्यक वृद्धि कर सकते हैं।

12.6 सारांश

इस इकाई के अन्तर्गत हमने 'अनुसूची' की आवधारणा को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। इसी इकाई में हमने 'अनुसूची' की विविध विद्वानों द्वारा प्रस्तुत परिभाषा को भी स्पष्ट किया है। इसके उद्देश्यों एवं गुणों पर भी प्रकाश डाला गया है। इस इकाई के अन्तर्गत 'अनुसूची' के विविध स्वरूपों की भी पर्याप्त व्याख्या की है। विविध स्वरूपों में अवलोकन अनुसूची, प्रलेख अनुसूची, मूल्यांकन अनुसूची एवं संस्था सर्वेक्षण अनुसूची की भी विवेचना की गयी है। साक्षात्कार अनुसूची पर भी चर्चा की गयी है। अनुसूची निर्माण की प्रक्रिया का भी वर्णन इसी में किया गया है। अंत में अनुसूची के महत्व को स्पष्ट करते हुए इसकी सीमाओं का निर्धारण किया गया है, जिसका अध्ययन करने के बाद आप अनुसूची का सही उपयोग कर सकेंगे।

12.7 बोध प्रश्न

(क) बहुविकल्पी बोध प्रश्न

प्र०-1 अनुसूची को—

(i) सूचनादाता भरता है (ii) डाक द्वारा सूचनादाता के पास भेजा जाता है। (iii) अनुसंधानकर्ता साक्षात्कार द्वारा स्वयं भरता है। (iv) कोई नहीं।

प्र०-2 ''अनुसूची प्राय: ऐसे प्रश्नों के समूह का नाम है जिन्हें एक साक्षात्कारकर्ता अन्य व्यक्ति से आमने-सामने की स्थिति में पूछता है तथा उनके उत्तर स्वयं भरता है।'' यह परिभाषा किस विद्वान् की है—

(i) गुडे एवं व्हाट (ii) बोगार्डस (iii) पी. वी. यंग (iv) मैकाइवर एवं पेज

प्र०-3 वह अनुसूची, जिसका प्रयोग सूचनादाताओं के मत, राय, मनोवृत्तियों तथा विचारों में पायी जाने वाली मित्रता का पता लगाने के लिये किया जाता है—

(i) मूल्यांकन अनुसूची (ii) अवलोकन अनुसूची (iii) साक्षात्कार अनुसूची (iv) प्रलेख अनुसूची।

प्र०-4 अनुसूची प्रयोग के समय केवल —

(i) अनुसूची पद्धति का प्रयोग होता है।

(ii) एकाधिक पद्धतियों का प्रयोग होता है।

(iii) बिना गिनती की पद्धतियों का प्रयोग होता है।

(iv) किसी भी पद्धति का प्रयोग नहीं होता है।

प्र०-5 किस अनुसूची का प्रयोग प्रकाशित सामग्री से सूचना संकलन के लिये किया जाता है—

(i) अवलोकन अनुसूची (ii) साक्षात्कार अनुसूची (iii) मूल्यांकन अनुसूची

(iv) प्रलेख अनुसूची

(ख) लघुउत्तरीय प्रश्न

प्र०-1 अनुसूची की परिभाषा को स्पष्ट कीजिये ?

प्र०-2 अनुसूची की विशेषताओं एवं उद्देश्य को विवेचित कीजिये ?

प्र०-3 प्रलेख अनुसूची व संस्था सर्वेक्षण अनुसूची में अंतर स्पष्ट कीजिये?

प्र०-4 साक्षात्कार अनुसूची से आप क्या समझते हैं ?

प्र०-5 निर्णयात्मक अनुसूची को स्पष्ट कीजिये ?

(ग) दीर्घउत्तरीय प्रश्न

प्र०-1 अनुसूची की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए इसके उद्देश्य व विशेषताओं की विवेचना कीजिये?

प्र०-2 अनुसूची के प्रकारों का वर्णन करते हुए इसके महत्व व दोषों को स्पष्ट कीजिये ?

12.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

उ० 1 (iii) अनुसंधानकर्ता साक्षात्कार द्वारा स्वयं भरता है।

उ० 2 (i) गुडे एवं हाट

उ० 3 (i) मूल्यांकन अनुसूची

प्र० 4 (ii) एकाधिक पद्धतियों का प्रयोग होता है।

उ० 5 (iv) प्रलेख अनुसूची

इकाई 13 प्रश्नावली

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 प्रश्नावली का अर्थ एवं विशेषताएं

13.2.1 प्रश्नावली के उद्देश्य

13.3 प्रश्नावली के प्रारूप / स्वरूप

13.3.1 संरचित एवं असंरचित प्रश्नावली

13.3.2 प्रतिबंधित (बंद) एवं अप्रतिबंधित (मुक्त) प्रश्नावली

13.3.3 चिन्मय, मिश्रित एवं डाक प्रेषित प्रश्नावली

13.4 प्रश्नावली के निर्माण के समय सावधानियाँ

13.5 प्रश्नावली के गुण एवं दोष

13.6 सारांश

13.7 बोध प्रश्न

13.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

13.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप

- प्रश्नावली के अर्थ एवं विशेषताओं की विवेचना कर सकेंगे।
- प्रश्नावली के उद्देश्य का वर्णन कर सकेंगे।
- प्रश्नावली के विभिन्न स्वरूपों के विषय पर टिप्पणी कर सकेंगे।
- प्रश्नावली के गुण एवं दोषों का वर्णन कर सकेंगे।

13.1 प्रस्तावना

इस इकाई में हम आपको तथ्य संकलन की एक प्रमुख प्रविधि 'प्रश्नावली' के विषय में आवश्यक ज्ञान प्रदान करेंगे। 'प्रश्नावली' के संबोध को स्पष्ट करने के बाद आप यह जान सकेंगे कि प्रश्नावली क्या है, इसका वास्तव में क्या अर्थ होता है, तदुपरांत आपको प्रश्नावली की विशेषताओं के विषय में जानकारी प्रदान करेंगे। अब आपको हम प्रश्नावली के उद्देश्यों से भी परिचित करवायेंगे, ताकि आप अपना ध्यान उद्देश्यों में लगाये रख सकें, संकेन्द्रता बनी रहे, इसके लिये आपके सम्मुख उद्देश्यों की चर्चा करेंगे। इसके बाद हम प्रश्नावली के विविध रूपों का वर्णन कर, आपको इसके स्वरूपों से परिचित करायेंगे। इस प्रकार अब आप इस योग्य हो जायेंगे कि प्रश्नावली के विषय में मूलभूत जानकारी प्राप्त करते हुए इसका प्रयोग

सामाजिक जीवन में कर सकते हैं। परन्तु अभी आपको, प्रश्नावली के निर्माण के समय क्या - क्या सावधानियाँ रखनी चाहिये, के विषय में भी ज्ञान प्राप्त करायेंगे। जिससे आप से कहीं भी त्रुटि न हो । इस प्रकार बाद में हम आपको प्रश्नावली भेजने में आवश्यक जानकारियों के विषय में सामान्य ज्ञान देंगे, जिससे प्रश्नावली भेजने के तरीकों से आप भलीभांति परिचित हो सकेंगे। अन्त में हम आपको प्रश्नावली के महत्व व इसके किंचित दोषों से भी परिचित करायेंगे। ताकि आप कहीं इसका दुरुपयोग न कर सकें एवं प्रश्नावली के सही रूप, उद्देश्य, विशेषताओं, प्रकारों का ज्ञान प्राप्त कर आप इसका सही उपयोग कर सकने में सक्षम हो सकेंगे।

13.2 प्रश्नावली का अर्थ एवं विशेषताएं

आप प्रश्नावली के नाम से स्पष्टतया जान गये होंगे कि प्रश्नों का सम्बंध प्रश्नावली से होगा। आप सही जान रहे हैं। साधारणत: एक विषय से सम्बन्धित विभिन्न व्यक्तियों से सूचना प्राप्त करने के लिये प्रश्नों की जो एक क्रमबद्ध सूची प्रयोग की जाती है, उसे 'प्रश्नावली' कहते हैं, जिसे डाक द्वारा उत्तरदाता के पास प्रेषित कर उससे उत्तर की अपेक्षा की जाती है। अब आप जाने गये होंगे कि 'प्रश्नावली' प्रश्नों की एक क्रमबद्ध सूची है जिसे उत्तरदाता के पास डाक द्वारा भेजकर आवश्यक जानकारी प्राप्त की जाती है। परन्तु हम आपको विविध विद्वानों की अलग-अलग परिभाषाओं से परिचित करायेंगे।

गुडे एवं हाट (1952) का मानना है कि 'प्रश्नावली' से तात्पर्य उत्तर प्राप्त करने की उस विधि से है, जिसमें कि एक पत्रक का प्रयोग किया जाता है, जिसे उत्तरदाता स्वयं भरता है।

जी० ए० लुण्डबर्ग (1951) का कहना है कि मूलभूत रूप में प्रश्नावली, उत्तेजकों का एक समूह है, जिसे शिक्षित लोगों के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है, ताकि इन उत्तेजकों के प्रभाव से उत्पन्न उनके शाब्दिक व्यवहार का परीक्षण किया जा सके।

बोगार्ड्स (1936) ने कहा है कि 'प्रश्नावली' विभिन्न व्यक्तियों को उत्तर देने के लिये दी गयी प्रश्नों की एक तालिका है।

प्रो० सिन पाओ यांग (1953) के अनुसार अपने सरलतम रूप में प्रश्नावली प्रश्नों की अनुसूची है जो कि अनुसूचित अथवा सर्वेक्षण निदर्शन के रूप में निर्वाचित व्यक्तियों के पास डाक द्वारा भेजी जाती है।

अत: अब आप स्पष्टत: समझ गये होंगे कि प्रश्नावली, प्रश्नों की एक सूची है जिसका उत्तर उत्तरदाता स्वयं लिखकर शोधकर्ता को डाक द्वारा प्रेषित कर देता है। अत: यह विधि कम समय में व्यापक एवं विस्तृत क्षेत्र से अधिक उत्तरदाताओं से सूचना संकलन की सर्वोत्तम विधि है। अत: अब आप 'प्रश्नावली' की अवधारणा से भलीभांति परिचित हो गये होंगे। अब आपको प्रश्नावली की विशेषताओं के बारे में ज्ञान प्रदान करेंगे।

प्रश्नावली की विशेषताएं —प्रश्नावली की निम्नांकित विशेषतायें प्रस्तुत हैं—

(i) यह एक ऐसा प्रपत्र होता है जिसको डाक द्वारा उत्तरदाताओं के पास प्रेषित किया जाता है या कभी-कभी इसे उत्तरदाताओं को व्यक्तिगत रूप से भी वितरित कर दिया जाता है।

(ii) इसकी अध्ययन सामग्री का उद्देश्य व्यक्तियों की अभिवृत्तियों, मतों अथवा परिवार या व्यवसाय आदि के प्रति अनेक महत्वपूर्ण तथ्यों की जानकारी प्राप्त करना होता है।

(iii) इसमें प्रश्नों का उत्तर, स्वयं उत्तरदाता देते हुए प्रश्नावलियों को भरते हैं तथा उसे प्रश्नकर्ता के पास डाक द्वारा भेज देते हैं।

(iv) चूंकि प्रश्नावली में प्रश्नों के उत्तर स्वयं उत्तरदाता द्वारा पढ़े व भरे जाते हैं अत: प्रश्नावली का उपयोग केवल शिक्षित व्यक्तियों के अध्ययन तक ही सीमित रहता है।

(v) प्रश्नावली विधि के उपयोग में उत्तरदाताओं से संपर्क डाक-सेवा द्वारा स्थापित किया जाता है। अत: प्राय: व्यापक समष्टि के अध्ययन में यह विधि अति द्रुतगामी रहती है तथा इसके द्वारा कठिन व असुविधाजनक भौगोलिक क्षेत्रों का अध्ययन भी सर्वथा साध्य रहता है।

(vi) प्रश्नावली के साथ एक प्रावरण पत्र भी संलग्न रहता है, जिसमें अध्ययन के उद्देश्य को स्पष्ट किया जाता है।

(vii) प्रश्नावली इस तरह एक स्वप्रशासित विधि है, अर्थात् इसमें उत्तरदाता स्वयं ही सूचना देता है और प्रश्नावली को लौटाता है।

(viii) प्रश्नावली एक निर्वैयक्तिक पद्धति है, जिसमें शोधकर्ता एवं उत्तरदाता के बीच साक्षात्कार की तरह प्रत्यक्ष संपर्क एवं अन्त:क्रिया नहीं होती है।

(ix) प्रश्नावली से प्राप्त मानकीकृत आंकड़ों द्वारा संख्यात्मक अध्ययन व सांख्यिकीय विश्लेषण सरल हो जाता है।

(x) यह विस्तृत क्षेत्र से अधिक उत्तरदाताओं से सूचना संग्रहण की उत्तम पद्धति है।

अब आप समझ गये होंगे कि प्रश्नावली का प्रमुख गुण क्या है, इसके विभिन्न गुणों के द्वारा अपने ज्ञान में विस्तार कर सकते हैं।

13.2.1 प्रश्नावली के उद्देश्य

अब प्रश्नावली विधि के उद्देश्यों का उल्लेख करेंगे, इसी संदर्भ में **श्रीमती गार्डेन कैप्ट** का कथन महत्वपूर्ण है उन्होंने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा है कि ''प्रश्नावली का निर्माण, शुद्ध सम्प्रेषण एवं शुद्ध उत्तर के लिये किया जाता है। शुद्ध सम्प्रेषण तभी संभव है जब सूचनादाता अध्ययन के उद्देश्य को समझते हों, तथा शुद्ध उत्तर तभी संभव हो सकता है जब इच्छित सूचनाएं प्राप्त हों और उनसे सारणी बनाने तथा विषय का विश्लेषण करने में सहायता मिलती हो। प्रश्नावली के प्रमुख उद्देश्यों का हम प्रस्तुतीकरण निम्नवत् करते हैं। प्रश्नावली के उद्देश्य निम्नांकित हो सकते हैं—

(i) विशाल, विविध एवं व्यापक रूप से बिखरे हुए लोगों से सूचनाएं संकलित करना, इसका उद्देश्य होता है।

(ii) इसके द्वारा प्रामाणिक तथा विश्वसनीय सूचनाओं का संग्रहण भी एक महत्वपूर्ण उद्देश्य होता है।

(iii) वैषयिक अध्ययन भी सहायक उद्देश्य होता है।

(iv) इसमें सूचनाओं का व्यवस्थित व क्रमबद्ध संकलन भी किया जाता है।

(v) कम खर्च पर अधिक विस्तृत क्षेत्र के लोगों से उत्तर प्राप्त कर तथ्य संकलन करना भी एक विशिष्ट उद्देश्य होता है।

(vi) प्रश्नावली द्वारा अध्ययन में समय भी अपेक्षाकृत कम ही लगता है क्योंकि इसके अध्ययन का एक मात्र साधन डाक-सेवा होती है जिसके द्वारा सूचना-संकलन के कार्य में क्षेत्र अध्ययन जैसी देरी नहीं लगती, बल्कि सूचना प्राप्त करने का प्रक्रम द्रुतगामी रूप से होता है।

(vii) प्रश्नावली द्वारा अध्ययन का प्रक्रम अपेक्षाकृत सुविधाजनक एवं सरल रहता है क्योंकि इसमें

उत्तरदाताओं से व्यक्तिगत संपर्क करने, साक्षात्कार करने, तथा वार्तालाप द्वारा सूचना संकलन करने का झंझट नहीं रहता है।

13.3 प्रश्नावली के प्रारूप / स्वरूप

इस इकाई के अन्तर्गत हम आपको प्रश्नावली के विविध प्रारूपों का ज्ञान प्रदान करेंगे, जिससे आप यह जान सकेंगे कि किस परिस्थिति या समय में कौन-सी प्रश्नावली के स्वरूप का उपयोग करना चाहिये, जिससे तथ्य संकलन में कम समय, कम खर्च के साथ-साथ अपेक्षित यथार्थ तथ्य प्राप्त हो सकें। अतः अब हम प्रश्नावली की संरचना व उद्देश्य की दृष्टि से इसके निम्न स्वरूपों का वर्णन करते हैं। 'कैप्ट' ने प्रश्नावली के दो स्वरूपों का जिक्र किया है— (a) संरचित प्रश्नावली (b) असंरचित प्रश्नावली।

13.3.1 संरचित एवं असंरचित प्रश्नावली

(a) संरचित प्रश्नावली :— "संरचित प्रश्नावली, ऐसी प्रश्नावली को कहते हैं जिसमें निश्चित, स्पष्ट एवं पूर्व-निर्धारित प्रश्नों के अतिरिक्त ऐसे भी प्रश्न सम्मिलित होते हैं, जो अपर्याप्त प्रत्युत्तर के स्पष्टीकरण या अधिक विस्तृत प्रत्युत्तर प्राप्त करने के लिये आवश्यक समझे जाते हैं। ऐसा "कैप्ट" ने विचार व्यक्त किया है। इस प्रकार इसमें अध्ययन सम्बन्धी समस्या के विभिन्न पक्षों से सम्बंधित वैकल्पिक उत्तर प्रश्नावली में सम्बंधित प्रश्नों के ठीक नीचे ही दिये रहते हैं। उत्तरदाता को उनमें से किसी एक उपयुक्त उत्तर का चयन अपने विचारानुसार करना होता है। ऐसी प्रश्नावली में सूचनादाता की उत्तर देने की प्रकृति अधिकांशत: सीमित तथा प्रतिबन्धित ही रहती है।

(b) असंरचित प्रश्नावली :— अब आपका परिचय हम असंरचित प्रश्नावली से करायेंगे। असंरचित प्रश्नावली में पहले से प्रश्नों का निर्माण नहीं किया जाता, वरन् केवल उन विषयों एवं प्रसंगों का उल्लेख किया जाता है जिनके बारे में सूचनाएं संकलित करनी होती हैं। इस प्रकार हम इस 'असंरचित प्रश्नावली' को साक्षात्कार पथप्रदर्शिका के समान समझ सकते हैं। इस प्रश्नावली में प्रश्नों की रचना का स्वरूप मुक्त उत्तर वाला होता है। ऐसे प्रश्नों के उत्तर में सूचनादाता पर प्रतिबन्ध व प्रतिरोध नहीं रहते, बल्कि ऐसे प्रश्नों के उत्तर वह स्वतंत्र रूप से खुलकर देता है। स्पष्टत: इसके द्वारा प्राप्त सूचना का स्वरूप विस्तृत विवरणात्मक तथा गुणात्मक ही रहता है। अब हम प्रश्नावली के कुछ अन्य प्रकारों से आपको अवगत कराने जा रहे हैं जिससे आप अपने ज्ञान में वृद्धि कर सकते हैं।

13.3.2 प्रतिबंधित (बन्द) एवं अप्रतिबंधित (मुक्त) प्रश्नावली

(i) प्रतिवंधित या बन्द प्रश्नावली

अब आपको हम बन्द प्रश्नावली व खुली / मुक्त प्रश्नावलियों के विषय में ज्ञान प्राप्त करायेंगे। प्रतिबंधित प्रश्नावली, बंद प्रश्नावली का दूसरा नाम है। इस प्रकार की प्रश्नावली में प्रश्नों के सामने ही कुछ निश्चित वैकल्पिक उत्तर लिखे रहते हैं। उत्तरदाता को उनमें से ही उत्तर छांटकर लिखने होते हैं। इस प्रकार ऐसी प्रश्नावलियों में प्रश्नों के उत्तर सीमित कर दिये जाते हैं । अत: उत्तरदाता की स्वतन्त्रता न्यून हो जाती है। उन्हें पूर्वनिर्धारित उत्तरों में से ही किसी एक को चुनकर लिखना होता है।

इस प्रकार की प्रश्नावली में उत्तर देने में सूचनादाता को सुविधा रहती है। उसे प्राय: 'हां' या 'नहीं' में ही उत्तर देने होते हैं तथा उत्तर देने की जटिलता से वह मुक्त हो जाता है। इस प्रश्नावली के कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं जिन्हें देखकर आप आसानी से इस स्वरूप को समझ सकेंगे।

जैसे — (क) क्या आप आरक्षण व्यवस्था से संतुष्ट हैं — हाँ / नहीं

(ख) क्या आप जाति पक्षपात से सहमत हैं — हाँ / नहीं

(ग) आपके परिवार में कुल स्रोतों से मासिक आय कितनी है—

(i) 10,000 रु० से कम (ii) 10,000 रु. से 15,000 रु. के बीच

(iii) 15,000 रु. से 20,000 रु. के मध्य (iv) 20,000 रु. से अधिक

(घ) क्या आप दलगत राजनीति के पक्ष में है — हाँ / नहीं

इस प्रकार आप इन उदाहरणों को देखने के बाद समझ सकेंगे, कि प्रतिबंधित प्रश्नावली (बन्द प्रश्नावली) का क्या तात्पर्य है। अब आपको हम इसके विपरीत अप्रतिबंधित या खुली या असीमित प्रश्नावली से परिचित करवाते हैं—

(ii) अप्रतिबंधित या मुक्त या असीमित प्रश्नावली :—इस प्रकार की प्रश्नावली में सूचनादाता को अपने विचारों को खुलकर प्रकट करने की स्वतंत्रता होती हैं। इस प्रकार की प्रश्नावली में ऐसे प्रश्न सम्मिलित होते हैं, जिनकी प्रत्युत्तर - श्रेणियों को पहले से नहीं निश्चित किया गया हो। उत्तरदाता पर्याप्त स्वतन्त्रता का अनुभव करता है। उस पर किसी प्रकार का बाह्य दबाब नहीं होता है। अपने उत्तर संक्षिप्त या लंबे भी दे सकता है। आप जानते हैं क्या ? कि इस प्रश्नावली का प्रयोग व्यक्तिगत विचारों, भावनाओं, सुझावों, आदि के ज्ञात करने, गहन अध्ययन करने एवं विषय से सम्बंन्धित प्रारम्भिक सूचनाएं संकलित करने के लिये किया जाता है। विवरणात्मक व गुणात्मक सूचनाओं की प्राप्ति के लिये भी मुक्त प्रश्नावली का प्रयोग करते हैं इनमें प्रश्नों के सामने उत्तर देने के लिये पर्याप्त स्थान छोड़ दिया जाता है। अब आपकी सुविधा के लिये कुछ उदाहरणों को प्रस्तुत कर रहा हूँ जिन्हें देखकर आप मुक्त प्रश्नावली की अवधारणा को स्पष्टतः समझ जायेंगे।

(क) बेरोजगारी के प्रमुख स्वरूप कौन से हैं?

(ख) अपराध बढ़ने के पीछे प्रमुख कारणों का उल्लेख कीजिये ?

(ग) राजनीति में अपराधीकरण के पीछे क्या उद्देश्य है ?

(घ) समाज में युवा असंतोष के पीछे प्रमुख कारणों का विवरण दीजिये ?

इस प्रकार आप मुक्त प्रश्नावली के इन उदाहरणों को देखकर समझ गये होंगे कि इसमें बहुविकल्पीय उत्तर नहीं देने होते हैं। उत्तरदाता अपना उत्तर कम या ज्यादा शब्दों में देने के लिये स्वतन्त्र रहता है तथा प्रत्येक प्रश्न के बाद उसके उत्तर के लिये पर्याप्त स्थान दिया जाता है। यह स्थिति मुक्त, असीमित व अप्रतिबंधित होती है। आप समझ रहे होंगे कि इस प्रश्नावली में उत्तरदाता स्वतंत्रता का अनुभव करता है।

13.3.3 चित्रमय मिश्रित एवं डाक प्रेषित प्रश्नावली

(i) चित्रमय प्रश्नावली— यह भी बंद प्रश्नावली का ही एक स्वरूप है, किन्तु इसमें प्रत्युत्तर-श्रेणियां चित्रों के माध्यम से स्पष्ट की जाती हैं। यह प्रश्नावली को आकर्षक तो बनाता है परन्तु यह थोड़ी खर्चीली विधि हो जाती है। इस प्रश्नावली में सूचनादाता अपने उत्तर को उन चित्रों में से ही चुनता है व उपयुक्त चुने हुए चित्र पर निशान लगा देता है। कम समय एवं कम प्रयत्न से सरलतापूर्वक उत्तर प्राप्त करने के लिये चित्रमय प्रश्नावलियों का प्रयोग किया जाता है। बालकों की मनोवृतियों को जानने एवं गूंगे तथा निरक्षर लोगों के लिये चित्रमय प्रश्नावलियों का प्रयोग किया जाता है। अब हम निम्न उदाहरणों द्वारा आपको इस प्रश्नावली के विषय में ज्ञान प्रदान करेंगे।

(क) आपके परिवार में सदस्यों की संख्या कितनी है ?

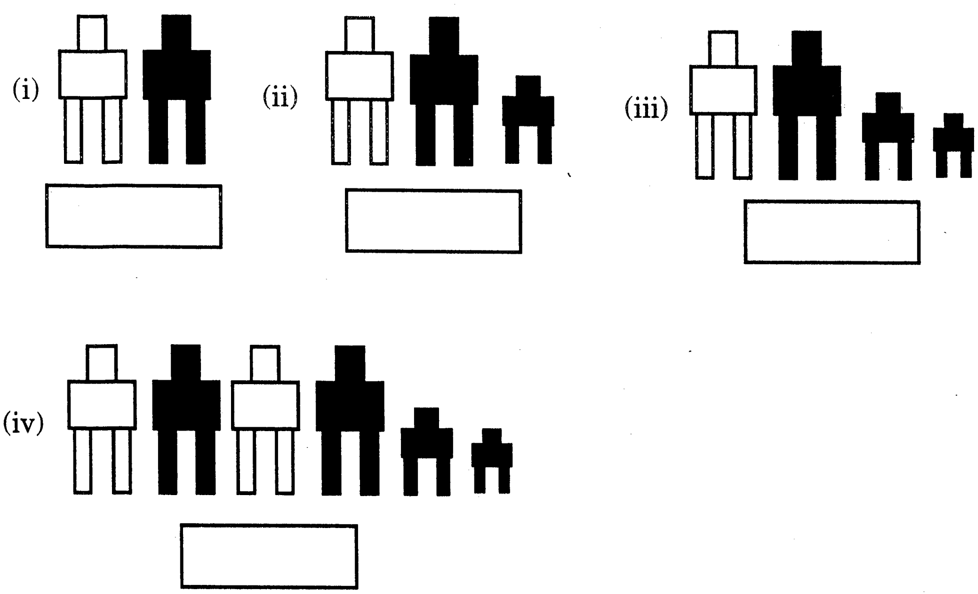

(ख) आपके द्वारा प्रयुक्त वाहन क्या है ?

(i) (साइकिल) (ii) (कार) (iii) (रिक्शा) (iv) (बस)

इस प्रकार से आप चित्रमय प्रश्नावलियों की सहायता से कम समय में लोगों से अपेक्षित जानकारी हासिल कर सकते हैं। इस प्रकार की प्रश्नावलियों के उत्तरों की जांच एवं वर्गीकरण सरलता से किया जा सकता है।

अब आपको मिश्रित, डाक प्रेषित प्रश्नावलियों का ज्ञान प्रदान करेंगे।

(iv) मिश्रित प्रश्नावली — आपको मिश्रित प्रश्नावली के विषय में जानकारी देंगे। इसमें संरचित तथा असंरचित प्रश्नावलियों के विभिन्न गुण सम्मिलित रहते हैं और उनके प्रश्नों में बंद, मुक्त एवं चित्रमय सभी प्रकार के प्रश्नों का या एक से अधिक प्रकार के प्रश्नों का मिश्रण होता है।

(v) डाक-प्रेषित प्रश्नावली—इस विधि में प्रश्नावली डाक द्वारा उत्तरदाताओं को भेज दी जाती है। डाक प्रेषित प्रश्नावली के साथ एक 'अपील' का पत्र भी भेजा जाता है। प्रश्नावली को भरकर उत्तरदाता पुन: शोधकर्ता प्रश्नकर्ता को डाक द्वारा लौटा देता है। प्राय: प्रश्नावली के साथ टिकट लगा एवं पता लगा लिफाफा इसके साथ संलग्न किया रहता है। ताकि उत्तरदाता को किसी प्रकार का खर्च न करना पड़े।

अब आप डाक प्रेषित प्रश्नावली से परिचित हो गये होंगे।

इस इकाई एवं इसके पूर्व में आपने प्रश्नावली की अवधारणा, विशेषताएं, इसके उद्देश्य एवं इसके विविध प्रारूपों का ज्ञान प्राप्त किया है। अब हम आपको प्रश्नावली के निर्माण के समय आवश्यक सावधानियों का ज्ञान-प्रदान करेंगे। साथ ही साथ आपको, प्रश्नावली भेजते समय क्या-क्या आवश्यक बिन्दुओं का

ध्यान रखना चाहिये, के विषय में जानकारी मुहैया करायेंगे, जिससे आप इसकी संपूर्ण समग्रता से परिचित हो सकेंगे।

13.4 प्रश्नावली के निर्माण के समय सावधानियाँ

अब आपको हम किसी भी प्रश्नावली के निर्माण के समय किन बिन्दुओं का ध्यान रखना चाहिये, इसके विषय में आवश्यक जानकारी प्रदान करेंगे जिससे त्रुटिपूर्ण प्रश्नावली का निर्माण नहीं हो सकेगा। अत: एक प्रश्नावली की रचना करते समय हमें निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिये।

(i) प्रश्नावली में प्रश्नों की रूपरेखा तय करने से पूर्व अध्ययन विषय के विविध पक्षों से परिचित हो जाना चाहिये ताकि संतुलित एवं आवश्यक प्रश्नों की सूची तैयार की जा सके।

(ii) प्रश्नावली में प्रश्नों की भाषा सरल, स्पष्ट होनी चाहिये। तकनीकी शब्दों, एवं द्विभाषी शब्दों के प्रयोग से बचाव करना चाहिये।

(iii) प्रश्नों का उत्तर लिखने के लिये, प्रश्नों के ठीक नीचे पर्याप्त खाली जगह देनी चाहिये।

(iv) प्रश्नों का क्रम सरल व स्पष्ट होना चाहिये, ताकि उत्तरदाता उसे पढ़ने के बाद आसानी से समझकर उसका उत्तर लिख सके।

(v) प्रश्नावली को शिक्षित व्यक्तियों के पास भेजा जाता है। अत: प्रश्नों की प्रकृति सामान्य व इनकी संख्या निश्चित रखना चाहिये, ताकि उत्तरदाता उबाऊपन न महसूस कर सकें।

(vi) प्रश्नों का स्वरूप, उत्तरदाताओं की भावनाओं के अनुकूल होना चाहिये, जिससे उनकी भावनाओं को क्षति न पहुँचे एवं वे निष्पक्ष उत्तर देने का प्रयास करें।

(vii) प्रश्नावली के साथ भेजा जाने वाला पत्र, जिसे हम 'सहभागी पत्र' कहते हैं, का स्वरूप स्पष्ट होना चाहिये, उसमें अध्ययन का उद्देश्य स्पष्ट किया जाता है जिसको पढ़ने के बाद उत्तरदाता यह समझ जाता है कि हमें किस प्रकार से किन उद्देश्यों के लिये उत्तर देना है।

(viii) प्रश्नावली की रचना करते समय भौतिक पक्ष पर भी ध्यान देना चाहिये। जैसे-प्रश्नावली का आकार बहुत छोटा या बहुत बड़ा न हो, सुन्दर व स्पष्ट रूप में उसका अंकन हो, कागज का रंग आकर्षक हो तथा प्रश्नों को एक क्रम में व्यवस्थित किया जाना चाहिये।

(ix) प्रश्नावली में प्रश्नों को जितने सुव्यवस्थित व संतुलित रूप में हम प्रस्तुत करेंगे, उतनी सफलता हमें सूचनाओं के एकत्रीकरण में होगी।

(x) प्रश्नों का स्वरूप सामाजिक दृष्टिकोण से निषेधित व वर्जित नहीं होना चाहिये। ऐसे प्रश्नों के शुद्ध उत्तर देने में सूचनादाता को स्वाभाविकत: संकोच व संशय रहता है। अत: अध्ययन समस्या का स्वरूप सामाजिक दृष्टिकोण से स्वीकार्य होना चाहिये।

(xi) प्रश्नावली को प्रेषित करने में यह ध्यान रखना आवश्यक है कि उस पर सूचनादाता का ठीक-ठाक, साफ-साफ, उपयुक्त पता लिखा जाना चाहिये और प्रेषित सामग्री व प्रेषक का भी पता रहे ताकि यदि किसी कारण से वह वापस न प्राप्त हो तो ऐसी स्थिति में उत्तरदाता से पुन: संपर्क कर उससे निवेदन किया जा सकता है।

इस प्रकार आपने देखा कि उपर्युक्त प्रमुख सावधानियाँ अपेक्षित होती हैं।

13.5 प्रश्नावली के गुण एवं दोष

इस इकाई में हम आपको प्रश्नावली के गुण व दोष / सीमाओं से परिचित करायेंगे, जिससे आप इन प्रश्नावलियों का सही समय पर सही उपयोग करने में सक्षम हो सकेंगे। प्रश्नावली के गुण को हम अग्रलिखित बिन्दुओं में व्यक्त करते हैं—

(i) विशाल तथा व्यापक समष्टि के अध्ययन की सरलता— प्रश्नावली द्वारा व्यापक एवं ऐसे क्षेत्रों के अध्ययन में भी सुविधा व सरलता रहती है जो भौगोलिक दृष्टि से सामान्यत: दूरस्थ तथा पहुँच से बाहर रहते हैं।

(ii) अध्ययन की निष्पक्षता— प्रश्नकर्ता द्वारा उत्तरदाता के सामने प्रत्यक्ष रूप से न होने से, उत्तरदाता बेहिचक, नि:संकोच अपने जबाब देता है, जिससे यथार्थता एवं निष्पक्षता की संभावना बढ़ जाती है।

(iii) प्रश्नों की विविधता—प्रश्नावली के प्रश्नों का स्वरूप प्राय: विविध प्रकार का होता है। इसके कुछ प्रश्न प्राय: मुक्त, कुछ प्रतिबंधित, कुछ निर्धारण तथा कुछ पदांकन प्रकार के होते हैं। इनकी विविधता से अध्ययन को विशिष्ट व विभिन्न पक्षीय रूप प्राप्त होता है।

(iv) अध्ययन में कम लागत व कम समय — प्रश्नावली द्वारा अध्ययन में अपेक्षाकृत बहुत कम लागत आती है; क्योंकि इसमें यात्रा भत्ता, वेतन, आदि से बचाव हो जाता है।

इसमें डाक द्वारा प्रश्नावली को उत्तरदाता के पास भेजा जाता है। उत्तरदाता भी आवश्यक निर्देशों को, उद्देश्यों को पढ़ने के बाद द्रुतगामी गति से वे उत्तर लिखकर, प्रश्नावलियों को वापस डाक द्वारा प्रेषित कर देते हैं। जिससे समय की बचत भी हो जाती है।

(v) अधिक गोपनीय — प्रश्नावली में अधिक गोपनीय व विश्वसनीय उत्तर प्राप्त हो जाते हैं।

(vi) उपयोग की सरलता—प्रश्नावली को भरते समय उत्तरदाता असुविधा का अनुभव नहीं करता है, तथा आसानी से भरकर वापस प्रश्नकर्ता के पास प्रेषित कर देता है।

(vii) इस विधि में उत्तरदाता प्रश्नावली में सभी पक्षों को ध्यान में रखकर अपने उत्तर देता है जब तथ्यों से सम्बद्ध उत्तर प्राप्त करने होते हैं, तब प्रश्नावली अधिक उपयोगी विधि सिद्ध होती है।

इस प्रकार से आप प्रश्नावली के गुणों से भलीभांति परिचित हो गये होंगे, अब आपका ध्यान हम प्रश्नावली के दोषों की ओर आकर्षित करेंगे, एवं इसके दोषों की चर्चा करेंगे।

प्रश्नावली के दोष :— प्रश्नावली के निम्नांकित दोष हैं—

(i) केवल शिक्षित व्यक्तियों का अध्ययन— प्रश्नावली द्वारा केवल शिक्षित व्यक्तियों का अध्ययन संभव है परन्तु अशिक्षित व्यक्तियों के मतों, अभिवृत्तियों व मनोभावों आदि का अध्ययन संभव नहीं होता।

(ii) गहन अध्ययन की कमी — प्रश्नावली के एक निर्वैयक्तिक विधि होने से, व्यक्तिगत संपर्क के अभाव के कारण संवेगात्मक व गहन, घनिष्ठ सूचनायें नहीं प्राप्त हो पाती हैं। जिससे इस पद्धति का सबसे बड़ा दोष, गहन, अध्ययन की कमी है।

(iii) लचीलेपन व एकरूपता का अभाव—प्रश्नावली एक रूढ़ विधि है, इसमें न तो प्रश्नों की भाषा में, न क्रम में ही कोई परिवर्तन किया जा सकता है। अत: इसमें लचीलेपन की कमी रहती है। प्रश्नावली में वास्तविक एकरूपता का अभाव भी एक प्रमुख दोष है।

(iv) सार्वभौमिक प्रश्नों की रचना में कठिनाई—प्रश्नावली का प्रयोग प्राय: समष्टि के अध्ययन में किया जाता है, जिसमें विभिन्न भाषाओं वाले समूह सम्मिलित रहते हैं। ऐसे व्यक्तियों के लिये एक भाषा में प्रश्नावली की रचना अनिवार्यत: अपर्याप्त रहती है। दूसरे विविध शब्दों व पदों के विभिन्न स्थानीय क्षेत्रों में प्राय: विभिन्न अर्थ रहते हैं। अत: ऐसे सार्वभौमिक प्रश्नों की रचना करना अति कठिन रहता है, जिनका समस्त शिक्षित व्यक्ति एक समान अर्थ ही लगायें।

(v) अपूर्ण प्रश्नावली की समस्या—प्रश्नावली की सबसे बड़ी समस्या अधूरी प्रश्नावलियों की प्राप्ति है,साथ ही साथ प्रश्नावलियों की उत्तर प्राप्ति की दर निम्न होती है। उत्तरदाता कभी-कभी प्रश्नों के अर्थ की क्लिष्टता के कारण प्रश्नों का उत्तर छोड़ देते हैं, जिससे अधूरी प्रश्नावलियां प्राप्त होती है। फलत: अध्ययन का संतुलन बिगड़ जाता है।

(vi) निरीक्षण/अवलोकन का अभाव—प्रश्नावली में सबसे बड़ी कमी अवलोकन का अभाव है, इस कमी के कारण प्रश्नकर्ता, अनिच्छुक उत्तरदाता को प्रेरित नहीं कर पाते हैं। फलत: प्राप्त उत्तर पक्षपातपूर्ण व उदासीनता से युक्त रखते हैं।

(vii) विभिन्न व्यावहारिक कठिनाइयाँ—प्रश्नावली विधि में कुछ व्यावहारिक कठिनाइयाँ भी सामने आती हैं। जैसे—अनिच्छुक उत्तरदाता, को प्रश्नों का अर्थ न समझ पाने की स्थिति में प्रेरित करने का मौका प्रश्नकर्ता को नहीं मिलता है।

उत्तरदाताओं को खुलकर उत्तर न दे पाने में कठिनाई होती है जिससे व्यावहारिक बाधायें प्रश्नकर्ता के समक्ष आती हैं, इस प्रकार आप अब प्रश्नावली की कमियों से भलीभांति परिचित हो गये होंगे तथा इसकी उपयोगिता से भी आप लाभान्वित हुए होंगे। प्रश्नावली से सम्बन्धित संपूर्ण जानकारी से आप परिचित हो गये होंगे।

13.6 सारांश

इस इकाई में हमने तथ्य संकलन की प्रविधि 'प्रश्नावली' पर चर्चा की है। हमारा उद्देश्य आपको प्रश्नावली के बारे में समग्र जानकारी देना है, अत: इसलिये हमने इस इकाई के अन्तर्गत 'प्रश्नावली' के संबोध को स्पष्ट करते हुए इसकी विशेषताओं को विश्लेषित किया है तथा इसके आवश्यक उद्देश्यों की भी चर्चा की है। 'प्रश्नावली' के विविध प्रारूपों / स्वरूपों का भी विस्तृत वर्णन किया है। इसके प्रमुख स्वरूपों में हमने संरचित प्रश्नावली, असंरचित प्रश्नावली तथा प्रतिबंधित या बन्द प्रश्नावली व अप्रतिबंधित या मुक्त प्रश्नावली की चर्चा की है। इसके अलावा इसी इकाई में हमने प्रश्नावली के अन्य सहायक स्वरूपों जैसे- चित्रमय प्रश्नावली, डाक-प्रेषित प्रश्नावली, मिश्रित प्रश्नावली आदि का विशद् वर्णन किया है। इस इकाई से प्राप्त 'प्रश्नावली' विषय पर ज्ञान के द्वारा आपके ज्ञान भंडार में वृद्धि हुई होगी। इसी के अन्तर्गत एक प्रश्नावली के निर्माण के समय आवश्यक सावधानियों का भी जिक्र किया गया है तथा अंत में प्रश्नावली के आवश्यक गुण एवं दोषों का भी निरूपण किया है।

इस प्रकार अब आप इस इकाई में प्रस्तुत 'प्रश्नावली' पर आधारित ज्ञान के द्वारा अपनी ज्ञान शक्ति को और अधिक मुखर कर सकने में सक्षम होंगे।

13.7 बोध प्रश्न

(क) बहुविकल्पीय बोध प्रश्न

प्र०-1 "सामान्य रूप से प्रश्नावली से अभिप्राय प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने के उस उपकरण से है जिसमें एक फर्म का प्रयोग होता है, जिसे उत्तरदाता स्वयं भरता है" कथन किसका है—

(i) गुडे एवं हाट (ii) बोगार्ड्स (iii) लुण्डबर्ग (iv) विल्सम गी

प्र०-2 वह प्रश्नावली, जिसमें प्रतिबंधित एवं अप्रतिबंधित दोनों प्रकार के प्रश्नों को सम्मिलित किया जाता है। उसे कहते हैं —

(i) खुली प्रश्नावली (ii) चित्रमय प्रश्नावली (iii) मिश्रित प्रश्नावली (iv) प्रतिबंधित प्रश्नावली।

प्र०-3 प्रश्नावली पद्धति का उपयोग किया जाता है—

(i) विस्तृत क्षेत्र में (ii) सीमित क्षेत्र में (iii) केन्द्रित अध्ययन क्षेत्र में (iv) उपर्युक्त में सभी

प्र०-4 प्रश्नावली को —

(i) सूचना देने वाला स्वयं भरता है। (ii) उत्तर देने वाला भरता है।

(iii) अन्य कोई सहायक भरता है। (iv) इनमें से कोई नहीं।

(ख) लघुउत्तरीय प्रश्न

प्र०-1 प्रश्नावली की परिभाषा व उद्देश्यों को स्पष्ट कीजिये ?

प्र०-2 एक प्रश्नावली की आवश्यक विशेषताओं पर प्रकाश डालिये ?

प्र0-3 संरचित व असंरचित प्रश्नावली में प्रमुख अंतर बताइये ?

प्र०-4 मिश्रित प्रश्नावली से आप क्या समझते हैं ?

प्र०-5 मुक्त प्रश्नावली व बंद प्रश्नावली में तुलना कीजिये ?

(ग) दीर्घउत्तरीय प्रश्न

प्र०-1 प्रश्नावली के प्रकारों का वर्णन कर इसकी उपयोगिता पर विवेचना कीजिये ?

प्र०-2 एक अच्छी प्रश्नावली के निर्माण के समय एवं इसे उत्तरदाता के पास भेजते समय किन सावधानियों को रखना चाहिये।

13.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

उ० 1 (i) गुडे एवं हाट

उ० 2 (iii) मिश्रित प्रश्नावली

उ० 3 (i) विस्तृत क्षेत्र में

उ० 4 (ii) उत्तर देने वाला भरता है।

इकाई 14 एकल अध्ययन (वैयक्तिक अध्ययन) पद्धति

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य

14.1 प्रस्तावना

14.2 एकल अध्ययन (वैयक्तिक अध्ययन पद्धति) की परिभाषा एवं विशेषतायें

14.3 एकल अध्ययन की कार्य-प्रणाली

14.4 एकल अध्ययन (वैयक्तिक अध्ययन) में तथ्य सामग्री के स्रोत

14.5 एकल अध्ययन पद्धति के गुण एवं दोष/सीमाएं

14.6 सारांश

14.7 बोध प्रश्न

14.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

14.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

14.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप :

- एकल अध्ययन पद्धति व उसकी विशेषताओं का उल्लेख कर सकेंगे।
- एकल अध्ययन की कार्यप्रणाली की विवेचना कर सकेंगे।
- एकल अध्ययन पद्धति में तथ्य सामग्री के स्रोत की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- एकल अध्ययन पद्धति के गुण एवं दोष को समझ सकेंगे।

14.1 प्रस्तावना

इस इकाई में 'एकल अध्ययन' (वैयक्तिक अध्ययन) पर प्रकाश डालेंगे। 'एकल अध्ययन' द्वारा किसी भी इकाई (व्यक्ति संस्था आदि) के विषय में सूक्ष्म, गहन एवं सर्वांगीण अध्ययन प्राप्त किया जाता है। 'एकल अध्ययन' की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए हम आपको इसकी विशेषताओं के विषय में जानकारी प्रदान करेंगे। इसकी प्रमुख विशेषताओं में समग्र अध्ययन, गुणात्मक ज्ञान, गहन एवं सूक्ष्म अध्ययन आदि प्रमुख है। इस इकाई के अन्तर्गत इसकी विशेषताओं के बाद आपका ध्यान एकल अध्ययन की क्रिया प्रणाली की ओर आकृष्ट करेंगे। इसके बाद आपको एकल अध्ययन में तथ्य संकलन के रूप में सहायक सामग्री स्रोतों के विषय में भी जानकारी देंगे, जिनके अध्ययन के द्वारा आप किसी भी इकाई (परिवार, व्यक्ति, संस्था आदि) का सूक्ष्मतम ज्ञान प्राप्त कर सकने में सक्षम हो सकेंगे। इसके प्राथमिक स्रोतों में गहन साक्षात्कार एवं सहभागी अवलोकन का महत्वपूर्ण स्थान है, जिसके द्वारा महत्वपूर्ण प्राथमिक तथ्य संकलित किये जा सकते हैं जबकि वहीं एकल अध्ययन के द्वितीयक स्रोतों में डायरी, पत्र एलबम, लेख, आदि प्रमुख हैं, अंत में सामग्री संकलन के प्राथमिक व द्वितीयक स्रोतों के वर्णन के उपरांत एकल

अध्ययन पद्धति के गुणों व दोषों का वर्णन किया है। इस प्रकार आप इस इकाई के अध्ययन के उपरांत किसी भी व्यक्ति या अन्य इकाई से सम्बन्धित उसके समस्त पक्षों का सर्वांगीण ज्ञान एकल अध्ययन द्वारा प्राप्त कर सकने में सफल होंगे।

14.2 एकल अध्ययन (वैयक्तिक अध्ययन पद्धति) की परिभाषा एवं विशेषताएं

इस इकाई के अन्तर्गत हम 'वैयक्तिक अध्ययन' (एकल-अध्ययन) के अर्थ को स्पष्ट करेंगे, तदुपरांत आप का परिचय इसकी विशेषताओं से करायेंगे। वास्तव में वैयक्तिक अध्ययन का सम्बन्ध एक या एकाधिक इकाइयों के समग्रात्मक अध्ययन से है। हम यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि यह अध्ययन की एक विधि है जिसमें किसी इकाई का-जो व्यक्ति, संस्था, घटना या समुदाय कुछ भी हो सकता है का सर्वांगीण अध्ययन किया जाता है। यहाँ पर हम विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रस्तुत ''एकल अध्ययन पद्धति' की परिभाषाओं को प्रदर्शित करते हैं।

प्रो. पी. वी. यंग (1954) के अनुसार — ''वैयक्तिक अध्ययन पद्धति किसी एक सामाजिक इकाई चाहे वह एक व्यक्ति, एक परिवार, एक संस्था, एक सांस्कृतिक समूह अथवा सम्पूर्ण समुदाय क्यों न हो, के जीवन की खोज तथा विश्लेषण की पद्धति है।'' एकल अध्ययन पद्धति का व्यवस्थित प्रयोग 'लीप्ले' ने किया था।

''**सिन पाओ येंग**'' (1953)—के अनुसार—''वैयक्तिक अध्ययन—पद्धति को किसी व्यक्ति के सूक्ष्म, गहन एवं सम्पूर्ण अध्ययन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें अन्वेषणकर्ता अपनी समस्त क्षमताओं एवं पद्धतियों का प्रयोग करता है या यह किसी व्यक्ति के सम्बन्ध में पर्याप्त सूचनाओं का व्यवस्थित संकलन है ताकि यह जाना जा सके कि वह समाज की इकाई के रूप में किस तरह कार्य करता है।''

'**गिडिंग्स** का मानना है कि —अध्ययन किया जाने वाला वैयक्तिक विषय केवल एक व्यक्ति अथवा उसके जीवन की एक घटना अथवा विचारपूर्ण दृष्टि से एक राष्ट्र या इतिहास का युग भी हो सकता है।

इस प्रकार से इन उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर स्पष्ट है कि वैयक्तिक अध्ययन पद्धति के अन्तर्गत किसी एक सामाजिक इकाई से सम्बंधित सभी पक्षों का व्यापक, सूक्ष्म तथा गहन अध्ययन किया जाता है। अध्ययन की जाने वाली यह सामाजिक इकाई व्यक्ति, संस्था, समूह, समुदाय, जाति, राष्ट्र या कोई भी घटना हो सकती है।

इस इकाई में आप 'एकल अध्ययन' पद्धति के अर्थ को समझ गये होंगे, अब हम आपको इस पद्धति की आवश्यक विशेषताओं के विषय में जानकारी देंगे।

एकल अध्ययन की विशेषतायें :— वैयक्तिक अध्ययन की निम्नांकित विशेषताएं हैं। अब आपको विशेषताओं से अवगत करायेंगे।

(i) वैयक्तिक अध्ययन का सम्बन्ध सामाजिक इकाई से है। यह सामाजिक इकाई केवल व्यक्ति ही नहीं होता, बल्कि, कोई परिवार, संस्था, समूह या जाति भी सामाजिक इकाई हो सकती है।

(ii) एकल अध्ययन पद्धति के अन्तर्गत इकाई का अत्यन्त गहन अध्ययन किया जाता है । यह गहन अध्ययन काफी लम्बे समय तक चल सकता है। क्योंकि इसमें इकाई का भूतकाल या उसकी उत्पत्ति से लेकर वर्तमान स्थिति तक का ज्ञान आवश्यक हो जाता है।

(iii) वैयक्तिक अध्ययन पद्धति किसी भी इकाई (व्यक्ति, संस्था, परिवार, जाति, आदि) का उसकी सम्पूर्णता में अध्ययन करती है। अर्थात् यह विधि उस विशेष इकाई, जिसका अध्ययन करना है, के किसी विशेष पक्ष या पहलू को न लेकर सम्पूर्णता को ही अध्ययन का केन्द्र बनाती है। संपूर्णता से आशय, अध्ययन की सामाजिक, आर्थिक, भौगोलिक, धार्मिक एवं प्राणिशास्त्रीय अध्ययन विधि संख्यात्मक या सांख्यिकीय विधि के विपरीत गुणात्मक अध्ययन है।

(iv) वैयक्तिक अध्ययन विधि संख्यात्मक या सांख्यिकीय विधि के विपरीत गुणात्मक अध्ययन है।

(v) वैयक्तिक अध्ययन केवल तथ्य संग्रहण की प्रविधि नहीं है, अपितु यह किसी इकाई के विविध पक्षों के तथ्यों का संग्रह, संगठन एवं विश्लेषण करने की संपूर्ण विधि है।

(vi) वैयक्तिक अध्ययन पद्धति द्वारा शोधकर्ता एक सामाजिक तथ्य (इकाई) के अन्तर्गत उसके विविध कारकों को समझने का प्रयास करता है, जिससे वे एक संगठित समग्र बनते हैं।

इस संदर्भ में 'गुडे एवं व्हाट' ने स्पष्ट किया है कि—''यह एक ऐसी विधि है जो किसी इकाई को उसके सम्पूर्ण रूप में देखती है।''

(vii) इस विधि में संबद्ध इकाई की समग्रता व एकीयता बनाये रखी जाती है।

14.3 एकल अध्ययन की कार्य-प्रणाली

इस इकाई से पूर्व आपने वैयक्तिक अध्ययन विधि की विशेषताओं का ज्ञान प्राप्त किया है। अब आपको एकल अध्ययन के विविध चरणों से अवगत करायेंगे। एकल अध्ययन की क्रिया प्रणाली, सामाजिक शोध की प्रक्रिया के समान है, इसे निम्न क्रम में रूपांकित किया जा सकता है।

(i) समस्या की विवेचना— एकल अध्ययन पद्धति का प्रयोग करने के लिये सर्वप्रथम अध्ययन की निम्न बातों का ध्यान में रखना चाहिये—

 (a) घटनाओं का स्वरूप सामान्य है या विशिष्ट, इस बिन्दु को स्मरण में रखते हुए कार्य करना चाहिये।

 (b) इकाई के रूप में हम व्यक्ति, परिवार, संस्था, समूह या अन्य किसी इकाई को ले रहे हैं उसकी स्पष्ट जानकारी होनी चाहिये।

 (c) विश्लेषण क्षेत्र का निर्णय।

 (d) घटना के किन पक्षों का अध्ययन करना है इसकी स्पष्ट जानकारी अत्यावश्यक है।

(ii) घटनाओं के क्रम और कारकों के सम्बन्ध में तथ्य संग्रह— इसमें इकाई की विशेषता, पृष्ठभूमि, एवं निर्धारक कारकों का विश्लेषण करते हैं। अत: घटनाक्रम व कारकों के सम्बन्ध में स्पष्ट जानकारी आवश्यक होती है।

(iii) कारकों का विश्लेषण—घटनाओं से सम्बंधित तथ्यों का संकलन करने के उपरांत हम उन तथ्यों / कारकों का विश्लेषण करते हैं कि कौन से कारक घटना के लिये प्रभावी हैं व कौन सामान्य कारक के रूप में हैं।

(iv) उपकल्पना परीक्षण—तथ्यों के संकलन व उनके विश्लेषण के बाद, उसके आधार पर उपकल्पना का परीक्षण कर एक सामान्य निष्कर्ष का प्रस्तुतीकरण किया जाता है। हम यह देखते

हैं कि किन-किन कारकों से परिवर्तन आया एवं कौन से कारक घटना में परिवर्तन के लिये जिम्मेदार हैं। इसके बाद हम निष्कर्ष व सुझाव की प्रक्रिया पर आते हैं।

(v) निष्कर्ष एवं सुझाव—तथ्यों के विश्लेषण के आधार पर हम निष्कर्ष निकालते हैं व यह देखते हैं कि अध्ययन में किस कारण से अमुक परिवर्तन आया व अंत में हम सुझाव भी प्रस्तुत करते हैं जिससे समाधान संभव होता है।

14.4 वैयक्तिक अध्ययन (एकल अध्ययन) में तथ्य सामग्री के स्त्रोत

वैयक्तिक अध्ययन की प्रमुख प्रविधियों के दो प्रमुख स्रोत बताये गये हैं, जिनके आधार पर शोधकर्ता घटना/इकाई से सम्बंधित आवश्यक तथ्यों को जुटा सकता है। वैयक्तिक अध्ययन में तथ्य संकलन के प्रमुख स्रोत निम्नलिखित हैं—

(i) **प्राथमिक स्त्रोत**—वैयक्तिक अध्ययन में 'संपूर्ण दृष्टिकोण प्रस्तुत करने के लिये उन प्रविधियों का उपयोग किया जाता है जिनसे अधिक बहुपक्षीय, संपूर्ण व गहन जानकारियाँ प्राप्त की जा सकें। इसके अन्तर्गत साक्षात्कार व अवलोकन विधियों का प्रयोग प्राथमिक सामग्री स्रोत के रूप में कर सकते हैं। इसके लिये (एकल अध्ययन में) अध्ययनकर्ता द्वारा प्राय: दो प्रमुख विधियों का उपयोग किया जाता है।— (i) 'गहन साक्षात्कार' (ii) 'सहभागी अवलोकन'

ये दो विधियां तथ्यों के स्रोत के रूप में कहीं अधिक उपयोगी हैं। मानवशास्त्रियों ने अलग - अलग जनजातीय अध्ययन में सहभागी अवलोकन का उपयोग करते हुए सफल वैयक्तिक अध्ययन किया है। प्राथमिक तथ्यों (साक्षात्कार, सहभागी अवलोकन द्वारा प्राप्त सामग्री) को प्राथमिक इसलिये कहते हैं क्योंकि इन तथ्यों का संकलन मौलिक रूप में शोधकर्ता स्वयं करता है। गहन साक्षात्कार व सहभागी अवलोकन के अतिरिक्त व्यक्ति के रिश्तेदारों मित्रों व पड़ोसी द्वारा दी गयी सूचनायें आदि वैयक्तिक अध्ययन में सहायक सिद्ध होते हैं।

(ii) **द्वितीय स्रोत**—वैयक्तिक अध्ययन में तथ्यों के संग्रहण स्रोतों में द्वितीयक स्रोत भी महत्वपूर्ण हैं। इस अध्ययन में अध्ययन इकाई (व्यक्ति, संस्था परिवार आदि) की पृष्ठभूमि सम्बन्धी तथ्यों का संकलन अत्यावश्यक होता है। इसके लिये हम द्वितीयक स्रोतों का सहारा-लेकर तथ्यों का संकलन कर सूचनायें प्राप्त कर सकते हैं। इसके अन्तर्गत निम्न स्रोतों को सम्मिलित करते हैं—

(1) **जीवन-इतिहास**—आपको हम तथ्य संकलन के द्वितीयक स्रोत के रूप में जीवन-इतिहास से परिचित करा रहे हैं। एकल अध्ययन विधि का एक प्रमुख स्रोत जीवन-इतिहास है, क्योंकि इसमें किसी व्यक्ति के संपूर्ण जीवन का चित्रण होता है। जीवन-इतिहास का अध्ययन करने के बाद शोधकर्ता उस व्यक्ति के विषय में समग्र जानकारी प्राप्त करने में सफल हो जाता है। जीवन-इतिहास में व्यक्ति की पारिवारिक पृष्ठभूमि, जीवन की घटनाओं, अनुभवों, परिस्थितियों को परिवर्तित करने वाले कारकों, महत्वपूर्ण व्यक्तियों एवं जीवन को प्रेरणा देने वाले प्रमुख सहायक आदर्शों का भी वर्णन होता है जिनका अध्ययन करने के उपरांत आप इकाई के हर पहलू से अवगत हो सकते हैं तथा अपेक्षित जानकारी का संकलन कर सकते हैं।

(2) **पत्र**—वैयक्तिक अध्ययन में पत्रों का भी महत्वपूर्ण स्थान है। इन पत्रों के माध्यम से व्यक्ति के निजी विचार, अनुभव, आदर्श व सुखद-दु:खद घटनायें, प्रतिक्रियायें आदि जानी जा सकती हैं हैं, पत्रों से यद्यपि प्राय: अधूरी एवं संक्षिप्त जानकारी ही हो पाती है। पत्रों के माध्यम से इकाई

व्यक्ति के आन्तरिक व व्यक्तिगत जीवन के किंचित पक्षों को जाना जा सकता है। जीवन के प्रति दृष्टिकोण, भावनाओं एवं धारणाओं आदि का आंकलन पत्रों के माध्यम से किया जा सकता है।

(3) **डायरियां** — वैयक्तिक अध्ययन पद्धति में द्वितीयक स्त्रोतों के रूप में डायरियों का महत्वपूर्ण स्थान है। गहन एवं गोपनीय सूचनाओं की प्राप्ति के लिये इकाई (व्यक्ति, आदि) की डायरी का सहारा लिया जा सकता है। चूंकि व्यक्ति डायरी में स्वाभाविक विचार, गोपनीय जानकारी व विश्वसनीय , गोपनीय तथ्यों का संकलन किया जा सकता है। डायरियों में व्यक्ति जीवन से सम्बन्धित महत्वपूर्ण तिथियों एवं घटनाओं की जानकारी भी लिख लेते हैं। इसमें संस्मरणों का भी उल्लेख मिल जाता है। अतः डायरी के माध्यम से गहन, विश्वसनीय, गोपनीय तथ्यों का संकलन किया जा सकता है। डायरियों में व्यक्ति जीवन से सम्बन्धित महत्वपूर्ण तिथियों एवं घटनाओं की जानकारी भी लिख लेते हैं। इसमें संस्मरणों का भी उल्लेख मिल जाता है। अतः यदि आप किसी व्यक्ति से सम्बन्धित उसके आवश्यक पक्षों का अध्ययन करना चाहते हैं (जो वह नहीं बताना चाहता, या बताने में संकोच महसूस करता है) तो आप व्यक्ति की डायरियों या पत्रों के माध्यम से उसके विषय में काफी महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

(4) **फोटो एलबम** — विविध प्रमाणपत्रों व लेखों के माध्यम से भी व्यक्ति के विषय में जानकारी प्राप्त कर तथ्यों का संकलन संभव किया जा सकता है।

14.5 एकल अध्ययन पद्धति के गुण एवं दोष/सीमाएं

वैयक्तिक अध्ययन के प्राथमिक एवं द्वितीयक स्त्रोतों के बाद अब हम आपको इस पद्धति के महत्व एवं दोषों का ज्ञान प्रदान करेंगे। एकल अध्ययन पद्धति के निम्नलिखित गुण हैं—

गुण :—

(i) **गहन अध्ययन** — एकल अध्ययन विधि के अन्तर्गत हम इकाई से सम्बंधित सभी पक्षों का बारीकी से अध्ययन कर तथ्य संकलित करते हैं जिससे इस विधि का गहन अध्ययन एक प्रमुख गुण है।

(ii) **सर्वांगीण अध्ययन**—एकल अध्ययन पद्धति में, केवल समस्या से सम्बन्धित विशिष्ट पहलुओं के साथ ही साथ इकाइयों के सभी पहलुओं का समग्रता से अध्ययन किया जाता है।

(iii) **लचीली विधि**—एकल अध्ययन पद्धति एक लचीली विधि है जिसका उपयोग विविध स्तरों पर अध्ययन की गहनता व विस्तार के लिये किया जाता है।

(iv) **उपकल्पना निर्माण में सहायक**—वैयक्तिक या एकल अध्ययन अनेक इकाइयों का विस्तृत एवं सूक्ष्म अध्ययन कर निष्कर्षों के माध्यम से उपकल्पना के निर्माण में सहायक होता है।

(v) **महत्वपूर्ण प्रपत्रों का साधन**—एकल अध्ययन विधि के द्वारा अनेक महत्वपूर्ण दस्तावेजों एवं जानकारियों का संकलन किया जाता है।

(vi) **मनोवैज्ञानिक अध्ययन में उपयोगी**—एकल अध्ययन पद्धति का उपयोग मनोवैज्ञानिक, मनोचिकित्सक, मरीजों के मानसिक रोगों को जानने में भी करते हैं।

दोष —

एकल अध्ययन में कुछ इसके नकारात्मक पक्ष हैं जो निम्नांकित हैं—

(i) **अत्यधिक समय व धन की आवश्यकता**—इस विधि द्वारा अधिक समय व अधिक धन लगता है। अत: यह विधि खर्चीली विधि के रूप में भी है । यदि हमें 100 व्यक्तियों का अध्ययन करना हो, तो कम से कम तीन साल का समय लग जायेगा। इसके लिये अधिक श्रम, समय व धन की भी आवश्यकता होती है।

(ii) **तुलनात्मकता की कमी**—एकल अध्ययन में प्राप्त तथ्यों में प्राय: तुलनात्मकता की कमी होती है, क्योंकि अध्ययन इकाइयां विशिष्ट व समस्याजनित होती हैं।

(iii) **पक्षपात की संभावना**—इस पद्धति में सांख्यिकीय विधि का उपयोग न होने व अवैज्ञानिक होने से पक्षपात की प्रबल संभावना बनी रहती है।

(iv) **सीमित सामान्यीकरण**—इकाइयों की संख्या व उनका प्रकार सीमित होता है, जिससे उनका क्षेत्र भी सीमित हो जाता है। अत: व्यापक समग्र के बारे में अर्थपूर्ण व विश्वसनीय सामान्यीकरण नहीं किये जा सकते हैं।

(v) **निदर्शन प्रणाली का अभाव**—निदर्शन प्रणाली का अभाव होने से इसमें सही प्रतिनिधियों का चुनाव न होने से उपयुक्त प्रतिनिधि इकाइयों का अध्ययन नहीं हो पाता है, फलत: अशुद्ध निष्कर्ष निकाले जाते हैं।

(vi) **दोषपूर्ण सहायक सामग्री**—इसमें पत्र, डायरियां व अन्य प्रकार के गोपनीय दस्तावेज सम्मिलित किये जा सकते हैं। इनमें प्राय: अधूरी व बढ़ा चढ़ाकर जानकारी लिखी रहती है, जिससे वास्तविक जानकारी से हम अवगत नहीं हो पाते हैं तथा दोषपूर्ण निष्कर्ष निकाल लेते हैं।

14.6 सारांश

इस इकाई में 'एकल अध्ययन' (वैयक्तिक अध्ययन) पर चर्चा की गयी है। एकल अध्ययन के उद्देश्यों एवं विशेषताओं को स्पष्ट वर्णन किया गया है। वैयक्तिक या एकल अध्ययन की प्रणाली व इसे प्राप्त करने की सामग्री का भी विश्लेषण किया गया है। एकल अध्ययन के स्रोत के रूप में दो प्रमुख स्रोतों प्राथमिक व द्वितीयक स्रोतों की भी व्याख्या की गयी है। प्राथमिक स्रोत में गहन साक्षात्कार व सहभागी अवलोकन को प्रमुख स्थान दिया गया है तथा द्वितीयक स्रोतों के रूप में डायरी, पत्र, लेख, एलबम, आदि सामग्री को सम्मिलित किया गया है तथा अंत में एकल अध्ययन पद्धति के गुणों की चर्चा करते हुए इसके दोषों या सीमाओं का भी वर्णन किया गया है। इस प्रकार अब आप एकल अध्ययन पद्धति के सभी आयामों से परिचित हो गये होंगे।

14.7 बोध प्रश्न

(क) वस्तुनिष्ठ बोध प्रश्न —

प्र०-1 किस प्रकार के अध्ययन में हम इकाई का गहन एवं सर्वांगीण अध्ययन करते हैं —

(i) अवलोकन (ii) प्रश्नावली (iii) अनुसूची (iv) एकल अध्ययन

प्र०-2 एकल अध्ययन के प्राथमिक स्रोत का उदाहरण है—

(i) डायरी (ii) पत्र (iii) अवलोकन (iv) एलबम

प्र०-3 वैयक्तिक अध्ययन में द्वितीयक स्रोत के रूप में प्रयोग में लाते हैं—

(i) डायरी (ii) अवलोकन (iii) साक्षात्कार (iv) प्रश्नावली

प्र०-4 वैयक्तिक अध्ययन या एकल अध्ययन प्रणाली का सर्वप्रथम व्यवस्थित प्रयोग किसने किया—

(i) स्पेन्सर (ii) लीप्ले (iii) पियर्सन (iv) मार्क्स

फ्र०-5 वैयक्तिक या एकल अध्ययन पद्धति द्वारा किस प्रकार के तथ्यों का संकलन किया जाता है—

(i) गुणात्मक (ii) वर्णनात्मक (iii) प्रयोगात्मक (iv) संख्यात्मक

(ख) लघुउत्तरीय प्रश्न

प्र०-1 एकल अध्ययन पद्धति की परिभाषा दीजिये ?

प्र०-2 एकल अध्ययन की कार्य प्रणाली की व्याख्या कीजिये ?

प्र०-3 सामाजिक शोध में एकल अध्ययन पद्धति के महत्व की विवेचना कीजिये ?

प्र०-4 सामाजिक अनुसंधान में एकत्र अध्ययन पद्धति के दोषों की व्याख्या कीजिये ?

प्र०-5 'सम्पूर्णता का दृष्टिकोण' से क्या आशय है ?

(ग) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्र०-1 वैयक्तिक अध्ययन विधि (एकल अध्ययन पद्धति) की व्याख्या करते हुए इसके महत्व की विवेचना कीजिये ?

प्र०-2 एकल अध्ययन पद्धति में आंकड़ों के मुख्य स्रोतों का वर्णन करते हुए इसके गुण एवं दोषों का निरूपण कीजिये ?

14.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

उ०-1 (iv) एकल अध्ययन

उ०-2 (iii) अवलोकन

उ०-3 (i) डायरी

उ०-4 (ii) लीप्ले

उ०-5 (i) गुणात्मक

14.9 संदर्भ ग्रन्थ-सूची

(1) बोगार्डस, इ. एस. (1936), इन्ट्रोडक्शन टू सोशल रिसर्च

(2) गुडे, डब्ल्यू. जे. एण्ड हैट, पी. के. (1952), मेथड्स इन सोशल रिसर्च, मैक्ग्राहिल बुक कम्पनी, न्यूयार्क।

(3) सिंन पाओ यंग, (1953), फैक्ट फाइन्डिंग विद रूरल पीपुल।

(4) कर्लिन्जर, एफ. एन. (1966), फाउन्डेशन आफ विहैविओरल रिसर्च, होल्ट रीन हार्ट एण्ड विन्स्टन, न्यूयार्क

(5) लुण्डबर्ग, जी. ए. (1961) सोशल रिसर्च, लागमन्स ग्रीन एण्ड कंपनी, न्यूयार्क।

(6) सी. ए. मोजर, (1959) सर्वे मेथड्स इन सोशल इन्वेस्टीगेशन, विलियम हीमैन, लि० लंदन।

(7) पामर, वी. एम. (1928), फील्ड स्टडीज, इन सोशियोलाजी, यूनिवर्सिटी आफ शिकागो प्रेस, शिकागो।

(8) यंग, पी. वी. (1951) साइंटिफिक सोशल सर्वेज एण्ड रिसर्च, प्रिन्टिस हाल, न्यूयार्क।

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

MASY-03/MASW-04
मामाजिक अनुसंधान

खण्ड

5

सामाजिक अनुसंधान में सांख्यिकी का प्रयोग

इकाई 19

सांख्यिकी : एक परिचय

इकाई 20

तथ्यों का वर्गीकरण व सारणीकरण

इकाई 21

समान्तर माध्य, मध्यिका तथा बहुलक

इकाई 22

माध्य विचलन व मानक विचलन

इकाई 23

सह -सम्बन्ध

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

109

परामर्श समिति

प्रो० देवेन्द्र प्रताप सिंह — अध्यक्ष
कुलपति
उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद

डॉ० एच० सी० जायसवाल — कार्यक्रम संयोजक
परामर्शदाता
उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इला०

डॉ० आर० के० बसलस — सचिव
कुल सचिव
उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद

विशेषज्ञ समिति

प्रो० वी० के० पंत — विषय विशेषज्ञ
से०नि०आचार्य एवं विभागाध्यक्ष
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

प्रो० डी० पी० सक्सेना — विषय विशेषज्ञ
से० नि० आचार्य
गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

प्रो० पी० एन० पाण्डेय — विषय विशेषज्ञ
आचार्य एवं पूर्व विभागाध्यक्ष
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

डा० मंजूलिका श्रीवास्तव — संरचनात्मक विषय विशेषज्ञ
स्ट्राइड, इग्नू, नई दिल्ली

पाठ्यक्रम लेखन समिति

PGSY-03 : – *सामाजिक अनुसंधान*

खण्ड एक : डॉ० वी० एन० मिश्र, प्रवक्ता कालीचरण कालेज, लखनऊ 4 इकाई (आकारगत 3)
खण्ड दो : डॉ० जय शंकर पाण्डेय, प्रवक्ता डी० ए० वी० कालेज, कानपुर 5 इकाई (आकारगत 4)
खण्ड तीन : डॉ० विजय कुमार वर्मा, प्रवक्ता, बी०एस०एन० वी०पी०जी० कालेज, लखनऊ 5 इकाई
खण्ड चार : डॉ० विजय कुमार वर्मा, प्रवक्ता बी०एस०एन० वी०पी०जी० कालेज, लखनऊ 4 इकाई
खण्ड पाँच : अनूप कुमार सिंह, प्रवक्ता, डी० ए० वी० कालेज, कानपुर 5 इकाई
सम्पादन : प्रो० वी० के० पंत

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित, इस कार्य के किसी भी अंश की उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की लिखित अनुमति के बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुति अनुमन्य नहीं है।

दूरस्थ शिक्षा परिषद्, नई दिल्ली के सहयोग से प्रकाशित।

खण्ड 5 का परिचय : सामाजिक अनुसंधान में सांख्यिकी का प्रयोग

हमने खण्ड पांच ''सामाजिक अनुसंधान में सांख्यिकी का प्रयोग'' को पांच इकाइयों में बाँटा है। पहली इकाई में सांख्यिकी : एक परिचय'' पर विस्तृत चर्चा की गयी है। इस इकाई में हमने सांख्यिकी के अर्थ को स्पष्ट करते हुए इसके गुण एवं सांख्यिकीय पद्धतियों का वर्णन किया है। उसके बाद सांख्यिकी की प्रकृति व इसके कार्य पर चर्चा की है। अंत में सांख्यिकी की सीमाओं पर प्रकाश डाला गया है। सांख्यिकी का अन्य विज्ञानों से सम्बन्ध स्पष्ट करते हुए इसके महत्व पर प्रकाश डाला गया है। इकाई दो तथ्यों का वर्गीकरण व सारणीयन से सम्बन्धित है। इस इकाई में हमने वर्गीकरण के सम्बोध को स्पष्ट करते हुए इसके उद्देश्य एवं इसकी प्रक्रिया का वर्णन किया है। एक आदर्श वर्गीकरण की विशेषताओं व इसके आधारों की भी चर्चा की गयी है। इसी इकाई में वर्गीकरण के प्रकार व सारणीयन के अर्थ व इसके उद्देश्यों की भी चर्चा की गयी है। एक उत्तम सारणी के गुणों का उल्लेख करते हुए एक सारणी की संरचना के प्रमुख आधारों की भी चर्चा की गयी है।अंत में इस इकाई में सारणीयन के लाभ व सीमाओं की भी चर्चा की गयी है। इस खण्ड पांच के इकाई तीन में ''समान्तर माध्य, मध्यिका तथा बहुलक'' विषय बिन्दु पर चर्चा की गयी है। इस इकाई तीन के अन्तर्गत हमने समान्तर माध्य की परिभाषा, विशेषताओं, गुण व दोषों का उल्लेख किया है । मध्यिका व बहुलक के सम्बोध को स्पष्ट करते हुए इसकी विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया है। इन दोनों के गुणों व दोषों पर प्रकाश डालने के साथ-साथ इनके निर्धारण का भी वर्णन प्रस्तुत किया गया है। इकाई चार ''माध्य विचलन व मानक विचलन'' विषय पर केन्द्रित है। इस इकाई में हमने माध्य विचलन व मानक विचलन की परिभाषा का उल्लेख किया है। उसकी विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए इसकी गणना की भी चर्चा की गयी है। अंत में माध्य विचलन तथा मानक विचलन के गुण एवं दोषों का भी उल्लेख किया गया है। इसी खण्ड के अन्तर्गत इकाई पांच को सह 'सम्बन्ध' विषय पर केन्द्रित किया गया है। इस इकाई के अन्तर्गत सह सम्बन्ध की परिभाषा का उल्लेख किया गया है। सह सम्बन्ध विश्लेषण व इसके महत्व पर भी प्रकाश डाला गया है इसी क्रम में सह सम्बन्ध के प्रकारों व इसके परिमाणों की भी चर्चा की गयी है। अंत में सह-सम्बन्ध ज्ञात करने की विधियों पर चर्चा की गयी है।

इकाई 19 सांख्यिकी : एक परिचय

इकाई की रूपरेखा

19.0 उद्देश्य

19.1 प्रस्तावना

19.2 सांख्यिकी : अर्थ व परिभाषा

19.3 सांख्यिकी के गुण

19.4 सांख्यिकीय पद्धतियाँ

19.5 सांख्यिकी की प्रकृति व इसके कार्य

19.6 सांख्यिकी की सीमाएं

19.7 सांख्यिकी का अन्य विज्ञानों से सम्बन्ध

19.8 सामाजिक अनुसंधान में सांख्यिकी का महत्व

19.9 सारांश

19.10 बोध प्रश्न

19.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

19.0 उद्देश्य

इस इकाई के अन्तर्गत हम साँख्यिकी व इसके विविध बिन्दुओं पर चर्चा करेंगे। इस इकाई का प्रमुख उद्देश्य साँख्यिकी का समुचित प्रयोग करते हुए इसके विषय में आवश्यक जानकारी का संकलन करना है। यद्यपि हम जानते हैं कि सांख्यिकी की आधारशिला तथ्य या आंकड़े हैं। साँख्यिकी वह विज्ञान है जिसमें आंकड़ों का संग्रह, विश्लेषण और निर्वचन किया जाता है। साँख्यिकीय सूचना के अभाव में वैज्ञानिक खोज, आर्थिक व सामाजिक नियोजन के लक्ष्यों को नहीं प्राप्त किया जा सकता है। सांख्यिकी का उद्देश्य निम्नवत है जैसे-

- सांख्यिकी का अर्थ व परिभाषा
- सांख्यिकी के गुण
- सांख्यिकी की पद्धतियाँ
- सांख्यिकी की प्रकृति व इसके कार्य
- सांख्यिकी की सीमाएं
- सांख्यिकी का अन्य विज्ञानों से सम्बन्ध व महत्व

19.1 प्रस्तावना

इस इकाई के अन्तर्गत हम सामाजिक अनुसंधान में सांख्यिकी का प्रयोग विषय पर अध्ययन करेंगे। इस इकाई में ही सर्वप्रथम सांख्यिकी के सम्बोध पर ज्ञान प्राप्त करेंगे। सांख्यिकी के सम्बोध को जानने के बाद

इसके गुण व पद्धतियों का भी अध्ययन करेंगे। इसी क्रम में सांख्यिकी की प्रकृति व इसके कार्यों का अध्ययन करते हुए इसकी सीमाओं एवं इसके अन्य विज्ञानों के साथ सम्बन्धों का अध्ययन करेंगे। अंत में हम इसी क्रम में 'सांख्यिकी का सामाजिक अनुसंधान में महत्व' विषय पर भी ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

19.2 सांख्यिकी : अर्थ व परिभाषा

इस इकाई के अन्तर्गत हम सांख्यिकी के परिचय से अवगत होंगे। संख्या शास्त्र अथवा संख्या विज्ञान का जन्म राष्ट्रीय संगठन के साथ-साथ हुआ । ज्यों-ज्यों आदिम जातियां संगठित होती गयीं त्यों-त्यों उनके शासकों के लिये प्रबन्ध सम्बन्धी अंक एकत्रित करना आवश्यक हो गया । मिस्र में ईसा से 3050 वर्ष पूर्व पिरामिड निर्मित करने के लिए देश की सम्पत्ति तथा जनसंख्या सम्बन्धी अंक संकलित करने का विवरण मिलता है । अत: निष्कर्ष रूप में हम यह कह सकते हैं कि अंक संकलन व संग्रहण का कार्य अति प्राचीन समय से ही होता आ रहा है। किसी भी सामाजिक घटना का यथातथ्य अध्ययन करने के लिए सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग किया जाता है। उसके सम्बन्ध में आंकड़े इकट्ठे किये जाते हैं और उनका वर्गीकरण तथा सारणीयन करके उन्हें सरल व्यवस्थित एवं बोधगम्य बनाने का प्रयत्न किया जाता है ताकि उनसे निष्कर्ष निकाले जा सकें। परन्तु ये विधियां सांख्यिकीय विश्लेषण की प्रारम्भिक व्यवस्थाएं ही हैं जिनसे आंकड़ों की सभी विशेषताएं स्पष्ट नहीं होतीं। दूसरे, मनुष्य का मस्तिष्क इतना सूक्ष्म नहीं है कि वह उन आंकड़ों को सारणी के रूप में याद रख सके अथवा उनसे किसी निष्कर्ष पर पहुंच सके। अत: समंकों के लक्षणों को कम से कम अंकों में सारांश रूप में प्रकट करने के लिए एक अनुसंधानकर्ता को सांख्यिकीय माध्यों की गणना करके उस समूह या समस्या से सम्बन्धित केन्द्रीय प्रवृत्ति का ज्ञान प्राप्त करना पड़ता है अत: किसी घटना के सर्वेक्षणों में माध्यों का प्रयोग सांख्यिकीय विधि के रूप में किया जाता है।

सांख्यिकी की आधारशिला तथ्य या आँकड़े हैं । सांख्यिकी वह विज्ञान है जिसमें समंकों या आंकड़ों का संग्रह विश्लेषण और निर्वचन किया जाता है। प्राचीन काल में राजा अपनी शक्ति का अनुमान राज्य का फैलाव व निवासियों की संख्या से किया करता था। सांख्यिकी की उत्पत्ति राजाओं के विज्ञान या राज्य शिल्प विज्ञान के रूप में हुई। आधुनिक युग में सांख्यिकी केवल प्रशासन से सम्बन्धित ही नहीं है वरन् इसका प्रयोग भौतिक एवं सामाजिक विज्ञानों के क्षेत्रों में भी किया जाता है। सांख्यिकीय सूचना के अभाव में वैज्ञानिक अनुसंधान, आर्थिक और सामाजिक नियोजन असंभव है। आज सांख्यिकी का महत्व दिनों-दिन बढ़ता जा रहा है। आधुनिक समय में विविध विषयों (गणित, विज्ञान, शिक्षा मनोविज्ञान, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र) आदि में सांख्यिकी का उपयोग अलग-अलग अर्थों में किया जाता है। एक आधुनिक विज्ञान के रूप में सांख्यिकी लगभग 150 वर्षों से अधिक पुराना नहीं है। अब सांख्यिकी के परिचय के बाद हम इसके अर्थ एवं परिभाषा के विषय में ज्ञान प्राप्त करेंगे।

सांख्यिकी : अर्थ — अब हम आपको सांख्यिकी के अर्थ के विषय में ज्ञान प्रदान करेंगे। आँग्ल भाषा का 'Statistics' शब्द लैटिन भाषा के 'Status' तथा इटैलियन भाषा के 'Statista' और जर्मन भाषा के 'Statistik' शब्दों से बना है। रोमन भाषा में 'State' को 'Stato' तथा सांख्यिकी को 'Statisticus' कहा जाता था। इन सभी शब्दों का अर्थ राज्य है। इस प्रकार प्राचीन काल में सांख्यिकी को राजाओं का विज्ञान अथवा राज्य शिल्प विज्ञान के रूप में माना जाता था। 'Statistics' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग 1749 ई0 में जर्मनी के विद्वान **गाटफ्रायड एकेनवाल** (Gottfried Achenwall) ने किया था। इन्हें सांख्यिकी का जन्मदाता कहा जाता है। महाकवि शेक्सपियर, जॉन मिल्टन एवं

वर्ड्सवर्थ ने 'Statist' शब्द का प्रयोग एक ऐसे व्यक्ति के लिये किया था जो शासन कार्य में निपुण हो। इस प्रकार सांख्यिकी शब्द का प्रयोग दो अर्थों में किया जाता है—

(अ) संख्यिकी का एक अर्थ गणितशास्त्र से है अर्थात सांख्यिकी का अर्थ समंकों या आंकड़ों से होता है जो किसी क्षेत्र से सम्बन्धित संख्यात्मक विवरण होते हैं जैसे जनसंख्या, राष्ट्रीय आय एवं उत्पादन आदि।

(ब) सांख्यिकी का तात्पर्य परिमाणात्मक तथ्यों की व्याख्या से है। परिमाणात्मक तथ्यों को संख्यात्मक आँकड़े भी कहते हैं। संख्यात्मक आँकड़ों की 2 श्रेणियां हैं — (1) गणना आंकड़े (2) मापीय आंकड़े । जनसाधारण सामान्यत: गणना आंकड़ों का उपयोग करते हैं।

उदाहरण - एक नौका दुर्घटना में 200 सवारी में 40 सवारी डूब गयी , 15 के शव मिले, शेष लापता हैं तो इस उदाहरण में सवारी की संख्या, डूबने वालों की संख्या, लापता लोगों की संख्या आदि गणना आंकड़े के उदाहरण हुए ।

जबकि कुछ स्थितियों में वस्तुओं की गणना न करके (संभव न हो तो) उसे मापीय तरीकों से निकाला जाता है।

उदाहरण — किसी भोजन के प्रति व्यक्ति की मनोवृत्ति या व्यक्तियों की बुद्धि क्षमता आदि को मापीय तरीकों से ज्ञात किया जा सकता है।

परिभाषा — अब विविध विद्वानों द्वारा प्रस्तुत सांख्यिकी की परिभाषा का अध्ययन करेंगे—

बेब्स्टर शब्द कोश (1968) के अनुसार समंक या साख्यिकी किसी राज्य के निवासियों की स्थिति से सम्बन्धित वर्गीकृत तथ्य हैं, विशेष रूप से वे तथ्य जिन्हें संख्याओं में या संख्याओं की सारणियों में प्रस्तुत किया जा सके।

प्रो. बाउले (1923) ने सांख्यिकी के विषय में कहा है कि सांख्यिकी अनुसंधान के किसी विभाग से सम्बन्धित तथ्यों का ऐसा संख्यात्मक विवरण है जिन्हें एक दूसरे के सम्बन्ध में रखा जा सके। एक अन्य विद्वान **जी. ए. फर्गुसन** (1966) के अनुसार सांख्यिकी को पद्धतिशास्त्र की एक शाखा माना गया है । इस शाखा में विभिन्न प्रयोगों और सर्वेक्षणों के आधार पर प्राप्त आंकड़ों का संकलन वर्गीकरण, विवरण और विवेचना की जाती है । इसी क्रम में **बोलिस एण्ड राबर्ट्स** (1956) का मानना है कि सांख्यिकी तथ्यों के परिमाणात्मक पहलुओं का संख्यात्मक विवरण है जो गणना अथवा माप के रूप में व्यक्त होते हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि सांख्यिकी अनिश्चितता की परिस्थिति में उचित निर्णय लेने वाला विज्ञान है । इसमें अनेक रीतियों का संग्रह है जिनके द्वारा किसी घटना से सम्बन्धित उचित एवं विवेकपूर्ण निष्कर्ष निकाले जाते हैं। इस प्रकार सांख्यिकी की आवश्यकता केवल आंकड़ों के विश्लेषण में ही नहीं बल्कि उनके संकलन में भी रहती है। आंकड़ों के संकलन के बाद सांख्यिकी का प्रमुख कार्य उनको व्यवस्था प्रदान करना होता है अथवा उनके जटिल रूप को सरल स्पष्ट तथा बोधगम्य बनाना होता है , व उनसे निहित तथ्यों को क्रमबद्ध व्यवस्था प्रदान करना तथा उनके पारस्परिक सम्बन्धों को स्पष्ट करना होता है।

19.3 सॉंख्यिकी के गुण

सॅंख्यिकी के अर्थ को भली-भाँति जानने के बाद उसी इकाई में हम अब सांख्यिकी के गुणों के विषय में ज्ञान प्रदान करेंगे। किसी भी तथ्य को सामान्य जन केवल आंकड़ा समझता है जबकि विशेषज्ञ सांख्यिकीय तथ्य को गुणों के रूप में स्वीकार करता है इस प्रकार सांख्यिकी के निम्नांकित गुण प्रस्तुत

हैं —

(अ) साँख्यिकीय तथ्य निश्चित उद्देश्य से संकलित किये जाते हैं — यदि किसी भी कार्यालय के सहायकों का वेतन बिना किसी उद्देश्य से मालूम कर लिया जाये तो यह मात्र संख्याएं कहलायेंगी परन्तु यदि वेतन सम्बन्धी आंकड़े उनकी आर्थिक प्रस्थिति के तुलनात्मक अध्ययन हेतु एकत्र किये जाये तो इन्हें हम साँख्यिकीय तथ्य के रूप में कहेंगे। अर्थात् साँख्यिकीय तथ्यों का संकलन निश्चित उद्देश्यों के तहत ही किया जाता है।

(ब) साँख्यिकीय तथ्य संख्या में व्यक्त किये जाते हैं — किसी भी कार्यालय के तृतीय वर्ग के कर्मचारी का वेतन द्वितीय वर्ग या चतुर्थ वर्ग के कर्मचारियों के वेतन से अधिक य कम होना साँख्यिकीय तथ्य नहीं हैं परन्तु यदि कहा जाये कि द्वितीय तृतीय व चतुर्थ वर्ग के कर्मचारी का वेतन 1000, 500, व 200 रूपये है तो यह सांख्यिकीय तथ्य होगा। अर्थात सांख्यिकी तथ्यों को संख्याओं में व्यक्त किया जाता है।

(स) आंकड़े तथ्यों के समूह होते हैं — कोई भी आंकड़ा जो वस्तु या घटना से सम्बन्धित है वह एक वस्तु के लिये नहीं होता है बल्कि वह समूह के तथ्यों को प्रदर्शित करता है ।

उदाहरणार्थ — किसी भी कार्यालय के तृतीय वर्ग के कर्मचारी का वेतन 500 रु पये है तो यह एक सांख्यिकीय तथ्य नहीं है किन्तु यदि इसे तृतीय वर्ग के के वेतन का प्रतिनिधि माना जाये तो इसे सांख्यिकीय तथ्य कहा जायेगा। अर्थात् संख्यिकीय तथ्य, समूह के तथ्यों को प्रस्तुत करते हैं।

(द) तथ्य परस्पर सम्बन्धित किये जाने योग्य होने चाहिये — इसका तात्पर्य है कि संकलित तथ्य ऐसे होने चाहिए कि उनकी परस्पर तुलना की जा सके।

(य) समुचित शुद्धता — सांख्यिकी तथ्यों की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह भी है कि उनमें शुद्धता का होना अत्यावश्यक होता है।

इस प्रकार सांख्यिकी के उपर्युक्त गुणों से हम परिचित हो गये हैं । अत: सांख्यिकी भाषा में वस्तुओं व घटनाओं की व्याख्या तभी संभव है जब उन्हें संख्यात्मक रूप में व्यक्त किया जाये। संख्याओं की गणना अथवा अनुमान उचित स्तर पर आंकने योग्य हो तथा तथ्यों का संकलन सुव्यवस्थित व पूर्व नियोजित उद्देश्य से किया गया हो साथ ही साथ तथ्यों के गुण परस्पर तुलनीय होने चाहिए।

19.4 सांख्यिकीय पद्धतियाँ

सांख्यिकी के गुणों का ज्ञान प्राप्त करने के बाद अब सांख्यिकी की पद्धतियों के विषय में अध्ययन करेंगे। सांख्यिकीय पद्धतियां वे नियम या रीतियां हैं जिनके माध्यम से संकलित तथ्यों को व्याख्यात्मक बनाया जाता है। अर्थात् सांख्यिकीय नियमों का अनुसरण करते हुए तथ्यों का संकलन वर्गीकरण, सारणीकरण आदि इस प्रकार प्रस्तुत किया जाता है जिससे उनका तुलनात्मक अध्ययन सरल हो सके। सांख्यिकीय पद्धतियां वे क्रियायें हैं जिनको तथ्यों के संग्रहण, संकलन, संगठन, विश्लेषण, निर्वचन तथा प्रस्तुतीकरण में उपयोग किया जाता है । सांख्यिकीय पद्धतियों के अन्तर्गत निम्न चरण सम्मिलित किये जाते हैं।

(अ) तथ्यों का संकलन (ब) तथ्यों का वर्गीकरण (स) तथ्यों का सारणीयन (द) तथ्यों का औसत, बिन्दु रेखा व चित्रों द्वारा प्रस्तुतीकरण (य) विविध सांख्यिकीय परीक्षण प्रविधियों द्वारा तथ्यों का विश्लेषण (र) विश्लेषण के आधार पर ठोस निष्कर्ष तथा पूर्वानुमान ज्ञात करना।

इस प्रकार उपयोग की दृष्टि से सांख्यिकी विज्ञान को दो भागों में वर्गीकृत किया जाता है—

(1) वर्णनात्मक सांख्यिकी (2) अनुमानिक सांख्यिकी

1. वर्णनात्मक सांख्यिकी — इसमें संख्यात्मक तथ्यों का वर्णन साधारण ढंग से किया जाता है उदाहरणार्थ मध्यमान, मध्यिका तथा बहुलक हमें पूरे आंकड़े का केन्द्रीय मान बताता है । मानक विचलन द्वारा हम व्यक्ति या वस्तुओं की किसी समूह में परिवर्तन शीलता को जान सकते हैं । इसी प्रकार सह सम्बन्धी गुणांक के द्वारा हम एक ही समूह के दो प्रेक्षणों की आपसी निकटता को ज्ञात कर सकते हैं व निकटता के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं ये सभी वर्णनात्मक सांख्यिकी के उदाहरण हैं।

2. अनुमानिक संख्यिकी — अनुमानिक सांख्यिकी को हम आगमनात्मक सांख्यिकी तथा प्रतिचयन सांख्यिकी भी कहते हैं । अनुमानिक संख्यिकी का प्रयोग शोधों से प्राप्त आंकड़ों से अनुमान लगाने तथा अनुमान लगाने के दौरान घटित त्रुटियों की जानकारी करने के लिए होता है। अनुमानिकी सांख्यिकी की प्रक्रियाएं वर्णनात्मक सांख्यिकी की प्रक्रियाओं की अपेक्षा अधिक जटिल होती हैं। यद्यपि अनुसंधान में दोनों सांख्यिकीय प्रक्रियाओं का प्रयोग किया जाता है तथापि अनुसंधान से प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण की प्रक्रिया में वर्णनात्मक सांख्यिकी अनिवार्य हो जाती है। अर्थात् वर्णनात्मक सांख्यिकी के प्रयोग से अर्थयुक्त निष्कर्ष निकाले जाते है।

इस प्रकार हमने इस इकाई में सांख्यिकीय पद्धतियों के विषय में ज्ञान प्राप्त कर लिया है।

19.5 सांख्यिकी की प्रकृति व इसके कार्य

सांख्यिकी पद्धतियों का ज्ञान प्राप्त करने के बाद अब सांख्यिकी की प्रकृति व इसके प्रमुख कार्यों का अध्ययन करेंगे।

प्रकृति — सांख्यिकी विद्वान टिपेट का मानना है कि सांख्यिकी विज्ञान के साथ-साथ कला भी है अर्थात् सांख्यिकी में विज्ञान व कला दोनों के ही गुण विद्यमान हैं। सांख्यिकी को विज्ञान इसलिये माना जाता है क्योंकि इसकी पद्धतियां मौलिक रूप से क्रमबद्ध हैं तथा हर जगह उनका प्रयोग होता है, वहीं सांख्यिकी कला इसलिये है क्योंकि इसकी पद्धतियों का सफल उपयोग अधिकतम सीमा तक सांख्यिकीय योग्यता व विशिष्ट अनुभव और उनके प्रयोग क्षेत्र के ज्ञान पर आश्रित हैं जैसे अर्थशास्त्र।

सांख्यिकी विज्ञान के रूप में— विज्ञान के अन्तर्गत सांख्यिकी का नियमबद्ध एवं क्रमबद्ध तरीके से अध्ययन किया जाता है। विज्ञान में विषय नियम के कारण एवं उसके परिणामों का विश्लेषण किया जाता है। सांख्यिकी व विज्ञान दोनों में निम्न विशेषताएं एक समान पायी जाती हैं—

(1) विज्ञान व सांख्यिकी में ''कारण व परिणामों '' का अध्ययन एक ही तरह से किया जाता है।

(2) दोनों में सदृश्य सिद्धान्तों का 'नियमबद्ध' एवं 'क्रमवत' तरीकों से अध्ययन किया जाता है।

सांख्यिकी कला के रूप में — कला कार्य को संपन्न करने के तरीकों का ज्ञान देती है व सिद्धान्तों को व्यावहारिक रूप प्रदान करती है। कला रूप में सांख्यिकी हमारा यह मार्गदर्शन करती है कि सांख्यिकीय पद्धतियों का प्रयोग किस प्रकार सरल रूप से किया जाये। यह विविध समस्याओं के समाधान को भी बतलाती है। इस प्रकार हम टिपेट के वाक्यांश सांख्यिकी विज्ञान व कला दोनों है को स्वीकार कर सकते हैं । प्रकृति का अध्ययन करने के पश्चात् अब सांख्यिकी के प्रमुख कार्यों का अध्ययन करेंगे।

सांख्यिकी के प्रमुख कार्य — इसी इकाई के अन्तर्गत हम सांख्यिकी के कार्यों का ज्ञान प्राप्त करेंगे जो निम्नवत हैं—

(1) **सांख्यिकी तथ्यों को सरल एवं सुबोध बनाती है** — इसमें जटिल तथ्यों को सांख्यिकीय पद्धतियों द्वारा इस प्रकार प्रस्तुत किया जाता है कि वे सरलतम बन जाते हैं।

(2) **सांख्यिकी तथ्यों को संख्यात्मक रूप में प्रस्तुत करती है** - सांख्यिकी तथ्यों को संख्यात्मक रूप में दो तरह से व्यक्त करती है। प्रथमतः जो तथ्य सरलता से एकत्र कर लिये जाते हैं उन्हें प्रत्यक्ष रूप से प्रस्तुत करती है जैसे ऊँचाई, आमदनी आदि। द्वितीय , कठिन व जटिल तथ्यों को अप्रत्यक्ष रूप से व्यक्त किया जाता है जैसे - राष्ट्रीय आय आदि।

(3) **सांख्यिकी तथ्यों में सह सम्बध प्रदर्शित करती है**- डा. बाउले का विचार है कि सांख्यिकी का एक प्रमुख कार्य तथ्यों में सहसम्बन्ध बतलाना है। इसके द्वारा दो वस्तुओं या घटनाओं के मध्य आपसी निकटता को सहसम्बन्ध द्वारा प्रस्तुत किया जाता है।

(4) **पूर्वानुमान में सहायक** — सांख्यिकी द्वारा वर्तमान समय में उपलब्ध तथ्यों के आधार पर उनके पूर्वानुमान के आधार पर बड़ी-बड़ी आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक नीतियों का निर्धारण होता है। भारतीय पंचवर्षीय योजनाओं के लक्ष्य पूर्वानुमान के आधार पर निश्चित किये जाते हैं। देश के आर्थिक नियोजन के लक्ष्यों का निर्णय पूर्वानुमानों पर ही आश्रित होता है। इस प्रकार सांख्यिकी का एक प्रमुख कार्य पूर्वानुमान में मदद करना भी होता है।

(5) **सांख्यिकीय नीति** — संकलित तथ्य वस्तुस्थिति को प्रस्तुत कर उससे सम्बन्धित नीतियों के निर्धारण में सहायता एवं सुविधा प्रदान करते हैं। इसके द्वारा राज्य सरकारें अपनी आयात निर्यात, मूल्य बेरोजगारी, उत्पादन आदि से सम्बन्धित नीतियों का निर्धारण करती हैं। सांख्यिकी में सामग्री का वैज्ञानिक विश्लेषण ही नीति निर्धारण का प्रमुख अंग होता है।

(6) **सांख्यिकी, तथ्यों के तुलनात्मक अध्ययन में सहायक** — सांख्यिकी के द्वारा एक से अधिक इकाइयों के सम्बन्धों को तुलनात्मक रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है जिससे वे सरलता से समझे जा सकते हैं।

उदाहरणार्थ — यदि किसी कालेज की एम0 ए0 परीक्षा में प्रथम स्थान पाने वाले केवल छात्रों को बतलाया जाये तो इससे पूरी तुलनात्मकता स्पष्ट नहीं हो पाती है और यदि इन दोनों विद्यार्थियों के प्राप्तांकों का प्रतिशत भी तुलनात्मक रूप में स्पष्ट कर दिया जाये तो अधिक स्पष्टता व सरलता के साथ तुलना संभव हो जाती है।

(7) **व्यक्ति विशेष के अनुभव व ज्ञान में वृद्धि में सहायक** — सांख्यिकी के द्वारा व्यक्ति अपने ज्ञान-कोश में वृद्धि करता है। इस उत्तरोत्तर ज्ञान वृद्धि के फलस्वरूप अपनी योग्यता में वृद्धि करता है व वर्तमान में उसे सुनियोजित बनाता है।

(8) **सांख्यिकीय पद्धतियां अन्य विज्ञानों के नियमों की प्रामाणिकता की जांच करने में सहायता करती हैं**- अन्य विज्ञानों के सिद्धान्त निगमन पद्धति पर आश्रित होते हैं । सांख्यिकीय पद्धतियों द्वारा इन विज्ञानों के नियमों की प्रामाणिकता की जांच की जाती है।

इस प्रकार इस इकाई में हमने सांख्यिकी की प्रकृति व इसके प्रमुख कार्यों का ज्ञान प्राप्त कर लिया है।

19.6 सांख्यिकी की सीमाएं

अब हम सांख्यिकी की सीमाओं पर चर्चा करेंगे। सामाजिक अनुसंधान का एक महत्वपूर्ण साधन होने के

कारण सांख्यिकी विज्ञान की कुछ सीमाएं भी हैं जिनसे अलग जाने पर परिणाम अशुद्ध व भ्रामक प्राप्त होने लगते हैं। अत: सांख्यिकी की सीमाएं निम्नवत हैं—

(अ) सांख्यिकी में केवल संख्यात्मक तथ्यों का अध्ययन संभव है— सांख्यिकी की प्रथम सीमा उन अध्ययनों तक ही सीमित हैं जो संख्या में मापे जा सकते हैं, उदाहरण — जनसंख्या, छात्रों की संख्या, आय, ऊँचाई, श्रमिक संख्या आदि। परन्तु बुद्धिमानी, न्याय, ईमानदारी, मित्रता, चरित्र, देशप्रेम, संस्कृति आदि को हम संख्यात्मक रूप से न देख पाने के कारण ये सभी सांख्यिकी सीमा से परे हैं।

(ब) सांख्यिकी व्यक्तिगत इकाइयों का अध्ययन न कर समूहों का अध्ययन करती है — सांख्यिकी परमावश्यक रूप से समूहवादी है। सांख्यिकी में कई इकाइयों के गुणों का जो एक रूप में पाये जाते हैं का ही अध्ययन कर सकते हैं।

उदाहरणार्थ — कक्षा के पांच विद्यार्थियों को 100 में से क्रमश: 80, 70, 60, 75 व 20 अंक मिले हैं। इन पांचों विद्यार्थियों का औसत = 80 + 70 + 60 + 75 + 20 = 61 अंक हैं। अर्थात् औसतन सभी विद्यार्थी प्रथम श्रेणी की योग्यता रखते हैं। अत: हम स्पष्टत: कह सकते हैं कि सांख्यिकी समूह का ही अध्ययन करती है।

(स) सांख्यिकी आंकड़ों में सजातीयता व एकरूपता होना आवश्यक है— सांख्यिकी में तुलनात्मक अध्ययन करने हेतु आंकड़ों का आपस में सजातीय व एकरूप होना नितांत आवश्यक होता है।

(द) सांख्यिकी सिद्धान्तों का पूर्णरूपेण अनुकरण आवश्यक है।

(य) सांख्यिकी साधन प्रस्तुत करती है परन्तु समाधान नहीं:- सांख्यिकी का कार्य तथ्यों का संकलन कर उन्हें प्रस्तुत करना है समाधान करना नहीं।

इस प्रकार हम स्पष्टत: देख चुके हैं कि सांख्यिकी की कुछ निश्चित सीमाएं भी होती हैं।

19.7 सांख्यिकी का अन्य विज्ञानों से सम्बन्ध

सांख्यिकी का अन्य विज्ञानों से सम्बन्ध निम्नवत है—

(1) सांख्यिकी और विज्ञान — इस संदर्भ में डा. बाउले ने ठीक ही कहा है कि सांख्यिकी और भौतिक विज्ञान की अनुसंधान विधि एक ही है अर्थात् इन सभी विज्ञानों के सिद्धान्तों के विश्लेषण का आधार सांख्यिकी ही होती है। इसलिए कहा जाता है कि तथ्यों के बिना विज्ञान निष्फल है तथा बिना विज्ञान के तथ्य निर्मूल हैं। सांख्यिकी का विज्ञान की अन्य शाखाओं जैसे भौतिक शास्त्र, प्राणिशास्त्र, वनस्पतिशास्त्र आदि से भी नजदीकी सम्बन्ध हैं।

(2) सांख्यिकी एवं अर्थशास्त्र — सांख्यिकी का अर्थशास्त्र से निकट का सम्बन्ध है। सांख्यिकी की ही सहायता से आर्थिक नीतियों का प्रभाव ज्ञात किया जाता है। अर्थशास्त्री प्रो. मार्शल ने लिखा है कि सभी आधुनिक समस्याओं जैसे उत्पादन दर, प्रतिव्यक्ति आय, जनसंख्या आदि को सांख्यिकी की मदद से ही ज्ञात किया जाता है। आर्थिक विकास के आधार सांख्यिकीय तथ्य ही होते हैं।

(3) सांख्यिकी एवं समाजशास्त्र — सांख्यिकी सामाजिक अनुसंधानों के लिए मार्ग प्रशस्त करने का काम करती है। सांख्यिकी के ज्ञान के बिना सामाजिक विज्ञानों का शोधकर्ता प्राय: एक ऐसे व्यक्ति के समान है जो एक अंधेरे कमरे में उस काली बिल्ली को खोजने की कोशिश कर रहा है जो वहां है ही नहीं।

(4) सांख्यिकी एवं गणित — सांख्यिकी व गणित का आपसी निकटता का सम्बन्ध है चूँकि इन दोनों में ही आंकड़ों या अंकों का प्रयोग होता है। सांख्यिकी व्यावहारिक गणित की एक शाखा है जो

आंकड़ों में विशिष्टीकरण प्राप्त करती है। इस प्रकार हम देख रहे हैं कि सांख्यिकी का विविध रूपों में अन्य विज्ञानों से सम्बन्ध है ।

19.8 सामाजिक अनुसंधान में सांख्यिकी का महत्व

प्राचीन समय में सांख्यिकी को राजनीतिक अंकगणित कहा जाता था क्योंकि उस समय उसकी उपयोगिता राज्य तक ही सीमित थी। किन्तु आज सांख्यिकी सामाजिक और प्राकृतिक सभी विज्ञानों के क्षेत्र में बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है। सभी विज्ञानों की विभिन्न समस्याओं के तर्कपूर्ण विवेचन में सांख्यिकी का अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान है। वालिस और राबटर्स (1956) के अनुसार सांख्यिकी एक ऐसा साधन है जो प्रयोग सिद्ध अनुसंधान के लगभग प्रत्येक क्षेत्र में उत्पन्न होने वाली समस्याओं का समाधान करने में प्रयोग किया जाता है। आधुनिक सांख्यिकी को यदि मानव कल्याण का गणित कहा जाये तो अनुचित नहीं होगा। इसका उपयोग निम्नवत है—

(1) सामाजिक अनुसंधानों में उपयोग— सांख्यिकी सामाजिक क्षेत्र में अनुसंधानों की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। विविध विद्वानों का मानना है कि सांख्यिकी विज्ञान की वह विधि है जिसके द्वारा सामूहिक, प्राकृतिक या सामाजिक घटना का निर्णय विश्लेषण, गणना या अनुमानों के संकलन के परिणामों के आधार पर किया जाता है। समाज में अपराध, बेकारी, गरीबी, वेश्यावृत्ति, पारिवारिक एवं सामाजिक विघटन, बाल-विवाह, निरक्षरता, भिक्षावृत्ति, अस्पृश्यता, साम्प्रदायिकता आदि अनेक समस्याएं व्याप्त हैं, जिनके वैज्ञानिक अध्ययन एवं सर्वेक्षण हेतु इसे समुचित तथ्य एकत्रित करने पड़ते हैं , उनका वर्गीकरण, सारणीयन, विश्लेषण एवं निर्वचन करना होता है। इन सभी के लिये सांख्यिकी का ज्ञान अत्यावश्यक है। बहुत बड़े क्षेत्र में सामाजिक सर्वेक्षण करने के लिये निदर्शन विधि का प्रयोग करना पड़ता है । निदर्शन प्राप्त करने में भी सांख्यिकीय विधियों का सहारा लेना पड़ता है। समाजशास्त्र के क्षेत्र में सांख्यिकी का उपयोग जनांनिकी तथ्यों जैसे जन्मदर, विवाह, जनसंख्या वृद्धि आदि के अध्ययन के लिये आवश्यक है। नवीन समंकों की सहायता से समाजशास्त्री सामाजिक नियमों या उपकल्पनाओं की जांच करके उनमें आवश्यक संशोधन करते रहते हैं। सामाजिक अनुसंधानों के लिए सांख्यिकीय विधियां उपयोगी यन्त्रों का कार्य करती हैं। किसी ने उपयुक्त ही कहा है कि सांख्यिकी की पूर्ण जानकारी के बिना समाज विज्ञानों का अनुसंधानकर्ता अक्सर एक ऐसे अन्धे व्यक्ति के समान है जो एक अंधेरे कमरे में उस काली बिल्ली को ढूंढने का प्रयत्न कर रहा है जो वहां है ही नहीं। मानसिक योग्यता एवं अन्य मनोवैज्ञानिक तथ्यों की माप के लिये तथा माप की प्रामाणिकता एवं विश्वनीयता की जांच करने हेतु बुद्धिलब्धि या बौद्धिक परीक्षण में विश्लेषण हेतु सांख्यिकी का उपयोग किया जाता है। मनोविज्ञान के क्षेत्र में विशाल सांख्यिकीय तथ्यों एवं सिद्धान्तों के प्रयोग के लिये 'साइकोमेट्री' नामक विज्ञान की एक नवीन शाखा का जन्म हुआ।

अन्य उपयोग — सांख्यिकी का अन्य उपयोग निम्न रूपों नें होता है—

1. तथ्यों को संख्यात्मक रूप में प्रस्तुत करना।
2. जटिल तथ्यों को सरल बनाना।
3. तथ्यों की तुलना व उनमें सम्बन्ध स्थापित करना।
4. नीति निर्धारण में सहायक।
5. व्यक्तिगत ज्ञान व अनुभव वृद्धि में सहायक।

6. अनुमान लगाने में सहायक।

7. समस्या की सही/ यथार्थ जानकारी प्रदान करना

8. शासन प्रबन्ध में उपयोगी

9. नियोजन में सहायक।

10. आर्थिक क्षेत्रों में उपयोगी आदि।

इस प्रकार स्पष्ट है कि सांख्यिकी का उपयोग समाज के विभिन्न क्षेत्रों में किया जाता है जो कि समाजशास्त्र के अध्ययन के दायरे में आते हैं। सांख्यिकी प्रत्येक व्यक्ति को प्रभावित करती है और जीवन के अनेक बिन्दुओं पर स्पर्श करती है। इस प्रकार इस इकाई के अन्तर्गत हमने सांख्यिकी के विषय में आवश्यक बिन्दुओं पर ज्ञान प्राप्त किया। अंत में हमने सांख्यिकी के महत्व का भी ज्ञान प्राप्त कर अपने ज्ञान भंडार में ज्ञान वृद्धि की है।

19.9 सारांश

इस इकाई में हमने प्रारम्भ में सांख्यिकी के अर्थ को जाना। अलग-अलग विद्वानों द्वारा प्रस्तुत सांख्यिकी की परिभाषाओं का ज्ञान प्राप्त करते हुए इसके गुणों की जानकारी प्राप्त की। तदुपरान्त हमने सांख्यिकीय पद्धतियों का अध्ययन किया व ज्ञान में वृद्धि की। इसी क्रम में इसी इकाई के अन्तर्गत हमने सांख्यिकीय की प्रकृति का अध्ययन करते हुये इसके कार्यों का भी ज्ञान प्राप्त किया। सांख्यिकी की सीमाओं व इसके अन्य विज्ञानों के साथ सम्बन्धों का भी अध्ययन किया। अंत में हमने सामाजिक अनुसंधान में सांख्यिकी के महत्व पर ज्ञान प्राप्त करते हुए सांख्यिकी से सम्बन्धित विविध पक्षों की जानकारी प्राप्त की। इस प्रकार इस इकाई के द्वारा हमने सांख्यिकी के संदर्भ में महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर ज्ञान प्राप्त किया है।

19.10 बोध प्रश्न

क. वस्तुनिष्ठ बोधात्मक प्रश्न

1. किस भाषा में 'State' को 'Status' कहते हैं—

(अ) आंग्ल (ब) जर्मन (स) लैटिन (द) ग्रीक

2. किस भाषा में सांख्यिकी को 'Statisticus' कहा जाता है—

(अ) जर्मन (ब) रोमन (स) ग्रीक (द) लैटिन

3. कथन किसका है - ''सांख्यिकी वह विज्ञान है जो सामाजिक व्यवस्था को सामूहिक रूप में सभी दृष्टिकोणों से मापता है-

(अ) प्रो. बाउले (ब) पी. वी. यंग (स) घोष एवं चौधरी (द) ए. ई. वाघ

4. एलीमेन्ट्स आफ स्टेटिस्टिकल मेथड्स कृति हैं -

(अ) पी. वी. यंग (ब) क्राक्सटन एवं क्राउडन (स) बाउले (द) ए. एफ. बाघ

5. किस भाषा में Statistician (स्टेटिस्टिकन) को Statista (स्टैटिस्टा) कहा जाता है।

(अ) रोमन (ब) जर्मन (स) ग्रीक (द) लैटिन

ख. लघुउत्तरीय प्रश्न

1. सांख्यिकी के अर्थ को स्पष्ट कीजिए?

2. सांख्यिकी के गुणों का वर्णन कीजिए?

3. सांख्यिकीय पद्धतियों का उल्लेख कीजिये? ,

4. सांख्यिकी की प्रकृति का वर्णन कीजिये?

5. सांख्यिकी का सामाजिक अनुसंधान में महत्व स्पष्ट कीजिये?

ग. दीर्घउत्तरीय प्रश्न

1. सांख्यिकी के अर्थ को स्पष्ट करते हुए इसकी पद्धतियों की व्याख्या कीजिये ?

2. सांख्यिकी की सीमाओं का उल्लेख करते हुए इसकी प्रकृति व महत्व का उल्लेख कीजिये?

19.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

उत्तर 1 (स) लैटिन

उत्तर 2 (ब) रोमन

उत्तर 3 (अ) प्रो. बाउले

उत्तर 4 (द) ए. एफ. वाघ

उत्तर 5 (द) लैटिन

इकाई 20 तथ्यों का वर्गीकरण व सारणीयन

इकाई की रूपरेखा

20.0 उद्देश्य

20.1 प्रस्तावना

20.2 वर्गीकरण : अर्थ व परिभाषा

20.3 वर्गीकरण के उद्देश्य व वर्गीकरण की प्रक्रिया

20.4 आदर्श वर्गीकरण की विशेषताएं , गुण व आधार

20.5 वर्गीकरण के प्रकार

20.6 सारणीयन: अर्थ व परिभाषा

20.7 सारणीयन के उद्देश्य

20.8 उत्तम सारणी के गुण

20.9 सारणी की संरचना

20.10 सारणी के प्रकार

20.11 सारणीयन के लाभ व सीमाएं

20.12 सारांश

20.13 बोध प्रश्न

20.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

20.0 उद्देश्य

इस इकाई के अन्तर्गत हम सभी लोग 'तथ्यों' का वर्गीकरण व सारणीयन विषय पर ध्यान केन्द्रित करेंगे। वस्तुत: वर्गीकरण व सारणीयन का सामाजिक शोध में बहुत महत्वपूर्ण स्थान है इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त :

- वर्गीकरण के अर्थ को स्पष्ट कर सकेंगे।
- बोधगम्यता व संक्षिप्त समूहीकरण की व्याख्या कर सकेंगे।
- तुलनात्मक अध्ययन एवं समानता व असमानता को स्पष्ट कर सकेंगे।
- तथ्यों के महत्व के ज्ञान की विवेचना कर सकेंो ।

इसके अलावा वर्गीकरण के गुण, आधार व प्रकारों का अध्ययन करना भी इसमें सम्मिलित है। सारणीयन के सम्बोध को जानना, इसके गुण व संरचना तथा प्रकारों का अध्ययन इससे होने वाले लाभ व इनकी सीमाओं का अध्ययन करना भी इस इकाई का महत्वपूर्ण उद्देश्य है।

20.1 प्रस्तावना

इस इकाई में हम वर्गीकरण व सारणीयन के विषय में ज्ञान प्राप्त करेंगे। वर्गीकरण के अन्तर्गत इसकी परिभाषा का ज्ञान, इसके उद्देश्यों व प्रक्रिया का भी अध्ययन करेंगे। आदर्श वर्गीकरण के गुण व आधारों का ज्ञान प्राप्त करते हुए इसके प्रकारों को भी समझेंगे। तदुपरांत सारणीयन के सम्बोध को स्पष्ट जानने के बाद इसके गुण, उद्देश्यों व इसकी संरचना का भी अध्ययन करेंगे। सारणी के प्रकारों का ज्ञान प्राप्त करते हुए सारणीयन से होने वाले लाभ व इसकी सीमाओं का भी अध्ययन करेंगे। इस प्रकार इस इकाई में हम वर्गीकरण व सारणीयन के महत्वपूर्ण पहलुओं पर विचार करते हुए अपने ज्ञान कोश में निरन्तर वृद्धि करने का प्रयास करेंगे।

20.2 वर्गीकरण : अर्थ व परिभाषा

इस इकाई के अन्तर्गत हम वर्गीकरण के विषय में अध्ययन करेंगे। यहां पर सर्वप्रथम हम वर्गीकरण के अर्थ को स्पष्ट करेंगे। तथ्यों में पायी जाने वाली समानता या विभिन्नता के आधार पर उनको व्यवस्थित रूप से विभिन्न श्रेणियों में विभाजित करने को वर्गीकरण कहा जाता है। किसी भी अध्ययन से सम्बन्धित संकलन का कार्य समाप्त होने पर वांछित और अवांछित दोनों प्रकार के तथ्य एकत्र हो जाते हैं। अतएव प्राप्त तथ्यों का सम्पादन करना आवश्यक हो जाता है। उपयोगी तथ्यों को समानताओं और विभिन्नताओं के अनुसार सरल, सुबोध और स्पष्टता से वर्गों, उपवर्गों या श्रेणियों में प्रस्तुत किया जाता है, यही प्रक्रिया वर्गीकरण कहलाती है। वर्गीकरण तथ्यों को व्यवस्थित करने के साथ-साथ उनमें एकरूपता को भी प्रदर्शित करता है। वर्गीकरण से तुलनात्मक अध्ययन सरल हो जाता है। सांख्यिकी का मुख्य कार्य किसी भी विषय से सम्बंधित तथ्यों का संकलन कर उन्हें क्रम से प्रदर्शित करना है जिससे विषय का विश्लेषण वैज्ञानिक रीति से किया जा सके। इस विश्लेषण के लिये तथ्यों का वर्गीकरण पहला चरण है । अतः प्रत्येक वर्गीकरण शोध के लक्ष्यों के अनुकूल किया जाना चाहिए। वर्गीकरण अध्ययन के उद्देश्य के अनुसार स्थायी तथा परिवर्तनशील होना चाहिए। अलग-अलग विद्वानों ने वर्गीकरण की परिभाषा को अपने शब्दों में प्रस्तुत किया है—

एलहांस (1960) ने कहा है कि सादृश्यताओं एवं समानताओं के अनुसार तथ्यों को समूह एवं वर्गों में व्यवस्थित करने की तकनीकी प्रक्रिया वर्गीकरण कहलाती है। वहीं कोनोर (1936) का कहना है कि वर्गीकरण तथ्यों को उनकी समानता और निकटता के आधार पर समूहों एवं वर्गों को क्रमबद्ध करने तथा व्यक्तियों में पायी जाने वाली विभिन्नता में विद्यमान एकता को अभिव्यक्ति देने वाली प्रक्रिया है। इसमें समानता के आधार पर तथ्य संक्षिप्त, स्पष्ट तथा सरल ढंग से रखे जाते हैं। किन्तु वर्गीकरण तभी संभव होता है,जबकि तथ्य विभिन्नता लिये हुए हों तथा काफी मात्रा में उपलब्ध हों। वर्गीकरण उन इकाइयों की समस्त विशेषताओं को नहीं बताता । उससे केवल ऐसी विशेषता ही प्रकट होती है जिसको आधार मानकर वर्गीकरण किया गया है। उदाहरणार्थ ,धर्म के आधार पर व्यक्तियों के वर्गीकरण को देखकर धनी या निर्धन होने का पता नहीं चलता है।

कोनोर (1936) की परिभाषा के अनुसार वर्गीकरण की निम्नलिखित विशेषतायें होती हैं—

(1) वर्गीकरण, समस्त सामग्री को कुछ थोड़े अथवा समूहों में विभाजित करने की क्रिया है। इससे बिखरे हुए आंकड़े समूह के स्थान पर थोड़े से सजातीय वर्ग बन जाते हैं जिससे सामग्री का विवेचन तथा गुणों का अनुमान अधिक सुविधापूर्ण हो जाता है।

(2) वर्गीकरण का आधार गुणों की एकता है । एक वर्ग में सम्मिलित समस्त इकाइयां समान अथवा सजातीय होती हैं साथ ही साथ वे दूसरे वर्ग की इकाइयों से भिन्न होती हैं। इस प्रकार सजातीयता व भिन्नता ही वर्गीकरण का आधार है। यदि पूर्ण एकता होगी तो एक ही वर्ग बनेगा और यदि कोई भी दो इकाइयाँ समान नहीं हैं तब भी वर्गीकरण संभव नहीं होगा।

(3) वर्गीकरण से यह तात्पर्य नहीं है कि एक वर्ग में आने वाली समस्त इकाइयां हर बात में एक दूसरे के समान हैं तथा दूसरे वर्गों की इकाइयों से वे प्रत्येक बात में भिन्न हैं । ऐसा तो प्राय: असंभव ही होता है। समानता से तात्पर्य केवल इतना है कि विशेष गुण के लिए ही उसमें समानता है। अत: वर्गीकरण सदैव किसी विशेष आधार पर होता है ।

(4) वर्गीकरण का आधार वास्तविक या भावात्मक भी हो सकता है। वह या तो इकाइयों के प्राकृतिक गुणों के आधार पर किया जा सकता है अथवा सांख्यिकी आधार पर । उनके लिये अपनी इच्छानुसार कोई भी काल्पनिक आधार लिया जा सकता है। इस प्रकार हम जान गये होंगे कि वर्गीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जो संकलित तथ्यों को संक्षिप्त, स्पष्ट एवं सरलतम बनाने के साथ-साथ उन्हें उनकी समानता व भिन्नताओं के आधार पर निश्चित वर्गों या समूहों में व्यवस्थित करता है । वर्गीकरण तथ्यों को सारणीयन की ओर ले जाने के लिए प्रथम चरण होता है और सांख्यिकीय तथ्यों को उचित रूप में प्रदर्शित करने का ढंग सुझाता है।

20.3 वर्गीकरण के उद्देश्य व वर्गीकरण की प्रक्रिया

सामाजिक अनुसंधान में वर्गीकरण बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि इसके द्वारा निम्नांकित उद्देश्यों की पूर्ति होती है—

(1) **बोधगम्यता व संक्षिप्त समूहीकरण** — वर्गीकरण का उद्देश्य जटिल, बिखरे हुए, परस्पर असम्बद्ध तथ्यों को समझने योग्य व तर्कसंगत समूह में रखना है। उदाहरणार्थ — स्नातक परीक्षा देने वाले हजारों परीक्षार्थियों के प्राप्तांकों की विशाल सूची देखकर कोई निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता परन्तु उन्हीं प्राप्तांकों के आधार पर हम छात्रों का प्रथम, द्वितीय व तृतीय तथा असफल श्रेणी में वर्गीकरण कर देते हैं तो उन्हें आसानी से समझा जा सकता है।

(2) **तुलनात्मक अध्ययन की सुविधा प्रदान करना** — वर्गीकरण द्वारा दो वर्गों की या दो समूहों की विशेषताओं का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है। क्योंकि वर्गीकरण के द्वारा कुछ समान गुणों के आधार पर विभिन्न इकाइयां अलग-अलग श्रेणियों में बँट जाती हैं और उन श्रेणियों के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन संभव होता है, उदाहरणार्थ — यदि दो प्रान्तों के लोगों को शिक्षित व अशिक्षित दो वर्गों में बाँट दिया जाय तो तुलनात्मक रूप में हम यह बता सकते हैं कि किस प्रांत के लोग अधिक संख्या में शिक्षित हैं।

(3) **समानता तथा असमानता को स्पष्ट करना** — वर्गीकरण के द्वारा विभिन्न वर्गों की समानता और असमानता स्पष्ट हो जाती है। इससे उनके विषय में ज्ञान प्राप्त करने में सफलता होती है।

(4) **तथ्यों के महत्व का ज्ञान**— बिखरे हुए तथ्यों को देखकर उनके महत्व के सम्बन्ध में स्पष्ट ज्ञान प्राप्त नहीं किया जा सकता है परन्तु वर्गीकरण के द्वारा जब वही तथ्य थोड़े से वर्गों में विभक्त हो जाते हैं तो उनकी वास्तविकता स्वत: ही प्रकट हो जाती है और उन्हें समझने के लिये मस्तिष्क पर अनावश्यक दबाव नहीं बनाना पड़ता है।

(5) **सूचना को स्मरण योग्य बनाना** — वर्गीकरण के द्वारा सूचना को स्मरण योग्य बनाया जा सकता है। विभिन्न असम्बद्ध आंकड़ों को याद रखना अत्यन्त कठिन होता है परन्तु थोड़े से ही वर्गों को स्मरण रखना सरल होता है अतः वर्गीकरण सूचना को संक्षिप्त रूप प्रदान कर स्मरण योग्य बना देते हैं।

(6) **निष्कर्षों के उचित उपयोग के लिये** — सामाजिक शोध से प्राप्त निष्कर्षों के भविष्य में सही उपयोग के लिये यह जरूरी है कि गुणों व परिस्थितियों में समानता हो । वर्गीकरण के द्वारा ही संकलित तथ्य संक्षिप्त व बोधगम्य हो जाते हैं जिससे वर्गीकरण द्वारा उचित निष्कर्ष निकालने में अधिक सुविधा महसूस होती है।

इस प्रकार से समाज वैज्ञानिक पामर (1928) ने वैज्ञानिक आंकड़ों के वर्गीकरण के तीन उद्देश्य बताये हैं—

(1) आंकड़ों का महत्वपूर्ण समानताओं के आधार पर श्रेणियों में विभाजन

(2) साथ पाये जाने वाले कारकों के उन गुच्छों की खोज जो समान घटनाओं में बार-बार घटित होते हैं। तथा

(3) घटनाओं में पुनरावृत्तिपूर्ण प्राकृतिक क्रमों की खोज।

इस प्रकार हम देख रहे हैं कि वर्गीकरण द्वारा जटिल, बिखरे हुए तथा परस्पर असम्बद्ध तथ्यों को बोधगम्य तथा तर्क संगत समूह में रखा जाता है। तथ्यों के मध्य समानताएं तथा विभिन्नताएं स्पष्ट हो जाती हैं । वर्गीकरण तुलनात्मक अध्ययन में सहायक होता है। इससे दो समूहों की विशेषताओं की तुलना करके उनके विकास का पता लगाया जा सकता है। एक से तथ्य जब अनेक वर्गों में विभाजित किये जाते हैं तो उनकी अनेक नयी विशेषताओं का पता लगता है । सांख्यिकीय विवेचना करने, माध्य विचलन, माध्य मूल्य, सहसम्बन्ध आदि निकालने में वर्गीकरण अत्यन्त आवश्यक होता है इसके बिना तथ्यों का विश्लेषण तथा स्पष्टीकरण नहीं किया जा सकता । वर्गीकरण परिशुद्ध निष्कर्ष निकालने में बड़ा सहायक होता है।

किन्तु वर्गीकरण उपयुक्त ढंग से किया जाना चाहिए। उसमें निश्चितता एवं स्पष्टता होनी चाहिए। जिन्हें उच्च मध्य या निम्न कहा गया है, उनको पहले परिभाषित कर लिया जाना चाहिए। वर्गीकरण अध्ययन के उद्देश्यानुसार स्थायी व परिवर्तनशील होना चाहिए। उसमें नवीन परिस्थितियों के साथ अपने आप को बदलने की क्षमता होनी चाहिए। प्रत्येक वर्गीकरण शोध के लक्ष्यों के अनुकूल किया जाना चाहिए। जैसे मतदान सम्बन्धी आंकड़े प्राप्त करते समय मतदाताओं की आय का कोई महत्व नहीं होता । तथ्यों को वर्गों में रखते समय पूरी सावधानी रखनी चाहिए। वर्ग न तो बहुत बड़े होने चाहिए और न ही बहुत छोटे। इनका आकार आवश्यकता के अनुरूप होना चाहिए।

वर्गीकरण की प्रक्रिया — उद्देश्य का ज्ञान प्राप्त करने के उपरांत अब हम वर्गीकरण की प्रक्रिया के अन्तर्गत, वर्गों का निमाण करते समय आवश्यक निम्न नियमों का अध्ययन करेंगे।

वर्गीकरण की प्रक्रिया का सार वर्गों, कोटियों अथवा श्रेणियों के विकास में निहित है। श्रेणियों के निर्माण की प्रक्रिया के अन्तर्गत प्राप्त की गयी मौलिक सामग्री को कुछ समूहों में इस प्रकार विभाजित किया जाता है कि वह अर्थपूर्ण प्रतीत होने लगे। कुछ श्रेणियां तो आंकड़ों से स्वयं ही प्राप्त हो जाती हैं किन्तु कुछ का निर्माण करना पड़ सकता है। कुछ श्रेणियों की सूचना संग्रह के पूर्व ही निर्मित की जा सकती है। जैसे — प्रतिबंधित प्रश्नों के संदर्भ में तथा कुछ का निर्माण, सूचना संग्रह का कार्य समाप्त हो जाने पर किया जाता है।

वर्गों अथवा श्रेणियों का निर्माण करते समय निम्न नियमों का पालन किया जाना चाहिए—

(1) अनुसंधान उद्देश्यों के लिये सार्थकता — बनायी गयी श्रेणियों को अनुसंधान उद्देश्यों के साथ घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित होना चाहिए।

(2) पूर्णता- श्रेणियों का निर्माण इस प्रकार किया जाना चाहिए कि संग्रहीत समस्त सूचना किसी न किसी श्रेणी के अन्तर्गत अवश्य ही वर्गीकृत की जा सके।

(3) पारस्परिक पृथकता एवं स्वतंत्रता— श्रेणियों में किसी भी प्रकार की परस्पर व्यापकता नहीं पायी जानी चाहिए तथा इनमें स्पष्ट रूप से पृथकता दिखायी पड़नी चाहिये।

(4) स्पष्ट परिभाषा — प्रत्येक श्रेणी की स्पष्ट परिभाषा की जानी चाहिए ताकि किसी भी प्रकार का संदेह अथवा भ्रम की गुंजाइश न रह जाये ।

(5) श्रेणियों की व्यापकता— श्रेणियों का निर्माण करते समय सारांश एवं विस्तार के बीच उचित सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास भी किया जाना चाहिये।

(6) एकिकता — श्रेणियों का विकास इस प्रकार किया जाना चाहिए कि अध्ययन की प्रत्येक इकाई को केवल एक ही श्रेणी में केवल एक बार ही सम्मिलित किया जा सके।

(7) वर्गीकरण का एक सिद्धान्त — प्रत्येक श्रेणी का निर्माण वर्गीकरण के एक ही सिद्धान्त को प्रयोग में लाते हुए किया जाना चाहिए।

(8) प्रबंध का एक स्तर — श्रेणियों के निर्माण की सम्पूर्ण योजना, प्रबंध के एक ही स्तर पर पायी जानी चाहिए अर्थात कहीं अधिक सरलता तथा कहीं अधिक जटिलता का समावेश नहीं होना चाहिए।

अप्रतिबंधित प्रश्नों का प्रयोग करते हुए एकत्रित की गयी सूचना के संदर्भ में श्रेणियों का निर्माण करते हुए यह आवश्यक होता है कि प्रत्येक उत्तरदाता द्वारा प्रदान किये गये उत्तरों को सारांशबद्ध किया जाय। फिर इन सभी उत्तरदाताओं के प्रत्युत्तरों में सामान्यता को ध्यान में रखते हुए काफी बड़ी संख्या में श्रेणियों का निर्माण किया जाए व बाद में इन श्रेणियों को सामान्य विशेषताओं के आधार पर एक दूसरे के साथ सम्मिलित करते हुए अंतिम रूप से प्रयोग में लायी जाने वाली श्रेणियों की संख्या को सीमित किया जाय।

20.4 आदर्श वर्गीकरण की विशेषताएं, गुण व आधार

विशेषताएं — इस इकाई के अन्तर्गत उद्देश्य एवं वर्गीकरण की प्रक्रिया का ज्ञान प्राप्त करने के उपरांत अब हम एक आदर्श वर्गीकरण के गुण व वर्गीकरण के आधारों का अध्ययन करेंगे। अत: प्रारम्भ में वर्गीकरण की विशेषताओं का उल्लेख करेंगे इसके बाद एक वर्गीकरण के आधारों पर प्रकाश डालेंगे।

वर्गीकरण की निम्नांकित विशेषताएं होती हैं —

(1) **स्पष्टता एवं निश्चितता** — वर्ग स्पष्ट तथा निश्चित हों, प्रत्येक इकाई को किसी न किसी वर्ग में स्पष्ट रूप से स्थान मिलना चाहिए तथा किसी भी इकाई को एक से अधिक वर्गों में नहीं रखा जाना चाहिए। प्रत्येक वर्ग शंकारहित व सुस्पष्ट होना चाहिए। यदि वर्गीकरण अनिश्चित व अस्पष्ट होगा तो वर्गीकरण के उद्देश्य की प्राप्ति नहीं होगी।

(2) **सजातीयता** — एक अच्छे वर्गीकरण में सजातीयता का होना आवश्यक होता है। किसी वर्ग की समस्त इकाइयों में परस्पर सजातीयता होना चाहिए।

(3) अनुसंधान के अनुरूप वर्गीकरण का आधार— वर्गीकरण का आधार अनुसंधान के उद्देश्य के अनुरूप होना चाहिए जिससे अपेक्षित उद्देश्य की प्राप्ति हो सके।

उदाहरणार्थ — यदि दो समूहों में बुद्धिलब्धता की तुलना करनी है तो क्षेत्रीय आधार पर उनका जातिगत विभाजन अनुपयुक्त होगा। अत: वर्गीकरण का आधार शोध उद्देश्य के अनुकूल होना चाहिए।

(4) वर्गीकरण में स्थायित्व — वर्गीकरण में स्थायित्व का होना भी अत्यावश्यक होता है। वर्गीकरण में अलग-अलग समय पर जो भी वर्गीकरण किये जाएं उनके आधार समान होने चाहिए ताकि विभिन्न समयों पर एकत्र किये गये समंक तुलनीय रहें। जबकि अस्थायी होने का तात्पर्य यह है कि एकत्रित समंकों का यदि एक बार एक ढंग से वर्गीकरण किया गया हो व दूसरी बार दूसरे ढंग से वर्गीकरण किया गया हो। तुलनात्मक अध्ययन में इस प्रकार का वर्गीकरण उपयुक्त नहीं होता है। अत: वर्गीकरण में स्थायित्व का गुण होना चाहिए।

(5) परिवर्तनशीलता — वर्गीकरण के स्थायी होने का तात्पर्य यह नहीं है कि एक बार जो वर्गीकरण कर दिया गया है, वह हमेशा के लिये स्थायी होगा। एक आदर्श वर्गीकरण के लिये यह आवश्यक है कि उसमें नवीन परिवर्तित परिस्थितियों के साथ अनुकूलन करने की क्षमता निहित हो। कोई भी वर्गीकरण सदा के लिये स्थायी नहीं रह सकता क्योंकि समयानुसार वर्गीकरण के आधारों में परिवर्तन होता रहता है।

(6) पर्याप्त आकार — वर्गीकरण में पर्याप्त आकार भी एक महत्वपूर्ण गुण है। इसमें सम्मिलित किये गये विभिन्न वर्ग न तो अधिक बड़े हों और न ही अधिक छोटे। तथ्यों की मात्रा (गुण या संख्या) देखकर ही वर्गों का आकार निर्धारित किया जाना चाहिए।

(7) सांख्यिकी शुद्धता — सांख्यिकी शुद्धता की दृष्टि से भी वर्गीकरण शुद्ध होना चाहिए। इसका तात्पर्य यह है कि जितनी इकाइयों का वर्गीकरण करना चाहिए वे सभी इकाइयां वर्गीकरण के अन्तर्गत किसी न किसी वर्ग या समूह के अन्तर्गत अवश्य सम्मिलित हो जायें। इस प्रकार सांख्यिकी शुद्धता भी वर्गीकरण का एक गुण है।

वर्गीकरण के आधार — एक आदर्श वर्गीकरण की विशेषताओं के अध्ययन के बाद अब वर्गीकरण के आधारों का ज्ञान प्राप्त करेंगे। यद्यपि एकत्रित तथ्यों का वर्गीकरण किस आधार पर किया जाय, यह इस बात पर निर्भर करता है कि अध्ययन का उद्देश्य क्या है और तथ्यों की प्रकृति कैसी है। फिर भी वर्गीकरण के कुछ आधारों का हम उल्लेख करते हैं—

(1) गुणात्मक आधार — गुणात्मक आधार पर वर्गीकरण उन तथ्यों का किया जाता है जिन्हें अंकों में प्रकट नहीं किया जा सकता है अत: ऐसे तथ्यों का वर्गीकरण उनके गुणों के आधार पर किया जाता है। इस प्रकार के वर्गीकरण में एक गुण विशेष वाली इकाइयों को एक वर्ग में तथा दूसरे गुण वाली इकाइयों को दूसरे वर्ग में रखकर वर्गीकरण किया जाता है ।

उदाहरणार्थ — साक्षरता या धर्म के आधार पर किसी समूह का विभाजन गुणात्मक वर्गीकरण कहलाता है।

(2) गणनात्मक आधार — जब एकत्रित तथ्यों की प्रकृति इस प्रकार की हो कि उन्हें संख्याओं में व्यक्त किया जा सके तो उनका वर्गीकरण गणनात्मक आधार पर किया जाता है।

उदाहरणार्थ — आयु, आय - व्यय, ऊंचाई आदि।

(3) सामयिक आधार — इस आधार पर किये गये वर्गीकरण में 'समय ' को वर्गीकरण का आधार माना जाता है। अर्थात् तथ्यों का वर्गीकरण समय के आधार पर किया जाता है। समय के आधार पर वर्गीकरण करना, सामयिक आधार माना जाता है जैसे — विभिन्न वर्षों में उत्पादन के तथ्यों का वर्गीकरण या प्रति दस वर्ष में जनसंख्या का वर्गीकरण सामयिक आधार पर ही करते हैं।

(4) भौगोलिक आधार— इसमें संकलित तथ्यों का भौगोलिक क्षेत्र के अनुसार वर्गीकरण किया जाता है। उदाहरण - विभिन्न देशों में बेरोजगारी के समकों का वर्णन भौगोलिक आधार पर किया जाता है।

20.5 वर्गीकरण के प्रकार

अब इस इकाई में हम वर्गीकरण के निम्न प्रमुख प्रकारों का अध्ययन करेंगे।

(1) गुणात्मक वर्गीकरण — इस प्रकार के वर्गीकरण में वर्गीकरण का आधार कोई गुण होता है। इकाइयों की गणना किसी एक विशेष अथवा अनेक गुणों के आधार पर की जाती है कि कितनी इकाइयों में वह विशेष गुण विद्यमान है और कितनी में नहीं। इस प्रकार जब तथ्यों को गुणात्मक विशेषताओं अर्थात् गुणों के आधार पर जैसे शिक्षा, धर्म, रोजगार, वैवाहिक स्थिति आदि के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है तो इस प्रकार का विभाजन गुणात्मक वर्गीकरण कहलाता है जैसे — यदि वैवाहिक स्थिति के आधार पर हमें 50 व्यक्तियों का वर्गीकरण करना है तो वह इस प्रकार किया जा सकता है—

	वैवाहिक स्थिति —	संख्या
1.	विवाहित	10
2.	अविवाहित	12
3.	विधवा	8
4.	विधुर	5
5.	तलाक प्राप्त	15
	कुल योग	50

गुणात्मक वर्गीकरण भी दो प्रकार का होता है—

(अ) सरल या द्वन्द्वात्मक वर्गीकरण

(ब) बहुगुणी वर्गीकरण

(अ) सरल या द्वन्द्वात्मक वर्गीकरण — इस प्रकार के वर्गीकरण में तथ्यों का वर्गीकरण तो उनके गुणों के आधार पर किया जाता है परन्तु विशेष गुण की उपस्थिति और अनुपस्थिति के केवल दो वर्ग या समूह बनाए जाते हैं जिससे कि उन तथ्यों के अन्तर्निहित विभेद स्पष्ट हो जाएं — जैसे - पुरु ष-स्त्री, शिक्षित-अशिक्षित, विवाहित-अविवाहित, देशी-विदेशी आदि।

(ब) बहुगुणी वर्गीकरण — जब तथ्यों को उनके गुणों के आधार पर दो से अधिक वर्गों में बाँटा जाता है तो उसे बहुगुणी वर्गीकरण कहते हैं उदाहरणार्थ 100 विद्यार्थियों का कला विज्ञान, विधि, वाणिज्य आदि वर्गों में विभाजन बहुगुणी वर्गीकरण कहलाता है।

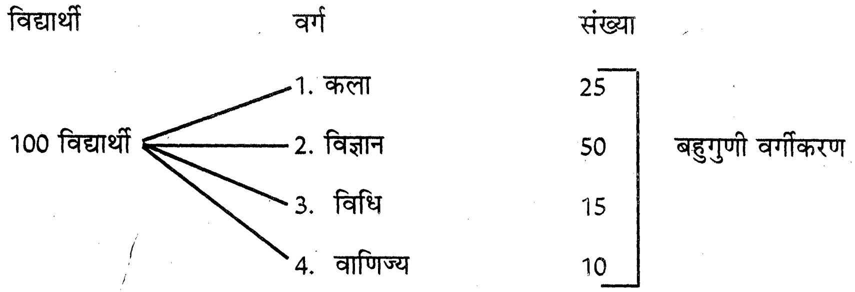

(2) गणनात्मक वर्गीकरण - जब वर्गीकरण का आधार गुण के स्थान पर कोई ऐसे चल मूल्य होते हैं जिनकी प्रत्यक्ष माप की जा सकती है या जब तथ्यों का प्रदर्शन प्रत्यक्ष रूप से अंकों या संख्याओं में किया जाता है। आय, व्यय, उत्पादन, आयु, लम्बाई, चौड़ाई, आदि से सम्बन्धित तथ्यों का वर्गीकरण गणनात्मक वर्गीकरण ही होता है।

गणनात्मक वर्गीकरण के निम्नांकित प्रकार हैं—

(अ) खंडित श्रेणी के अनुसार वर्गीकरण — खंडित श्रेणी के अन्तर्गत वे तथ्य आते हैं जिन्हें पूरे-पूरे अंक या संख्या में प्रदर्शित किया जा सकता है जैसे - परिवार या बच्चों की संख्या। जैसे — एक परिवार के सदस्यों की संख्या 2, 3, 4, 5, 6, 7 आदि हैं या शिक्षा का स्तर 10वीं, 12वीं आदि को पूर्ण अंकों में प्रस्तुत किया जा सकता है। इस प्रकार के अंकों को खंडित माला या खंडित श्रेणी कहते हैं।

यदि एक ही खंडित अंक या श्रेणी एकत्रित तथ्यों में बार-बार प्रकट होती है तो इस प्रकार बार-बार आने की संख्या उस श्रेणी की आवृत्ति कहलाती है। इस आवृत्ति को तथ्य की किसी खंडित श्रेणी के सामने रखकर जब वर्गीकरण किया जाता है तो उसे आवृत्ति कहते हैं जैसे — यदि 10 परिवारों में पुरुषों की संख्या क्रमशः 5, 3, 4, 2, 6, 7, 1, 2, 3, 6 है तो खंडित श्रेणियों के अनुसार आवृत्ति वितरण के आधार पर इन 10 परिवारों का वर्गीकरण निम्न प्रकार किया जा सकता है-

पु0 की संख्या	परिवारों की संख्या (आवृत्ति)
1	1
2	2
3	2
4	1
5	1
6	2
7	1
कुल योग	10

(ब) अखंडित श्रेणी या वर्गान्तर के अनुसार वर्गीकरण — जब संकलित तथ्यों की कुल संख्या बहुत अधिक हो व सबसे बड़े व सबसे छोटे पद में अंतर भी बहुत अधिक हो तो ऐसी स्थिति में तथ्यों को एक-एक समूह के रूप में प्रकट किया जाता है। ऐसी स्थिति में गणनात्मक तथ्यों की सीमाएं स्वैच्छिक तौर पर निश्चित कर दी जाती हैं और उन्हीं सीमाओं के अंदर रहते हुए तथ्यों को विभिन्न वर्गों में बाट दिया जाता है। एकत्रित तथ्यों की प्रकृति के अनुसार ही ये सीमाएं अर्थात् एक उच्चतम सीमा

व दूसरी निम्नतम सीमा निश्चित की जाती है और फिर इन दोनों सीमाओं के अन्दर कुछ वर्ग सुविधानुसार बना लिये जाते हैं।

वर्गान्तर के आधार पर भी तथ्यों का वर्गीकरण किया जा सकता है उदाहरणार्थ — इतिहास विषय में 60 छात्रों को 50 अंक के प्रश्न पत्र में निम्नांकित अंक मिले जो इस प्रकार हैं —

22, 47, 9, 42, 31, 17, 13, 15, 18, 13, 2, 21, 27, 38, 15, 0, 33, 10, 34, 29, 26, 16, 25, 33, 36, 10, 24, 22, 26, 19, 14, 36, 18, 25, 21, 33, 35, 25, 18, 28, 25, 27, 38, 10, 3, 31, 24, 3, 12, 16, 33, 14, 26, 29, 28, 35, 26 व 27 ।

इन प्राप्तांकों को वर्गान्तर के अनुसार वर्गीकरण करने से परिणाम इस प्रकार होगा—

प्राप्तांक (वर्ग)	छात्रों की संख्या (आवृत्ति)
0 - 5	4
5 - 10	1
10 - 15	7
15 - 20	11
20 - 25	6
25 - 30	16
30 - 35	7
35 - 40	6
40 - 45	1
45 - 50	1
कुल योग	60

इस उदाहरण से स्पष्ट है कि 60 छात्रों को 10 समूहों में प्राप्तांक के आधार पर विभाजित किया गया है। यह अखंडित श्रेणी या वर्गान्तर के अनुसार वर्गीकरण का उदाहरण है।

(3) सामयिक वर्गीकरण — जब समय के आधार पर वर्गीकरण किया जाये तो यह सामयिक वर्गीकरण कहलाता है। इस वर्गीकरण में तथ्यों को ऐतिहासिक तथ्यों, दिन, महीना या वर्ष के आधार पर व्यवस्थित करते हैं—

उदाहरणार्थ —

एक कालेज के छात्रों की संख्या

वर्ष	कला वर्ग	विज्ञान वर्ग	वाणिज्य वर्ग	योग
1970-71	320	180	—	500
1971-72	341	194	—	536
1972-73	423	245	—	668
1973-74	545	302	41	888
1974-75	523	305	135	963

यह सामयिक वर्गीकरण का उदाहरण है।

(4) स्थान के आधार पर वर्गीकरण — यदि संकलित तथ्यों या आंकड़ों को भौगोलिक आधार पर या स्थान के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है तो उसे स्थानानुसार वर्गीकरण कहते हैं।

उदाहरणार्थ —

महाद्वीपों का क्षेत्रफल

महाद्वीप का नाम	क्षेत्रफल (वर्ग किलोमीटर में)
एशिया	41667920
यूरोप	9699550
आस्ट्रेलिया	7687120
अंटार्कटिका	14245000
उत्तरी अमेरिका	24320100

इस प्रकार यह उदाहरण स्थान के आधार पर विविध महाद्वीपों के क्षेत्रफल का वर्गीकरण है।

इस तरह से इस इकाई के अन्तर्गत हमने वर्गीकरण, वर्गीकरण के उद्देश्य उसकी विशेषतायें, वर्गीकरण के आधारों तथा वर्गीकरण के विभिन्न प्रकारों का ज्ञान प्राप्त किया है इसके बाद हम अब सारणीयन के विषय में ज्ञान प्राप्त करेंगे।

20.6 सारणीयन : अर्थ व परिभाषा

वर्गीकरण के अध्ययन के बाद अब सारणीयन के विषय में ज्ञान प्राप्त करेंगे। सामाजिक अनुसंधान में वर्गीकरण की प्रक्रिया के पश्चात् सामग्री को और भी सरल, स्पष्ट व बोधगम्य बनाने के लिए तथ्यों का सारणीयन किया जाता है। सामाजिक अनुसंधान में आंकड़ों के सारणीयन का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। अनुसंधानकर्ता द्वारा एकत्रित किये गये आंकड़े अत्यन्त अव्यवस्थित होने के साथ ही जटिल प्रकृति

के भी हो सकते हैं। अत: विषय से सम्बन्धित समस्त पक्षों की स्पष्ट विवेचना के लिये उन्हें व्यवस्थित, बोधगम्य, स्पष्ट एवं सुगम बनाना अनिवार्य होता है। यह कार्य मूलत: 'सारणीयन' द्वारा ही संभव है। अत्यन्त सरल तथा सामान्य शब्दों में सारणीयन का आशय प्राप्त आंकड़ों को अनेक स्तम्भों एवं पंक्तियों में व्यवस्थित करके उन्हें क्रमबद्ध रूप से प्रस्तुत करना होता है। इस प्रकार सारणीयन का आशय सारणी या तालिका बनाने से है । सारणीयन वह विधि है जिसमें संकलित तथ्यों को व्यवस्थित, बोधगम्य एवं संक्षिप्त बनाया जाता है । इसमें एक ही शीर्षक से सम्बन्धित सूचनाओं को एक साथ प्रदर्शित किया जाता है। सारणीयन में गुणात्मक तथा परिमाणात्मक दोनों ही प्रकार के तथ्यों को संख्यात्मक रूप में प्रकट किया जाता है और इधर-उधर बिखरे हुए आंकड़ों को एकत्रित करके संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया जाता है इसमें समान और तुलनात्मक इकाइयों को उचित स्थान पर रखा जाता है। इसी क्रम में अनेक विद्वानों ने सारणीयन को परिभाषित किया है—

विद्वान सी. ए. मोजर (1959) का मानना है कि मौलिक रूप से सारणीकरण विभिन्न कार्यों में से प्रत्येक के अन्तर्गत पाये जाने वाले उत्तरदाताओं की संख्या की गणना से अधिक और कुछ नहीं है। इन्हीं परिभाषाओं के क्रम में विद्वान जहोदा एवं अन्य (1858) ने भी माना है कि सारणीकरण आंकड़ों के सांख्यिकीय विश्लेषण की प्राविधिक प्रक्रिया का एक अंग है। सारणीकरण के अन्तर्गत आवश्यक क्रिया उन उत्तरदाताओं की संख्या को निर्धारित करने के लिये गणना करने की है जो विभिन्न श्रेणियों में पायी जाती है । एम. के. घोष एवं एस. सी. चौधरी (1950) का भी कहना है कि सारणीयन गणनात्मक तथ्यों के प्रदर्शन की एक ऐसी वैज्ञानिक प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत स्तम्भों एवं पंक्तियों में तथ्यों को प्रस्तुत किया जाता है। अंत में एक विद्वान डी. एन. एलहंस (1960) का मानना है कि विस्तृत अर्थ में सारणीयन आंकड़ों को कुछ स्तम्भों और पंक्तियों में प्रस्तुत करने की एक व्यवस्थित क्रमबद्धता है । यह एक ओर आंकड़ों के संकलन और दूसरी ओर आंकड़ों के अन्तिम विश्लेषण के बीच की एक प्रक्रिया है।

इस प्रकार हम इन परिभाषाओं को देखते हुए स्पष्टत: कह सकते हैँ कि जब संकलित तथ्यों को कुछ स्तम्भों या पंक्तियों में व्यवस्थित कर दिया जाता है तो इसे सारणीयन कहते हैं। या जब एकत्रित तथ्यों का समुचित वर्गीकरण करके उन वर्गीकृत तथ्यों को एक तालिका के अन्तर्गत कुछ स्तम्भों तथा पंक्तियों में इस प्रकार व्यवस्थित ढंग से सजा दिया जाता है कि तथ्यों की विशेषतायें एवं तुलनात्मक महत्व और भी स्पष्ट हो जाता है तो इस प्रक्रिया को सारणीयन कहते हैँ।

20.7 सारणीयन के उद्देश्य

सारणीयन के अर्थ को समझने के बाद अब हम सारणीयन के उद्देश्य का ज्ञान प्राप्त करेंगे। सारणीयन का उद्देश्य अनुसंधान से सम्बन्धित उत्तर को सुलभ व सरल रूप से क्रमबद्ध करना है। इसके प्रमुख उद्देश्य निम्नांकित है:-

(1) सारणीयन का सर्वप्रथम उद्देश्य वर्गीकृत आंकड़ों अथवा सूचनाओं को क्रमबद्ध और सुव्यवस्थित रूप से प्रस्तुत करना होता है।

(2) सारणीयन का दूसरा उद्देश्य संकलित आंकड़ों की विशेषताओं को बहुत सरल और संक्षिप्त रूप से स्पष्ट करना है। सारणियों के रूप में जब सभी आंकड़ों को कुछ निश्चित स्तम्भों और पंक्तियों में व्यवस्थित कर दिया जाता है तो उन्हें एक ही निगाह में समझना संभव हो जाता है।

(3) सारणीयन सांख्यिकीय दृष्टिकोण से एक संक्षिप्त और वैज्ञानिक प्रणाली है । सारणी के अन्तर्गत केवल संख्याओं का समावेश होता है जिन्हें समझना कहीं अधिक सरल रहता है । इसी आधार पर पी. वी. यंग ने सारणीयन को सांख्यिकी की आशुलिपि कहा है।

(4) सारणीयन का मुख्य उद्देश्य तुलनात्मक आधार पर विभिन्न आंकड़ों की प्रकृति को स्पष्ट करना है। सारणी के अन्तर्गत जब विभिन्न आंकड़े अनेक खानों अथवा पंक्तियों में व्यवस्थित हो जाते हैं तो उनके आधार पर विभिन्न आंकड़ों की तुलनात्मक विशेषताओं को सरलतापूर्वक समझा जा सकता है।

इस प्रकार आप स्पष्टत: समझ गये होंगे कि सारणीयन का उद्देश्य सूचनाओं को बोधगम्य बनाना, तथ्यों का स्पष्टीकरण करना, तुलनात्मक सुविधा व संक्षिप्तीकरण करना आदि है। इसी इकाई में अब हम सारणीयन की विशेषताओं का अध्ययन करेंगे।

20.8 उत्तम सारणी के गुण

सारणीयन के उद्देश्यों का ज्ञान प्राप्त करने के उपरांत एक उत्तम सारणी की विशेषताओं का अध्ययन करेंगे। एक उत्तम सारणी में निम्नलिखित गुण या विशेषताएं होती हैं—

(1) **आकर्षक** — सारणी यदि एक चित्र जैसा प्रभाव जमाने के उद्देश्य से बनायी गयी हो तो उसकी आकृति तथा बनावट विभिन्न प्रकार से आकर्षक होनी चाहिए। उसमें शीर्षक, शब्द तथा अंक. लाइनें खींचने का कार्य इत्यादि बड़ी स्वच्छता तथा सुलेख के साथ होने चाहिए।

(2) **उपयुक्त आकार** — सारणी का आकार कागज के अनुसार आनुपातिक तथा उपयुक्त होना चाहिए। यदि बड़ी सारणी को कई पृष्ठों पर ले जाया गया है या एक बहुत बड़े शीट का बनाकर मोड़ कर रखा गया है तो सारणी उपयुक्त नहीं होगी। अत: एक उत्तम सारणी के लिये उपयुक्त आकार का होना आवश्यक है।

(3) **सम्पूर्ण सूचनाएं** — सारणी का रूप ऐसा होना चाहिये कि उसमें सभी प्रकार की सूचनाएं एक क्रम या व्यवस्था के अनुसार शीर्षकों, उपशीर्षकों तथा विभिन्न खानों में प्रस्तुत की जा सकें।

(4) **स्पष्टता होना** — सारणी ऐसी होना चाहिए कि अपेक्षित लक्ष्य या उद्देश्य की प्राप्ति संभव हो। उसमें दी जाने वाली सूचनाएं संदेहात्मक न हों। ऐसी सारणी जिसमें सारी सूचनाएं शीघ्र ही ढूँढी जा सकती हैं अधिक बोधगम्य होती है।

(5) **वैज्ञानिक दृष्टिकोण** — सारणी को यदि वैज्ञानिक तरीके से बनाया गया होगा तो उसमें समय तो कम लगेगा ही, साथ ही साथ अन्तर्सम्बन्धित होते हुए भी एक क्रम से लगी हुई होंगी। इससे सांख्यिकीय विश्लेषण में सहायता मिलेगी।

20.9 सारणी की संरचना

सारणी के गुणों के अध्ययन के बाद अब एक सारणी का निर्माण करते निम्नांकित बिन्दुओं का अध्ययन करेंगे। सारणी की रचना करना भी एक कला है । केवल पंक्तियों व खानों के बना लेने मात्र से ही पर्याप्तता नहीं है बल्कि एक सारणी के निर्माण के लिए विशेष अनुभव, ज्ञान, प्रशिक्षण, योग्यता, विवेक व कुशलता की आवश्यकता होती है। एक सारणी का निर्माण करते समय निम्न बिन्दुओं को ध्यान में रखना चाहिए—

(1) सारणी का शीर्षक — प्रत्येक सारणी की संख्या लिखनी चाहिए ताकि सूचना को ढूँढने और संदर्भ देने में सुविधा रहे। इसके बाद स्पष्ट एवं संक्षेप में सारणी का मुख्य शीर्षक दिया जाना चाहिए। शीर्षक में विषय, समय, क्षेत्र एवं वर्गीकरण के आधार का उल्लेख किया जाना चाहिए।

(2) उप-शीर्षक — सारणी में दो खाने होते हैं। खड़े खाने व आड़े खाने। खड़े और आड़े खानों पर भी उपशीर्षक दिये जाने चाहिए। खड़े खानों के स्तम्भों के शीर्षकों को 'केप्सन' तथा आड़े खाने के शीर्षकों को 'स्टब' कहते हैं। ये उप-शीर्षक संक्षिप्त एवं स्पष्ट होने चाहिए।

(3) रेखाएं — विभिन्न प्रकार की सूचनाओं को अलग-अलग खानों में दर्शाने के लिए उन्हें रेखाओं द्वारा अलग-अलग किया जाता है। खानों की महत्ता के अनुसार रेखााओं को भी मोटा एवं पतला बनाया जाता है।

(4) तुलना — सारणी को निर्मित करते समय इस बात को ध्यान रखना चाहिए कि जिन आंकड़ों की तुलना की जानी है वे पास-पास दिखाये जायें।

(5) योग — सारणियों के अंत में योग तथा कुल योग दिखाना चाहिए। धनराशियों से सम्बन्धित सारणियों में योग व कुल योग अवश्य दिखाना चाहिये।

(6) सामग्री संग्रह के स्रोत — सारणी में दिखायी जाने वाली सूचनाएं कहां से संकलित की गयी हैं इसका उल्लेख करना नितांत आवश्यक है। स्रोत का उल्लेख करने से सूचनाएं विश्वसनीय बन जाती हैं।

(7) टिप्पणियां — सूचनाओं से सम्बन्धित स्पष्टीकरण देने, शब्द की व्याख्या करने अथवा किसी शब्द को विशेष अर्थों में प्रयोग किये जाने के संदर्भ में सूचना देने आदि के लिये सारणी के नीचे टिप्पणी दी जानी चाहिए। ऐसी टिप्पणियां सारणियों तथ्यों एवं निष्कर्षों को समझने की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण होती हैं।

(8) संकेत अक्षर — जब कभी सारणी में संकेताक्षर देना हो तो टिप्पणी अथवा पाद चिन्ह में उन्हें स्पष्ट कर दिया जाना चाहिए।

(9) अन्य बातें — अन्य बातों में यह आवश्यक है कि पदों में क्रमबद्धता हो तथा वे घटते-बढ़ते क्रम को दर्शाने वाले हों। महत्वपूर्ण पदों के नीचे रेखा भी खींची जा सकती है।

इस प्रकार सारणी की संरचना में आवश्यक बिन्दुओं का सावधानीपूर्वक अनुसरण करना चाहिए। चूँकि सारणी निर्माण भी एक कला के साथ-साथ एक तकनीकी कार्य है जिसे प्रशिक्षित एवं अनुभवी व्यक्ति ही बना सकता है। इस प्रकार सारणी के निर्माण में यदि उपर्युक्त सावधानियों को ध्यान रखा जायेगा तो निश्चित ही सारणी उत्तम, अधिक स्पष्ट व विश्वसनीय होगी।

20.10 सारणी के प्रकार

अब इस इकाई में हम सारणी के प्रकारों का उल्लेख करने जा रहे हैं जिससे आप इसके आधारों से परिचित होते हुये इसके प्रकारों का ज्ञान प्राप्त करेंगे।

सारणियां अनेक प्रकार की हो सकती हैं उसमें से कुछ प्रमुख आधार निम्नलिखित हैं—

(1) उद्देश्य के आधार पर

(2) प्रकृति या रचना के आधार पर

(1) उद्देश्य के आधार पर — उद्देश्य के आधार पर सारणियों को दो प्रमुख वर्गों में रखा जा सकता है।

(अ) सामान्य उद्देश्यीय भण्डारीय अथवा परिशिष्ट सारणियां,

(ब) विशिष्ट उद्देश्यीय, विश्लेषण सम्बन्धी अथवा पाठ्य सारणियां ।

(अ) सामान्य उद्देश्यीय सारणियाँ — इन सारणियों को मौलिक अथवा प्रासंगिक या प्राथमिक सारणी के नाम से सम्बोधित किया जाता है। सामान्य उद्देश्यीय सारणी का निर्माण इसलिए किया जाता है क्योंकि इसके अन्तर्गत पर्याप्त मात्रा में स्रोत सामग्री को सुविधाजनक एवं संक्षिप्त रूप में सम्मिलित किया जा सकता है। इस प्रकार की सारणी में विविध प्रकार की सूचनाओं को दर्शाया जाता है जिसमें एक ही साथ अनेक आवश्यक सूचनाओं को प्रकट किया जाता है। उदाहरणार्थ — जनगणना रिपोर्ट में दी जाने वाली सारणियां आदि, सामान्य उद्देश्यीय सारणियाँ कहलाती हैं।

(ब) विशिष्ट उद्देश्यीय सारणियाँ — इन्हें विश्लेषणात्मक, सारांशात्मक, विवेचनात्मक, व्युत्पत्तीय अथवा द्वितीयक सारणियों के नाम से भी सम्बोधित किया जाता है। इन सारणियों का उद्देश्य सांख्यिकीय विश्लेषण के अन्तर्गत कुछ विशिष्ट बातों को प्रदर्शित करना अथवा आंकड़ों के अन्तर्गत पाये जाने वाले कुछ महत्वपूर्ण सम्बन्धों पर बल देना है। इन सारिणयों के अन्तर्गत मौलिक आंकड़ों को समीपवर्ती उद्देश्यों के अनुसार परिवर्तित करते हुए प्रदर्शित किया जाता है । ये सारणियां सामान्य सारणियों के आधार पर तथ्यों को विषयानुरूप वर्गीकृत करके भी बनायी जाती हैं।

(2) प्रकृति या रचना के आधार पर — सारणी की प्रकृति के आधार पर सामान्यतः दो प्रकार की सारणियां देखी जा सकती हैं— (अ) सरल सारणी (ब) जटिल सारणी ।

(अ) सरल सारणी — इन्हें प्रायः एक दिशायी या एक गुण दर्शाने वाली सारणियां कहते हैं। इनमें एक ही प्रकार के तथ्यों को या एक प्रकार के गुणों को दर्शाया जाता है। इनमें पदों के मूल्य तथा उनकी आवृत्तियां भी होती हैं। इन्हें एक पक्षीय तालिका भी कहते हैं। एक पक्षीय तालिका से तात्पर्य उससे है जिसमें तथ्यों का वर्गीकरण किसी एक चर ,गुण या लक्षण के आधार पर किया जाता है। उदाहरणार्थ — यदि हम एक गुणात्मक आधार सामाजिक वर्ग को वर्गीकरण का आधार मानते हुए सारणी बनायें तो उसे अग्रलिखित प्रकार से प्रदर्शित सकते हैं, तब उसे एक पक्षीय तालिका कहेंगे—

एक पक्षीय तालिका

सामाजिक तालिका वर्ग	आवृत्ति
1. उच्च	
2. मध्यम	
3. निम्न	
योग	

इस तालिका में केवल एक गुण के आधार पर वर्गीकरण किया गया है तथा तीन श्रेणियां बनायी गयी हैं। ये श्रेणियां अधिक भी हो सकती हैं जैसे उच्च, उच्च -मध्यम, निम्न-मध्यम तथा निम्न ।

(ब) जटिल सारणी — इस प्रकार की सारणियों में विविध प्रकार की सूचनाओं को एक ही साथ दर्शाया जाता है इसलिये इन्हें बहुगुणीय सारणियां भी कहते हैं। इनकी रचना कठिन एवं रूप जटिल होने के कारण इनके निर्माण में विशेष सावधानी की आवश्यकता होती है इनमें खाने पंक्तियाँ तथा उपशीर्षक भी कई होते हैँ। सारणी में कितने प्रकार के गुणों का समावेश किया गया है इस आधार पर उन्हें द्विगुणीय, त्रिगुणीय एवं बहुगुणीय सारणियों के रूप में विभाजित किया जाता है। अत: जटिल सारणी को तीन प्रकार की सारणियों में बांटा जा सकता है।

(अ) द्वि-गुणीय अथवा द्विपक्षीय सारणियां

(ब) त्रिपक्षीय अथवा त्रिगुणीय सारणियां

(स) बहु पक्षीय अथवा बहु गुणीय सारणियां

अब इन्हें उदाहरण सहित स्पष्ट करेंगे-

(अ) द्विगुणीय अथवा द्विपक्षीय सारणी — इस प्रकार की सारणी में दो गुणों का प्रदर्शन एवं तुलना की जाती है तथा एक ही सारणी से दो प्रकार के उत्तर ज्ञात किये जा सकते हैं—

उदाहरणार्थ :—

2001 की जनगणनानुसार भारत के राज्यों की जनसंख्या

राज्य	जनसंख्या		
	पुरुष	स्त्रियाँ	योग
1. उत्तर प्रदेश	87,466,301	75,586,558	1,66,052,859
2. बिहार	43,153,964	39,724,832	82,878,796
3. सिक्किम	2,88,217	2,52,276	5,40,493
4. अरूणांचल प्रदेश	5,73,951	5,17,166	1,091,117
योग	—	—	—

उपर्युक्त सारणी में दो प्रकार के तथ्यों की तुलना संभव है— पहला विविध राज्यों की कुल जनसंख्या की, दूसरा एक ही राज्य तथा विविध राज्यों में स्त्री-पुरुषों की संख्या की तुलना की जा सकती है। यह द्विगुण सारणी है।

(ब) त्रिगुण या त्रिपक्षीय सारणी — इस प्रकार की सारणी में तीन प्रकार के गुणों की तुलना की जा सकती है। जब सामाजिक अनुसंधानकर्ता जटिल सम्बन्धों तथा परिस्थितियों का अध्ययन करना चाहता है तब अध्ययन समस्या को गहराई से समझने के लिये उसे त्रिगुण सारणी का प्रयोग करना पड़ता है।

उदाहरणार्थ —

2001 की जनगणनानुसार राज्यों में साक्षरता दर का प्रतिशत

राज्य	पुरुष			महिलाएं			योग
	शिक्षित	अशिक्षित	योग	शिक्षित	अशिक्षित	योग	
1. उत्तर प्रदेश	70.23	29.77	100	42.98	57.02	100	
2. बिहार	60.32	39.68	100	33.57	66.43	100	
3. सिक्किम	76.73	23.27	100	61.46	38.54	100	
4. अरूणांचल प्रदेश	64.07	35.93	100	44.24	55.76	100	
योग							

इस सारणी में विभिन्न राज्यों में स्त्री-पुरुषों की संख्या, स्त्री-पुरुषों में साक्षरता दर की मात्रा, कुल जनसंख्या आदि का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

(स) बहुगुणीय या बहुपक्षीय सारणी — इस प्रकार की सारणी में चार अथवा अधिक गुणों को दर्शाया व उनकी तुलना की जा सकती है। उदाहरणार्थ —

कालेज		छात्र						छात्राएं						योग		
		ग्रामीण			नगरीय			ग्रामीण			नगरीय			छात्र	छात्राएं	योग
क्र.	(जिला)	विवाहित	अविवाहित	योग	विवाहित	अविवाहित	योग	विवाहित	अविवाहित	योग	विवाहित	अविवाहित	योग			
1.	लखनऊ															
2.	रायबरेली															
3.	हरदोई															
4.	सीतापुर															
5.	लखीमपुर (खीरी)															

यह सारणी बहुगुणीय या बहुपक्षीय सारणी का उदाहरण है। इसमें चार गुणों को प्रदर्शित किया गया है - कालेज, छात्र-छात्राएं, ग्रामीण नगरीय, विवाहित व अविवाहित। इन चारों ही आधारों पर हम विभिन्न जिलों के कालेजों की परस्पर तुलना कर सकते हैं।

सारणीयन में सारणियों का निर्माण प्राय: दो प्रकार से किया जाता है।

(1) मशीन द्वारा किया हुआ सारणीयन (2) हाथ द्वारा या हस्तसारणीयन।

(1) मशीन द्वारा किया हुआ सारणीयन — हाथ से किये जाने वाले सारणीयन में समय बहुत लगता है।

इसीलिये इस प्रणाली का उपयोग वहीं हो सकता है जहां छांटे जाने वाले कार्डों की संख्या थोड़ी हो। परन्तु जहां अधिक कार्डों को छांटना पड़ता है वहां पर यह सब काम मशीनों द्वारा अधिक सुविधा से होता है।

(2) हाथ से किया हुआ सारणीयन या हस्तसारणीयन-- हाथ से किये गये सारणीयन में सर्वप्रथम भिन्न-भिन्न वर्गों की संख्याओं को छांटकर अलग कागजों पर लिखना पड़ता है जिन्हें Score अथवा Tally sheets कहते हैं, उदाहरण - Tally Sheets में एक कालेज के छात्रों को उनकी आयु के अनुसार छांटकर लिखा गया है। इस विधि के अनुसार एक व्यक्ति विद्यार्थियों के बारे में इकट्ठा किये हुए कार्डों को एक-एक करके लेगा और उसमें से प्रत्येक विद्यार्थी (छात्र) की उम्र बोलता जायेगा। जिस आयु समूह में उसकी उम्र आती होगी उसके आगे दूसरा व्यक्ति एक खड़ी लाइन बना देगा। जब चार खड़ी लाइनें हो जायेंगीं तो पांचवी लाइन उसके समान्तर बनाने के बजाय चारों खड़ी लाइनों को काटती हुई बनायी जायेगी। इससे गिनती में आसानी होती है। जब सब कार्ड खत्म हो जायेगें तो प्रत्येक आयु समूह के सामने की लकीरों को गिनकर उनका जोड़ लिख दिया जायेगा।

उदाहरण— Tally Sheets

Faculty (संकाय) Class (कक्षा)		मूल्यांकन द्वारा - निरीक्षण द्वारा -
उम्र	टेली चिह्न —	विद्यार्थियों की संख्या
8 - 10	~~||||~~ ~~||||~~ ||	= 12
10 - 12	~~||||~~ ~~||||~~ |	= 11
12 - 14	~~||||~~ ~~||||~~	= 10
14 - 16	~~||||~~ ||	= 7
16 - 18	~~||||~~ ~~||||~~ ||	= 12
18 - 20	~~||||~~	= 5
20 - 22	||||	= 4

20.11 सारणीयन के लाभ व सीमाएं

अब हम सारणीयन के प्रकारों का अध्ययन करने के बाद सारणीयन के महत्व व इसकी सीमाओं का अध्ययन करेंगे। सारणीयन का वर्गीकृत सामग्री को प्रस्तुत करने में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। **डॉ. बाउले** (1923) ने बताया है कि सांख्यिकीय अनुसंधान की सामान्य योजना में सारणीयन का कार्य उत्तर को, जिससे अनुसंधान का सम्बन्ध है सुलभ रूप में क्रमबद्ध करना है। सारणीयन के महत्व को निम्नांकित बिन्दुओं में रखकर समझा जा सकता है—

(1) सरलता — सारणीयन के द्वारा आंकड़ों का प्रदर्शन इस प्रकार करना संभव हो जाता है कि उन्हें समझना और याद रख सकना सरल हो जाता है। एक सारणी में प्रस्तुत आंकड़ों को ऊपर से नीचे की ओर तथा बायें से दाहिनी ओर सफलतापूर्वक देखकर उनसे सम्बन्धित निष्कर्षों और प्रवृत्तियों को समझना भी एक सरल कार्य हैं। इसके अतिरिक्त सारणीयन इसलिए भी एक सरल विधि है कि इसके

द्वारा सख्यात्मक त्रुटिया का दूर करक आधक यथाथ निष्कष दिय जा सकते हैं।

(2) उद्देश्य की स्पष्टता — सारणीयन इस दृष्टिकोण से भी एक उपयोगी प्रणाली है कि इसके अन्तर्गत विभिन्न सारणियों का निर्माण अध्ययन के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए किया जाता है। इसी के फलस्वरूप किसी अध्ययन से सम्बन्धित विभिन्न सारणियों को देखकर ही अध्ययन के उद्देश्यों को समझना संभव हो जाता है।

(3) तुलनात्मक अध्ययन — सारणी के अन्तर्गत आंकड़ों को अनेक स्तम्भों एवं पंक्तियों में इस प्रकार व्यवस्थित करके प्रस्तुत किया जाता है कि विषय के विभिन्न पक्षों का तुलनात्मक अध्ययन करना संभव हो जाता है। इसके अतिरिक्त सारणियों द्वारा प्रतिशत, अनुपात, माध्य अथवा औसत आदि के प्रदर्शन के कारण भी तुलनात्मक अध्ययन करना सरल हो जाता है।

(4) वस्तुनिष्ठता — सारणियों का निर्माण करना एक मनमाना कार्य नहीं होता बल्कि इनके निर्माण में वैज्ञानिक विधि का प्रयोग किया जाता है। सारणियां इसलिये भी वैज्ञानिक होती हैं कि इनके अर्थ में सार्वभौमिकता का गुण होता है। एक सारणी को देखने वाले सभी अनुसंधानकर्ता उसका एक जैसा अर्थ लगाते हैं। इसके फलस्वरूप सारणियों के माध्यम से किसी विशेषता को कहीं अधिक वैज्ञानिक रूप में प्रस्तुत करना संभव हो जाता है।

(5) मितव्ययिता — सारणीयन एक ऐसी विधि है जिसके द्वारा आंकड़ों के विशाल समूह को बहुत कम समय में ही व्यवस्थित करके महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्रस्तुत किए जा सकते हैं। सारणीयन की सहायता से प्रतिवेदन को संक्षिप्त बनाना अथवा कम पृष्ठों में ही अधिक से अधिक सूचनाएं दे सकना संभव हो जाता है इससे अध्ययनकर्ता के समय में भी बहुत बचत होती है।

(6) सांख्यिकीय निर्वचन — सारणीयन के अभाव में आंकड़ों का सांख्यिकीय विवेचन नहीं किया जा सकता। वर्तमान युग में जैसे-जैसे माध्य, मध्यिका, बहुलांक, विचलन तथा सह-सम्बन्ध आदि के रूप में सांख्यिकीय विवेचन का महत्व बढ़ता जा रहा है, सारणीयन के द्वारा तथ्यों को प्रदर्शित करना भी अनिवार्य हो गया है।

इस प्रकार सामाजिक अनुसंधान की प्रक्रिया में सारणीयन के महत्व की अवहेलना नहीं की जा सकती है।

सारणीयन की सीमाएं

सारणीयन के महत्व के बाद अब सारणीयन की सीमाओं का अध्ययन करेंगे— जहां एक ओर सामग्री को सारणी द्वारा प्रस्तुत कर सकना अधिक लाभकारी होता है, साथ ही उसकी कुछ कठिनाइयां या उसमें पाये जाने वाले कुछ दोष भी होते हैं जो निम्नलिखित हैं—

(1) केवल संख्यात्मक सूचनाएं— सारणी केवल उन्हीं सूचनाओं को प्रस्तुत कर सकती है जिनकी प्रकृति सांख्यात्मक हो। समाजशास्त्रीय तथ्यों की अधिकांशत: गुणात्मक प्रकृति होना सारणीयन विधि को कम महत्व प्रदान कर पाता है।

(2) विशेष ज्ञान की आवश्यकता— प्राय: सारणियों को आसानी से समझ पाना सामान्य व्यक्ति के बस की बात नहीं होती है। जहां बड़ी-बड़ी सारणियाँ जटिल तथ्यों को दर्शाने के लिए बनायी जाती हैं उन्हें प्रत्येक दृष्टिकोण से समझ सकने के लिए एक उच्च शिक्षा, विशेष ज्ञान व रुचि आवश्यक होती है।

(3) सम्पूर्ण परिशुद्धता असंभव — सारणी प्राय: सापेक्षिक रूप से विभिन्न पदों के अन्तर्गत सूचनाएं दर्शाती है। अतएव कोई भी सूचनाएं पूर्णतया स्वतन्त्र न होने के साथ ही कभी-कभी तो गलत या

असंगत भी दिखायी पड़ती हैं। कुछ महत्वपूर्ण आंकड़ों को प्राथमिकता नहीं मिल पाती है। इस प्रकार पूर्ण परिशुद्धता का अभाव बना रहता है।

(4) अरुचिकर — प्राय: यह भी देखा जाता है कि यदि संख्याएं अधिक मात्रा में तथा जटिल प्रकृति की हैं और उन्हें एक ही सारणी में अथवा कई सारणियों में विभाजित करके प्रस्तुत भी किया गया है तो भी वे मनुष्य के मन तथा बुद्धि पर अधिक भार डालती है। इसमें कभी-कभी तो बहुत कम आकर्षण हो पाता है अर्थात् कम रुचि उत्पन्न होती है।

20.12 सारांश

इस इकाई में हमने प्रारम्भ में वर्गीकरण के अर्थ व विविध विद्वानों द्वारा प्रस्तुत वर्गीकरण परिभाषा का ज्ञान प्राप्त किया। उसके बाद इसके उद्देश्यों व प्रक्रिया का भी व्यवस्थित अध्ययन किया। इसी क्रम में इसी इकाई के अन्तर्गत सारणी का भी अर्थ जाना। इसके उद्देश्यों व गुणों का समुचित ज्ञान प्राप्त किया। वर्गीकरण के गुणों का ज्ञान प्राप्त करते हुए इसके निश्चित आधारों व इसके विविध प्रकारों का भी विस्तृत अध्ययन किया। सारणीयन के गुणों को जानने के बाद इसकी संरचना व प्रकारों को भी विश्लेषित होते हुए देखा तथा इससे होने वाले लाभ तथा अंत में इसकी सीमाओं का भी अध्ययन किया।

20.13 बोध प्रश्न

(क) बहुविकल्पीय बोधात्मक प्रश्न

प्र. 1 वर्गीकरण के उद्देश्यों में से नहीं है—

(अ) तथ्यों को संक्षिप्त एवं बोधगम्य बनाना

(ब) तथ्यों की इकाइयों की समानता एवं भिन्नता स्पष्ट करना

(स) तथ्यों को विश्लेषण व व्याख्या के लिये सरल बनाना

(द) तथ्यों के अध्ययन को वैज्ञानिक रूप देकर जटिल व्याख्या करना।

प्र. 2 वर्गीकरण के द्वारा नहीं किया जाता है—

(अ) तथ्यों को स्पष्ट बनाने का काम

(ब) तथ्यों को सरल बनाने का काम

(स) तथ्यों की समानता दिखाने का काम

(द) तथ्यों की भिन्नता दूर करने का काम

प्र: 3 सारणीयन का अर्थ —

(अ) तथ्यों का संकलन (ब) तथ्यों का वर्गीकरण (स) तथ्यों को तालिका में व्यवस्थित सजाना
(द) सारणीबद्ध तथ्यों का विश्लेषण

प्र. 4 समानता व भिन्नता के आधार पर विविध श्रेणियों में तथ्यों को बांटने की प्रक्रिया को कहते हैं—

(अ) संकलन (ब) वर्गीकरण (स) सारणीयन (द) सूचीकरण

प्र. 5 सारणीयन —

(अ) तथ्यों के संकलन के ठीक बाद किया जाता है। (ब) तथ्यों के अंतिम विश्लेषण के बाद तथ्यों की प्रस्तुति को सरल बनाने के लिए किया जाता है

(स) तथ्यों के अंतिम विश्लेषण के पहले तथ्यों के वर्गीकरण के लिये किया जाता है। (द) तथ्यों के वर्गीकरण के पश्चात् किया जाता है।

(ख) लघुउत्तरीय प्रश्न

प्र. 1 सारणीयन को परिभाषित कीजिये ?

प्र. 2 सारणीयन को बनाते समय किन नियमों या बिन्दुओं को ध्यान में रखना चाहिए?

प्र. 3 सारणीयन के तीन उद्देश्य बताइये?

प्र. 4 सारणीयन के लाभ बताइये?

प्र. 5 सारणीयन की सीमाओं का उल्लेख कीजिये ?

प्र. 6 वर्गीकरण की परिभाषा व इसके लाभ बताइये?

(ग) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्र. 1 वर्गीकरण क्या है? इसके प्रकारों का उल्लेख करते हुए एक आदर्श वर्गीकरण के गुणों का वर्णन कीजिये ?

प्र. 2 सारणीयन के प्रकारों का उल्लेख करते हुए सारणी के उद्देश्यों को स्पष्ट कीजिये?

20.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

उ. 1 (द) तथ्यों के अध्ययन को वैज्ञानिक रूप देकर जटिल व्याख्या करना ।

उ. 2 (द) तथ्यों की भिन्नता दूर करने का काम।

उ. 3 (स) तथ्यों को तालिका में व्यवस्थित सजाना।

उ. 4 (ब) वर्गीकरण

उ. 5 (द) तथ्यों के वर्गीकरण के पश्चात् किया जाता है।

इकाई 21 समान्तर माध्य, मध्यिका तथा बहुलक

इकाई की रूपरेखा—

21.0 उद्देश्य

21.1 प्रस्तावना

21.2 समान्तर माध्य: अर्थ व परिभाषा

21.2.1 समान्तर माध्य की विशेषतायें

21.3 समान्तर माध्य निकालने की विधि

21.3.1 समान्तर माध्य के गुण

21.4 समान्तर माध्य के दोष

21.5 मध्यिका : अर्थ व परिभाषा

21.6 मध्यिका ज्ञात करने की विधियाँ

21.6.1 मध्यिका के गुण

21.6.2 मध्यिका की विशेषताएं

21.7 मध्यिका के दोष

21.8 बहुलक : अर्थ व परिभाषा

21.8.1 बहुलक की विशेषताएं

21.8.2 बहुलक का निर्धारण

21.8.3 बहुलक के गुण

21.8.4 बहुलक के दोष

21.9 सारांश

21.10 बोध प्रश्न

21.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

21.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :

- समानान्तर माध्य एवं इसके निकालने की विधि के बारे में उल्लेख कर सकेंगे।
- माध्यिका का अर्थ, इसे ज्ञात करने की विधियों तथा गुण एवं दोषों को स्पष्ट कर सकेंगे।
- बहुलक की अवधारणा, विशेषताओं, इसके निर्धारण तथा गुण एवं दोषों का वर्णन कर सकेंगे।

21.1 प्रस्तावना

इस इकाई में हम समान्तर माध्य, मध्यिका, व बहुलक के विषय में विस्तृत अध्ययन करेंगे। सामान्यत: समान्तर माध्य से तात्पर्य उस मूल्य से है जो किसी श्रेणी के समस्त पदों के मूल्यों के योग में उनकी संख्या का भाग देने से प्राप्त होता है । जबकि वहीं मध्यिका से तात्पर्य वितरण के उस बिन्दु से है जिसके ऊपर व नीचे बराबर भाग होते हैं अर्थात् मध्यिका वितरण को दो भागों में बांट देती है। यदि प्राप्तांकों को बढ़ते हुए या घटते हुए क्रम में व्यवस्थित कर दिया जाये तो मध्य की स्थिति मध्यिका कहलाती है। इसी क्रम में बहुलक किसी श्रेणी का वह मूल्य होता है जो समंकमाला में सबसे अधिक बार आता है।

इस प्रकार इस इकाई में हम माध्य, मध्यिका, व बहुलक से सम्बंधित, इनकी विशेषताओं गुणों व दोषों से के अध्ययन के साथ-साथ इन्हें निकालने की विधियों का भी अध्ययन करेंगें।

21.2 'समान्तर माध्य' : अर्थ व परिभाषा

सामान्यत: समान्तर माध्य के लिये औसत शब्द का भी प्रयोग किया जाता है। समान्तर माध्य, वह मूल्य है जो किसी श्रेणी के समस्त पदों के मूल्यों के योग में उनकी संख्या का भाग देने से प्राप्त होता है। उदाहरणार्थ — यदि परिवारों की संख्या 5 है और इन परिवार में 5, 1, 5, 6, 3 सदस्य हैं तो इन पांचों का योग 20 हुआ। इसे परिवार की संख्या 5 से भाग दें तो भागफल 4 आता है । इस तरह परिवार के सदस्यों का अंकगणित माध्य 4 हुआ। इसे 'औसत' कहा जाता है। समान्तर माध्य की परिभाषा को अलग-अलग विद्वानों ने विविध रूपों में व्यक्त किया है। **घोष एवं चौधरी** (1961) का मानना है कि समान्तर माध्य वह परिणाम है जो कि किसी चल में पदों के मूल्यों के योग को उनकी संख्या से भाग देकर प्राप्त होती है । इस प्रकार समान्तर माध्य समंकमाला के पदों के जोड़ में उनकी संख्या के द्वारा भाग देने से प्राप्त होती है। उसे ही माध्य के रूप में भी परिभाषित किया जा सकता है। परिभाषा से स्पष्ट है कि समान्तर माध्य वास्तव में औसत निकालना है यदि हमें इकाई का मूल्य अलग-अलग मालूम है तो समान्तर माध्य या औसत निकालने के लिए उन सभी इकाइयों को जोड़कर इकाइयों की संख्या से भाग दिया जाता है, भाग देने पर जो परिणाम प्राप्त होता है उसे माध्य या समान्तर माध्य कहते हैं।

21.2.1 समान्तर माध्य की विशेषताएं

समान्तर माध्य के अर्थ को समझने के बाद अब इस इकाई के अन्तर्गत हम समान्तर माध्य की विशेषताओं का अध्ययन करेंगे। समान्तर माध्य की निम्नांकित विशेषताएं हैं—

(1) समान्तर माध्य कुल पदों के माप के योग को पदों की संख्या से भाग देकर निकाला जाता है।

(2) इसमें समस्त पद मूल्यों का उपयोग किया जाता है अर्थात् समस्त पदों को समान महत्व दिया जाता है। किसी मूल्य की न तो उपेक्षा की जाती है और न अधिक महत्व दिया जाता है । पद की गणना केवल एक बार होती है।

(3) यदि समान्तर माध्य व पदों की संख्या ज्ञात हो तो कुल पदों का वास्तविक योग निकाला जा सकता है।

(4) समान्तर माध्य आवृत्तियों पर निर्भर नहीं रहता बल्कि समस्त पदों के मूल्य पर निर्भर रहता है।

इस प्रकार समान्तर माध्य की विशेषताओं का ज्ञान प्राप्त करने के बाद अब हम समान्तर माध्य निकालने की विधि के विषय में अध्ययन करेंगे।

21.3 समान्तर माध्य निकालने की विधि

व्यक्तिगत पद माला, खंडित पदमाला व अखंडित पद मालाओं में समान्तर माध्य की गणना निम्न सूत्रों द्वारा की जाती है—

(अ) व्यक्तिगत पदमाला (श्रेणी) में समान्तर माध्य की गणना — व्यक्तिगत पद माला के अन्तर्गत समान्तर माध्य की गणना की दो विधियां निम्नलिखित हैं —

(1) **प्रत्यक्ष विधि** — प्रत्यक्ष पद्धति के अन्तर्गत समान्तर माध्य की गणना करने के लिये निम्न सूत्र का प्रयोग करते हैं—

सूत्र

$$M = \frac{\Sigma m}{n}$$

संकेत — यहां

M = समान्तर माध्य

Σ = कुल या योग

n = पदों की संख्या

Σm = पद माला के मूल्यों या मापों का योग

Σ = यह चिन्ह ग्रीक भाषा का है । इसे हम 'सिगमा' कहते हैं। इसका आशय कुल या जोड़ से होता है।

(2)
लघु विधि — इस विधि से समान्तर माध्य निकालने के लिये निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

सूत्र

$$M = A + \frac{\Sigma dx}{n}$$

संकेत — यहां

M = समान्तर माध्य

A = कल्पित माध्य

dx = कल्पित माध्य से निकाला गया विचलन $(x - A)$

Σ = योग

Σdx = कल्पित माध्य से निकाले गये विचलनों का योग

अब यहां पर व्यक्तिगत पद माला का उदाहरण प्रस्तुत किया जा रहा है। इस श्रेणी में प्रत्यक्ष व लघु दोनों विधियों से समान्तर माध्य निकाला जा रहा है जो इस प्रकार है—

उदाहरण — (व्यक्तिगत पद माला)

सात श्रमिकों की साप्ताहिक आय (रुपयों में) निम्न प्रकार है। इनका समान्तर माध्य बताइये?

30, 35, 25, 40, 20, 45 एवं 50

प्रत्यक्ष विधि व लघु विधि से समान्तर माध्य ज्ञात कीजिये ?

हल —

प्रत्यक्ष विधि द्वारा — सारणी

क्रम संख्या (श्रमिकों की)	साप्ताहिक आय (रुपये) (m)
1	30
2	35
3	25
4	40
5	20
6	45
7	50
n = 7	$\Sigma m = 245$

प्रत्यक्ष विधि से समान्तर माध्य का सूत्र

$$M = \frac{\Sigma m}{n}$$

$$M = \frac{\cancel{245}^{35}}{\cancel{7}_{1}} = 35$$

M = 35 रूपये ∴ माध्य = 35 रुपये

हल — लघु विधि से समान्तर माध्य की गणना

क्रम सं.	साप्ताहिक आय (रू0) (x)	कल्पित माध्य (A = 40) विचलन dx = (x-A)
1	30	30 − 40 = −10
2	35	35 − 40 = − 5
3	25	25 − 40 = − 15
4	40 (A)	40 − 40 = 0
5	20	20 − 40 = − 20
6	45	45 − 40 = 5
7	50	50 − 40 = 10
n = 7		$\Sigma dx = -35$

लघु विधि से समान्तर माध्य

$$M = A + \frac{\Sigma dx}{n}$$

$$M = 40 + (\frac{-35}{7})$$

$$M = 40 \frac{-35}{7}$$

$$M = 40 - 5$$

$$M = 35$$

साप्ताहिक माध्य = 35 रूपये

उत्तर = 35 रूपये

इस प्रकार हम देख रहे हैं कि व्यक्तिगत श्रेणी में प्रत्यक्ष विधि व लघु विधि द्वारा समान्तर माध्य निकाला गया है। दोनों के अलग अलग सूत्र है । परन्तु दोनों का उत्तर समान आयेगा।

(ब) खण्डित या विच्छिन्न श्रेणी में समान्तर माध्य की गणना करना —

खंडित श्रेणी में भी समान्तर माध्य प्रत्यक्ष व लघु विधि से निकाला जा सकता है।

(1) प्रत्यक्ष विधि द्वारा समान्तर माध्य निकालने का सूत्र —

$$\boxed{M = \frac{\Sigma fm}{n}}$$

संकेत — यहाँ

M = समान्तर माध्य

n = आवृत्तियों का योग

Σ = योग

f = बारम्बारता या आवृत्ति

m = माप

fm = आवृत्ति × माप

Σ f.m = आवृत्ति व मापों के गुणनफल का योग

(2) लघु विधि द्वारा समान्तर माध्य निकालने का सूत्र —

सूत्र —

$$\boxed{M = A + \frac{\Sigma f.dx}{n}}$$

संकेत — यहाँ

M = समान्तर माध्य

A = कल्पित माध्य

$n =$ आवृत्तियों का योग

$f =$ आवृत्ति

$dx = (x - A) =$ (पद - कल्पित माध्य)

$\Sigma f.dx =$ विचलन व आवृत्ति के गुणनफल का योग

उदाहरण — निम्न से प्रत्यक्ष व लघु विधि से समान्तर माध्य ज्ञात कीजिये ।

पद का आकार	आवृत्ति (बारंबारता)
2	8
3	12
4	15
5	10
6	4
7	6

उत्तर — प्रत्यक्ष विधि द्वारा समान्तर माध्य ज्ञात करना

पद का आकार (m)	आवृत्ति (f)	पद का आकार × आवृत्ति (mxf)
2	8	2 x 8 = 16
3	12	3 x 12 = 36
4	15	4 x 15 = 60
5	10	5 x 10 = 50
6	4	6 x 4 = 24
7	6	7 x 6 = 42
	n = 55	Σ f.m = 228

सूत्र —

$$M = \frac{\Sigma f.m}{n}$$

जहां $M =$ समान्तर माध्य

$n =$ आवृत्तियों का योग

$f.m. =$ आवृत्ति व पद का गुणनफल

$\Sigma f.m. =$ आवृत्ति व पदों के गुणनफल का योग

$$M = \frac{228}{55}$$

$$M = 4.15$$

समान्तर माध्य = 4.15 (लगभग)

उत्तर

लघु विधि द्वारा समान्तर माध्य ज्ञात करना —

सूत्र —

$$M = A + \frac{\Sigma f.dx.}{n}$$

जहाँ

A = कल्पित माध्य

n = आवृत्तियों का योग

dx = (x - A)

f.dx = आवृत्ति व विचलन का गुणनफल

पद का आकार x	आवृत्ति (f)	dx = (x - A)	f.dx
2	8	2-5 = -3	8 x -3 = -24
3	12	3 - 5 = -2	12 x -2 = -24
4	15	4 -5 = -1	15 x -1 = -15
5(A)	10	5 - 5 = 0	10 x 0 = 0
6	4	6 - 5 = 1	4 x 1 = 4
7	6	7 - 5 = 2	6 x 2 = 12
	n = 55		f.dx = - 47

$$M = A + \frac{\Sigma f.dx}{n}$$

M = 5 + (-47/55)

M = 5/1 -47/55

M = 5 - .85

M - 4.15

समान्तर माध्य = 4.15 (लगभग)

उत्तर = M = 4.15 (लगभग)

(स) **सतत् या अविच्छिन्न या अखंडित पद माला में समान्तर माध्य निकालना —**

अखंडित पद माला में समान्तर माध्य निकालते समय पहले वर्गान्तर का मध्य बिन्दु निकालते हैं। मध्य बिन्दु निकालने के लिए वर्गान्तर के निम्न और उच्च अंक के योग में दो का भाग दे देते हैं। मध्य

मूल्य निकालने के उपरांत श्रेणी खंडित बन जाती है इसके उपरांत वही प्रक्रिया अपनायी जाती है जो खंडित श्रेणी में अपनाते हैं।

(1) प्रत्यक्ष विधि से समान्तर माध्य निकालना —

सूत्र

$$M = \frac{\sum f.x}{n}$$

जहां

$n =$ आवृत्तियों का योग

$\Sigma =$ योग $\quad \therefore \quad x =$ मध्य बिन्दु = उच्च सीमा + निम्न सीमा / 2

$f =$ आवृत्ति

$f.x =$ आवृत्ति × मध्य बिन्दु

$x =$ पद

$M =$ समान्तर माध्य

(2) लघु विधि से समान्तर माध्य निकालना —

सूत्र

$$M = A + \frac{\sum f.\, dx}{n}$$

जहाँ -

$M =$ समान्तर माध्य

$A =$ कल्पित माध्य

$n =$ आवृत्तियों का योग

$f =$ आवृत्तियां

$dx =$ विचलन $= (x - A)$

$f.\, dx =$ आवृत्ति व विचलन का गुणनफल

$\Sigma f.\, dx =$ आवृत्ति व विचलन के गुणनफलों का योग

उदाहरण —

निम्न सारणी से प्रत्यक्ष व लघु विधि द्वारा समान्तर माध्य ज्ञात कीजिये —

प्राप्त अंक	विद्यार्थियों की संख्या
0 – 10	5
10 – 20	7
20 – 30	8
30 – 40	10
40 – 50	6

हल — प्रत्यक्ष विधि से समान्तर माध्य निकालना —

प्राप्तांक	मध्य बिन्दु (x)	आवृत्ति (f)	f.x = आवृत्ति × मध्य बिन्दु
0 - 10	$\frac{0+10}{2} = 5$	5	5 x 5 = 25
10 - 20	$\frac{10+20}{2} = 15$	7	7 x 15 = 105
20 - 30	$\frac{20+30}{2} = 25$	8	8 x 25 = 200
30 - 40	$\frac{30+40}{2} = 35$	10	10x 35 = 350
40-50	$\frac{40+50}{2} = 45$	6	6 x 45 = 270
		n = 36	$\sum f.x = 950$

सूत्र —

$$M = \frac{\sum f.x}{n}$$

$$M = \frac{950}{36} = 26.39$$

समान्तर माध्य (M) = 26.39 (लगभग) उत्तर

लघु विधि से समान्तर माध्य निकालना —

प्राप्तांक	मध्य बिन्दु (x)	आवृत्ति (f)	कल्पित माध्य = A = 25 विचलन = (dx) = (x-A)	f. dx
0 - 10	$\frac{0+10}{2} = 5$	5	5-25 = -20	5 x 20 = -100
10 - 20	$\frac{10+20}{2} = 15$	7	15 - 25 = -10	7 x -10 = -70
20 - 30	$\frac{20+30}{2} = 25(A)$	8	25-25 = 0	8 x 0 = 0
30 - 40	$\frac{30+40}{2} = 35$	10	35 - 25 = 10	10 x 10 = 100
40 - 50	$\frac{40+50}{2} = 45$	6	45 - 25 = 20	6 x 20 = 120
		n = 36		$\sum$ f.dx = 50

सूत्र —

$$M = A + \frac{\sum f.dx}{n}$$

$$M = 25 + \frac{25}{18}$$

$$M = 25 + 1.39$$

$$M = 26.39$$

समान्तर माध्य (M) = 26.39 (लगभग) उत्तर

इस प्रकार प्रत्यक्ष व लघु दोनों विधियों द्वारा समान्तर माध्य 26.39 (लगभग) आया है।

(द) समावेशी पदमाला में समान्तर माध्य निकालना — समावेशी श्रेणी का आशय ऐसी श्रेणी से होता है जिसमें प्रथम वर्गान्तर का उच्च मूल्य उसके बाद वाले वर्गान्तर के निम्न मूल्य से प्राय: एक अंक कम होता है और यही क्रम प्रत्येक अगले वर्गान्तर में होता है।

समावेशी श्रेणी में उसको अपवर्जी किये बिना ही समान्तर माध्य निकाल लेते हैं ।

उदाहरणार्थ — निम्न समावेशी श्रेणी में समान्तर माध्य निकालिये—

अंक	विद्यार्थियों की संख्या
1 - 5	1
6 - 10	3
11 - 15	5
16 - 20	6
21 - 25	4
26 - 30	2
31 - 35	1

हल — प्रत्यक्ष रीति द्वारा समान्तर माध्य निकालना —

अंक	मध्य बिन्दु (X)	आवृत्ति (f)	f.x
0 - 5	$\frac{1+5}{2} = 3$	1	1 x 3 = 3
6 - 10	$\frac{6+10}{2} = 8$	3	3 x 8 = 24
11 - 15	$\frac{11+15}{2} = 13$	5	5 x 13 = 65
16 - 20	$\frac{16+20}{2} = 18$	6	6 x 18 = 108
21 - 25	$\frac{21+25}{2} = 23$	4	4 x 23 = 92
26 - 30	$\frac{26+30}{2} = 28$	2	2 x 28 = 56
30 - 35	$\frac{30+35}{2} = 33$	1	1 x 33 = 33
		n = 22	$\sum$ f.x = 381

सूत्र —

$$M = \frac{\sum f.x}{n}$$

$$M = \frac{381}{22} = 17.32$$

समान्तर माध्य = 17. 32

उत्तर — समान्तर ाध्य (M) = 17.32 (लगभग)

लघु रीति द्वारा समान्तर माध्य ज्ञात करना—

अंक	मध्य मूल्य (x)	आवृत्ति (f)	dx = (x-A) A = 18	f. dx
1 - 5	3	1	3 - 18 = -15	1 x -1 5 = -15
6 - 10	8	3	8 - 18 = -10	3 x -10 = -30
11 - 15	13	5	13 - 18 = -5	-5 x 5 = -25
16 - 20	18 (A)	6	18 - 18 = 0	6 x 0 = 0
21 - 25	23	4	23 - 18 = 5	4 x 5 = 20
26 - 30	28	2	28 - 18 = 10	2 x 10 = 20
31 - 35	33	1	33 - 18 = 15	1 x 15 = 15
		n = 22		$\sum$ f.dx = -15

सूत्र समान्तर माध्य (M) = A + $\frac{\sum f.dx}{n}$

$$M = 18 + (\frac{-15}{22})$$

$$M = 18 \frac{-15}{22}$$

$$M = 18 - .68$$

M = 17.32 (लगभग)

समान्तर माध्य (M) = 17.32 (लगभग) उत्तर

इस प्रकार समावेशी श्रेणी में भी हम देख रहे हैं कि प्रत्यक्ष एवं लघु दोनों ही विधियों द्वारा उत्तर एक समान आता है।

उदाहरण — सात छात्रों की आयु निम्नवत है

13, 14, 15, 15, 17, 19, 23 । मध्यिका आयु ज्ञात कीजिये?

हल -

क्रम सं0	आयु (वर्षों में)
1	13
2	14
3	15
4	15
5	17
6	19
7	23
n = 7	

∴ पदों की संख्या (n) = 7 जो कि विषम है अत:

∴ मध्यिका का सूत्र

$$Me = \frac{n+1}{2} \text{ वें पद का मान}$$

Me = f(7+1,2) = f(8,2) = 4 वें पद का मान

Me = चौथे पद का मान 15 है

अत: मध्यिका आयु 15 वर्ष होगी। उत्तर

उदाहरण - यदि दस छात्रों की आयु निम्नवत है -

10, 12, 13, 18, 18, 24, 29, 42, 48, 54 । मध्यिका आयु ज्ञात कीजिये?

हल -

क्रम संख्या	आयु (वर्षों में)
1	10
2	12
3	13
4	18
5	18
6	24
7	29
8	42
9	48
10	54
n = 10	

∴ n = 10 ,जो कि एक सम संख्या है

अत: जब n = 10 (सम हो) तो

मध्यिका सूत्र = $Me = \frac{1}{2}$ [$\frac{n}{2}$ वें पद का मान + ($\frac{n}{2}$ + 1) वें पद का मान]

$Me = \frac{1}{2}$ [$\frac{10}{2}$ वें पद का मान + ($\frac{10}{2}$ + 1) वें पद का मान]

$Me = \frac{1}{2}$ [5वें पद का मान + 6 वें पद का मान]

$Me = \frac{1}{2}\ [18 + 24]$

$Me = \frac{1}{2}\ [42]$

$Me = \frac{1}{2} \times 42$ 21

$= Me = 21$

मध्यिका आयु = 21 वर्ष उत्तर

(ब) खंडित श्रेणी में मध्यिका का सूत्र —

1. इसमें पहले मूल्यों को आरोही या अवरोही क्रम में व्यवस्थित करते हैं।
2. श्रेणी की आवृत्तियों की संचयी आवृत्तियां ज्ञात करते हैं।
3. फिर निम्न सूत्र का प्रयोग करते हैं

$$Me = \left(\frac{n+1}{2}\right) \text{ वें पद का मान}$$

इस प्रकार जो पद आता है वह जिस संचयी आवृत्ति में स्थित होता है उस संचयी आवृत्ति का पद मूल्य मध्यिका कहलाता है।

इसे निम्न उदाहरण द्वारा प्रस्तुत करते हैं जो निम्नलिखित हैं।

उदाहरण – निम्न श्रेणी की मध्यिका ज्ञात कीजिये —

मूल्य (पद)	आवृत्ति
44	9
45	10
46	21
47	27
48	21
49	6
50	4
51	2
	n = 100

हल -

मूल्य (पद)	आवृत्ति	संचयी आवृत्ति
44	9	9
45	10	19
46	21	40
47	27	67
48	21	88
49	6	94
50	4	98
51	2	100
	n = 100	

$\therefore$ n = 100

सूत्र -

मध्यिका = $(\frac{n}{2}+1)$ वें पद का मान

Me = $(\frac{100+1}{2})$ वें पद का मान

Me = 50.5 वां पद

चूँकि 50.5वां पद संचयी आवृत्ति 67 में शामिल है अत: 67 संचयी आवृत्ति का पद मूल्य 47 है। तो मध्यिका 47 होगी।

Me = 47 उत्तर

(स) अखंडित या सतत् श्रेणी में मध्यिका का सूत्र— इसमें निम्न पदों का अनुसरण करना पड़ता है।

(1) मूल्यों को आरोही या अवरोही क्रम में व्यवस्थित कीजिये।

(2) संचयी आवृत्ति का निर्माण कीजिये।

(3) सूत्र का प्रयोग - (m = (·f(n,2)) वें पद का मान कीजिये ।

(4) Me के मान को संचयी आवृत्ति में देखकर मध्यिका वर्ग का निर्धारण कीजिये। इसके पश्चात निम्न सूत्र का प्रयोग कर मध्यिका ज्ञात करेंगे।

आरोही क्रम वाली श्रेणी में प्रयुक्त मध्यिका सूत्र —

$$Me = L_1 + \frac{i}{f} \ (m-c)$$

जहाँ Me = मध्यिका

f = मध्यिका वर्ग की आवृत्ति

C = मध्यिका वर्ग से पहले वाले वर्ग की संचयी आवृत्ति

i = मध्यिका वर्ग का वर्गान्तर

L_1 = मध्यिका वर्ग की निम्नतम सीमा

L_2 = मध्यिका वर्ग की उच्चतम सीमा

m = (n,2) से निकाला गया पद

∴ इस प्रकार सतत् श्रेणी में हम मध्यिका ज्ञात कर सकते हैं। इसका उदाहरण आगे प्रस्तुत किया जा रहा है।

उदाहरण — आरोही क्रम वाली सतत् श्रेणी से मध्यिका ज्ञात कीजिये।

आय (रूपयों में)	व्यक्तियों की संख्या
100 - 200	15
200 - 300	33
300 - 400	63
400 - 500	83
500 - 600	100

हल -

आय (रूपयों में)	व्यक्तियों की संख्या (आवृत्ति)	संचयी आकृत्ति
100 - 200	15	15
200 - 300	33	(15+33) = 48
300 - 400	63	(48+63) = 111 (c)
400 - 500 L_1 L_2	83 (f)	(111+ 83)= 194
500 - 600	100	(194+ 100) = 294
	n = 294	

$$\text{मध्य पद } M = \frac{n}{2} \text{ वां पद}$$

147

$$m = \frac{294}{2} \text{ वां पद} = 147\text{वां पद}$$

$$m = 147\text{वां पद}$$

147वां पद संचयी आवृत्ति 194 में स्थित है जिसका वर्गान्तर 400-500 है।

अत: मध्यिका वर्गान्तर = 400 - 500

(f) आवृत्ति = 83

(c) = 111

$L_1 = 400$, $L_2 = 500$, $f = 83$

$C = 111$, $i = 500\text{-}400 = 100$

मध्यिका सूत्र -

$$Me = L_1 + \frac{i}{f}(m - C)$$

$$Me = L_1 + \frac{i}{f}\left(\frac{n}{2} - C\right)$$

$$Me = 400 + \frac{500 - 400}{83}(147\text{-}111)$$

$$Me = 400 + \frac{100}{83} \times 36$$

$$Me = 400 + 43.37$$

$$Me = 443.37$$

अत: आय की मध्यिका = 443.37 रूपये होगी। उत्तर

यदि श्रेणी आरोही क्रम वाली है तो प्रयुक्त मध्यिका सूत्र -

$$Me = L_2 - \frac{i}{f}(m\text{-}c)$$

उदाहरण - अवरोही क्रम वाली सतत श्रेणी में मध्यिका ज्ञात कीजिये।

मजदूरी	व्यक्तियों की संख्या
40 — 50	7
30 — 40	14
20 — 30	13
10 — 20	11
0 — 10	5

हल —

मजदूरी	व्यक्तियों की संख्या	संचयी आवृत्ति
40 — 50	7	7
30 — 40	14	(7 + 14) = 21 (C)
20 — 30	13 (f)	(21 + 13) = 34
10 — 20	11	(34 + 11) = 45
0 — 10	5	(45 + 5) = 50
	n = 50	

मध्य पद $(m) = \frac{n}{2}$ वां पद

$m = \frac{50}{2}$ वां पद

$m = 25$वां पद

चूँकि 25वां पद संचयी आवृत्ति 34 में आता है अतः मध्यिका वर्गान्तर 20-30 व आवृत्ति 13 तथा C 21 है।

अतः

$L_1 = 20, L_2 = 30, m = 25$

$C = 21, f = 13$

सूत्र —

$$\boxed{Me = L_2 - \frac{i}{f}(m - c)}$$

$$Me = 30 - \frac{30-20}{13}(25-21)$$

$$Me = 30 - \frac{10}{13} \times 4$$

$$Me = 30 - \frac{40}{13}$$

$$Me = 30 - 3.08$$

$$Me = 26.92 \text{ रूपये}$$

मध्यिका मजदूरी = 26.92 रूपये

उत्तर

(द) समावेशी पदमाला में मध्यिका की गणना — समावेशी पदमाला में मध्यिका की गणना करने के लिये उसे सर्वप्रथम अपवर्जी पदमाला में परिवर्तित करते हैं। अपवर्जी पदमाला में परिवर्तित करने के लिए प्रथमतः प्रत्येक वर्गान्तर का अंतर देखते हैं। यह प्रायः एक समान एवं अंक एक आता है। इस अंतर का आधा कर लेते हैँ फिर प्रत्येक वर्गान्तर के निम्न मूल्य से इस आधे अंतर को घटा देते हैं एवं उच्च मूल्य में जोड़ देते हैं। घटाने से जो संख्याएं आती हैं वही प्रत्येक वर्गान्तर का निम्न मूल्य होती है। एवं जोड़ने से जो संख्यायें आती हैं वही प्रत्येक वर्गान्तर का उच्च मूल्य होती है। इस प्रकार नवीन वर्गान्तर के आधार पर पद माला अपवर्जी पदमाला में परिवर्तित हो जाती है।

उदाहरणार्थ — निम्न सारणी में मध्यिका ज्ञात कीजिये।

मजदूरी (रुपये)	श्रमिकों की संख्या
0 — 24	5
25 — 49	11
50 — 74	15
75 — 99	20
100 — 124	35
125 — 149	24
150 — 174	18
175 — 199	9
200 — 224	3

हल —

समावेशी पदमाला	अपवर्जीपदमाला	आवृत्ति	संचयी आवृत्ति
0 — 24	—. 50 — 24.50	5	5
25 — 49	24.5 — 49.5	11	16
50 — 74	49.5 — 74.5	15	31
75 — 99	74.5 — 99.5	20	51
100 — 124	99.5 — 124.5	35	86
125 — 149	124.5 — 149.5	24	110
150 — 174	149.5 — 174.5	18	128
175 — 199	174.5 — 199.5	9	137
200 — 224	199.5 — 224.5	3	140
		n = 140	

∴ मध्य पद (m) = $\frac{n}{2}$ वां पद

$m = \frac{140}{2}$ = 70 वां पद

∴ चूँकि 70वें पद में संचयी आवृत्ति का वर्गान्तर मध्य का वर्गान्तर होगा , परन्तु पद माला में 70वीं संचयी आवृत्ति नहीं है। अतः इसके बाद वाली संचयी आवृत्ति 86 का वर्गान्तर 99.5 - 124.5 ही मध्यिका वर्गान्तर होगा ।

$L_1 = 99.5$, $L_2 = 124.5$

m = 70 , C = 51,

f = 35

मध्यिका सूत्र —

$$\boxed{Me = L_1 + \frac{L_2 - L_1}{f}(m - c)}$$

$$Me = 99.5 + \frac{124.5 - 99.5}{35}(70 - 51)$$

$$Me = 99.5 + \frac{25}{35} \times 19$$

Me = 99.5 + 13. 57

मजदूरी मध्यिका Me = 113.07 उत्तर

21.3.1 समान्तर माध्य के गुण —

समान्तर माध्य के निम्नांकित गुण हैं—

(1) यह सर्व प्रचलित माध्य का रूप है । औसत से लोगों का तात्पर्य समान्तर माध्य से होता है।

(2) इसमें सभी पदों का उपयोग होता है । किसी पद को छोड़ा नहीं जाता ।

(3) यदि प्रत्येक पद का अलग अलग मूल्य ज्ञात न हो, केवल समस्त पदों का कुल मूल्य ही ज्ञात हो तो भी इसे निकाला जा सकता है।

(4) समान्तर माध्य की गणना अत्यन्त सरल होती है। इसलिये माध्य निकालने के लिये गणित सम्बन्धी उच्च स्तरीय ज्ञान की आवश्यकता नहीं होती है।

(5) समान्तर माध्य में श्रेणी के छोटे या बड़े सभी प्रकार के पदों के परिणामों को महत्व दिया जाता है और प्रत्येक पद की गणना केवल एक बार होती है किसी पद मूल्य की न तो उपेक्षा ही की जाती है और न ही अधिक महत्व दिया जाता है।

21.4 समान्तर माध्य के दोष

गुणों के होते हुये भी समान्तर मध्य में कुछ दोष हैं जो निम्नवत हैं—

(1) समान्तर माध्य पर असाधारण इकाई का अनुचित प्रभाव पड़ता है विशेषकर यदि ऐसी असाधारण इकाइयां बहुत बड़ी या बहुत छोटी हों। उदाहरणार्थ — 100 व्यक्तियों में 99 की आयु 200 या 300 के बीच में हो तथा एक व्यक्ति की आयु कई लाख हो, तो समान्तर माध्य इसका ठीक-ठीक चित्र नहीं प्रस्तुत कर पाता है।

(2) भूयिष्ठक या बहुलक तथा मध्यिका की भाँति केवल अवलोकन मात्र से इसे नहीं जाना जा सकता है। प्राय: इसके लिये पर्याप्त गणना की आवश्यकता पड़ती है।

(3) समान्तर माध्य निकालने के लिये यह आवश्यक है कि श्रेणी के समस्त पदों के मापों का योग अथवा अलग-अलग माप मालूम हो। यदि कुछ पद छूट जाये तो माध्य ज्ञात नहीं किया जा सकता है जबकि मध्यिका व बहुलक ज्ञात किया जा सकता है।

(4) समान्तर माध्य प्रगतिशील तथा प्रतीपगामी प्रवृत्तियों अर्थात् बढ़ती हुयी या घटती हुयी प्रवृत्तियों की ओर संकेत नहीं करता है और कभी कभी इससे भ्रामक निष्कर्ष भी प्राप्त होते हैं।

उपर्युक्त कमियों के होते हुये भी सामाजिक आर्थिक समस्याओं, उत्पादन, आयात, निर्यात, आय व्यय आदि का औसत ज्ञात करने में समान्तर माध्य का ही प्रयोग किया जाता है।

21.5 'मध्यिका' : अर्थ व परिभाषा

मध्यिका किसी वितरण का वह बिन्दु होता है जिसके ऊपर और नीचे बराबर भाग होते हैं। यानि मध्यिका वितरण को दो भागों में बांट देती है। यदि प्राप्तांकों को बढ़ती हुयी या घटती हुयी क्रम में व्यवस्थित कर दिया जाये तब मध्य की स्थिति मध्यिका कहलाती है। या किसी समंक श्रेणी को आरोही या अवरोही क्रम में सजाकर मध्य पद मालूम किया जाता है। उस मध्य पद का मूल्य ही मध्यिका कहलाता है।

उदाहरणार्थ — परिवार के 11 सदस्यों को आयु के अनुसार खड़ा कर दिया जाये तो छठे सदस्य की आयु मध्यिका कहलायेगीं। घोष एवं चौधरी ने मध्यिका की परिभाषा को निम्न रूप में व्यक्त किया है—

मध्यिका, श्रेणी में उस पद का मूल्य है जो कि श्रेणी को दो बराबर भागों में बाँटता है जिसमें से एक भाग में मध्यिका से कम और दूसरे भाग में मध्यिका से अधिक मूल्य होते हैं।

मध्यिका के अर्थ को समझने के बाद मध्यिका ज्ञात करने की विधियों का ज्ञान प्राप्त करेंगे।

21.6 मध्यिका ज्ञात करने की विधियाँ

मध्यिका ज्ञात करने की अलग अलग विधियां हैं जो निम्नवत हैं —

(ए) व्यक्तिगत श्रेणी में मध्यिका — व्यक्तिगत श्रेणी में मध्यिका निकालने के लिये दो सूत्रों का प्रयोग करते हैं मध्यिका को Me से प्रदर्शित करते हैं यदि किसी श्रेणी में कुल पदों की संख्या n है तो —

(अ) यदि n एक विषम संख्या है तो

$$\text{मध्यिका (Me)} = \frac{n+1}{2} \text{ वें पद का मान}$$

(ब) यदि n एक सम संख्या है तो

$$\text{मध्यिका (Me)} = \frac{1}{2} \left[\frac{n}{2} \text{ वें पद का मान } + \left(\frac{n}{2} + 1\right) \text{ वें पद का मान}\right]$$

21.6.1 मध्यिका के गुण

मध्यिका में निम्नलिखित गुण हैं—

(1) सरलता (2) स्पष्टता (3) गुणात्मक तथ्यों के अध्ययन में सहायक (4) उचित प्रतिनिधित्व (5) सामाजिक समस्याओं जैसे — बेकारी, निर्धनता, जनसंख्या समस्या आदि के अध्ययन में भी मध्यिका का प्रयोग किया जाता है।

21.6.2 मध्यिका की विशेषताएं

मध्यिका के संबोध का ज्ञान प्राप्त करने के बाद इसकी विशेषताओं का अध्ययन करेंगे जो निम्नलिखित हैं—

(1) मध्यिका समंक श्रेणी के केन्द्र में स्थित एक विशेष पद मूल्य होता है।

(2) मध्यिका सम्पूर्ण समंक श्रेणी को दो बराबर-बराबर भागों में विभाजित करती है।

(3) मध्यिका ज्ञात करने के लिये पदों को आरोही व अवरोही क्रम में सजाना पड़ता है।

(4) मध्यिका को प्राय: पद मूल्यों की क्रमिक वृद्धि ही आधारित किया जाता है।

(5) मध्यिका बिल्कुल बीच वाला पद नहीं होता है। बल्कि उस पद का मूल्य होता है।

21.7 मध्यिका के दोष

मध्यिका के निम्नांकित दोष हैं—

(1) बीजगणित तरीकों से मध्यांक ज्ञात नहीं किया जा सकता अर्थात यदि दो या दो से अधिक श्रेणियों का केवल मध्यांक अलग-अलग ज्ञात हो तो उनका सम्मिलित मध्यांक ज्ञात नहीं किया जा सकता।

(2) समान्तर माध्य की भांति मध्यांक भी कभी कभी वास्तविक स्थिति का निरूपण नहीं करता है अर्थात् मध्यांक किसी भी इकाई पर पूर्ण रूप से लागू न हो क्योंकि श्रेणी में मध्यांक की स्थिति एक ऐसे स्थान पर हो सकती है जहां पर बहुत कम या कोई भी पद उससे मिलता जुलता न हो।

(3) उचित प्रतिनिधित्व की कमी, (4) अवास्तविकता ।

21.8 'बहुलक' : अर्थ व परिभाषा

बहुलक या भूयिष्ठक के अंग्रेजी शब्द 'Mode' की उत्पत्ति फ्रेंच शब्द 'La Mode' से मानी जाती है जिसका अर्थ है — सर्वाधिक फैशन अथवा 'प्रचलन'। भूयिष्ठक या बहुलक किसी श्रेणी का वह मूल्य होता है जो समंक माला में सबसे अधिक बार आता हो।

गिल्फोर्ड (1956) के अनुसार बहुलक, माप के पैमाने पर वह बिन्दु है जहां कि किसी वितरण में सर्वाधिक आवृत्ति होती है।

अर्थात् हम कह सकते हैं कि बहुलक किसी भी वितरण का वह बिन्दु है जो सबसे अधिक बार आता है बहुलक कहा जाता है।

उदाहरणार्थ — एक परिवार के सदस्यों की संख्या 6, 5, 5, 3, 1 है इसमें 5 अंक दो बार आया है अर्थात् 5 की आवृत्ति सर्वाधिक है इसलिये बहुलक '5' है।

21.8.1 बहुलक की विशेषताएं — बहुलक की परिभाषा को समझने के बाद अब हम बहुलक की विशेषओं का अध्ययन करेंगे।

(1) बहुलक समंक माला का वह मूल्य होता है जो उस समंक माला में सर्वाधिक बार आता है।

(2) यह आवृत्ति पर निर्भर करता है।

(3) इसकी गणना विधि सरल है।

(4) यह समग्र का प्रतिनिधित्व करता है।

(5) बहुलक एक श्रेणी के सभी पदों पर आधारित होता है। अत: उस पर पद माला की बहुत छोटी या बहुत बड़ी संख्या का कोई प्रभाव नहीं पड़ता ।

(6) एक पदमाला में अधिकतम समान आवृत्ति वाले कई पद मूल्य होने पर बहुलक ज्ञात करना कठिन होता है। ऐसी स्थिति में एक से अधिक बहुलक का उल्लेख करना पड़ता है। जैसे 1, 3, 4, 4, 6, 7, 10, 7, 4, 7, में दो बहुलक 4 तथा 7 है।

21.8.2 बहुलक का निर्धारण — विभिन्न श्रेणियों में बहुलक का निर्धारण निम्न प्रकार से होता है। बहुलक को 'Mo' से प्रदर्शित करते हैं।

(ए) सरल श्रेणी में बहुलक का निर्धारण — सरल श्रेणी का बहुलक निकालना अति सरल है क्योंकि इसके लिये केवल विभिन्न पदों के मान के अनुसार पदों को क्रम से लगा लेना होता है और जिस पद की बारम्बारता या आवृत्ति सबसे अधिक होती है वही बहुलक कहलाता है।

उदाहरणार्थ — निम्न पद मूल्यों से बहुलक ज्ञात कीजिये —

3, 6, 5, 4, 2, 5, 7, 5, 8, 3, 2, 7, 6, 5, 4, 5, 8, 5, 6, 4

हल — पद मूल्यों को क्रम से रखने पर स्थिति इस प्रकार है।

2, 2, 3, 3, 4, 4, 4, 5, 5, 5, 5, 5, 5, 6, 6, 6, 7, 7, 8, 8

इसमें 5 अंक सर्वाधिक बार आया है। अत: इन पद मूल्यों का बहुलक 5 होगा। उत्तर

(बी) खण्डित श्रेणी का बहुलक — खंडित श्रेणी में बहुलक को 2 विधियों द्वारा हल करते हैं—

(1) निरीक्षण विधि द्वारा (2) समूहीकरण विधि द्वारा ।

(1) निरीक्षण विधि — इसमें आवृत्तियों पर नजर डालकर यह देख लिया जाता है कि कौन सी आवृत्ति सबसे अधिक है उस सर्वाधिक आवृत्ति का जो मूल्य होता है वही बहुलक कहलाता है।

(2) समूहीकरण विधि — समूहीकरण विधि को लागू करते हुये खंडित श्रेणी का बहुलक निकालने के लिए सबसे पहले पदों को एक क्रम में लगा लिया जाता है, उसके पश्चात् इनके सम्मुख आवृत्तियां लिख दी जाती है। पहले कालम (खानों) में आवृत्ति लिखते हैं। दूसरे कालम में प्रारम्भ से दो-दो आवृत्तियों का योग करके लिख देते हैं। तीसरे कालम में पहली आवृत्ति को छोड़कर उसके बाद की दो-दो आवृत्तियों को जोड़कर लिख देते हैं। चौथे कालम में शुरू की तीन-तीन आवृत्तियों का योग करके व पांचवें कालम में प्रारम्भ की आवृत्ति को छोड़कर उसके बाद की तीन -तीन आवृत्तियों का योग करके लिख लेते हैं जबकि छठें कालम में प्रारम्भ की दो आवृत्तियों को छोड़कर उसके बाद की तीन-तीन आवृत्तियों को जोड़कर लिख लेते हैं।

तत्पश्चात् विश्लेषण करते समय कालम न.1 से कालम नं. 6 तक की आवृत्तियों को ध्यान में रखना होता है। कालम नं. 1, 2, 3, 4, 5 व 6 में से अधिकतम आवृत्ति वाले के सामने चिन्ह बनाते जाते हैं बाद में इन चिन्हों को जोड़ा जाता है। इस प्रकार कालम नं. 7 में जिस आवृत्ति के सामने सबसे अधिक निशान होंगे उसका जो पद मूल्य या मान होगा वही हमारा बहुलक होगा ।

उदाहरणार्थ —

पदों का मान	आवृत्ति
5	1
9	7
13	11
17	5
7	2
11	9
19	4
15	8

इसमें निरीक्षण विधि व समूहीकरण विधि द्वारा बहुलक ज्ञात कीजिये।

उत्तर — निरीक्षण विधि द्वारा —

पदों का मान	आवृत्ति
5	1
9	7
<u>13</u>	<u>11</u>
17	5
7	2
11	9
19	4
15	8

निरीक्षण से स्पष्ट है कि सर्वाधिक आवृत्ति 11 है अत: 11 आवृत्ति का पद मूल्य 13 है

अत: निरीक्षण विधि से बहुलक Mo = 13 होगा   उत्तर

समूहीकरण विधि द्वारा बहुलक —

(1) समूहन के लिये 7 कालम की एक सारणी बना लेते हैं:

(2) पद मूल्यों को क्रम में रखकर उसके आगे उनकी आवृत्तियां लिख देते हैं इस आवृत्ति को कालम नं. 1 मान लेते हैं।

(3) दो-दो आवृत्तियों को लेकर उनका योग कालम नं. 2 में लिखते हैं।

(4) प्रथम आवृत्ति को छोड़कर उसके बाद की दो-दो आवृत्तियों को लेकर उनका योग कालम नं. 3 में लिखते हैं।

(5) प्रारम्भ से तीन -तीन आवृत्तियों को लेकर उनका योग करके कालम नं. 4 में लिखते हैं।

(6) प्रथम आवृत्ति को छोड़कर तीन-तीन आवृत्तियों को लेकर उनका योग करके कालम नं. 5 में लिखते हैं।

(7) प्रथम दो आवृत्तियों को छोड़कर उसके बाद की तीन-तीन आवृत्तियां को लेकर उनका योग करके कालम नं. 6 में लिखते हैं।

अंत में कालम सं. 7 में चिन्ह बना कर जोड़ लेते हैं सबसे अधिक चिन्ह वाले के सामने पद मूल्य को ही बहुलक कहा जाता है।

पदों का मान	कालम सं. 1 आवृत्ति (f)	कालम सं. 2	कालम सं. 3	कालम सं. 4	कालम सं. 5	कालम सं. 6	कालम सं. 7 चिन्ह
5	1	} 3					
7	2		} 9	} 10			
9	7	} 16			} 18		| = 1
11	9		} 20			} 27	||| = 3
13	11	} 19		} 28			卌| = 6
15	8		} 13		} 24		||| = 3
17	5	} 9				} 17	| = 1
19	4						

कालम नं. 7 में सर्वाधिक चिन्ह 6 आवृत्ति 11 के हैं आवृत्ति 11 का पद मूल्य 13 है।

अत: बहुलक Mo = 13 होगा । उत्तर

समान्तर माध्य,
मध्यिका तथा बहुलक

(सी) अखंडित या सतत या अविच्छिन्न श्रेणी में बहुलक — अविच्छिन्न श्रेणी में दो विधियों द्वारा बहुलक निर्धारित किया जाता है-

(1) निरीक्षण विधि द्वारा (2) समूहन विधि द्वारा ।

बहुलक अस्पष्ट होने पर निरीक्षण द्वारा — जब आवृत्तियां बढ़ते क्रम में हों और मध्य में जाकर गिरने लगती हैं तो सबसे बड़ी आवृत्ति वाला वर्ग बहुलक वर्ग कहलायेगा।

बहुलक वर्ग का निर्धारण करने के बाद निम्न सूत्र से बहुलक निकाला जायेगा—

बहुलक सूत्र —

$$(Mo) = 4 + \frac{f_1 - f_0}{2f_1 - f_0 - f_2} \times i$$

∴ यदि बहुलक वर्ग की आवृत्ति की तुलना में पूर्व या बाद वाले वर्ग की आवृत्ति बड़ी हो तो निम्न वैकल्पिक सूत्र का प्रयोग किया जायेगा।

$$Mo =: L_1 + \frac{f_2}{f_0 + f_2} \times i$$

यदि प्रश्न अवरोही क्रम में हो तो उपरोक्त सूत्र में L_1 के स्थान पर L_2 लिखकर ऋणात्मक चिन्ह लगाया जायेगा।

$$Mo = L_2 + \frac{f_2 - f_0}{2f_1 - f_0 - f_2} \times i$$

वैकल्पिक सूत्र —

$$Mo = L_2 - \frac{f_2}{f_0 + f_2} \times i$$

इन सूत्रों में

Mo = बहुलक

L_1 = बहुलक वर्ग की निम्न सीमा

L_2 = बहुलक वर्ग की उच्च सीमा

f_1 = बहुलक वर्ग की आवृत्ति

f_2 = बहुलक वर्ग से बाद वाले वर्ग की आवृत्ति

$i = L_2 - L_1$ (उच्च सीमा - निम्न सीमा)

f_0 = बहुलक वर्ग से पहले वाले वर्ग की आवृत्ति

उदाहरणार्थ — निम्न श्रेणी में बहुलक मजदूरी ज्ञात कीजिये।

मजदूरी (रूपयों में)	मजदूरों की संख्या
0 – 10	3
10 – 20	8
20 – 30	10
30 – 40	15
40 – 50	12
50 – 60	7
60 – 70	5

निरीक्षण व समूहीकरण विधि द्वारा बहुलक ज्ञात कीजिये।

हल — निरीक्षण विधि द्वारा बहुलक ज्ञात करना —

मजदूरी (रूपयों में)	मजदूरी की संख्या (f)
0 - 10	3
10 - 20	8
20 - 30	10 f_0
(30 - 40)	15 f_1
40 - 50	12 f_2
50 - 60	7
60 - 70	5

निरीक्षण से स्पष्ट है कि सबसे अधिक आवृत्ति 15 है। अतः बहुलक वर्ग (30 – 40) हुआ।

सूत्र —

$$Mo = L_1 + \frac{f_1 - f_0}{2f_1 - f_0 - f_2} \times i$$

$$Mo = 30 + \frac{15 - 10}{2 \times 15 - 10 - 12} \times 10 \qquad L_1 = 30$$

$$Mo = 30 + \frac{5}{8} \times 10$$

$$Mo = 30 + 6.25$$

$$Mo = 36.25$$

$i = 10$

$F_1 = 15$

$F_0 = 10$

$F_2 = 12$

बहुलक मजदूरी = 36.25 रूपये हैं।

समूहीकरण द्वारा बहुलक ज्ञात करना —

मजदूरी (रू.) (x)	मजदूरों की सं0 (f) (i)	कालम सं. (ii)	कालम सं. (iii)	कालम सं. (iv)	कालम सं. (v)	कालम सं. (vi)	कालम सं. (vii)
0 - 10	3	} 11					
10 - 20	8		} 18	} 21			
20 - 30	10 f_0	} 25			} 33		|| = 2
[30-40]	15 } f_1		} 27			} 37	卌| = 6
40 - 50	12 f_2	} 19		} 34			||| = 3
50 - 60	7		} 12		} 24		| = 1
60 - 70	5						

इस तालिका से स्पष्ट है कि अधिकतम आवृत्ति 6 है उसका वर्ग (30 - 40) ही बहुलक वर्ग होगा।

$L_1 = 30,\ L_2 = 40,\ i = 10,\ f_0 = 10,\ f_1 = 15,\ f_2 = 12$

सूत्र — बहुलक

$$Mo = L_1 + \frac{f_1 - f_0}{2f_1 - f_0 - f_2} \times i$$

$$Mo = 30 + \frac{15 - 10}{2 \times 15 - 10 - 12} \times 10$$

$$Mo = 30 + \frac{50}{8}$$

$$Mo = 30 + 6.25$$

$$Mo = 36.25$$

बहुलक मजदूरी = 36.25 रूपये होंगी   उत्तर

21.8.3 बहुलक के गुण

बहुलक के निम्नलिखित गुण हैं:-

(1) सर्वाधिक प्रतिनिधित्व श्रेणी (2) लोकप्रिय (3) चरम मूल्यों का न्यूनतम प्रभाव

(4) बड़े पैमाने के उत्पादन में महत्वपूर्ण।

21.8.4 बहुलक के दोष

गुणों के साथ इसके निम्रांकित दोष भी हैं ।

(1) यह सभी मूल्यों पर आधारित नहीं है। (2) इससे बीज गणितीय विवेचन असंभव है।

(3) निश्चितता का अभाव है। (4) इससे अनुपयुक्त माप होती है।

बहुलक में उपर्युक्त कमियां होते हुये भी विभिन्न क्षेत्रों में आज इसका प्रयोग बढ़ता ही जा रहा है। जैसे - तापमान, वर्षा, तथा वायुगति के आधार पर स्थानों का निर्धारण करने में बहुलक का प्रयोग किया जाता है।

21.9 सारांश

इस इकाई में हमने समान्तर माध्य की विविध विद्वानों द्वारा प्रस्तुत परिभाषाओं का ज्ञान एवं इसकी विशेषताओं, गुण व दोषों का अध्ययन किया है इसके अध्ययन के पश्चात् मध्यिका के सम्बोध को जानने के साथ-साथ विविध सामाजिक विद्वानों द्वारा प्रस्तुत परिभाषा का अध्ययन किया है। मध्यिका के गुण-दोषों व इसे निकालने की विधि का भी सुव्यवस्थित उदाहरण सहित अध्ययन किया है। इसी क्रम में अंत में बहुलक की परिभाषा, इसके गुण दोषों के साथ-साथ इसे निकालने की विधि का अध्ययन किया है। इस प्रकार अब हमने समान्तर माध्य, मध्यिका व बहुलक से सम्बन्धित विविध पहलुओं का व्यवस्थित ज्ञान प्राप्त किया है व अपने ज्ञान भण्डार में आवश्यक वृद्धि भी किया है।

21.10 बोध प्रश्न

(क) वस्तुनिष्ठ बोधात्मक प्रश्न

1. जब मूल्य बढ़ते हुये क्रम में हो तो श्रेणी किस क्रम की होती है:

(अ) आरोही श्रेणी (ब) अवरोही श्रेणी (स) सतत् श्रेणी (द) अखण्डित श्रेणी

2. दी हुयी समंकमाला में ऐसा मूल्य जो सम्पूर्ण समंकों का प्रतिनिधित्व करता है सांख्यिकीय भाषा में उसे क्या कहते हैं?

(अ) बहुलक (ब) माध्य (स) मध्यिका (द) इनमें से कोई नहीं ।

3. जब मध्यिका व समान्तर माध्य के आधार पर बहुलक का निर्धारण करना हो तो आप कौन सा सूत्र काम में लेंगे?

(अ) Mo = 3 Me - 2 M

(ब) $\frac{N+1}{2}$

(स) $\frac{N}{2}$

(द) $Z = L_2 - \frac{f_2}{f_0 + f_2} \times i$

4. $Mo = L_1 + \frac{f_1 - f_0}{2f_1 - f_0 - f_2} \times i$ सूत्र किस विधि में काम आता है।

(अ) बहुलक गणना में (ब) समान्तर माध्य गणना में (स) मध्यिका गणना में

(द) इनमें से कोई नहीं।

5. 'Mode' शब्द की उत्पत्ति किस भाषा से मानी जाती है:

(अ) फ्रेंच (ब) लैटिन (स) अंग्रेजी (द) कोई नहीं।

(ख) लघु उत्तरीय प्रश्न

प्र. 1 समान्तर माध्य से आप क्या समझते हैं?

प्र. 2 मध्यिका की परिभाषा व दो गुण लिखिये ?

प्र. 3 बहुलक क्या है, इसे निकालने की विधि बताइये?

प्र. 4 जब पदों की संख्या सम हो तो मध्यिका निकालने का क्या सूत्र होता है?

प्र. 5 माध्य, मध्यिका व बहुलक से सम्बन्धित सूत्र लिखिये?

(ग) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्र. 1 समान्तर माध्य की विशेषताओं व इसकी कमियों का उल्लेख कीजिये?

प्र. 2 बहुलक निकालने की विधि का उल्लेख करते हुये इसे उदाहरण द्वारा समझाइये?

21.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

उ. 1 (अ) आरोही श्रेणी उ. 2 (ब) माध्य उ. 3 (अ) Mo = 3 Me-2M

उ. 4 (अ) बहुलक गणना में। उ. 5 (अ) फ्रेंच।

इकाई 22 माध्य विचलन व मानक विचलन

इकाई की रूपरेखा

22.0 उद्देश्य

22.1 प्रस्तावना

22.2 माध्य विचलन : अर्थ व विशेषताएं

22.3 माध्य विचलन की विशेषताएँ

22.4 माध्य विचलन की गणना

22.5 माध्य विचलन के गुण एवं दोष

22.6 मानक विचलन या प्रमाप विचलन : अर्थ व परिभाषा

22.7 मानक विचलन की गणना

22.8 मानक विचलन के गुण व विशेषताएँ

22.9 सारांश

22.10 बोध प्रश्न

22.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

22.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :-

- माध्य विचलन के अर्थ, विशेषताओं तथा गुण एवं दोषों का उल्लेख कर सकेंगे।
- मानक विचलन के अर्थ, इसकी गणना तथा इसके गुण एवं विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगें
- मानक विचलन प्राप्त करने के तरीकों का विश्लेषण कर सकेंगे

22.1 प्रस्तावना

इस खंड के इकाई-चार में हम सभी माध्य विचलन एवं मानक विचलन के विविध पक्षों की व्यापक जानकारी प्राप्त करेंगे। इकाई के प्रारंभ में माध्य विचलन के सम्बोध को स्पष्टतय: जानने के बाद इसकी विशेषताओं की ओर ध्यान आकृष्ट करेंगे। तदुपरांत माध्य विचलन की गणना के लिए उपयुक्त सूत्रों का ज्ञान भी प्राप्त करेंगे। इसी श्रृंखला में इसके गुण एवं दोषों का भी अध्ययन करेंगे। वास्वत में माध्य विचलन, माध्य से प्रत्येक इकाई के विचलन का समान्तर माध्य होता है। इस प्रकार माध्य विचलन स्थिति पर निर्भर न होकर प्रत्येक इकाई के माध्य से विचलन पर आधारित होता है तथा इकाई के आधार के साथ - साथ उनकी संख्याओं से भी प्रभावित होता है। जबकि माध्य विचलन के बाद मानक विचलन के सम्बोध को जानने के साथ-साथ इसकी विशेषताओं का भी अध्ययन करेंगे। इसके बाद हम मानक विचलन के गुण एवं दोषों का ज्ञान प्राप्त करते हुये इस निकालने की विधियों का उदाहरण सहित व्यवस्थित अध्ययन करेंगे।

मानव विचलन, आंकड़ों के किसी समूह के पदों तथा समान्तर माध्य से विचलन के वर्गों के मध्यमान के धनात्मक वर्गमूल को मानक विचलन कहते हैं। इसे 'σ' सिग्मा से प्रदर्शित करते हैं। जबकि माध्य विचलन को डेल्टा 'δ' से प्रदर्शित करते हैं।

माध्य विचलन व मानक विचलन

22.2 माध्य विचलन : अर्थ व विशेषताएं

इस इकाई के अन्तर्गत हम सर्वप्रथम माध्य विचलन के बारे में अध्ययन करेंगे।

माध्य विचलन, माध्य से प्रत्येक इकाई के विचलन का समान्तर माध्य होता है। इस प्रकार माध्य विचलन स्थिति पर निर्भर न होकर प्रत्येक इकाई के माध्य से विचलन पर आधारित होता है तथा इकाई के आधार के साथ-साथ उनकी संख्याओं से भी प्रभावित होता है। इसकी प्रमुख विशेताएं निम्नांकित है।

22.3 माध्य विचलन की विशेषताएँ

(i) यह गणितीय विधि से प्राप्त किया जाता है तथा समूह की प्रत्येक इकाई को लेकर निकाला जाता है।

(ii) विचलन माध्य से निकाला जाता है चाहे वह माध्य समान्तर माध्य, मध्यिका या बहुलक हों। यदि विचलन समान्तर माध्य से ज्ञात किया गया है। तो उसे समान्तर माध्य से माध्य विचलन कहते हैं। उसी प्रकार यदि विचलन मध्यिका से ज्ञात किया गया है तो उसे मध्यिका से माध्य विचलन तथा यदि विचलन बुहलक से निकाला गया है तो उसे बहुलक से माध्य विचलन कहते हैं।

(iii) विचलनों का माध्य प्राय: समान्तर माध्य से ही निकाला जाता है।

(iv) माध्य विचलन प्रतीक रूप में ग्रीक अक्षर 'डेल्टा' (δ) से प्रकट किया जाता है।

22.4 माध्य विचलन की गणना

माध्य विचलन की गणना निम्नलिखित सूत्रों द्वारा दी जाती है—

(a) यदि सरल श्रेणी का माध्य विचलन निकालना है तो माध्य विचलन का सूत्र इस प्रकार होगा—

सूत्र

$$\text{माध्य विचलन} \quad \delta = \frac{\Sigma d}{n}$$

संकेत $\therefore$ δ = माध्य विचलन

$\therefore$ Σd = माध्य से पद मूल्यों के विचलनों का योग

$\therefore$ n = पदों का कुल योग

(b) यदि खंडित या अखंडित श्रेणी का माध्य निवचलन निकालना है तो निम्न सूत्र का प्रयोग करते हैं —

I
$$\delta = \frac{\Sigma f.d}{n}$$

जहाँ $\therefore$ δ = माध्य विचलन

$\therefore$ n = आवृत्तियों का कुल योग

$\therefore$ Σf.d = पदों की आवृत्ति व विचलन के गुणनफलों का योग

$\therefore$ f.d = आवृत्ति व विचलन का गुणनफल

II माध्य विचलन का गुणांक = $\frac{\text{माध्य विचलन}}{\text{समान्तर माध्य. मध्यिका या बहुलक}}$

$$\text{Coeff of M.D.} = \frac{MD}{\text{Mean, mode or median}}$$

उदाहरण प्र. 1 — एक विद्यालय के चतुर्थ श्रेणी के कुछ कर्मचारी की मजदूरी दी गयी है। समान्तर माध्य, मध्यिका व बहुलक को अलग-अलग आधार मानकर माध्य विचलन निकालिये ?

मजदूरी (रुपयों) — 120, 135, 142, 135, 140, 155, 135, 125, 146, 160 150.

उत्तर — (a) समान्तर माध्य को आधार मानकर —

मजदूरी का योग = (Σx) = 120 + 135 + 142 + 135 + 140 + 155 + 135 + 125 + 146 + 160 + 150

$$\Sigma x = 1551,$$

$$n = 11$$

समान्तर माध्य $(M) = \frac{\Sigma x}{n}$

$$\therefore M = \frac{1551}{11}$$

M = 141 रुपये

अब समान्तर माध्य M - 141 को ध्यान में रखते हये माध्य विचलन ज्ञात करेंगे।

मजदूरी (रु० में) (X)	समान्तर माध्य (M)	d = (x – M)
120	141	120 –141 = 21
135	141	135 – 141 = 6
142	141	142 – 141 = 1
135	141	135 – 141 = 6
148	141	148 – 141 = 7
155	141	155 – 141 = 14
135	141	135 – 141 = 6
125	141	125 – 141 = 16
146	141	146 – 141 = 5
160	141	160 – 141 = 19
150	141	150 – 141 = 9
n = 11		Σd = 110

नोट : - "माध्य विचलन की गणना में + या - का कोई ध्यान नहीं रखा जात है।"

∴ माध्य विलचन or $\boxed{\delta = \frac{\Sigma d}{n}}$

$\delta = \delta = \frac{110}{11} = 10$ रुपये

$\delta = 10$ रुपये

(ii) मध्यमिका को आधार बनाकर माध्य विचलन निकालना :- मजदूरी को आरोही क्रम में लगाने पर—

120, 125, 135, 135, 135, 142, 146, 148, 150, 155, 160

n = 11

सूत्र मध्यिका $\boxed{Me = \left(\frac{n+1}{2}\right)}$ वें पद का मान

$Me = \left(\frac{11+1}{2}\right)$ वें पद का मान

Me = 142

∴ आरोही क्रम में 6वां पद 142 है।

अत: मध्यिका Me = 142 रुपये हुआ।

मजदूरी (रु० में) (X)	मध्यिका (Me)	विचलन d = (x – Me)
120	142	120 –142 = 21
125	142	125 – 142 = 17
135	142	135 – 142 = 7
135	142	135 – 142 = 7
135	142	135 – 142 = 7
142	142	142 – 142 = 0
146	142	146 – 142 = 4
148	142	148 – 142 = 6
150	142	150 – 142 = 8
155	142	155 – 142 = 13
160	142	150 – 142 = 8
n = 11		Σd = 109

सूत्र = माध्य विचलन $(\delta) = \frac{\Sigma d}{n}$

$\delta = \delta = \frac{109}{11}$

δ = 9.91 रुपये

माध्य विचलन = 9.91 रूपये

(iii) बहुलक को आधार मानकर विचलन ज्ञात करना :—

मूल्यों को एक क्रम में रखने पर —

120, 125, 135, 135, 135, 142, 146, 148, 150, 155, 160

∴ इस क्रम में 135 सबसे अधिक बार आया है। इसकी आवृत्ति तीन बार है जो सर्वाधिक है अत: यही बहुलक होगा।

∴ बहुलक (Mo) = 135 रुपये

मजदूरी (रु० में) (X)	बहुलक (Mo)	विचलन d = (x – Mo)
120	135	120 –135 = 15
125	135	125 – 135 = 10
135	135	135 – 135 = 0
135	135	135 – 135 = 0
135	135	135 – 135 = 0
142	135	142 – 135 = 7
146	135	146 – 135 = 11
148	135	148 – 135 = 13
150	135	150 – 135 = 15
155	135	155 – 135 = 20
160	135	160 – 135 = 25
n = 11		Σd = 116

∴ माध्य विचलन $\delta = \frac{\Sigma d}{n}$

$$\delta = \frac{116}{11}$$

$$\delta = 10.54$$

∴ माध्य विचलन $\delta = 10.54$ रुपये उत्तर

(B) खण्डित श्रेणी में माध्य विचलन निकालना

पद — (i) सर्वप्रथम माध्य (समान्तर, माध्य, मध्यिका या बुहलक) की गणना करती है।

(ii) फिर प्रत्येक पद मूल्य से माध्य का विचलन (d) निकालना पड़ता है।

(iii) विचलन (d) व आकृति (f) का गुणनफल ज्ञात करना

(iv) अन्त में Σfd निकालना।

(v) n ज्ञात करना।

∴ माध्य सूत्र विचलन $\boxed{\delta = \frac{\Sigma d}{n}}$

उदाहरण — समाजशास्त्र विषय में एम० ए० के कुछ छात्रों ने निम्न अंक प्राप्त किये हैं।

प्राप्तांक — 12, 25, 27, 30, 35, 15, 40, 45, 50, 35

छात्रों का सं० — 4, 3, 2, 2, 5, 8, 9, 6, 7, 4

आप माध्य विचलन, समान्तर माध्य, मध्यिका व बहुलक को आधार मानकर निकालिये ?

उत्तर — (i) समान्तर माध्य को आधार मानकर माध्य विचलन —

प्राप्तांक (X)	छात्रों की सं० (f)	गुणनफल f × x
12	4	12 × 4 = 48
25	3	25 × 3 = 75
27	2	27 × 2 = 54
30	2	30 × 2 = 60
35	5	35 × 5 = 175
15	8	15 × 8 = 120
40	9	40 × 9 = 360
45	6	45 × 6 = 270
50	7	50 × 7 = 350
35	4	35 × 4 = 140
	n = 50	Σf.x = 1652

समान्तर माध्य $M = \frac{\Sigma f.x}{n}$

$M = \frac{1652}{50}$

$M = 33.04$ (लगभग)

समान्तर माध्य = 33 (लगभग)

प्राप्तांक (X)	छात्रों की सं० (f)	विचलन d = (x-M)	f × d
12	4	21	84
25	3	8	24
27	2	6	12
30	2	3	6
35	5	2	10
15	8	18	144
40	9	7	163
45	6	12	72
50	7	17	119
35	4	2	8
	n = 50		Σf.d = 542

माध्य विचलन $(\delta) = \frac{\Sigma f.d}{n}$

$$\delta = \frac{542}{50}$$

$$\delta = 10.84$$

∴ माध्य विचलन = 10.84 है। उत्तर

(ii) मध्यिका को आधार मानकर माध्य विचलन निकालना —

प्राप्तांक (X)	छात्रों की सं० (f)	संचयी बारम्बारता
12	4	4
25	3	7
27	2	9
30	2	11
35	5	16
15	8	24
40	9	33
45	6	39
50	7	46
35	4	50
	n = 50	Σf.x = 1652

$\therefore$ मध्यिका (Me) $= \left(\frac{n+1}{2}\right)$ वें पद का नाम

$Me = \frac{50+1}{2}$ वे पद का मान

$Me = 25.5$ वे पद का नाम

चूंकि 25.5वां पद संचयी आवृत्ति के 33 वाले पद में आता है। 33 वाले पद का मूल्य 40 है।
अत: मध्यिका Me = 40 है।

प्राप्तांक (X)	छात्रों की सं० (f)	विचलन d = (x × Me)	F × d
12	4	28	112
25	3	15	45
27	2	13	26
30	2	10	20
35	5	5	25
15	8	25	200
40	9	0	0
45	6	5	30
50	7	10	70
35	4	5	20
	n = 50		Σf.d = 548

माध्य विचलन $(\delta) = \frac{\Sigma f.d}{n}$

$\therefore \quad \delta = \frac{548}{50}$

$\delta = 10.96$

माध्य विचलन = 10.96 उत्तर

(C) **अखंडित या सतत श्रेणी में माध्य विचलन निकालना** —इसे उदाहरण द्वारा स्पष्ट करते हैं—

उदाहरण — नीचे दिये आंकड़ो का माध्यविचलन, समान्तर माध्य, मध्यिका व बहुलक को आधार मानकर ज्ञात कीजिए।

वर्गान्तर—	0-10	10—20	20-30	30-40	40-50	50-60	60-70
आवृत्ति—	4,	8,	5,	9,	7,	1,	6

हल — (i) समान्तर माध्य को आधार मानकर माध्य विचलन ज्ञात करना —

वर्गान्तर	आवृत्ति (f)	वर्गान्तर मध्यमान (X)	F × X
0—10	4	5	20
10—20	8	15	120
20—30	5	25	125
30—40	9	35	315
40—50	7	45	315
50—60	1	55	55
60—70	6	65	390
	n = 40		Σf.d = 1340

समान्तर माध्य $(m) = \frac{\Sigma f.x}{n}$

$$m = \frac{1340}{40}$$

$$m = 33.5$$

समान्तर माध्य (m) = 33.5

33.5 को ही आधार मानकर माध्यविचलन की गणना करेंगे—

वर्गान्तर	आवृत्ति (f)	वर्गान्तर मध्यमान (X)	विचलन d = (X-M)	F × d
0—10	4	5	28.5	114
10—20	8	15	18.5	148
20—30	5	25	8.5	42.5
30—40	9	35	1.5	13.5
40—50	7	45	11.5	80.5
50—60	1	55	21.5	21.5
60—70	6	65	31.5	189.0
	n = 40			Σf.d = 609

माध्य विचलन $(\delta) = \frac{\Sigma f.d}{n}$

$\therefore \quad \delta = \frac{609}{40}$

$\therefore \quad \delta = 15.22$

माध्य विचलन $\delta = 15.22$ उत्तर

(ii) **मध्यिका को आधार मानकर माध्यविचलन निकालना**

वर्गान्तर	आवृत्ति (f)	संचयी आवृत्ति
0—10	4	4
10—20	8	12
20—30	5	17
30—40	9	26
40—50	7	33
50—60	1	34
60—70	6	40
	n = 40	

सूत्र — मध्यिका $\boxed{Me = \frac{n}{2} \text{वें पद का मान}}$

$Me = \frac{40}{2}$ वें पद का मान

$Me = 20$ वे पद का मान

20 वें पद की स्थिति संचयी आवृत्ति में 26 में है जिसका वर्गान्तर 30-40 है। वही मध्यिका वर्गान्तर है।

$$\therefore \quad Me = L_1 + \frac{L_2 - L_1}{f}\left(\frac{n}{2} - c\right)$$

$L_1 = 30,\ L_2 = 40,\ f = 9,\ C = 17,\ \frac{n}{2} = 20$

$$Me = 30 + \frac{40\text{-}30}{9}\ (20 - 17)$$

$$Me = 30 + \frac{10}{9} \times 3$$

$$Me = 30 + \frac{10}{3}$$

$$Me = 30 + 3.33$$

मध्यिका (Me) = 33.33

वर्गान्तर	आवृत्ति (f)	वर्गान्तर मध्यमान (X)	विचलन d = (X-Me)	F × d
0—10	4	5	28.33	113.32
10—20	8	15	18.33	146.64
20—30	5	25	8.33	41.65
30—40	9	35	1.67	15.03
40—50	7	45	11.67	81.69
50—60	1	55	21.67	21.57
60—70	6	65	31.67	190.02
	n = 40			Σf.d = 610.02

∴ माध्य विचलन $x\left((\delta) = \frac{\Sigma f.d}{n}\right)$

$$\therefore \quad \delta = \frac{610.02}{40}$$

$$\therefore \quad \delta = 15.25$$

माध्य विचलन = 15.25 है। उत्तर

(iii) **बहुलक को आधार मानकर माध्य विचलन निकालना** — निरीक्षण विधि से हमें ज्ञात होता है कि आवृत्तियों में 9 सबसे अधिक आवृत्ति है। अत: इसका वर्गान्तर (30-40) ही बहुलक वर्गान्तर होगा।

$$Mo = L_1 + \frac{f_1 - f_0}{2f_1 - f_0 - f_2} xi$$

$$L_1 = 30,$$
$$i = 40 - 30 = 10$$
$$f_0 = 5, \quad f_1 = 9, \quad f_2 = 7$$

$$\therefore \quad Mo = 30 + \frac{9-5}{2 \times 9 - 5 - 7} \times 10$$

$$Mo = 30 + \frac{4}{18 - 5 - 7} \times 10$$

$$Mo = 30 + \frac{4}{18 - 12} \times 10$$

$$Mo = 30 + \frac{4}{6} \times 10$$

$$Mo = 30 + \frac{40}{6}$$

बहुलक $Mo = 30.67$

वर्गान्तर	आवृत्ति (f)	वर्गान्तर मध्यमान (X)	विचलन d = (X-Mo)	$f \times d$
0—10	4	5	31.67	126.68
10—20	8	15	21.67	173.36
20—30	5	25	11.67	58.35
30—40	9	35	1.67	15.03
40—50	7	45	8.33	58.33
50—60	1	55	18.33	18.33
60—70	6	65	28.33	169.98
	n = 40			Σf.d = 620.04

∴ माध्य विचलन $(\delta) = \frac{\Sigma f.d}{n}$

$$\therefore \quad \delta = \frac{620.04}{40}$$

$$\therefore \quad \delta = 15.50$$

माध्य विचलन = 15.50 उत्तर

22.5 माध्य विचलन के गुण एवं दोष

इस इकाई में आपने माध्य विचलन के सम्बोध का ज्ञान प्राप्त करने के साथ-साथ इसकी विशेषताओं का अध्ययन किया है। अब इसके गुणों का ज्ञान प्राप्त करेंगे। जो निम्नलिखित हैं—

(i) इसका परिकलन सरल है।

(ii) माध्य विचलन स्पष्ट परिभाषित है।

(iii) इसमें समूह के सभी पदों को महत्व मिलता है।

इसका प्रकार के सभी माध्यविचलन के आवश्यक गुण हैं। इसके बाद इसके दोषों का भी ज्ञान प्राप्त करेंगे।

माध्य विचलन के दोषों — गुणों के साथ-साथ इसके किंचित दोष भी है जो निम्नांकित है—

(i) एक दोष यह है कि इसमें ऋण चिह्नों को गायब कर धन चिह्नों का प्रयोग किया जाता है।

(ii) वास्तव में माध्य विचलन, विचरण की उपयुक्त माप नहीं है।

22.6 मानक विचलन या प्रमाप विचलन : अर्थ व परिभाषा

आंकड़ों के किसी समूह के पदों तथा समान्तर माध्य से विचलन के वर्गों के मध्यमान के धनात्मक वर्गमूल को मानक विचलन कहते हैं। इसे 'सिग्मा' 'σ' से प्रदर्शित किया जाता है। माध्य विचलन निकालने में एक बड़ा दोष यह है कि हम विचलन के धन (+) व ऋण (—) चिन्ह पर कोई ध्यान नहीं देते हैं और विचलन को धनात्मक मान लेते हैं। मानक विचलन में इस दोष को दूर किया जाता है। विचलन के धन

(+) व ऋण (—) को समाप्त करने के लिए विचलन का वर्ग निकाल लिया जाता है और तब विचलन ज्ञात करते हैं।

22.7 मानक विचलन की गणना

मानक विचलन को ज्ञात करने के लिए हम निम्नलिखित गणना करते हैं।

(i) सर्वप्रथम हम समान्तर माध्य से प्राप्त विचलनों का वर्ग (d^2) ज्ञात करते हैं।

(ii) विचलनों के वर्गों का योग (Σd^2) ज्ञात कर लेते हैं।

(iii) इस योग को पदों की संख्या (n) से भाग देते हैं।

(iv) प्राप्त संख्या का वर्ग मूल्यज्ञात है अर्थात् $\sqrt{\frac{\Sigma d^2}{n}}$

इस प्रकार मानक विचलन का सूत्र है—

सूत्र $$\text{S.D. or } '\sigma' = \sqrt{\frac{\Sigma d^2}{n}} \qquad \text{.......... (i)}$$

या $$\sigma = \sqrt{\frac{\Sigma (x-m)^2}{n}}$$

सूत्र $\sqrt{\frac{\Sigma d^2}{n}}$ से मानक विचलन ज्ञात करने को प्रत्यक्ष विधि द्वारा मानक विचलन ज्ञात करना कहा जाता है। यदि दिये गये पदों का समान्तर माध्य पूर्ण संख्या नहीं आती तो d का मान दशमलव में आता है। अत: गणना कठिन हो जाती है। इस स्थिति से बचने के लिये हम संक्षिप्त विधि का भी प्रयोग कर सकते हैं।

(A) संक्षिप्त या लघु विधि का सूत्र —

सूत्र $$\text{S.D. or } '\sigma' = \sqrt{\frac{\Sigma (x-A)^2}{n} - \left\{\frac{\Sigma (x-A)}{n}\right\}^2}$$

जहाँ ∴ x = चल रशि या श्रेणी के विभिन्न पद का मान

∴ A = कल्पित माध्य

n = पदों की संख्या

यदि d = (x − A) लिखे तो

या

सूत्र $$\text{S.D. or } \sigma = \sqrt{\frac{\Sigma d'^2}{n} - \left(\frac{\Sigma d'}{n}\right)^2} \qquad \text{......(ii)}$$

मानक विचलन ज्ञात करने के लिए उपर्युक्त सूत्रों (i+ii) का प्रयोग सरल श्रेणी के लिए किया जाता है। अर्थात् सरल श्रेणी के लिये मानक विचलन का सूत्र —

$$\sigma = \sqrt{\frac{\Sigma(x-m)^2}{n}} \quad \text{.......(i)}$$

$$\sigma = \sqrt{\frac{\Sigma(x-A)^2}{n} - \left\{\frac{\Sigma(x-A)}{n}\right\}^2} \quad \text{.....(ii)}$$

(B) खण्डित श्रेणी में मानक विचलन का सूत्र —

(i) प्रत्यक्ष विधि — $\sigma = \sqrt{\frac{\Sigma f.d^2}{n}}$ जहाँ

∴ σ = मानक विचलन

∴ f = पदों की आवृत्तियाँ

d = (x-m) जहाँ m समान्तर माध्य है।

n = आवृत्तियों का कुल योग

(ii) लघुविधि में — $\sigma = \sqrt{\frac{\Sigma fd^{\prime 2}}{n} - \left(\frac{\Sigma f.d^{\prime}}{n}\right)^2}$

जहाँ σ = मानक विचलन

f = पदों की आवृत्तियाँ

d = (x - A) जहाँ A कल्पित माध्य है।

n = आवृत्तियों का योग

(C) सतत् या अखंडित श्रेणी मे मानक विचलन के सूत्र —

(i) प्रत्यक्ष विधि में —

सूत्र — $\sigma = \sqrt{\frac{\Sigma fd^{\prime 2}}{n}}$ जहाँ σ = मानक विचलन

f = पदों की आवृत्तियाँ

d = (x - m)

n = आवृत्तियों का योग

(ii) लघु विधि में,

सूत्र $\sigma = i\sqrt{\frac{\Sigma fd^2}{n} - \left(\frac{\Sigma f.d}{n}\right)^2}$

जहाँ i = वर्ग विस्तार, f = पदों की आवृत्तियाँ d = (x–m)।

(A) सरल श्रेणी —

उदाहरण — निम्नलिखित प्राप्तांकों का मानक विचलन ज्ञात कीजिये—

10, 12, 14, 16, 18, 20, 22, 24, 26, 28, 30, 32

उत्तर — प्रत्यक्ष विधि से —

$$\sigma = \sqrt{\frac{\Sigma d^2}{n}} \quad \text{स० मा०} = \frac{\Sigma x}{n}$$

सामान्तर माध्य $M = \frac{252}{12}$

$\therefore \; M = 21$

$n = 12$

प्राप्तांक (x)	माध्य से विचलन d = (x – m)	d^2
10	–11	121
12	– 9	81
14	– 7	49
16	– 5	25
18	– 3	9
20	–1	1
22	+ 1	1
24	+ 3	9
26	+ 5	25
28	+ 7	49
30	+ 9	81
32	+ 11	121
		$\Sigma d^2 = 572$

$\therefore$ मानक विचलन $(\sigma) = \sqrt{\frac{\Sigma d^2}{n}}$

$\sigma = \sqrt{\frac{572}{12}}$

$\sigma = r(47.66)$

$\sigma = 6.9$ (लगभग)

मानक विचलन $\sigma = 6.9$ (लगभग)

लघु विधि में,

सूत्र $\sigma = \sqrt{\frac{\Sigma d^{12}}{n} - \left(\frac{\Sigma d}{n}\right)^2}$

प्राप्तांक (x)	कल्पित माध्य A = 20 $d^1 = (x - A)$	विचलन का वर्ग d^2
10	–10	100
12	– 8	64
14	– 6	36
16	– 4	16
18	– 2	4
20	0	0
22	+ 2	4
24	+ 4	16
26	+ 6	36
28	+ 8	64
30	+ 10	100
32	+ 12	144
n = 12	$\Sigma d^1 = 12$	$\Sigma d^{1^2} = 584$

$$\therefore \text{मानक विचलन } (\sigma) = \sqrt{\frac{\Sigma d^{1^2}}{n} - \left(\frac{\Sigma d^1}{n}\right)^2}$$

$$\therefore \quad \sigma = \sqrt{\frac{584}{12} - \left(\frac{12}{12}\right)^2}$$

$$\therefore \quad \sigma = \sqrt{48.66 - (1)^2}$$

$$\therefore \quad \delta = \sqrt{47.66}$$

$$\sigma = 6.9 \text{ (लगभग)}$$

उत्तर — मानक विचलन = (6.9) लगभग

(B) खंडित श्रेणी में मानक विचलन ज्ञात करना —

उदाहरण — प्राप्तांक व आवृत्ति दी गयी है, मानक विचलन ज्ञात कीजिये ?

प्राप्तांक — 21, 20, 19, 18, 17, 16, 15, 14, 13, 12, 11, 10, 9, 8, 7, 6, 5

आवृत्ति — 1, 0, 0, 2, 1, 2, 3, 2, 3, 4, 6, 8, 7, 5, 2, 1, 3

हल — प्रत्यक्ष विधि द्वारा

सूत्र — $\sigma = \sqrt{\frac{\Sigma f.d^2}{n}}$

प्राप्तांक (x)	आवृत्ति (f)	f.x	d = x–m (M = 11)	fxd	fd^1 = fdxd
21	1	21	10	10	100
20	0	0	9	0	0
19	0	0	8	0	0
18	2	36	7	14	98
17	1	17	6	6	36
16	2	32	5	10	50
15	3	45	4	12	48
14	2	28	3	6	18
13	3	39	2	6	12
12	4	48	1	4	4
11	6	66	0	0	0
10	8	80	-1	-8	8
9	7	63	-2	–14	28
8	5	40	-3	–15	45
7	2	14	–4	–8	32
6	1	6	–5	–5	25
5	3	15	–6	–18	108
	n = 50	Σf.x=550			Σfd^2 = 612

समान्तर माध्य $(M) = \frac{\Sigma f.x}{n}$ $\Sigma f.x = 550,$

$n = 50$

$$M = \frac{559}{50} = 11$$

समान्तर माध्य $M = 11$

$\therefore$ मानक विचलन $(\sigma) = \sqrt{\frac{\Sigma fd^2}{n}}$

$$\sigma = \sqrt{\frac{612}{50}}$$

$$\sigma = \sqrt{12.4}$$

∴ मानक विचलन (σ) = 3.5 (लगभग) — उत्तर

लघु विधि द्वारा मानक विचलन —

सूत्र— $$\sigma = \sqrt{\frac{\Sigma fd^{1^2}}{n} - \left(\frac{\Sigma f.d^1}{n}\right)^2}$$

प्राप्तांक (x)	आवृत्ति (f)	A = 10 $d^1 = X - A$	fxd^1	$fd^1 xd^1 = fd^{12}$
21	1	11	11	121
20	0	10	0	0
19	0	9	0	0
18	2	8	16	128
17	1	7	7	49
16	2	6	12	72
15	3	5	15	75
14	2	4	8	32
13	3	3	9	27
12	4	2	8	16
11	6	1	6	6
10	8	0	0	0
9	7	-1	-7	7
8	5	- 2	-10	20
7	2	- 3	- 6	18
6	1	- 4	- 4	16
5	3	- 5	- 15	75
	n = 50		$\Sigma f.d^1=50$	$\Sigma fd^{12} = 662$

∴ $$\sigma = \sqrt{\frac{\Sigma fd^1}{n} - \left(\frac{\Sigma fd^1}{n}\right)^2}$$

∴ $$\sigma = \sqrt{\frac{662}{50} - \left(\frac{50}{50}\right)^2}$$

∴ $\sigma = \sqrt{13.24 - (1)^2}$

∴ $\sigma = \sqrt{12.24}$

∴ $\sigma = 3.5$ (लगभग)

∴ मानक विचलन $\sigma = 3.5$ — उत्तर

(C) अखंडित श्रेणी में मानक विचलन ज्ञात करना—

उदाहरण — निम्न सारणी में विभिन्न आयु वर्ग में जनसंख्या वितरण दिया गया है। मानक विचलन ज्ञात कीजिये ?

आयु वर्ग— 0-10, 10-20, 20-30, 30-40, 40-50, 50-60, 60-70, 70-80

संख्या — 18, 16, 15, 12, 10, 5, 2, 1,

हल — (i) प्रत्यक्ष विधि द्वारा मानक विचलन ज्ञात करना —

$$\boxed{\sigma = \sqrt{\frac{\Sigma fd^2}{n}}}$$

समान्तर मध्यमान $M = \frac{\Sigma f.x}{n}$

$M = \frac{2055}{79}$

$M = 26$

आयुवर्ग	वर्गान्तर माध्यमान (x)	आवृत्ति (f)	f. X	माध्य 26 से विचलन d = (x-M)	f.d	fd.d = fd^2
0 - 10	5	18	90	– 21	–378	7938
10 -20	15	16	240	– 11	– 176	1926
20 - 30	25	15	375	– 1	– 15	15
30 - 40	35	12	420	+ 9	108	972
40 - 50	45	10	450	+ 19	190	3610
50 - 60	55	5	275	+ 29	145	4205
60 - 70	65	2	130	+ 39	78	3042
70 - 80	75	1	75	+ 49	49	2401
		n = 79	f.x = 2055			$fd^2 = 24119$

∴ मानक विचलन $\sigma = \sqrt{\frac{\Sigma fd^2}{n}}$

∴ $\sigma = \sqrt{\frac{2411}{79}}$

∴ $\sigma = \sqrt{305.30}$

$\therefore \quad \sigma = 17.47$

$\therefore$ मानक विचलन (σ) = 17.47 — उत्तर

22.8 मानक विचलन के गुण व विशेषताएं

इसके निम्नलिखित गुण हैं :

(i) अन्य विचलनों की तुलना में यह अधिक विश्वसनीय है

(ii) यह पूर्णतया परिभाषित है।

(iii) इनमें मध्य पदों की तुलना में अन्य पदों को अधिक महत्व देते हैं।

विशेषतायें :

इसमें निम्नांकित विशेषताएं होती हैं :

(i) यह माध्य विचलन की भाँति गणितीय विधि से निकाला जाता है जिसमें समूह की प्रत्येक इकाई का महत्व होता है।

(ii) इसमें धन (+) व ऋण (—) चिन्हों का प्रयोग होता है।

(iii) समान्तर माध्य, मध्यिका या बहुलक में से किसी एक का प्रयोग किया जाता है।

(iv) इसे ग्रीक अक्षर (σ) सिग्मा से प्रदर्शित करते हैं।

22.9 सारांश

इकाई – चार के अन्तर्गत हमने माध्य विचलन तथा मानक विचलन या प्रमाप विचलन के निम्नांकित बिन्दुओं पर अध्ययन किया जो निम्न है :

- माध्यविचलन की परिभाषा
- इसकी विशेषताओं का अध्ययन,
- माध्य विचलन की गणना की विधियों का अध्ययन,
- गुण एवं दोष,
- मानक विचलन के सम्बोध का अध्ययन,
- मानक विचलन के गुण एवं विशेषताओं का अध्ययन
- मानक विचलन निकालने में प्रयुक्त विधियों का अध्ययन आदि।

इस प्रकार इस इकाई में हमने माध्य विचलन तथा मानक विचलन या प्रमाप विचलन के उपर्युक्त पहलुओं पर व्यापक अध्ययन किया है एवं अपने ज्ञान भंडार में हमने आवश्यक एवं नवीन तथ्यों की वृद्धि भी की है।

22.10 बोध प्रश्न

(क) वस्तुनिष्ठ बोधात्मक प्रश्न

(1) प्रत्यक्ष विधि द्वारा समान्तर माध्य ज्ञात करने के लिए सूत्र है—

(i) $n = \frac{\Sigma x}{\Sigma x}$ (ii) $M = \frac{\Sigma f.x}{\Sigma f}$ (iii) $M = \frac{\Sigma fx}{\Sigma x}$

(iv) $M = \frac{f\Sigma x}{\Sigma f}$

(2) मध्यिका

(i) मध्य पद की स्थान संख्या है।

(ii) आरोही व अवरोही क्रम में सजाए पदों में मध्य पद है।

(iii) माध्य है।

(iv) न्यूनतम व महत्तम पदों का माध्य है।

(3) बहुलक है

(i) निम्नतम आवृत्ति वाला पद (ii) महत्तम आवृत्ति वाला पद

(iii) औसत आवृत्ति वाला पद (iv) मध्यांक वर्गान्तर का मध्यमान

(4) माध्य विचलन है—

(i) संपूर्ण विचलन का माध्यम

(ii) माध्य से श्रेणी के प्रत्येक पद के विचलन का समान्तर माध्य

(iii) माध्य व मध्यिका का अन्तर

(iv) मध्यिका से पदों के विचलन का माध्य

(5) समान्तर माध्य निकालने की संक्षिप्त विधि के लिये सूत्र $M + \frac{\Sigma f.d}{n}$ में A का क्या तात्पर्य है

(i) प्रथम पद (ii), कल्पित माध्य (iii) अंतिम पद (iv) मध्यांक

(6) सूत्र $\sqrt{\frac{\Sigma d^2}{n}}$ में d^2 है

(i) $\Sigma\ (x - m)^2$ (ii) $\Sigma\,(x - me)^2$

(iii) $\Sigma\,(x - mo)^2$ (iv) $\left(\Sigma\,(x - m)^2\right)$

(ख) अति लघुउत्तरीय प्रश्न

प्र०1 मानक विचलन क्या है ?

प्र०-2 मानक विचलन निकालने का सरल श्रेणी में क्या सूत्र होता है ?

प्र०-3 मानक विचलन को खंडित श्रेणी में प्राप्त करने का सूत्र बताइये ?

प्र०-4 माध्य विचलन की विशेषताऐं बताइये ?

प्र०-5 माध्य विचलन का क्या आशय है ?

(ग) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्र०-1 माध्यविचलन के गुणों का उल्लेख करते हुए खंडित श्रेणी का एक उदाहरण दीजिये ?

प्र० - 2 खंडित श्रेणी व अखंडित श्रेणी का उदाहरण देकर उसमें मानक व माध्य विचलन ज्ञात कीजिये ?

22.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

उत्तर -1 (ii) $M = \frac{\Sigma f.x}{\Sigma f}$

उत्तर - 2 (ii) आरोगी व अवरोही क्रम में सजाएं पदों में मध्य पद है।

उत्तर - 3 (ii) महत्तम आवृत्ति वाला पद

उत्तर - 4 (ii) माध्य से श्रेणी के प्रत्येक पद के विचलन का समान्तर माध्य

उत्तर - 5 (ii) कल्पित माध्य

उत्तर - 6 (i) $\Sigma (x - m)^2$ ।

इकाई 23 सह-सम्बन्ध

इकाई की रूपरेखा —

23.0 उद्देश्य

23.1 प्रस्तावना

23.2 सह-सम्बन्ध : अर्थ व परिभाषा

23.3 सह-सम्बन्ध विश्लेषण

23.4 सह-सम्बन्ध विश्लेषण का महत्व

23.5 सह-सम्बन्ध के प्रकार

23.6 सह-सम्बन्ध का परिमाण

23.7 सह-सम्बन्ध ज्ञात करने की विधियाँ

23.8 सारांश

23.9 बोध प्रश्न

23.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

23.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :

- सह सम्बन्ध की अवधारणा एवं विश्लेषण के महत्व की विवेचना कर सकेंगे
- सह-सम्बन्ध के प्रकारों एवं परिमाण के बारे में उल्लेख कर सकेंगे
- सह-सम्बन्ध ज्ञात करने के विधियों का विश्लेषण कर सकेंगे

23.1 प्रस्तावना

इस इकाई - पाँच में हम सह-सम्बन्ध विषय पर अध्ययन करेंगे। इकाई के प्रारम्भ में हम सह-सम्बन्ध के अर्थ को व विविध विद्वानों द्वारा प्रस्तुत परिभाषाओं से अवगत होते हुये सह-सम्बन्ध विश्लेषण एवं इसके महत्व का ज्ञान प्राप्त करेंगे। इसी क्रम में सह-सम्बन्ध के विविध प्रकारों का भी अध्ययन करेंगे। सह-सम्बन्ध के परिमाण का अध्ययन करने के बाद हम सह सम्बन्ध ज्ञात करने की विधियों का सुव्यवस्थित अध्ययन करेंगे। इस प्रकार इस इकाई में हम सह-सम्बन्ध विषय से सम्बन्धित इसके विविध बिन्दुओं का विस्तृत अध्ययन कर अपने ज्ञान में वृद्धि कर सकेंगे।

सह-सम्बन्ध दो चरों में ऐसे सम्बन्ध का संकेत करता है जिसके अन्तर्गत किसी एक चर के मूल्यों में परिवर्तन होने पर दूसरे चर के मूल्यों में भी परिवर्तन होता है।

23.2 सह-सम्बन्ध : अर्थ व परिभाषा

अर्थ — दो चरों x व y के मध्य पाये जाने वाले सम्बन्ध को सह-सम्बन्ध कहा जाता है। सह-सम्बन्ध दो चरों से सम्बन्धित युग्म मापों के रूप में प्रस्तुत समंकों के अध्ययन द्वारा ज्ञात किया जाता है । जब दो चरों के चर-मूल्य सहानुभूति में परिवर्तित होते हैं या परिवर्तित होते हुये दिखायी पड़ते हैं जिसमें एक चर में होने वाले परिवर्तनों के फलस्वरूप दूसरे चर में भी परिवर्तन होने की प्रवृत्ति पायी जाती है तो वे चर सह-सम्बन्धित कहलाते हैं तथा चरों में साथ-साथ परिवर्तन होने की इस प्रवृत्ति को हम सह-सम्बन्ध कहते हैं।

उदाहरणार्थ — आय व उपभोग की मात्रा, कीमत व मांग की मात्रा, साधनों व उत्पादन की मात्रा, उत्पादकता और मजदूरी दर आदि सह-सम्बन्धित चर हैं।

अर्थात दो पद श्रेणियां परस्पर इस प्रकार सम्बन्धित हों कि एक पद श्रेणी में होने वाले परिवर्तनों की सहानुभूति में दूसरी श्रेणी में भी परिवर्तन हो जाये अर्थात् एक चर में वृद्धि या कमी होने पर दूसरी में भी उसी दिशा में या विपरीत दिशा में परिवर्तन हो जाये और साथ ही उनमें कार्य कारण सम्बन्ध हो तो वह सह-सम्बन्धी कहलायेगी।

इस प्रकार विविध विद्वानों द्वारा प्रस्तुत सह सम्बन्ध की परिभाषा निम्नवत है—

प्रो. एलहान्स (1960) का मानना है कि सह-सम्बन्ध दो चरों में ऐसे सम्बन्ध का संकेत करता है जिसके अन्तर्गत किसी एक चर के मूल्यों में परिवर्तन होने पर दूसरे चर के मूल्यों में भी परिवर्तन होता है।

प्रो. कोनोर (1936) का कहना है कि जब दो या दो से अधिक राशियाँ सहानुभूति में परिवर्तित होती हैं जिससे एक में परिवर्तन के कारण दूसरे में भी परिवर्तन होता है तो वह सह-सम्बन्धित कहलाती है। जब कि एक अन्य विद्वान **प्रो. बाउले** (1923) का मानना है कि जब दो परिमाण इस प्रकार सम्बन्धित हो कि एक का परिवर्तन दूसरे के परिवर्तन की सहानुभूति में पाया जाता हो ताकि एक की वृद्धि या कमी दूसरे की वृद्धि या कमी या विपरीत के सम्बन्ध में हो और एक के परिवर्तन की मात्रा जितनी अधिक हो उतनी ही दूसरे की हो तब दोनों परिमाण सह-सम्बन्धित कहलायेंगे।

इस प्रकार हमने इस इकाई में सह-सम्बन्ध के सम्बोध का ज्ञान व विविध विद्वानों द्वारा प्रस्तुत परिभाषाओं का अध्ययन किया है।

इसके बाद हम सह-सम्बन्ध विश्लेषण का ज्ञान प्राप्त करेंगे ।

23.3 सह सम्बन्ध विश्लेषण

इस इकाई के अन्तर्गत सह-सम्बन्ध का अर्थ जानने के बाद सह-सम्बन्ध विश्लेषण का अध्ययन करेंगें। दो चरों के बीच में पाये जाने वाले सम्बन्ध की मात्रा का विवरण सह-सम्बन्ध विश्लेषण के अन्तर्गत आता है। सह-सम्बन्ध विश्लेषण से अभिप्राय यह है कि सम्बन्धित चरों में किस प्रकार का और कितना सम्बन्ध है। सह-सम्बन्ध विश्लेषण पर आधारित अनुमान अधिक विश्वसनीय एवं वास्तविकता के निकट होते हैं अत: सह सम्बन्ध के गहन अध्ययन हेतु निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना आवश्यक है।

(1) **प्रत्यक्ष सम्बन्ध**— दोनों समंक मालाओं (श्रेणियों) में प्रत्यक्ष कार्य कारण सम्बन्ध हो सकता है। कुछ घटनाएं ऐसी होती हैं कि वे किसी के कारणवश होती हैं। उदाहरणार्थ — मूल्य और मांग में प्राय: कुछ ऋणात्मक सम्बन्ध होता है। इसका तात्पर्य यह है कि मूल्य के परिवर्तन के कारण ही मांग में परिवर्तन होते हैं।

(2) **परस्पर प्रतिक्रिया** — यह सदैव आवश्यक नहीं है कि एक श्रेणी ही दूसरे को प्रभावित करें, यह भी संभव हो सकता है कि दोनों समंक मालाएं आपस में एक दूसरे से प्रभावित हों। ऐसी स्थिति में यह ज्ञात करना कठिन हो जाता है। कि कौन सा कारण है व कौन सा परिणाम । वास्तव में दोनों ही कारण हो सकती है व दोनों ही परिणाम। उदाहरणार्थ — आय और शिक्षा पर व्यय के मध्य इसी प्रकार का सम्बन्ध होता है। आय बढ़ने पर शिक्षा व्यय बढ़ता है और शिक्षा बढ़ने पर आय बढ़ती है अर्थात ये दोनों ही अन्योन्याश्रित है।

(3) **सह-सम्बन्ध का अन्य कोई समापवर्तक कारण** — यह भी संभव हो सकता है कि दोनों श्रेणियों में प्रत्यक्ष सम्बन्ध न होकर किसी अन्य समापवर्तक कारण के परिणामस्वरूप ऐसा हो सकता है। उदाहरणार्थ — मोटर कार एवं टेलीफोन दोनों में धनात्मक सह-सम्बन्ध होने का आशय यह कदापि नहीं है कि प्रत्येक मोटर कार वाला अनिवार्य रूप से टेलीफोन भी रखता है। वास्तव में आय तीसरा ऐसा कारण है जो दोनों को प्रभावित करता है अर्थात् अधिक आय वाले ही सामान्यत: कार व टेलीफोन रखते हैं।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सह-सम्बन्ध की विद्यमानता का पता बड़े गहन विश्लेषण से ही लगाया जा सकता है। इस प्रकार से हम कह सकते हैं कि व्यावहारिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में दो या दो से अधिक सह सम्बन्धित घटनाओं के पारस्परिक सम्बन्ध का विवेचन करने में यह सिद्धान्त बहुत उपयोगी सिद्ध होता है।

23.4 सह-सम्बन्ध विश्लेषण का महत्व

अब सह-सम्बन्ध विश्लेषण के महत्व के विषय में ज्ञान प्राप्त करेंगे। सह-सम्बन्ध विश्लेषण का प्रयोग उन समस्त क्षेत्रों (आर्थिक, सामाजिक, व्यावसायिक आदि) में किया जाता है जहां दो या अधिक चरों के मध्य कारण परिणाम सम्बन्ध पाया जाता है, परन्तु अर्थशास्त्र में इस तकनीक का विशेष महत्व है। मूल्य तथा मांग, उत्पादन में तथा रोजगार, मजदूरी तथा मूल्य सूचकांक, विनियोजित पूंजी एवं अर्जित लाभ तथा अन्य ऐसे ही तथ्यों में निकट का सम्बन्ध पाया जाता है। अर्थशास्त्र में सह सम्बन्ध के उपयोग के बारे में विद्वानों का मानना है कि सह-सम्बन्ध विश्लेषण आर्थिक व्यवहार को समझने में योग देता है, विशेष महत्वपूर्ण चरों जिन पर अन्य चर निर्भर करते हैं को खोजने में सहायता देता है, अर्थशास्त्री उन सम्बन्धों को स्पष्ट करता है जिनसे गड़बड़ी फैलती है तथा उसे उन उपायों के सुझाव देता है जिनके द्वारा स्थिरता लाने वाली शक्तियां प्रभावी हो सकती हैं।

इसके अध्ययन के बाद हम सह-सम्बन्ध के प्रकारों का अध्ययन करेंगे।

23.5 सह-सम्बन्ध के प्रकार

सम्बन्धित चरों के मध्य पविर्तन की दिशा, अनुपात तथा समंकमालाओं की संख्या के आधार पर सह-सम्बन्ध निम्न प्रकार का हो सकता है।

(1) **धनात्मक तथा ऋणात्मक सह-सम्बन्ध** — यदि पदमालाओं का परिवर्तन एक ही दिशा में होता है तो उनके सह-सम्बन्ध को प्रत्यक्ष अनुलोम अथवा घनात्मक सह-सम्बन्ध कहते हैं। उदाहरणार्थ — यदि किसी वस्तु की मांग में वृद्धि के साथ-साथ उस वस्तु के मूल्य में भी वृद्धि होती है तो उनके बीच के सम्बन्ध को घनात्मक सह-सम्बन्ध कहेंगे। अर्थात् मांग व मूल्य में धनात्मक सह सम्बन्ध है। इसके विपरीत यदि दो पद मालाओं में परिवर्तन एक ही दिशा में न होकर विपरीत दिशाओं में होते हैं तो उन दो

पदमालाओं के सम्बन्ध को प्रतीप, अप्रत्यक्ष, विलोम या ऋणात्मक सह- सम्बन्ध कहते हैं। उदाहरणार्थ — पूर्ति की वृद्धि के साथ साथ मूल्य घटता जाता है इसलिये पूर्ति व मूल्य में ऋणात्मक सह-सम्बन्ध है।

(2) **रेखीय और अरेखीय सह-सम्बन्ध** — जब दो चरों में परिवर्तन का अनुपात स्थायी रूप से समान होता है अर्थात जब दो चरों में विचरण का अनुपात सदैव एक सा हो तो इस प्रकार के सह-सम्बन्ध को रेखीय सह-सम्बन्ध कहते हैं। इसे यदि बिन्दु रेखीय पत्र पर अंकित किया जाये तो एक सीधी रेखा बनेगी। इस प्रकार का सह-सम्बंध भौतिक तथा गणितीय विज्ञानों में पाया जाता है सामाजिक तथा आर्थिक क्षेत्रों में यह संभव नहीं।

उदाहरणार्थ — यदि किसी कारखानें में मजदूरों की संख्या को दूना कर देने पर उत्पादन भी दूना हो जाये तो इसे रेखीय सह-सम्बन्ध कहेंगे। इसके विपरीत जब परिवर्तन का अनुपात स्थायी रूप से समान नहीं रहता तब सह-सम्बन्ध को अरेखीय या वक्ररेखीय सह-सम्बन्ध कहते हैं । इसे यदि बिन्दु रेखीय पत्र पर प्रदर्शित किया जाये तो एक वक्ररेखा बनेगी। उदाहरणार्थ — विज्ञापन व्यय और बिक्री में सामान्यत: वक्र रेखीय सम्बन्ध है क्योंकि बहुत कम संभावना है कि दोनों चरों के परिवर्तन के अनुपात में स्थायित्व हो।

इसके बाद हम इस इकाई के अन्तर्गत हम सह-सम्बन्ध का परिमाण विषय का अध्ययन करेंगे जो निम्नवत है।

23.6 सह-सम्बन्ध का परिमाण

सह-सम्बन्ध गुणांक द्वारा सह-सम्बन्ध का अंकीय परिमाण ज्ञात किया जाता है । इसी आधार पर धनात्मक व ऋणात्मक सह-सम्बन्ध के निम्नलिखित परिमाण हो सकते हैं।

(1) **पूर्ण सह-सम्बन्ध**— जब दो समंकमालाओं के परिवर्तन एक ही दिशा में और समान अनुपात में हो तो उनमें पूर्ण धनात्मक सह-सम्बन्ध कहा जायेगा। पूर्ण धनात्मक सह-सम्बन्ध गुणांक + 1 के रूप में प्रकट किया जाता है। इसके विपरीत जब दो समंकमालाओं में परिवर्तन का अनुपात तो समान हो परन्तु विपरीत दिशा में हो तो वही पूर्ण ऋणात्मक सह-सम्बन्ध कहा जायेगा। ऐसी स्थिति में सह सम्बन्ध गुणांक —1 होता है।

(2) **सह-सम्बन्ध की अनुपस्थिति** — जब दो समंकमालाओं के परिवर्तन के मध्य किसी प्रकार की आश्रितता नहीं पायी जाती है अर्थात् एक श्रेणी के परिवर्तन का प्रभाव दूसरी श्रेणी पर बिल्कुल नहीं पड़ता हो वहां सह-सम्बन्ध की अनुपस्थिति होती है। इस स्थान पर सह-सम्बन्ध गुणांक की मात्रा शून्य होती है।

(3) **सह-सम्बन्ध का सीमित परिमाण** — जब दो समंकमालाओं में न तो सह-सम्बन्ध का अभाव होता है और न उनमें पूर्ण सह-सम्बन्ध ही होता है अर्थात् दोनों के मध्य की स्थिति होती है तब वहां सीमित मात्रा का सह-सम्बन्ध होता है । यहां सह-सम्बन्ध गुणांक 0 से 1 के मध्य आता है अर्थात (± 1)। यह धनात्मक या ऋणात्मक हो सकता है। सामाजिक व व्यावसायिक क्षेत्रों में अधिकतर इसी प्रकार का सम्बन्ध पाया जाता है। सीमित सह-सम्बन्ध तीन प्रकार का होता है.

(1). **उच्च स्तर का सह-सम्बन्ध** — जब श्रेणियों में सह-सम्बन्ध पूर्ण न हो परन्तु फिर भी अधिक मात्रा में हो तो वहां उच्च स्तर का सह-सम्बन्ध होता है ऐसी स्थिति में सह-सम्बन्ध गुणांक .75 और 1 के मध्य पाया जाता है। सामान्यत: यह .9 के समीप होता है । सह-सम्बन्ध में गुणांक का चिन्ह

धन (+) होने पर उच्च स्तर का धनात्मक सह-सम्बन्ध तथा ऋण (—) होने पर उच्च स्तर का ऋणात्मक सह-सम्बन्ध कहलाता है।

(2) मध्य स्तर का सह-सम्बन्ध — जब सह-सम्बन्ध की मात्रा न तो उच्च स्तर की है न बहुत कम स्तर की हो तो वहां पर मध्य स्तर की सह-सम्बन्ध होता है । यहां सह-सम्बन्ध गुणांक .50 और .75 के मध्य आता है। यह धनात्मक व ऋणात्मक दोनों हो सकता है।

(3) **निम्न स्तर का सह-सम्बन्ध** — जब दो समंकमालाओं में सह-सम्बन्ध तो होता है परन्तु बहुत ही कम मात्रा में। तो वहां निम्न स्तर का सह-सम्बन्ध होता है यहां सह-सम्बन्ध गुणांक 0 एवं 5 के मध्य होता है यह भी धनात्मक या ऋणात्मक हो सकता है।

तालिका — (सह-सम्बन्ध परिमाण)

क्र.सं.	सह-सम्बन्ध परिमाण	धनात्मक सह-सम्बन्ध गुणांक का मान	ऋणात्मक सह-सम्बंध गुणांक का मान
1.	पूर्ण	+1	—1
2.	उच्च स्तर का	+ .75 तथा + 1 के मध्य	1 तथा —.75 के मध्य
3.	मध्य स्तर का	+ .5 तथा .75 के मध्य	—.75 तथा —.5 के मध्य
4.	निम्न स्तर का	+0 तथा +.5 के मध्य	—.5 तथा 0 के मध्य
5.	सह-सम्बन्ध का अभाव	0	0

23.7 सह-सम्बन्ध ज्ञात करने की विधियाँ

दो या अधिक श्रेणियों में सह-सम्बन्ध निम्न विधियों द्वारा मालूम किया जा सकता है—

(1) **प्रकीर्ण या विक्षेप आरेख** — इसमें सह-सम्बन्ध चित्रों की सहायता से प्रदर्शित किया जाता है परन्तु इनमें सह-सम्बन्ध संख्यात्मक रूप में न होकर केवल अनुमानके रूप में प्राप्त होता है। इसके बनाने के लिये एक ओर x श्रेणी और दूसरी ओर y श्रेंणी का पैमाना मान लिया जाता है। इसके बाद x श्रेणी के प्रत्येक पदमूल्य और y श्रेणी के प्रत्येक पदमूल्य को बिन्दुओं के रूप में दिखाया जाता है। एक पद के दोनों मूल्यों (x व y श्रेंणी) के लिये एक-एक बिन्दु होता है इस प्रकार जितने पदयुग्म होते हैं उतने ही बिन्दु हो जाते हैं।

(2) **सह-सम्बन्ध बिन्दु रेखीय चित्र** — सह-सम्बन्ध के विषय में जानने के लिये बिन्दु रेखीय चित्रों का भी प्रयोग किया जाता है इस विधि में दोनों पर श्रेणियों (x व y) की कोटि अथवा खड़ी रेखा पर तथा संख्या समय अथवा स्थान को पड़ी रेखा (क्षैतिज) पर अंकित किया जाता है। यदि दोनों श्रेणियों के बिन्दु रेखा एक ही दिशा में आगे बढ़ते हैं तो धनात्मक सह-सम्बन्ध व इसके विपरीत ऋणात्मक सह-सम्बन्ध होगा। यदि दोनों श्रेणियों में अधिक अन्तर न हो तो दोनों बिन्दु रेखायें एक ही पैमाने तथा आधार रेखा पर खींचीं जा सकती है।

सह-सम्बन्ध का गुणांक — दो चरों के बीच के सह-सम्बन्ध का परिमाण अथवा विस्तार जानने के लिये सह-सम्बन्ध के गुणांक की गणना की जाती है । सह-समबन्ध के गुणांक की गणना कई विधियों अर्थात प्रत्यक्ष विधि व संक्षिप्त विधि द्वारा करते हैं। कार्ल पियर्सन का सूत्र सह-सम्बन्ध गुणांक का सर्वोत्तम सूत्र है।

कार्ल पियर्सन के सूत्र के अनुसार दो चरों का सह-सम्बन्ध गुणांक उनके माध्यों से लिये गये विचलनों के गुणनफल के योग को निरीक्षण के युग्मों की संख्या और उनके मानक विचलनों के गुणनफल से विभाजित करके प्राप्त होने वाली संख्या है।

कार्ल पियर्सन के सह-सम्बन्ध के गुणांक की गणांक की गणना— कार्ल पियर्सन के सूत्र के अनुसार सह-सम्बन्ध का गुणांक निकालने के लिये प्रत्यक्ष विधि तथा संक्षिप्त विधि का उपयोग किया जाता है।

(1) **प्रत्यक्ष विधि** — यदि दो समंक मालायें **x** तथा **y** दी गयी हैं तो कार्ल पियर्सन का सह सम्बन्ध गुणांक का सूत्र निम्न होगा-

सूत्र —

$$\boxed{r = \frac{\Sigma\, dx.dy}{N.\sigma x.\sigma y}} \quad \text{..........(i)}$$

या

$$r = \frac{\Sigma dx.dy}{\Sigma\, dx^2.\Sigma dy^2} \quad \text{..........(ii)}$$

(1) व (2) दोनों ही प्रत्यक्ष विधि द्वारा सह-सम्बन्ध गुणांक निकालने के सूत्र हैं—

जहाँ - r = सह-सम्बन्ध गुणांक

dx = x श्रेणी के किसी प्राप्तांक की उस श्रेणी के माध्य से विचलन

या dx = (x-Mx)

dy = y श्रेणी के किसी गुणांक की उस श्रेणी के माध्य से विचलन

dy = (y - My)

N = श्रेणी में पदों की संख्या

σ x = x श्रेणी के मानक विचलन

σ y = y श्रेणी के मानक विचलन

सूत्र — $\therefore \sigma x = \sqrt{\frac{\Sigma dx^2}{N}}$

सूत्र — $\therefore \sigma y = \sqrt{\frac{\Sigma\, dy^2}{N}}$

(2) **संक्षिप्त विधि** — संक्षिप्त विधि में सह-सम्बन्ध गुणांक निकालने का सूत्र निम्नवत है—

सूत्र — $$r = \frac{N\,\Sigma\, xy - \Sigma\, x.\Sigma y}{\sqrt{N\,\Sigma x^2 - (\Sigma x)^2}\,\sqrt{N\,\Sigma\, y^2 - (\Sigma\, y)^2}}$$

जहां r = सह-सम्बन्ध गुणांक

$xy = x$ व y के गुणनफलों का योग

N = श्रेणी में पदों की संख्या

$x = x$ पदों का योग

$y = y$ पदों का योग

इन दोनों विधियों का एक-एक उदाहरण प्रस्तुत हैं—

''प्रत्यक्ष विधि'' —

प्र. दस छात्राओं के गणित व भौतिकी के अंक दिये गये हैं कार्ल पियर्सन विधि की प्रत्यक्ष विधि द्वारा सह-सम्बन्ध गुणांक की गणना कीजिये।

गणित — 26, 24, 20, 20, 16, 12, 12, 10, 6, 4

भौतिकी — 22, 28, 22, 14, 18, 22, 6, 14, 12, 2

उत्तर: प्रत्यक्ष विधि द्वारा हल —

गणित (x)	भौतिकी (y)	माध्य से x का विचलन dx=(x-Mx)	माध्य से y का विचलन dy= (y-my)	dx^2	dy^2	dx.dy
26	22	26-15 = +11	22-16 = +6	121	36	66
24	28	24-15 = +9	28-16 = +12	81	144	729
20	22	20-15 = +5	22-16 = +6	25	36	30
20	14	20-15= +5	14-16 = -2	25	4	-10
16	18	16-15 = +1	18-16 = +2	1	4	+2
12	22	12-15 = -3	22-16 = +6	9	36	-18
12	6	12-15 = -3	6-16 = -10	9	100	+30
10	14	10-15 =-5	14-16 = -2	25	4	+10
6	12	6-15 = -9	12-16 = -4	81	16	+36
4	2	4-15 = -11	2-16 = -14	121	196	+154
N=10 Σx=150	Σy=160			Σdx^2 = 498	Σy^2 = 640	Σdx.dy = 428

माध्य $(Mx) = \frac{\Sigma x}{N} = \frac{150}{10} = 15$

माध्य $(My) = \frac{\Sigma y}{N} = \frac{160}{10} = 16$

कार्ल पियर्सन का सह-सम्बन्ध गुणांक का सूत्र

$$r = \frac{\Sigma\, dx.\, dy}{\sqrt{\Sigma dx^2}.\sqrt{\Sigma\, dy^2}}$$

$$r = \frac{428}{\sqrt{498}\sqrt{640}}$$ (लगभग)

$$r = +.76$$

उत्तर सह-सम्बन्ध गुणांक = (r) = +.76 (लगभग)

संक्षिप्त विधि द्वारा सह-सम्बन्ध गुणांक —

प्र. कुछ राज्यों की नीचे जन्मदर व मृत्यु दर प्रस्तत की गयी है इनके बीच कार्ल पियर्सन की विधि द्वारा सह-सम्बन्ध गुणांक की गणना कीजिये।

देश	A	B	C	D	E	F	G	H	I	J	K	L	M	N	O
जन्मदर	44	24	19	33	32	16	18	20	16	40	20	18	53	15	17
मृत्युदर	27	11	12	24	19	11	16	14	12	18	19	8	23	12	11

उ. सूत्र — संक्षिप्त विधि

$$r = \frac{N\,\Sigma\, dx.\, dy - \Sigma\, dx.\, \Sigma dy}{\sqrt{N.\,\Sigma dx^2 - (\Sigma dx)^2}.\sqrt{N.\,\Sigma\, dy^2 - (\Sigma dy)^2}}$$

देश	जन्मदर (X)	मृत्युदर (Y)	x में कल्पित माध्य 32 से विचलन dx=(X-A)	y श्रेणी में कल्पित माध्य 16 से विचलन dy=(Y-B)	dx^2	dy^2	dx.dy
A	44	27	+12	+11	144	121	132
B	24	11	-8	-5	64	25	40
C	19	12	-13	-4	169	16	52
D	33	24	+1	+8	1	64	8
E	32	19	0	+3	0	9	0
F	16	11	-16	-5	256	25	80
G	18	16	-14	0	196	0	0
H	20	14	-12	-2	144	4	24
I	16	12	-16	-4	256	16	64
J	40	18	+8	+2	64	4	16
K	20	9	-12	-7	144	49	84
L	18	8	-14	-8	196	64	112
M	53	23	+21	+7	441	49	147
N	15	12	-17	-4	289	16	67
O	17	11	-15	-5	225	25	75
N=15			$\Sigma dx.=-95$	$\Sigma dy = -13$	$\Sigma dx^2 = 2589$	$\Sigma y^2 = 487$	$\Sigma dx.dy = 902$

सह सम्बन्ध गुणांक

$$(r) = \frac{N \Sigma dx.dy - \Sigma dx. \Sigma dy}{\sqrt{N. \Sigma dx^2 - (\Sigma dx)^2} \sqrt{N. \Sigma dy^2 - (\Sigma dy)^2}}$$

$$\therefore r = \frac{15 x 902 - (-95) x (-13)}{\sqrt{15 x 2589 - (-95)^2} \sqrt{15 x 487 - (-13)^2}}$$

$$\therefore r = \frac{13530 - 1235}{\sqrt{29810}. \sqrt{7136}}$$

$$\therefore r = \frac{12295}{172.65 \times 84.47}$$

कार्ल पियर्सन $r = +.85$ (लगभग)

से सह-सम्बन्ध गुणांक = $(r) = +.85$ (लगभग) उत्तर

इस प्रकार हमने दोनों विधियों द्वारा सह-सम्बन्ध गुणांक माप का अध्ययन किया है।

23.8 सारांश

इस इकाई -पांच में हमने सह-सम्बन्ध के विषय में अध्ययन किया है। सह-सम्बन्ध के सम्बोध को जानने के बाद विविध विद्वानों द्वारा प्रस्तुत परिभाषा का भी अध्ययन करते हुये सह-सम्बन्ध विश्लेषण पर ध्यान केन्द्रित किया है। इसके बाद सह-सम्बन्ध विश्लेषण के महत्व के बारे में जानकारी हासिल करने के बाद सह-सम्बन्ध के विविध प्रकारों के विषय में ज्ञान प्राप्त किया है। सह-सम्बन्ध के परिमाण का अध्ययन करने के बाद हमने सह-सम्बन्ध ज्ञात करने की विधियों के बारे में व्यापक गहन अध्ययन किया। व उदाहरणों द्वारा इसे स्पष्ट रूप से समझने में सफलता प्राप्त की।

इस प्रकार इस इकाई के अन्तर्गत हमने सह-सम्बन्ध से सम्बन्धित इसके विविध बिन्दुओं की क्रमवार चर्चा की है।

23.9 बोध प्रश्न

(क) वस्तुनिष्ठ बोध प्रश्न

1. दो चरों के बीच कार्य कारण सम्बन्ध को ज्ञात करना क्या कहलाता है—

(अ) सम्बन्ध (ब) अपकिरण (स) गुणांक (द) सह-सम्बन्ध

2. जब दो पद मालाओं का परिवर्तन एक ही दिशा में होता है तो उनके सह सम्बन्ध को क्या कहते हैं—

(अ) धनात्मक सह-सम्बन्ध (ब) ऋणात्मक सह-सम्बन्ध (स) गुणात्मक सह-सम्बन्ध (द) रेखीय सह-सम्बन्ध

3. सह-सम्बन्ध के गहन अध्ययन हेतु किन बातों पर ध्यान देना आवश्यक है—

(अ) प्रत्यक्ष सम्बन्ध (ब) परस्पर प्रतिक्रिया (स) निरर्थक सम्बन्ध (द) सभी

4. जब दो चरों में परिवर्तन का अनुपात स्थायी रूप से समान होता है तो इसे किस प्रकार का सह-सम्बन्ध कहेंगे—

(अ) चक्रीय सह-सम्बन्ध (ब) रेखीय सह-सम्बन्ध (स) ऋणात्मक सह-सम्बन्ध।

(द) धनात्मक सह-सम्बन्ध ।

5. सह-सम्बन्ध ज्ञात करने की विधियां हैं -

(अ) बिन्दुरेखीय विधि (ब) विक्षेप बिन्दु (स) सह-सम्बन्ध सारणी (द) उपर्युक्त सभी

(ख) लघुउत्तरीय प्रश्न

प्र. 1 सह-सम्बन्ध क्या है?

प्र. 2 सह-सम्बन्ध माप की विधियां समझाइये?

प्र. 3 रेखीय व अरेखीय सह-सम्बन्ध क्या है?

प्र. 4 धनात्मक व ऋणात्मक सह-सम्बन्ध से आप क्या समझते हैं?

प्र. 5 सह-सम्बन्ध के विश्लेषण का महत्व समझाइये?

(ग) दीर्घउत्तरीय प्रश्न —

प्र. 1 सह-सम्बन्ध को स्पष्ट करते हुये इसके माप की विधियों का वर्णन कीजिये?

प्र. 2 सह-सम्बन्ध गुणांक का सूत्र व इसको एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट कीजिये?

23.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

उत्तर 1 (द) सह-सम्बन्ध

उत्तर 2 (अ) धनात्मक सह-सम्बन्ध

उत्तर 3 (द) सभी

उत्तर 4 (ब) रेखीय सह-सम्बन्ध

उत्तर 5 (द) सभी ।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. ए. एल. बाउल (1923), ऐन ऐलीमेन्टरी मैनुअल आफ स्टेटिस्टिक्स, **मैकडोनाल्ड ईवान्स**, लंदन

2. एलहांस (1960), फंडामेन्टल आफ स्टेटिस्टिक्स

3. बेब्स्टर्स शब्दकोश (1968), बेब्स्टर्स न्यू कालीजिएट डिक्शनरी, **मेरियम मेसाचुसेट्स**

4. कोनोर (1936), स्टेटिस्टिक्स इन थ्योरी एण्ड प्रैक्टिस, प्रकाशक, वर्ष

5. सी. ए. मोजर (1959), सर्वे मेथड्स इन सोशल इन्वेस्टीगेशन, विलियम **हीनमैन**, लि0, लंदन

6. जी. ए. फर्गुसन (1966), स्टेटिस्टिकल एनालिसिस इन साइकोलाजी **एण्ड एजूकेशन** ।

7. जहोदा, मेरा कुक स्टुवर्ट डब्ल्यू एंड मार्टन ड्यूश (1958), **रिसर्च मेथडस इन सोशल** रिलेशन्स खण्ड –1, दि ड्राइडेन प्रेस, न्यूयार्क ।

8. जे. पी. गिल्फोर्ड (1956), फंडामेन्टल स्टेटिस्टिक्स इन साइकलाजी **एण्ड एजूकेशन**, मैकग्राहिल बुक कं0, न्यूयार्क।

9. घोष एवं चौधरी (1961), स्टेटिस्टिक्स : थ्योरी एण्ड प्रैक्टिस।

10. पामर (1928), फील्ड स्टडीज इन सोशियोलाजी, यूनिवर्सिटी आफ **शिकागो प्रेस**, शिकागो

11. डब्ल्यू. बेलिस एण्ड हैरी वी. राबर्टस (1956), एन्यू एप्रोच **फ्री प्रेस, ग्लैन्को**

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टंडन मुक्त विश्वविद्यालय

MASY-03/MASW-04
सामाजिक अनुसंधान

खण्ड

4

निदर्शन, अनुमापन विधियाँ तथा समाजमिति

इकाई 15

निदर्शन

इकाई 16

निदर्शन के प्रकार, निदर्शन की समस्याएं एवं उनके उपाय

इकाई 17

अनुमापन विधियाँ

इकाई 18

समाजमिति

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

परामर्श समिति

प्रो० देवेन्द्र प्रताप सिंह — अध्यक्ष
कुलपति
उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद

डॉ० एच० सी० जायसवाल — कार्यक्रम संयोजक
परामर्शदाता
उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इला०

डॉ० आर० के० बसलस — सचिव
कुल सचिव
उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद

विशेषज्ञ समिति

प्रो० वी० के० पंत — विषय विशेषज्ञ
से०नि०आचार्य एवं विभागाध्यक्ष
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

प्रो० डी० पी० सक्सेना — विषय विशेषज्ञ
से० नि० आचार्य
गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

प्रो० पी० एन० पाण्डेय — विषय विशेषज्ञ
आचार्य एवं पूर्व विभागाध्यक्ष
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

डा० मंजूलिका श्रीवास्तव — संरचनात्मक विषय विशेषज्ञ
स्ट्राइड, इग्नू, नई दिल्ली

<u>पाठ्यक्रम लेखन समिति</u>

PGSY-03 : – *सामाजिक अनुसंधान*

खण्ड एक : डॉ० वी० एन० मिश्र, प्रवक्ता कालीचरण कालेज, लखनऊ 4 इकाई (अकारगत 3)
खण्ड दो : डॉ० जय शंकर पाण्डेय, प्रवक्ता डी० ए० वी० कालेज, कानपुर 5 इकाई (अकारगत 4)
खण्ड तीन : डॉ० विजय कुमार वर्मा, प्रवक्ता, बी०एस०एन० वी०पी०जी० कालेज, लखनऊ 5 इकाई
खण्ड चार : डॉ० विजय कुमार वर्मा, प्रवक्ता बी०एस०एन० वी०पी०जी० कालेज, लखनऊ 4 इकाई
खण्ड पॉंच : अनूप कुमार सिंह, प्रवक्ता, डी० ए० वी० कालेज, कानपुर 5 इकाई

सम्पादन : प्रो० वी० के० पंत

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित, इस कार्य के किसी भी अंश की उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की लिखित अनुमति के बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुति अनुमन्य नहीं है।

दूरस्थ शिक्षा परिषद, नई दिल्ली के सहयोग से प्रकाशित।

खण्ड 4 का परिचय

निदर्शन, अनुमापन विधियां तथा समाजमिति

इस पाठ्यक्रम 3 के खण्ड 4 में हमनें निदर्शन, अनुमापन विधियों तथा समाजमिति की विस्तार से चर्चा की है। इस खण्ड 4 को चार इकाइयों में वर्गीकृत कर प्रस्तुत किया गया है। इकाई 1 में निदर्शन के अर्थ को स्पष्ट करते हुए विविध विद्वानों द्वारा प्रस्तुत परिभाषायें प्रस्तुत की गयी हैं। एक श्रेष्ठ निदर्शन में क्या आवश्यक विशेषताएं होती हैं, को स्पष्ट करते हुए उसके आयोजन को स्पष्ट किया गया है। इसी इकाई में प्रतिदर्श (निदर्श) के आकार व विश्वसनीयता पर चर्चा करते हुए इसके गुण एवं दोषों का विस्तार से वर्णन किया गया है। इकाई में हमने निदर्शन के प्रकारों, इसकी समस्याओं एवं इनके उपायों का वर्णन किया है। निदर्शन के प्रमुख प्रकारों में दैव या यादृच्छिक निदर्शन, स्तरीकृत निदर्शन, बहुस्तरीय निदर्शन, क्रमबद्ध एवं गुच्छ निदर्शन के साथ-साथ असंभाविता निदर्शन पर चर्चा की गयी है। इन निदर्शन के प्रमुख प्रकारों के संबोध को स्पष्ट करते हुए इनके गुण एवं दोषों की भी विस्तार से चर्चा की गयी है। अतं में निदर्शन की प्रमुख समस्याओं एवं इसके उपायों के विषय में विश्लेषण किया है। इसी खण्ड 4 के अन्तर्गत ही इकाई 3 में अनुमापन विधियों , इसके प्रमुख प्रकारों जैसे : अंक पैमाना, तीव्रता मापक या मूल्य मापक पैमाना, श्रेणी सूचक पैमाना, सामाजिक दूरी पैमाना तथा इसके साथ ही साथ लिकर्ट पैमाना, थर्सटन पैमाना आदि की भी वृहद चर्चा की है। इस प्रकार इकाई 3 में प्रमुखतः अनुमापन विधियों के विषय में विस्तृत चर्चा की गयी है। इस क्रम में इकाई 4 में 'समाजमिति' पर चर्चा की गयी है। इस इकाई के अन्तर्गत हमने समाजमिति पैमाने की प्रासंगिकता व इसकी परिभाषा को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। समाजमितिक परीक्षण का भी वर्णन किया गया है। समाजमिति की परिभाषा व इसकी प्रकृति का विशद-वर्णन किया गया है। समाजमिति पैमाने की प्रक्रिया का विस्तार से वर्णन किया गया है। इस पैमान के गुण, महत्व व सीमाओं का भी सारगर्भित वर्णन प्रस्तुत किया गया है।

इस प्रकार खण्ड 4 को चार इकाइयों में विश्लेषित किया गया है। निदर्शन, अनुमापन विधियों एवं समाजमिति पर विशद वर्णन किया गया है।

इकाई 15 निदर्शन

इकाई की रूपरेखा

15.0 उद्देश्य

15.1 प्रस्तावना

15.2 निदर्शन का अर्थ एवं परिभाषा

15.3 एक श्रेष्ठ निदर्शन की विशेषताएं

15.4 निदर्शन का आयोजन

15.5 निदर्श का आकार एवं विश्वसनीयता

15.6 निदर्शन विधि के गुण एवं दोष,

15.7 सारांश

15.8 बोध प्रश्न

15.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

15.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप:

- निदर्शन के अर्थ एवं परिभाषा का उल्लेख कर सकेंगे।
- निदर्शन की विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे।
- निदर्शन के आधार का उल्लेख कर सकेंगे।
- निदर्शन विधि के गुण एवं दोषों का वर्णन कर सकेंगे।
- प्रतिदर्श के आकार को प्रभावित करने वाले कारकों की विवेचना कर सकेंगे।
- **प्रतिदर्श की विश्वसनीयता को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कर सकेंगे।**

15.1 प्रस्तावना

इस इकाई में प्रारम्भ में निदर्शन के संबोध को स्पष्ट करते हुए इसकी विविध विद्वानों द्वारा प्रस्तुत परिभाषा के विषय में ज्ञान प्राप्त करेंगे। तदुपरांत एक श्रेष्ठ निदर्शन की आवश्यक विशेषताओं की जानकारी प्राप्त करते हुए, निदर्शन के प्रमुख आधारों का ज्ञान प्राप्त करेंगे। इस प्रकार इसी क्रम में प्रतिदर्श (निदर्श) के आकार एवं इसकी विश्वसनीयता को प्रभावित करने वाले कारकों के विषय में जानकारी प्राप्त करेंगे। इसके पश्चात् इसी इकाई में निदर्शन विधि के गुणों का ज्ञान प्राप्त करते हुए इसके दोषों की भी जानकारी प्राप्त करेंगे। अंत में इसकी सीमाओं के विषय में भी अध्ययन करेंगे। इस प्रकार से इस इकाई में हम निदर्शन की परिभाषा, विशेषतायें, निदर्शन के आधार, इसके गुण एवं दोष एवं सीमाओं का ज्ञान प्राप्त करेंगे।

प्रतिदर्श का तात्पर्य सामान्यत: समग्र या जनसंख्या से चुनी गयी कुछ इकाइयों या अंशों से है तथा जिस प्रक्रिया से इस ''कुछ'' या ''अंश'' का चुनाव किया जाता है उसे निदर्शन या प्रतिदर्शन या प्रतिचयन भी कहते हैं ।

15.2 निदर्शन का अर्थ एवं परिभाषा

निदर्शन किसी भी अनुसंधान कार्य की आधारशिला है। यह आधारशिला जितनी सुदृढ़ होगी, अनुसंधान के परिणाम उतने ही विश्वसनीय एवं परिशुद्ध होंगे। निदर्शन को तभी उपयुक्त माना जा सकता है जब वह सम्पूर्ण समष्टि का सही प्रतिनिधित्व करें। निदर्शन, सम्पूर्ण समष्टि का वास्तविक प्रतिनिधि है या नहीं, इसकी एक कसौटी यह है कि निदर्शन के स्थान पर यदि सम्पूर्ण समष्टि का अध्ययन किया जाये तो परिणामों में सार्थक अन्तर नहीं पड़ना चाहिये।

समग्र या जनसंख्या से चुनी गयी कुछ इकाइयों या अंशों की 'प्रतिदर्श' (Sample) व जिस प्रक्रिया से इस 'कुछ' या अंश का चुनाव किया जाता है उसे 'निदर्शन', 'प्रतिचयन' या 'प्रतिदर्शन' कहते हैं इस चुनाव में यह ध्यान रखा जाता है कि चुनी गयी इकाइयां या अंश समग्र का उचित प्रतिनिधित्व करने वाला हो। इस प्रकार निदर्शन सामान्यत: समग्र में से चुने गये ऐसे अंश के चुनाव को कहा जाता है जो समय का उचित प्रतिनिधत्व करते हैं । इस क्रम में 'टिपेट' ने एक उदाहरण प्रस्तुत किया है— ''एक महिला किसी दुकान पर पनीर क्रय करने से पूर्व उसका भाव पूछती है फिर उसकी गुणवत्ता के विषय में जानने के लिये उसके एक छोटे टुकड़े (अंश) का स्वाद लेकर उस पनीर (समग्र) के विषय में आकलन कर लेती है। अत: यह प्रक्रिया निदर्शन का उदाहरण है। इसी प्रकार से एक डाक्टर मरीज के रक्त की कुछ बूंदों (अंश) की जांच करके रोगी के शरीर की व्याधिकीय अवस्था के बारे में निष्कर्ष निकाल लेता है। यह भी निदर्शन का एक उदाहरण है।

सामाजिक अनुसंधान में निदर्शन के प्रयोग का इतिहास अधिक पुराना नहीं है। 1900 ई0 के पूर्व सामाजिक सर्वेक्षणों में व्यवस्थित रूप से निदर्शन के प्रयोग के छिटपुट उदाहरण ही मिलते हैं फिर भी जैसा कि स्टीफेन (Stephen) ने लिखा है कि संभवत: सामाजिक क्षेत्र में निदर्शन का प्रयोग संगणना (Census) से भी पहले यदा-कदा किया गया। उदाहरण स्वरूप 1754 ई0 में इंग्लैण्ड में पहले प्रत्येक घर (household) में औसत सदस्यों की संख्या प्रतिदर्श के आधार पर प्राप्त की गयी (जिसकी सदस्य संख्या 6 थी) और फिर कुल घर की संख्या को 6 से गुणा कर इंग्लैण्ड की जनसंख्या की गणना की गयी। फ्रांस में भी 1765 एवं 1778 ई0 में जनगणना केवल कुछ जिलों की जनसंख्या की गणना पर आधारित थी। लेकिन सामाजिक सर्वेक्षण में 1906 ई0 में बाउली (Bowley) ने विभिन्न समूह के एक-एक परिवार के अध्ययन के लिये सर्वप्रथम व्यवस्थित रूप से निदर्शन का प्रयोग किया। इसके बाद सामाजिक सर्वेक्षण में जेंसन (Jensen), हिल्टन (Hilton), बूथ (Booth) आदि ने भी निदर्शन विधि का सफलतापूर्वक प्रयोग किया। 1925 ई0 तक निदर्शन सामाजिक अनुसंधान में अत्यन्त प्रचलित हो चुका था। गुडे एवं हॉट ने मेथड्स इन सोशियल रिसर्च (1952) में लिखा है कि ''एक निदर्शन जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है कि एक बड़े समग्र का अपेक्षाकृत छोटा प्रतिनिधि है। ''

पार्टन ने भी फेयरचाइल्ड की कृति में कहा है कि एक विशिष्ट समय से निश्चित संख्या में व्यक्तियों स्थितियों या निरीक्षकों के चुनाव की प्रक्रिया या पद्धति अथवा अध्ययन के लिये संपूर्ण समूह से उसके एक अंश का चुनाव निदर्शन (प्रतिदर्शन) कहलाता है।

कर्लिंगर (1966) ने निदर्शन की एक सरल परिभाषा प्रस्तुत की है— किसी जनसंख्या या समग्र से उसके प्रतिनिधि स्वरूप एक अंश चुन लेने को निदर्शन (प्रतिदर्शन) कहते हैं।

श्रीमती यंग (1951) का कहना है कि एक सांख्यिकीय प्रतिदर्श किसी संपूर्ण समूह या समग्र का लघुचित्र या प्रतिनिधि अंश होता है जिससे वह प्रतिदर्श लिया गया है, इस प्रकार—

(1) एक प्रतिदर्श समग्र का लघु अंश है।

(2) इस लघु अंश का चुनाव एक निश्चित प्रक्रिया द्वारा किया जाता है जिसे प्रतिदर्शन कहते हैं।

(3) प्रतिदर्श (निदर्श) समग्र का लघु चित्र अथवा प्रतिनिधि होता है।

(4) प्रतिदर्श से प्राप्त निष्कर्ष समग्र के लिये भी लगभग समान होते हैं।

जान गाल्टुंग (1967) ने लिखा है कि अध्ययन के लिये चुनी गयी इकाइयों का समूह संभावित इकाइयों के सम्पूर्ण समूह का उपसमूह है। इस उपसमूह को निदर्शन तथा सम्पूर्ण समूह को एक समग्र के नाम से सम्बोधित किया जाता है। इस प्रकार से निदर्शन समग्र या जनसंख्या से कुछ इकाइयों या तत्वों के चुनने की एक निश्चित प्रक्रिया है जिसका मुख्य उद्देश्य है समग्र के बारे में विश्वसनीय सूचना प्राप्त करना।

15.3 एक श्रेष्ठ निदर्शन की विशेषताएं

निदर्शन के अर्थ को स्पष्ट करने के बाद आपको हम एक श्रेष्ठ निदर्शन की आवश्यक विशेषताओं के बारे में जानकारी प्रदान करेंगे। चूँकि निदर्शन की सफलता मूलत: उसकी उपयुक्तता एवं परिशुद्धता पर आधारित है। एक अच्छे चुने गये निदर्शन के द्वारा ही हम अनुसंधान की सफलता की अपेक्षा कर सकते हैं। उपयुक्त निदर्शन तभी संभव है जब अनुसंधानकर्ता को अपने समग्र के बारे में पर्याप्त जानकारी हो, एवं उसके पास परिशुद्ध समग्र सूची हो।

पी. वी. यंग (1954) का कहना है कि व्यवस्थित रूप से चुने गये अपेक्षाकृत छोटे निदर्शन बड़े निदर्शनों से भी अधिक विश्वसनीय होते हैं।

जब कि सी. ए. मोजर (1959) के अनुसार निदर्शन प्रणाली दो महत्वपूर्ण नियमों पर आधारित होती है—

(1) इकाइयों की चयन प्रक्रिया में अभिनति से बचना,

(2) निदर्शन में अधिकतम सूक्ष्मता व परिशुद्धता प्राप्त करना।

यही पर गुडे एवं व्हाट (1952) ने लिखा है कि एक अच्छे व उत्तम निदर्शन की दो विशेषताएं निम्न हैं-

(1) निदर्शन को प्रतिनिधिपूर्ण होना चाहिये।

(2) निदर्शन पर्याप्त होना चाहिये।

इसी प्रकार श्रीमती यंग ने श्रेष्ठ निदर्शन के पक्षों का वर्णन किया है—

(1) इकाइयों का चुनाव जो कि निदर्श को निर्मित करेगी।

(2) निदर्शन की विश्वसनीयता का माप अध्ययन की सफलता व यथार्थता दोनों के लिये निदर्शन का उत्तम होना अत्यावश्यक होता है। अत: एक उत्तम या श्रेष्ठ निदर्शन की निम्नांकित विशेषतायें प्रस्तुत हैं-

(1) पर्याप्त आकार — निदर्शन की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता उसके आकार की है अर्थात एक श्रेष्ठ / उत्तम निदर्शन के लिये यह आवश्यक है कि अनुसंधान समस्या के उद्देश्यों एवं प्रकृति के अनुसार पर्याप्त इकाइयों का चयन किया जाये। अर्थात् यदि हमें किसी गांव के 1000 मुस्लिम परिवारों का अध्ययन करना है तो केवल 10 मुस्लिम परिवारों का चयन पर्याप्त नहीं होगा, बल्कि चुने गये निदर्शन की संख्या इतनी होनी चाहिये कि वह समग्र (मुस्लिम परिवार) का उचित प्रतिनिधित्व कर सके। यहीं पर गुडे एवं व्हाट का कहना है कि एक निदर्शन में प्रतिनिधित्वता के साथ-साथ पर्याप्तता का भी होना आवश्यक है। एक निदर्शन उस समय पर्याप्त होता है जिसका आकार उसके लक्षणों की स्थिरता में विश्वास स्थापित करने के लिये पर्याप्त हो।

(2) समग्र का उचित प्रतिनिधित्व — सर्वप्रथम निदर्शन अपने समग्र का सही प्रतिनिधि होता है अर्थात उसमें वे सभी विशेषताएं पायी जाती हैं जो समग्र में मिलती हैं । प्रतिनिधि निदर्शन प्राप्त करने के लिये यह आवश्यक है कि हम सम्पूर्ण जनसंख्या के अन्तर्गत पाये जाने वाले विभिन्न समूहों का ध्यान रखें और उन्हें अपने निदर्शन में उचित प्रतिनिधित्व प्रदान करें। साथ ही साथ निदर्शन के चुनाव की उपयुक्त प्रणाली को अध्ययन विषय की प्रकृति के अनुसार अपनाने की भी आवश्यकता है।

(3) अभिनति रहित — एक श्रेष्ठ निदर्शन की प्रतिनिधित्वता इस पर निर्भर करती है कि उसका चुनाव अभिनति रहित है या नहीं । सी. ए. मोजर (1959) ने निदर्शन में अभिनति के 3 (तीन) कारण रूपांकित किये हैं।

(अ) यदि निदर्शन अप्रायिकता पद्धति से चुना गया हो। या जब निदर्शन का चुनाव जाने-अनजाने मानवीय इच्छा से प्रभावित हो गया हो, तब वह अभिनतिपूर्ण हो जाता है।

(ब) यदि समग्र सूची अपर्याप्त या अधूरी हो और विषय से सम्बन्धित सभी इकाइयों को अपने में सम्मिलित न कर रही हो।

(स) यदि निदर्शन की कुछ इकाइयों का मिलना कठिन हो अथवा वह सहयोग देने से इन्कार कर दे तो ऐसी स्थिति में निदर्शन का चुनाव तटस्थ होकर किया जाना चाहिये, जिससे अभिनति न होने पाये।

(द) साधनों एवं उद्देश्यों के अनुरूप — निदर्शन का चुनाव करते समय अनुसंधानकर्ता को इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहिये कि चयनित निदर्शन, अनुसंधान के पास उपलब्ध साधनों के अनुरूप ही निदर्शन की संख्या, निदर्शन चयन प्रविधि आदि को चुना जाना चाहिये । इस प्रकार निदर्शन अनुसंधान उद्देश्यों के अनुरूप ही होना चाहिये।

(य) सामान्य ज्ञान तथा तर्क पर आधारित — नियमों के साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि अनुसंधानकर्ता निदर्शन के चुनाव में अपने सामान्य ज्ञान को भी काम में लगाये, जिससे जनसंख्या की प्रमुख विशेषताओं के सम्बन्ध में उसे जानकारी हो और उसी के आधार पर निदर्शनों का उचित चुनाव किया जायेगा।

15.4 निदर्शन का आयोजन

एक निदर्शन के चयन के लिये आवश्यक चरण निम्नलिखित होते हैं। डॉ0 सुरेन्द्र सिंह (1975) के अनुसार एक निदर्शन में आठ चरण होते हैं—

(1) निदर्शित किये जाने वाले समग्र का चुनाव

(2) निदर्शित किये गये समग्र तक पहुंचने के साधनों की जानकारी।

(3) निदर्शन की इकाइयों का चुनाव

(4) निदर्शन के चुनाव के ढंगों का निर्धारण

(5) निदर्शन में सम्मिलित इकाइयों से चुनाव की प्राप्ति

(6) निदर्शन के आंकड़ों का सारिणीकरण एवं विश्लेषण

(7) विचाराधीन समस्या पर प्रतिदर्श के आंकड़ों का प्रयोग।

इसके अलावा अन्य विद्वान एम. पार्टन (1965) ने अपनी कृति 'सर्वेज पोल्स एण्ड सैम्पिल्स' में नियोजन को निम्न चरणों में विभक्त किया है—

(1) सर्वप्रथम समग्र की परिभाषा जाननी चाहिये। इस परिभाषा में अध्ययन के स्थान, समय एवं इच्छित विशेषताओं का स्पष्ट उल्लेख किया जाना चाहिये। प्राय: ऐसे क्षेत्र का अध्ययन करना अधिक उपयुक्त एवं सुविधाजनक होता है जिसकी जनगणना पहले से कर ली गयी हो। समग्र की दृष्टि से इस तथ्य को ध्यान में रखा जाना चाहिये कि अवधि जितनी ही लम्बी होती है प्रतिनिधित्वपूर्ण प्रतिदर्श प्राप्त करने में उतनी ही अधिक कठिनाई का अनुभव करना पड़ता है। इच्छित विशेषताओं की दृष्टि से जनसंख्या की परिभाषा सामाजिक समूहों के संदर्भ में की जानी चाहिये।

(2) समग्र की परिभाषा करने के पश्चात् निदर्शन एवं सारणीकरण के लिये उपयुक्त इकाइयों का चुनाव किया जाना चाहिये। ये इकाइयां भौगोलिक क्षेत्रों, सामाजिक समूहों, परिवारों, स्थानों, व्यक्तियों घटनाओं, व्यवहारों, लक्षणों इत्यादि के रूप में हो सकती हैं। यह सोचना उचित नहीं है कि मानवीय जनसंख्या के साथ कार्य करते हुए केवल व्यक्तियों को ही इकाई के रूप में चुना जा सकता है। प्राय: प्रयोग में लायी जाने वाली इकाइयों को —

(अ) भौगोलिक अथवा राजनीतिक अथवा प्रशासकीय इकाइयों,

(ब) सामाजिक समूहों अथवा संख्याओं,

(स) परिवार अथवा कुटुम्ब या निवास की अन्य इकाइयों

(द) व्यक्तियों तथा

(य) व्यक्तियों के व्यवहारों अथवा विचारों अथवा लक्षणों के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है।

जहां कहीं भी व्यक्तियों को इकाई के रूप में चुना जाता है वहां अध्ययन आदर्श रूप ग्रहण करता है क्योंकि व्यक्तियों द्वारा प्रदान किये गये प्रत्युत्तरों को सारणीबद्ध किया जा सकता है और इन सारणियों की सहायता से अधिक उपयुक्त निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं।

(3) इसके बाद स्रोत सूची का पता लगाया जा सकता है। यद्यपि समग्र एवं निदर्शन की इकाइयों का निर्धारण प्राय: मस्तिष्क में पायी जाने वाली स्रोत सूची के आधार पर किया जाता है फिर भी वास्तविक सूची का निर्माण सम्पूर्ण निदर्शन योजना का एक आवश्यक अंग है।

(4) तत्पश्चात् प्रयोग किये जाने वाले निदर्शन के प्रकार अथवा प्रकारों के विषय में निर्णय लिये जाते हैं ।

(5) इसके बाद निदर्शन के आकार अथवा निदर्शन के अनुपात को निर्धारित किया जाता है।

(6) तत्पश्चात् सम्पूर्ण निदर्शन कार्य रीति की योजना तथा निदर्शन से सम्बन्धित निर्देशों को लिखित स्वरूप प्रदान किया जाता है।

(7) इसके उपरांत निदर्शन की स्रोत सूची का निर्माण तथा निदर्शन का चुनाव किया जाता है।

(8) चुने गये निदर्शन की जांच इस दृष्टि से की जाती है कि वास्तव में सही इकाइयों को ही निदर्शन में सम्मिलित किया गया है।

(9) इसके बाद क्षेत्र अनुसंधान को प्रारम्भ करने के पूर्व निदर्शन के परीक्षण के लिये निदर्शन सारणियों का निर्माण किया जाता है।

(10) आंकड़ों के संग्रह की अवधि के दौरान निदर्शन का नियंत्रण किया जाता है तथा इस बात का प्रयास किया जाता है कि निदर्शन में चुनी गयी सभी इकाइयों से ही सूचना संग्रह की जाये।

(11) निदर्शन में चुनी गयी इकाइयों में पायी जाने वाली विशेषताओं की जांच समग्र के अन्तर्गत पायी जाने वाली विशेषताओं के संदर्भ में की जाती है ताकि निदर्शन में पायी जाने वाली उन विभिन्न विशेषताओं का पता चल सके, जिन पर आरम्भिक स्थितियों में ध्यान न दिया गया हो।

(12) निदर्शन के अन्तर्गत आवश्यकतानुसार सामंजस्य एवं संशोधन किया जाता है।

(13) अनुसंधान में प्राप्त आंकड़ों के निदर्शन की विश्वसनीयता की पृष्ठभूमि में विवेचन किया जाता है।

(14) निदर्शन प्रणालियों को प्रकाशित किया जाता है और प्राप्त हुई समालोचना के आधार पर इनका मूल्यांकन किया जाता है।

15.5 निदर्श का आकार एवं विश्वसनीयता

इसमें हम आपको एक प्रतिदर्श आकार को प्रभावित करने वाले कारकों के विषय में एवं दोषपूर्ण निदर्श के कारणों के विषय में ज्ञान प्रदान करेंगे।

एक आदर्श प्रतिदर्श (निदर्श) क्या है? अर्थात वह प्रतिदर्श, जो कुशलता, प्रतिनिधित्वपूर्णता, विश्वसनीयता एवं लचीलेपन की आवश्यकताओं की पूर्ति करता हो।

पार्टेन (Parten) ने स्पष्ट किया है कि "आदर्श प्रतिदर्श इतना छोटा होना चाहिये कि अनावश्यक व्यय न हो और इतना बड़ा हो कि असहनीय निदर्शन त्रुटि न हो।" प्रतिदर्श का आकार इतना बड़ा अवश्य होना चाहिये कि उसके आधार पर प्रतिनिधित्वपूर्ण, विश्वसनीय एवं यथार्थ निष्कर्ष प्राप्त किये जा सकें। लेकिन इतना बड़ा भी नहीं कि उसके कारण अपव्यय हो और अन्य व्यावहारिक कठिनाइयां उत्पन्न हों।

प्रतिदर्श केआकार को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक निम्नवत हैं-

(1) **समग्र की प्रकृति** - समग्र, जितना ही समजातीय होगा, उतनी कम संख्या का प्रतिदर्श प्रतिनिधित्वपूर्ण एवं विश्वसनीय हो सकता है। एक विषमतापूर्ण समग्र में भी स्तरित निदर्शन द्वारा छोटे आकार का प्रतिनिधि एवं विश्वसनीय निदर्श प्राप्त किया जा सकता है। इसी प्रकार भौगोलिक क्षेत्र में दूर-दूर बिखरी इकाइयों वाले समग्र में व्यावहारिकता की दृष्टि से छोटा प्रतिदर्श ही उपयुक्त होता है अन्यथा अध्ययन अधिक खर्चीला एवं श्रमसाध्य हो सकता है।

(2) **अध्ययन की प्रकृति** — यदि शोध गहन स्तर पर करना है तो कम संख्यावाला प्रतिदर्श अधिक उपयुक्त होता है लेकिन विस्तृत अध्ययन में बड़ा प्रतिदर्श अधिक से अधिक सूचनाओं को प्राप्त कर सकता है।

निदर्शन

(3) **तथ्य संकलन की प्रविधि** — सामान्यतया वैयक्तिक अध्ययन में कम संख्या में इकाइयों का सही अध्ययन किया जा सकता है। लेकिन साक्षात्कार विधि में इससे कुछ अधिक किन्तु प्रश्नावली से कम इकाइयों का अध्ययन व्यावहारिक होता है।

(4) **सारणीकरण में वर्ग विभाजन की संख्या** — जिस शोध में अधिक परिवर्त्यों एवं उसके उपविभाजन का उपयोग किया जाना है वहां बड़ा प्रतिदर्श उपयुक्त होता है। यदि छोटे प्रतिदर्श के आंकड़े कई उपविभाजन में सारणीकृत हों, तो विभिन्न खानों में कभी-कभी इतनी कम सूचना होती है कि उनका सांख्यिकीय विश्लेषण या तुलनात्मक अध्ययन उपयुक्त ढंग से नहीं किया जा सकता।

(5) **निदर्शन का प्रकार** — सामान्यतय: सरल यादृच्छिक निदर्शन की तुलना में स्तरित निदर्शन में छोटे आकार का निदर्श ही अधिक विश्वसनीय एवं प्रतिनिधत्वपूर्ण हो सकता है।

(6) **परिशुद्धता की मात्रा** — अधिक यथार्थ एवं परिशुद्ध परिणाम के लिये बड़ा प्रतिदर्श उपयोगी होत । कम इकाइयों वाले निदर्शन में परिशुद्धता की मात्रा भी कम हो सकती है और उनका अधिक संख्यिकीय विश्लेषण भी संभव नहीं है।

प्रतिदर्श की विश्वसनीयता

प्रतिदर्श के आकार के साथ-साथ विश्वसनीयता का भी ध्यान रखा जाना चाहिये। प्रतिदर्शन (निदर्शन) का उद्देश्य है समग्र के बारे में वास्तविक परिणाम उपलब्ध कराना। लेकिन, त्रुटिपूर्ण निदर्शन के आधार पर पक्षपातपूर्ण निष्कर्ष प्राप्त किये जा सकते हैं। ऐसी स्थिति में प्रतिदर्श को पक्षपातपूर्ण कहा जाता है। प्रतिदर्श जितना ही प्रतिनिधित्व पूर्ण एवं पक्षपातहीन होगा, वह उतना ही विश्वसनीय होगा। जो प्रतिदर्श अपनी मूल जनसंख्या या समग्र का सही प्रतिनिधि नहीं होता वह पक्षपातपूर्ण एवं अविश्वसनीय प्रतिदर्श कहलाता है। प्रतिदर्श की विश्वसनीयता को प्रभावित करने वाले कारण निम्नलिखित हैं—

(अ) **छोटे आकार का प्रतिदर्श** — यदि प्रतिदर्श का आकार आवश्यकता से अधिक छोटा हो तो उसमें समग्र की सभी आवश्यक विशेषताएं सम्मिलित नहीं हो सकती व प्रतिदर्श अप्रतिनिधित्वपूर्ण हो जाता है।

(ब) **प्रतिदर्शन (निदर्शन) विधि की त्रुटि** — यदि दोषपूर्ण एवं उद्देश्यपूर्ण ढंग से प्रतिदर्श का चुनाव किया जाता है, जिसमें वैयक्तिक पक्षपात, अज्ञानता एवं सुविधा पर जोर दिया जाता है तो प्रतिदर्श अविश्वनीय हो जाता है।

(स) **दोषपूर्ण स्तरीकरण** — स्तरित निदर्शन, बहुचरणीय या गुच्छ निदर्शन में दोषपूर्ण स्तर, वर्ग या गुच्छों का निर्माण भी निदर्शन को त्रुटिपूर्ण बनाता है।

(द) **अपूर्ण एवं अस्पष्ट स्त्रोतसूची** — जब समग्र की इकाइयों की सूची अस्पष्ट एवं अपूर्ण होती है तब उससे चुना गया प्रतिदर्श भी उपयुक्त नहीं होता है।

(य) **चुनी गयी अनावश्यक इकाइयों का त्याग** — कभी-कभी प्रतिदर्श में चुनी गयी इकाइयां अध्ययन के लिये उपलब्ध नहीं होती या सहयोग पूर्ण नहीं होती तो ऐसी स्थिति में शोधकर्ता को उन्हें त्यागना पड़ता है और अपने कार्य को त्रुटि रहित बनाना पड़ता है।

15.6 निदर्शन विधि के गुण एवं दोष

आकार एवं विश्वसनीयता के कारकों का विश्लेषण करने के बाद हम आपको निदर्शन पद्धति के गुण एवं दोषों के विषय में ज्ञान प्रदान करेंगे।

निदर्शन विधि एक सरल, वैज्ञानिक तथा विश्वसनीय विधि है जिसके कारण सामाजिक अनुसंधान में इस पद्धति का विशेष महत्व है। निदर्शन विधि के निम्नलिखित लाभ हैं—

गुण :-

(1) **समय व धन (व्यय) की बचत** — शोधकर्ता के पास किसी भी अध्ययन के लिये समय, धन एवं अन्य साधन सीमित होते हैं। ऐसी स्थिति में समग्र की सभी इकाइयों का अध्ययन श्रम, समय एवं धन की दृष्टि से काफी खर्चीला सिद्ध हो सकता है। संगणना पद्धति में इन साधनों का अपव्यय होता है चूंकि उससे सीमित साधन में ही निदर्शन पद्धति से समग्र के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त की जा सकती है। गतिशील सामाजिक घटना के अध्ययन में समय की बचत इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि स्थितियां इतनी जल्दी परिवर्तित होती हैं कि यदि कालबद्ध अध्ययन न किया जाये तो वे पुरानी व असंबद्ध हो सकती हैं। गुडे एवं हाट (1952) ने कहा है कि निदर्शन (प्रतिदर्शन) का प्रयोग एक वैज्ञानिक शोधकर्ता के समय की बचत कर अध्ययन को और अधिक सरल बनाता है कम से कम खर्च करके अधिक से अधिक विश्वसनीय तथ्यों को एकत्रित करना निदर्शन विधि का एक विशेष महत्वपूर्ण गुण है।

(2) **सूक्ष्म एवं गहन अध्ययन** — प्रतिदर्शन में संगणना की तुलना में काफी कम इकाइयों का अध्ययन करना पड़ता है इसलिये शोधकर्ता उनका विशद् एवं गहन अध्ययन कर सकता है। चूंकि उसका कार्य क्षेत्र सीमित हो जाता है इसलिये समान साधन के अन्तर्गत इकाइयों एवं परिवर्त्यो के विविध पहलुओं एवं अंत: सम्बन्धों की विशद् व्याख्या संभव है।

(3) **प्रशासनिक सुविधा**— प्रशासनिक दृष्टिकोण से भी संगणना की तुलना में निदर्शन अधिक सरल विधि है। संगणना विधि में अधिक व्यक्तियों के प्रशिक्षण एवं नियंत्रण, अधिक आकड़ों एवं विस्तृत सारणीकरण आदि के कारण कई प्रशासनिक कठिनाइयाँ सामने आती हैं। कम इकाइयों का अध्ययन होने के कारण निदर्शन विधि में प्रशासनिक सुविधा अधिक होती है।

(4) **सम्पूर्ण जनसंख्या का अध्ययन असंभव** — कभी-कभी सामाजिक अनुसंधान में संपूर्ण जनसंख्या की प्रत्येक इकाई से संपर्क असंभव नहीं, तो कठिन अवश्य होता है। इसके दो प्रमुख कारण हैं—

(अ) एक तो समग्र कभी-कभी स्पष्ट रूप से परिभाषित नहीं होता, वह काल्पनिक एवं असीमित होता है। अत: शोधकर्ता को समग्र की कुल इकाइयों की जानकारी नहीं होती।

(ब) 'समग्र' भौगोलिक दृष्टिकोण से काफी विशाल एवं बिखरा हो सकता है, जिसके कारण प्रत्येक इकाई से संपर्क स्थापित करना न तो संभव होता है और न ही व्यावहारिक। यह वांछित भी नहीं है क्योंकि निदर्शन द्वारा कुछ प्रतिनिधि इकाइयों के अध्ययन से भी वैसे ही विश्वसनीय निष्कर्ष प्राप्त किये जा सकते हैं।

(5) **निष्कर्षों की यथार्थता एवं परिशुद्धता** — प्राय: निदर्शन सर्वेक्षण में हम अधिक यथार्थ एवं विश्वनीय निष्कर्ष प्राप्त कर सकते हैं। संगणना विधि में इकाइयों एवं आंकड़ों की संख्या विशाल हो

जाती है अत: व्यावहारिक स्तर पर उनकी यथार्थता की जांच या पुन: परीक्षण संभव नहीं है। निदर्शन विधि में अध्ययन का आकार सीमित होता है अत: अधिक यथार्थ निष्कर्ष प्राप्त किये जा सकते हैं और तथ्यों का पुन: परीक्षण भी संभव है। सांख्यिकीय विधि से भी निष्कर्षों की शुद्धता की जांच निदर्शन विधि में संभव है। इस तरह संगणना विधि की तुलना में निदर्शन विधि के तथ्य एवं निष्कर्ष अधिक विश्वसनीय एवं यथार्थ हो सकते हैं । लेकिन यहां पर एक बिन्दु अति ध्यान देने योग्य है कि निदर्शन विधि के निष्कर्ष अधिक यथार्थ होते हैं यह इस बात पर आधृत है कि निदर्श विश्वसनीय एवं प्रतिनिधित्वपूर्ण हो।

रोजेंडर ने सही कहा है कि 'प्रतिदर्श' को यदि सावधानी से प्राप्त किया जाये, तो प्रतिदर्श न केवल सस्ता रहता है बल्कि ऐसे परिणामों को भी प्रस्तुत कर सकता है जो अत्यधिक यथार्थ होते हैं तथा कभी-कभी संगणना विधि की तुलनामें अधिक परिशुद्ध होते हैं।

इस प्रकार अभी आपने निदर्शन के गुणों का ज्ञान प्राप्त किया है । अब दोषों (सीमाओं) का ज्ञान प्रदान करेंगे।

दोष एवं सीमाएं

निदर्शन के जिन गुणों की चर्चा की गयी है, उस संबंध में सबसे प्रमुख शर्त यह है कि सही एवं प्रतिनिधित्वपूर्ण प्रतिदर्श का चुनाव किया गया हो नहीं तो निदर्शन का असावधानीपूर्वक उपयोग संपूर्ण अध्ययन को दोषपूर्ण बना सकता है। सामाजिक अनुसंधान में निदर्शन विधि के निम्नांकित दोष भी हैं—

(1) **दोषपूर्ण प्रतिदर्श** — निदर्शन की एक प्रमुख सीमा, इस बात से संबद्ध है कि शोधकर्ता दोषपूर्ण प्रतिदर्श का चुनाव कर ले। अविश्वसनीय एवं अप्रतिनिधित्वपूर्ण प्रतिदर्श पर आधारित निष्कर्ष दोषपूर्ण ही नहीं होते, बल्कि शोधकर्ता को यह भ्रम भी हो सकता है कि उसके निष्कर्ष उचित, विश्वनीय एवं यथार्थ हैं। साधारणत: ये दोष अनुसंधानकर्ता के व्यक्तिगत पक्षपात, प्रतिदर्श के चुनाव की त्रुटिपूर्ण पद्धति प्रतिदर्श के आकार या समग्र की जटिलता आदि के कारण उत्पन्न हो सकते हैं।

(2) **समग्र की जटिलता** — कभी-कभी शोधकर्ता के सामने एक प्रमुख समस्या यह होती है कि जटिल समग्र से प्रतिनिधि प्रतिदर्श का चुनाव कैसे किया जाए। समग्र में कभी कोई इकाई काफी कम संख्या में होती है तो कभी उसका वितरण काफी छिटपुट होता है। उचित प्रतिनिधित्व पूर्ण प्रतिदर्श के लिये उनको सम्मिलित करने का अर्थ है विशाल प्रतिदर्श का चुनाव। और तब संगणना विधि से छोटे आकार के होने के निदर्शन विधि में जो लाभ हैं जैसे - समय, श्रम व धन की बचत, अधिक गहन व यथार्थ अध्ययन - वे सभी नगण्य हो जाते हैं।

(3) **निदर्शन प्रयोग की असंभावना** — कभी-कभी स्थिति एवं अध्ययन उद्देश्य की मांग इस प्रकार की होती है कि प्रत्येक इकाई के संपर्क के बिना अध्ययन संभव नहीं हो पाता । जैसे जनगणना में हम निदर्शन विधि का प्रयोग नहीं करते। इसी तरह, छोटे समग्र में निदर्शन का प्रयोग अनुपयुक्त होता है।

(4) **जटिल निदर्शन योजना** — पार्टेन ने निदर्शन की सीमा का उल्लेख करते हुए बताया कि यदि निदर्शन की योजना जटिल व बोझिल हुई तो अंतत: संगणना विधि से भी खर्चीली सिद्ध होती है। प्रत्येक जटिलता के साथ निदर्शन त्रुटि में वृद्धि होती जाती है।

(5) **शोधकार्य की आवश्यकताएं** — पार्टेन, डमिंग आदि ने कहा है कि यदि अनुसंधान कार्य में सारणीकरण में अधिक श्रेणियों या उपविभाजन की आवश्यकता है तो उसके लिये अधिक से अधिक इकाइयों के अध्ययन की आवश्यकता पड़ती है । निदर्शन का ऐसी स्थिति में सीमित उपयोग है, संगणना विधि इस दृष्टि से उपयुक्त विधि है।

(6) **पक्षपात व पूर्वाग्रह की संभावना** — निदर्शन विधि का सबसे बड़ा दोष यह है कि निदर्शन का चुनाव पक्षपात व पूर्वाग्रह रहित नहीं हो पाता है। निदर्शनों का चुनाव करते समय किसी न किसी रूप में इन दोनों तथ्यों का प्रवेश हो ही जाता है। जिसके फलस्वरूप चुने हुए निदर्शन पूर्णतया प्रतिनिधित्व पूर्ण नहीं हो पाते हैं। हमारा निष्कर्ष भ्रमपूर्ण हो जाता है।

इस प्रकार अंत में हम यह कह सकते हैं कि निदर्शन विधि एक सरल, वैज्ञानिक व महत्वपूर्ण विधि है। किन्हीं दोषों के होने पर भी इसके महत्व को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है।

15.7 सारांश

इस इकाई में हमने सर्वप्रथम निदर्शन के सम्बोध को समझा है तदुपरांत इसकी विविध विद्वानों द्वारा प्रस्तुत परिभाषाओं से परिचित होते हुए इसकी विशेषताओं के विषय में चर्चा की है। निदर्शन का आयोजन किस प्रकार किया जाये, इसके विषय में भी आवश्यक ज्ञान प्राप्त किया । प्रतिदर्श (निदर्श) के आकार व विश्वसनीयता को प्रभावित करने वाले कारकों के विषय में ज्ञान प्राप्त किया। तदुपरांत निदर्शन विधि के गुण एवं दोषों के विषय में चर्चा की है।

15.8 बोध प्रश्न

(क) वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्र. 1 किस विधि के अन्तर्गत समग्र की सभी इकाइयों या तत्वों का अध्ययन किया जाता है—

(अ) वैयक्तिक अध्ययन विधि (ब) प्रतिदर्शन विधि (स) संगणना विधि

प्र. 2 किस विधि में समग्र से चुनी गयी कुछ प्रतिनिधि इकाइयों का ही अध्ययन कर निष्कर्ष निकाला जाता है -

(अ) निदर्शन विधि (ब) संगणना विधि (स) प्रश्नावली विधि

प्र. 3 सामाजिक सर्वेक्षण में 1906 ई में किस विद्वान ने विभिन्न समूह के एक-एक परिवार के अध्ययन के लिये सर्वप्रथम व्यवस्थित रूप से प्रतिदर्शन का प्रयोग किया-

(अ) बाउली (ब) बूथ (स) राउनट्री (द) जेंसन

प्र. 4 निदर्शन का तात्पर्य है -

(अ) समग्र अध्ययन (ब) कुछ का अध्ययन (स) चुनी गयी इकाइयों का अध्ययन

प्र. 5 ''एक प्रतिदर्श किसी बड़े समग्र का छोटा प्रतिनिधि होता है'' ऐसा किस विद्वान का कथन है—

(अ) गुडे एवं हाट (ब) पी. वी. यंग (स) फेयरचाइल्ड

(ख) लघु उत्तरीय प्रश्न

प्र. 1 निदर्शन से आप क्या समझते हैं?

प्र. 2 निदर्शन की विशेषताओं को स्पष्ट कीजिये ?

प्र. 3 निदर्शन विधि से क्या लाभ है?

प्र. 4 एक उत्तम निदर्शन की क्या विशेषतायें होती हैं?

प्र. 5 निदर्शन के आकार को प्रभावित करने वाले कारकों की विवेचना कीजिये?

(ग) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्र. 1 निदर्शन के संबोध को स्पष्ट करते हुए एक उत्तम निदर्शन की विशेषताओं की व्याख्या कीजिये।

प्र. 2 निदर्शन विधि के गुण एवं दोषों का वर्णन कीजिये ?

15.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

क) उ. 1 (स) संगणना विधि

उ. 2 (अ) निदर्शन विधि

उ. 3 (अ) बाउली

उ. 4 (स) चुनी गयी इकाइयों का अध्ययन

उ. 5 (अ) गुडे एवं हाट

इकाई 16 निदर्शन के प्रकार, निदर्शन की समस्याएं एवं उनके उपाय

इकाई की रूपरेखा

16.0 उद्देश्य

16.1 प्रस्तावना

16.2 निदर्शन के प्रमुख प्रकार

16.2.1 दैव अथवा यादृच्छिक निदर्शन

16.2.2 दैव या यादृच्छिक निदर्शन की प्रविधियां

16.2.3 दैव निदर्शन के गुण एवं दोष (सीमाएं)

16.3 स्तरीकृत निदर्शन

16.3.1 स्तरीकृत निदर्शन के प्रकार

16.3.2 स्तरीकृत निदर्शन के लाभ एवं हानियां

16.4 बहुस्तरीय निदर्शन

16.5 क्रमबद्ध या व्यवस्थित निदर्शन

16.6 गुच्छ निदर्शन

16.6.1 गुच्छ निदर्शन के लाभ एवं दोष

16.7 असंभावित निदर्शन के प्रकार

16.8 निदर्शन की प्रमुख समस्याएं एवं उनके उपाय

16.9 सारांश

16.10 बोध प्रश्न

16.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

16.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :

- दैव निदर्शन की प्रविधियों व उसके गुण दोषों का उल्लेख कर सकेंगे।
- स्तरीकृत निदर्शन के बारे में विवेचना कर सकेंगे।
- बहुस्तरीय एवं क्रमबद्ध निदर्शन की विवेचना कर सकेंगे।
- गुच्छ निदर्शन के गुण-दोष का वर्णन कर सकेंगे।

16.1 प्रस्तावना

इस इकाई (इकाई दो)के प्रारम्भ में निदर्शन के दो प्रमुख स्वरूपों संभाविता निदर्शन व असंभाविता निदर्शन के विषय में ज्ञान प्राप्त करेंगे। तदुपरांत संभाविता निदर्शन के प्रमुख प्रकारों जैसे- दैव निदर्शन, स्तरीकृत निदर्शन, बहुस्तरीय निदर्शन, क्रमबद्ध या व्यवस्थित निदर्शन व गुच्छ निदर्शन आदि का अध्ययन करेंगे। इसी प्रकार दैव निदर्शन की प्रमुख विधियों में लाटरी विधि, कार्ड या टिकट विधि, नियमित अंकन विधि, अनियमित अंकन विधि, टिपेट विधि तथा ग्रिड विधि का ज्ञान प्राप्त करेंगे। इसके पश्चात् असंभाविता निदर्शन या अप्रायिकता निदर्शन के प्रमुख स्वरूपों जैसे अंश या कोटा निदर्शन, उद्देश्यपूर्ण निदर्शन, आकस्मिक निदर्शन तथा सुविधाजनक निदर्शन का अध्ययन करेंगे। स्तरीकृत निदर्शन के भी दो प्रमुख स्वरूपों (1) समानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन (2) असमानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन, का भी ज्ञान प्राप्त करते हुए अंत में निदर्शन की प्रमुख समस्याओं का भी अध्ययन करेंगे ।

16.2 निदर्शन के प्रमुख प्रकार

इस इकाई में हम आपको निदर्शन के प्रमुख प्रकारों के विषय में ज्ञान प्रदान करेंगे। सामाजिक अनुसंधान कर्ता अपने अध्ययन में विभिन्न प्रकार की निदर्शन विधियों का प्रयोग करता है। निदर्शन की विविध प्रणालियों का पूर्ण वर्गीकरण एक कठिन समस्या है। इसका प्रमुख कारण यह है कि एक तो वैज्ञानिकों में विभिन्न निदर्शन विधियों की नामावली के बारे में सहमति नहीं है, बल्कि एक ही निदर्शन विधि को भिन्न-भिन्न नामों से भी उल्लिखित किया जाता है । कई निदर्शन विधियां एक से अधिक निदर्शन विधियों के मिश्रित रूप हैं जिन्हें शोधकर्ता अपनी आवश्यकता के अनुसार विकसित करता है।

निदर्शन को उसके चुने जाने के ढंग के आधार पर दो बड़े वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

(अ) प्रायिकता या संभाविता निदर्शन

(ब) अप्रायिकता या असंभाविता निदर्शन

अब हम संभाविता तथा असंभाविता निदर्शन की चर्चा करेंगे।

(अ) प्रायिकता या संभाविता निदर्शन :

संभाविता निदर्शन या प्रायिकता निदर्शन वह है, जिसमें समग्र की प्रत्येक इकाई के चुने जाने की कितनी संभावना है यह ज्ञात रहती है और इसकी गणना की जा सकती है। सेल्टिज, जहोदा आदि के अनुसार, ''संभाविता निदर्शन की अनिवार्य विशेषता यह है कि समग्र की प्रत्येक इकाई के प्रतिदर्श में चुने जाने की संभावना की गणना की जा सकती है।''

अपने सरलतम तथा आदर्श रूप में संभाविता निदर्शन में समग्र की प्रत्येक इकाई को चुने जाने का समान अवसर प्राप्त होता है । उदाहरण स्वरूप यदि समग्र में 1000 इकाइयां हैं और उससे यादृच्छिक विधि से 100 इकाइयां प्रतिदर्श के रूप में चुनी जाती हैं तो प्रत्येक इकाई के चुने जाने की संभावना 100/1000 = दस में एक है। इस प्रकार प्रायिकता या संभाविता निदर्शन की निम्नांकित विधियां हैं।

(1) सरल दैव निदर्शन या सरल यादृच्छिक निदर्शन,

(2) स्तरीकृत निदर्शन,

(3) बहुस्तरीय निदर्शन

(4) क्रमबद्ध या व्यवस्थित निदर्शन

(5) गुच्छ निदर्शन

इसके अतिरिक्त बहुपक्षीय निदर्शन तथा क्षेत्र निदर्शन आदि भी संभावित निदर्शन के उदाहरण हैं।

(ब) अप्रायिकता या असंभाविता निदर्शन :-

प्रायिकता निदर्शन के बिल्कुल विपरीत स्थिति अप्रायिकता निदर्शन के नाम से जानी जाती है। चूँकि इसका चुनाव अनुसंधानकर्ता की इच्छा पर निर्भर करता है अत: इसमें ''न तो प्रत्येक तत्व के निदर्शन में सम्मिलित होने की संभावना का अनुमान लगाने का कोई तरीका है और न ही इसकी गारण्टी कि प्रत्येक तत्व को निदर्शन में सम्मिलित होने का अवसर मिलेगा।''

अप्रायिकता या असंभाविता निदर्शन में समान्यत: आकस्मिक उद्देश्यपूर्ण एवं अभयन्श निदर्शन की पद्धतियों को रखा जाता है । असंभाविता निदर्शन का प्रयोग प्राय: जनसंख्या के व्यापक एवं असीम होने के कारण किया जाता है जब संपूर्ण जनसंख्या का स्वरूप स्पष्ट न हो एवं साधन सीमित हो, तब शोधकर्ता प्राय: अप्रायिकता या असंभाविता निदर्शन का प्रयोग करता है । संभाविता निदर्शन की तुलना में इस विधि में पक्षपात की काफी संभावना होती है अत: जब अनुमान की परिशुद्धता अधिक महत्वपूर्ण न हो तब इस प्रकार के निदर्शन उपयोगी एवं सुविधापुर्ण सिद्ध होते हैं । असंभाविता निदर्शन की निम्नांकित विधियां हैं—

(1) अंश या कोटा निदर्शन (Quota sampling)

(2) उद्देश्यपूर्ण निदर्शन

(3) आकस्मिक निदर्शन

(4) सुविधाजनक निदर्शन

इसके अतिरिक्त स्वयंचयित निदर्शन को भी इसमें सम्मिलित किया जा सकता है।

निदर्शन के प्रकारों को चित्रात्मक रूप में निम्न प्रकार से प्रस्तुत किया जा सकता है जो अग्रांकित है—

संभावित निदर्शन के प्रकार

16.2.1 दैव अथवा यादृच्छिक निदर्शन

दैव निदर्शन या सरल यादृच्छिक निदर्शन संभवत: सबसे आधारभूत संभावित निदर्शन है। सरल यादृच्छिक

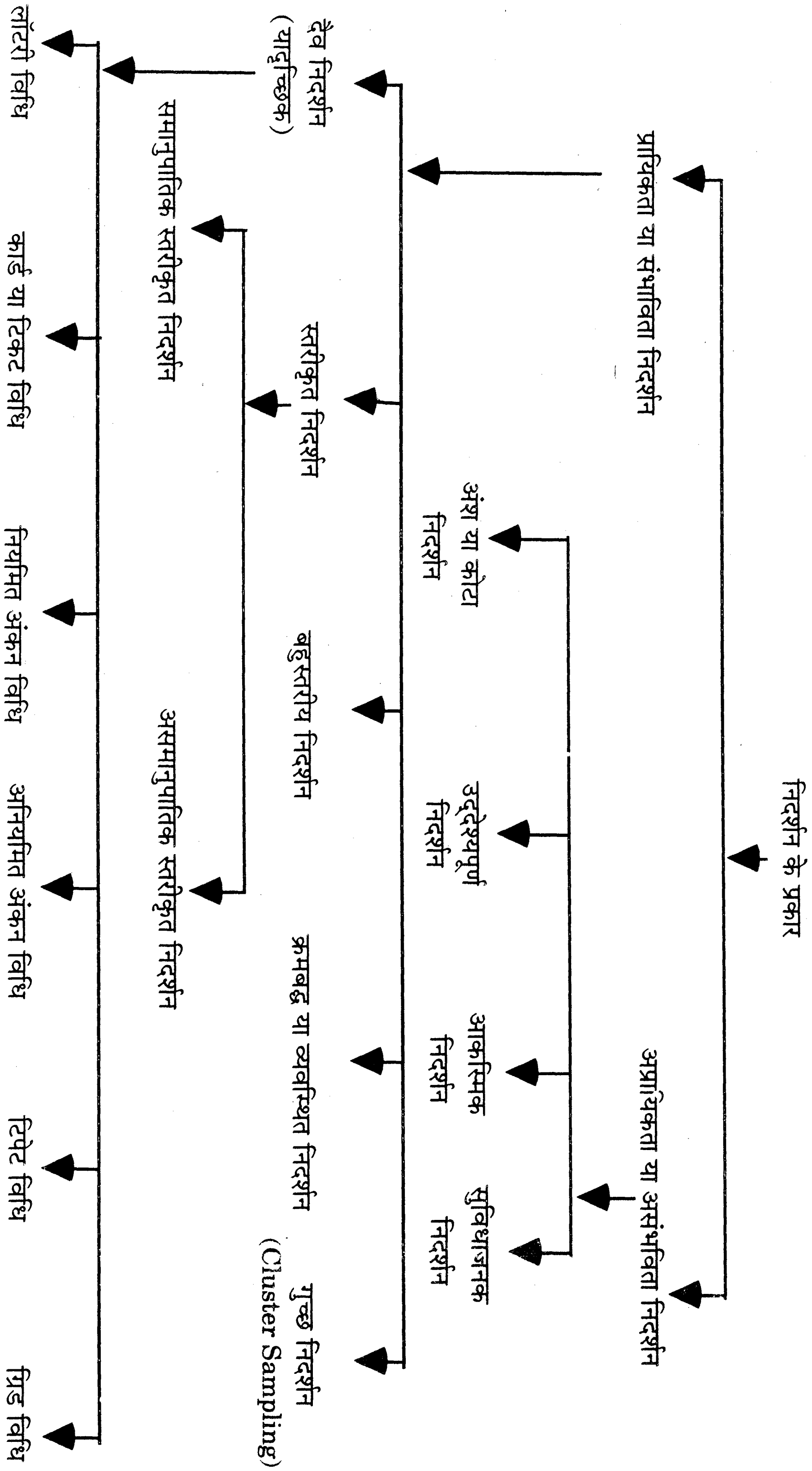
निदर्शन के प्रकार
प्रायिकता या संभाविता निदर्शन
अप्रायिकता या असंभाविता निदर्शन
दैव निदर्शन
(यादृच्छिक)
स्तरीकृत निदर्शन
बहुस्तरीय निदर्शन
क्रमबद्ध या व्यवस्थित निदर्शन
गुच्छ निदर्शन
(Cluster Sampling)
अंश या कोटा
निदर्शन
उद्देश्यपूर्ण
निदर्शन
आकस्मिक
निदर्शन
सुविधाजनक
निदर्शन
समानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन
असमानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन
लॉटरी विधि
कार्ड या टिकट विधि
नियमित अंकन विधि
अनियमित अंकन विधि
टिपेट विधि
ग्रिड विधि

निदर्शन संभावित निदर्शन का सरलतम एवं मूल स्वरूप है । साधारण 'यादृच्छिक' या 'दैव' शब्द का अर्थ लोग 'आकस्मिक' या 'भाग्य' पर आधृत चुनाव से ले लेते हैं। लेकिन सरल यादृच्छिक या दैव निदर्शन एक सुनिश्चित प्रक्रिया द्वारा समग्र से इकाइयों का चुनाव है, जिसमें व्यक्तिगत पक्षपात के लिये स्थान नहीं होता। बल्कि चुनाव की प्रक्रिया ऐसी होती है कि प्रत्येक इकाई के लिये जाने का सामान अवसर होता है। यदि निदर्शन इस प्रकार किया जाये कि समग्र के सभी तत्वों या इकाइयों को निदर्शन में चुने जाने की संभावना समान हो तो उसे हम यादृच्छिक निदर्शन कहते हैं।

मिल्ड्रेड पार्टेन (1965) का मानना है कि यादृच्छिक प्रतिदर्शन शब्दावली का प्रयोग तब किया जाता है, जब चुनाव पद्धति समग्र की प्रत्येक इकाई या व्यक्ति के चुने जाने का समान अवसर प्रदान करने का आश्वासन देती है। इसी प्रकार अन्य विद्वान कर्लिंगर (1966) का मानना है कि यादृच्छिक निदर्शन वह विधि है, जिसमें संपूर्ण जनसंख्या के एक अंश का इस प्रकार चयन किया जाता है कि उस जनसंख्या या समग्र की प्रत्येक इकाई के चयन किए जाने का समान संयोग रहता है।

गुड एवं हाट (1952) का कहना है कि दैव निदर्शन में समय की इकाइयों को इस प्रकार क्रमबद्ध किया जाता है कि चयन प्रक्रिया में उस समग्र की प्रत्येक इकाई के चयन की समान संभावना रहती है। इस प्रकार यादृच्छिक निदर्शन में समग्र की प्रत्येक इकाई को प्रतिदर्श में चुने जाने का समान व स्वतंत्र अवसर प्राप्त होता है। 'समान अवसर' का अर्थ है कि समग्र की प्रत्येक इकाई के चुने जाने की संभावना बराबर एवं शून्य से अधिक होती है। जब इकाइयों के चुनाव की पद्धति ऐसी सब संभाविता के सिद्धान्त पर आधारित होती है, तब इसका भी आश्वासन होता है कि चुनाव निष्पक्ष एवं किसी भी प्रकार के पूर्वाग्रह से मुक्त होगा। उदाहरण के लिये यदि हम 1000 छात्राओं में 100 छात्राओं का प्रतिदर्श चुनने में यादृच्छिक विधि का प्रयोग करते हैं इसका अर्थ है प्रत्येक छात्रा के चुने जाने की संभावना 100/1000 = 1/10 है। इस प्रकार सरल यादृच्छिक निदर्शन में निम्नांकित विशेषताएं होती हैं—

(अ) समग्र की प्रत्येक इकाई के प्रतिदर्श में चुने जाने का समान अवसर

(ब) चुनाव पूर्वाग्रह एवं पक्षपात से मुक्त एवं संयोग तथा यांत्रिक प्रक्रिया पर आधारित

(स) इकाइयों के चुनाव का अवसर एक दूसरे से स्वतंत्र तथा अप्रभावित

एम. पार्टेन के अनुसार दैव निदर्शन के प्रयोग में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखा जाना चाहिये—

(1) समग्र की इकाइयां स्पष्ट होनी चाहिए एवं उनकी सूची तैयार की जानी चाहिये।

(2) इकाइयों का आकार लगभग एक समान हो।

(3) प्रत्येक इकाई एक दूसरे से स्वतंत्र हो।

(4) प्रत्येक इकाई को निदर्शन में चुनाव का समान अवसर मिलना चाहिए।

(5) निदर्शन चयन की विधि स्वतंत्र होनी चाहिये।

(6) अध्ययनकर्ता की प्रत्येक इकाई तक पहुंच सुलभ होनी चाहिये।

(7) चुनी हुई इकाई को न तो छोड़ा जाना चाहिये और न ही उसका परिवर्तन करना चाहिये।

16.2.2 दैव या यादृच्छिक निदर्शन की प्रविधियां

यादृच्छिक निदर्शन में इकाइयों के पक्षपात रहित चुनाव के लिये भिन्न-भिन्न प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है ताकि प्रत्येक इकाई को चुने जाने का समान अवसर प्राप्त हो।

दैव या यादृच्छिक निदर्शन के चयन के लिये सर्वप्रथम समग्र की सभी इकाइयों की एक पूर्ण सूची बनाकर इन्हें क्रमांकित कर लिया जाता है। इस तरह, प्रत्येक इकाई या व्यक्ति को एक क्रमसंख्या प्राप्त हो जाती है इसे हम निदर्शन फ्रेम बनाना कहते हैं । इसके बाद एक निश्चित संख्या में प्रतिदर्श का चुनाव किया जाता है जो मानव पक्षपात से रहित किसी सांयोगिक क्रिया पर आधारित होती है। संयोग पर आधारित प्रणाली न केवल इकाइयों के चुनाव को निष्पक्ष एवं पूर्वाग्रहहीन बनाती है बल्कि यह प्रत्येक इकाई को चुनाव का समान अवसर भी प्रदान करती है। दैव निदर्शन की प्रमुख प्रविधियां निम्न हैं:-

(1) लाटरी विधि

(2) कार्ड या टिकट विधि

(3) नियमित अंकन विधि

(4) अनियमित अंकन विधि

(5) टिपेट विधि

(6) ग्रिड विधि

(1) लॉटरी विधि : सरल दैव निदर्शन के चुनाव की यह विधि बहुत ही सरल है। कई सामान्य अवसरों पर इसका प्रचलन दिखायी पड़ता है। इस विधि के अन्तर्गत अनुसंधानकर्ता समग्र की प्रत्येक इकाई के लिये एक-एक कागज की पुर्जी (टुकड़े) तैयार करता है फिर उस पर इकाई का नाम या संकेत लिख दिया जाता है। इस प्रकार बनायी गयी पुर्जियां (टुकड़े) के आधार पर कागज की गोलियां बना ली जाती हैं और उन्हें एक साथ ठीक से मिला दिया जाता है। ऐसा करने के बाद अनुसंधानकर्ता जिस संख्या में निदर्शन का चुनाव करना चाहता है उतनी गोलियां निकाल लेता है और उन पर जिन इकाइयों के नाम या संकेत होते हैं उन्हें निदर्शन मान लिया जाता है। इस विधि का उपयोग करने के लिये एक सावधानी यह रखनी पड़ती है कि सभी गोलियों का आकार बराबर हो। इसे फिश बाउल विधि भी कहते हैं।

उदाहरण - यदि हमें 500 छात्रों की समष्टि में से 10 का दैव निदर्शन लेना है तो हम समष्टि के प्रत्येक ...य का नाम कागज की एक पर्ची पर लिख लेगें। ये पर्चियां एक जैसी होनी चाहिये। फिर इन्हें मोड़ कर इनकी गोलियां जैसी बना लेगें और एक गोल बर्तन में खूब मिला देंगे। फिर इनमें से एक निकाल कर बाकी को खूब मिला देंगे। इस प्रकार एक-एक करके 10 पर्चियां निकाल लेंगे और इन पर लिखे नामों से हमारा निदर्शन बन जायेगा।

(2) कार्ड या टिकट विधि :- यह प्रणाली लाटरी विधि से मिलती-जुलती है लाटरी विधि में कागज की पर्चियों के उपयोग के कारण उसका एक प्रमुख दोष यह है कि ये पर्चियां एक दूसरे से चिपक सकती हैं। अत: कार्ड विधि में पर्चियों की जगह कार्ड का उपयोग किया जाता है। सबसे पहले एक से आकार, रंग या बनावट के कार्डो या टिकटों पर जनसंख्या (समग्र) की समस्त इकाइयों के नाम अथवा संख्या या कोई अन्य चिह्न अंकित कर दिया जाता है। सबको एकत्रित कर गोल तथा बड़े ड्रम में भर कर पचास बार घुमाया जाता है। प्रत्येक पचास बार घुमा कर एक बार एक कार्ड या टिकट निकाल लिया जाता है। जितनी इकाइयों का चुनाव करना होता है, उतने पचास बार घुमाकर कार्ड निकाले जाते हैं फिर निकाले गये कार्डो वाली इकाइयों का शोधकर्ता द्वारा अध्ययन किया जाता है।

(क) लाटरी विधि में शोधकर्ता (अन्य कोई) आंख बंद करके इकाइयों का चयन करता है।

(ख) जब कि कार्ड या टिकट विधि में आंख खुली रखकर इकाइयों का चयन किया जाता है।

इन दोनों के मध्य यह एक प्रमुख अंतर है।

(3) नियमित अंकन प्रणाली :- इस पद्धति के द्वारा अनुसंधानकर्ता जब निदर्शन का चुनाव करता है तब सबसे पहले वह वर्गान्तर की गणना करता है। इसके लिये निम्न सूत्र को काम में लिया जाता है।

$$\therefore \quad \text{वर्गान्तर} = \frac{\text{समग्र का आकार}}{\text{निदर्शन का आकार}}$$

इस प्रकार वर्गान्तर की गणना करने के पश्चात् आरंम्भिक बिन्दु का चुनाव किया जाता है और उसके लिये अनुसंधानकर्ता पहली संख्या व वर्गान्तर के बीच की किसी एक संख्या का चुनाव लाटरी या दैव अंक विधि से करता है। इस आरम्भिक संख्या का चयन करने के बाद वह उसमें वर्गान्तर जोड़ता है और इसी प्रक्रिया को समग्र की अंतिम संख्या तक जारी रखा जाता है । इस प्रकार जो विभिन्न संख्यायें प्राप्त होती हैं उन पर समग्र की सूची में जिन इकाइयों के नाम होते हैं उन्हें निदर्शन में सम्मिलित कर लिया जाता है।

उदाहरण - यदि हमें 100 (सौ) विद्यार्थियों में से 10 विद्यार्थियों का चयन करना है तो पहले वर्गान्तर = 100/10 = 10 ज्ञात कर लेंगे। फिर एक व दस के बीच की कोई संख्या लाटरी या दैव अंक विधि द्वारा चुन लेते हैं जैसे = वह संख्या 4 है फिर उस चयनित संख्या में वर्गान्तर जोड़ देते हैं अर्थात चार + दस = चौदह, फिर जो संख्या (चौदह) प्राप्त होती है उसमें वर्गान्तर (दस)जोड़ते जाते हैं । यही क्रम चलता रहता है । अर्थात चार, चौदह, चौबीस, चौंतीस, चवालीस, चौवन, चौसठ, चौहत्तर, चौरासी, चौरानबे। इस प्रकार इन संख्याओं पर जिन इकाइयों का नाम होता है उन्हें निदर्शन में सम्मिलित कर लिया जाता है।

(4) अनियमित अंकन विधि :- इस विधि से निदर्शन का चुनाव करने के लिये पहले समग्र की समस्त इकाइयों की सूची बना ली जाती है तथा प्रथम और अंतिम अंक को छोड़कर शेष इकाइयों की सूची में से निर्धारित मात्रा में अनियमित ढंग से इकाइयों पर निशान लगा दिया जाता है।

उदाहरण- सौ छात्रों में से दस छात्रों का निदर्शन लेने के लिये पहले हम इनके सभी नामों की एक सूची तैयार करेंगे। तत्पश्चात एक से दस, दस से बीस, बीस से तीस, व इसी प्रकार से अन्य वर्गों में भी प्रत्येक वर्ग में से किसी भी एक इकाई पर सही का निशान लगा देंगे, व इस प्रकार दस इकाइयों का चयन कर लिया जायेगा। इस विधि में पक्षपात की संभावना प्रबल रहती है।

(5) टिपेट विधि :- सरल दैव निदर्शन के चयन की अन्य विधि को टिपेट (Random) विधि के नाम से जाना जाता है। इस प्रणाली को 1927 में प्रो. टिपेट ने गणतीय अंकों के आधार पर तैयार किया था। टिपेट की तरह ही फिशर एवं वेल्स (1936), केण्डल एवं स्मिथ (1939), रेण्ड कारपोरेशन (1955), राव मित्रा एवं मथाई (1966) ने भी निदर्शन सारणियां बनायी हैं लेकिन वर्तमान में टिपेट सारणी का प्रयोग अधिक किया जाता है टिपेट ने चार अंकों वाली 10,400 संख्याओं की एक सूची बनायी। उन संख्याओं को दैव निदर्शन का प्रयोग करने के लिये सुनिश्चित कर दिया गया। यह संख्या बिना किसी क्रम के कई पृष्ठों पर लिखी हुई है । शोधकर्ता को जितनी इकाइयों का अध्ययन करना होता है वह उतनी इकाइयों को किसी भी पृष्ठ से लगातार लेता जाता है।

उदाहरण – टिपेट सारणी का अंश

2952	6641	3992	9792	7979
4167	9524	1545	1396	7203
2370	7483	3408	2762	3563
0560	5246	1112	6107	6008
2754	9143	1405	9025	7002

अब यदि हमें 1000 मतदाताओं की सूची से 100 मतदाताओं का चुनाव यादृच्छिक विधि से करना है तो उपयुक्त सारणी के अंतिम तीन अंकों का चुनाव करते चलेंगे, जब तक सौ की संख्या तक न पहुँच जायेगें। यदि कोई संख्या दो बार आती है तो उसे छोड़कर आगे वाली संख्या ले लेगें। जैसे ऊपर की सारणी में पहले 952, 167, 370, 560, 754,..... इसी तरह तीसवीं संख्या के रूप में 002 प्राप्त करेंगें। यह चुनाव हम अन्य तरीकों जैसे प्रथम तीन अंकों के चुनाव द्वारा भी कर सकते हैं। जैसे 295, 416, 237, 56 ...... और 700।

(6) ग्रिड विधि :- यह क्षेत्र या भौगोलिक आधार पर निदर्शन निर्माण की प्रणाली है इसमें किसी विशाल भौगोलिक क्षेत्र का जहां से निदर्शन लेना है, नक्शा या मानचित्र लिया जाता है, उस मानचित्र पर सेल्यूयांयड की पारदर्शक ग्रिड प्लेट रख दी जाती है। इस प्लेट में वर्गाकार चौकोर खाने कटे हुए तथा उन पर नम्बर लिखे हुए होते हैं। यह पहले ही निश्चित कर लिया जाता है कि किस आधार पर किन-किन नम्बरों वाली इकाइयों को अध्ययन का विषय बनाना है। इन नम्बरों का निर्णय आकस्मिक ढंग से किया जाता है। मानचित्र के जिन हिस्सों पर निर्धारित नम्बरों के वर्गाकार खाने आते हैं उनको चिन्हित करके अध्ययन के लिये चुन लिया जाता है। इसे क्षेत्र निदर्शन भी कहते हैं किन्तु वह थोड़ा-सा भिन्न प्रकृति का होता है।

16.2.3 दैव निदर्शन के गुण एवं दोष (सीमाएं)

। निदर्शन के प्रमुख गुण निम्नलिखित हैं-

गुण :-

(1) इस विधि में प्रत्येक इकाई के चुने जाने के समान अवसर होते हैं, अत: यह विधि प्रतिनिधत्व पूर्ण है।

(2) इस पद्धति द्वारा प्राप्त प्रतिदर्श अनुसंधानकर्ता के पक्षपात से मुक्त होता है।

(3) यह निदर्शन की सबसे सरल विधि है इसमें जटिल अथवा गूढ़ सिद्धान्तों का पालन नहीं करना पड़ता है।

(4) इस विधि में समग्र धन और श्रम की भी बचत होती है अर्थात यह विधि मितव्ययितापूर्ण है।

(5) यादृच्छिक निदर्शन में प्रतिदर्शन या निदर्शन त्रुटि की गणना की जा सकती है जिसके आधार पर शोधकर्ता अपने निष्कर्ष की सीमाओं की माप कर सकता है। वह यह गणना कर सकता है कि निदर्शन से प्राप्त निष्कर्ष समग्र की विशेषताओं से किस मात्रा में भिन्न है।

(6) दैव निदर्शन की इकाइयां एक समग्र की परिवर्तनशीलता को अधिक अच्छे ढंग से स्पष्ट कर सकती हैं अपेक्षाकृत उस स्थिति के जिसमें समान संख्या में इकाइयों का चुनाव स्वेच्छापूर्वक किया गया हो।

दोष (सीमाएं)

दैव निदर्शन के निम्नांकित दोष हैं:

(1) इस विधि में समग्र की सूची होना आवश्यक है, कई बार यह सूची अनुपलब्ध हो जाती है तब ऐसी स्थिति में इस विधि द्वारा निदर्शन ग्रहण करना संभव नहीं होता है।

(2) निदर्शन के चुनाव के पूर्व प्रत्येक इकाई के लिये संख्याओं के निर्धारण कार्य में होने वाले समय प्रयासों एवं धन का अतिरिक्त व्यय।

(3) जब समग्र की इकाइयां अस्पष्ट विषम हों तब यादृच्छिक निदर्शन का प्रयोग उपयुक्त नहीं है।

(4) जब समग्र का विस्तार बहुत अधिक हो और इकाइयां दूर-दूर तक फैली हों तब भी उनसे संपर्क करना कठिन होता है।

(5) दैव निदर्शन में विकल्प की संभावना नहीं होती, विकल्प के लिये इकाइयों में परिवर्तन करना होता है ऐसी स्थिति में दैव निदर्शन अवैज्ञानिक व पक्षपातपूर्ण हो जाता है।

इसीलिये सरल दैव निदर्शन में त्रुटिपूर्ण चुनाव की उतनी ही संभावना है जितना उसके प्रयोग से श्रम एवं धन की बचत होती है। फिर भी उपर्युक्त सीमाओं के बावजूद सरल यादृच्छिक दैव निदर्शन संभवतः सर्वाधिक सरलतम, वैज्ञानिक, विश्वसनीय एवं प्रतिनिधित्वपूर्ण विधि है, जिसके कारण सामाजिक शोध में यह एक महत्वपूर्ण एवं प्रचलित विधि है।

16.3 स्तरीकृत निदर्शन

स्तरीकृत दैव निदर्शन वस्तुतः दैव निदर्शन पद्धति का ही विकसित रूप है। स्तरीकृत निदर्शन के अन्तर्गत सरल दैव निदर्शन पद्धति के द्वारा ही निदर्शन का चयन किया जाता है। अनेक बार सामाजिक अनुसंधान का उद्देश्य विभिन्न वर्गों के बीच तुलनात्मक अध्ययन करना होता है अथवा ऐसी स्थिति में जबकि अध्ययनकर्ता अध्ययन से पूर्व यह तय कर लेता है कि निदर्शन में समग्र में पाये जाने वाले समस्त वर्गों का उचित प्रतिनिधित्व हो तब स्तरीकृत निदर्शन का उपयोग किया जाता है। ये दोनों ही उद्देश्य सरल दैव निदर्शन के द्वारा ही पूरे किये जा सकते हैं किन्तु उसके प्रतिनिधि होने का पता तभी लग जाता है जब निदर्शन का चुनाव हो जाये।

स्तरीकृत निदर्शन में हम सबसे पहले समग्र को विभिन्न स्तरों में बांट लेते हैं और फिर प्रत्येक स्तर में से स्वतन्त्र निदर्शन ले लेते हैं। यह महत्वपूर्ण है कि परिभाषा इस प्रकार दी जाए कि प्रत्येक तत्व (सदस्य) एक और केवल एक ही स्तर में आये। फिर प्रत्येक स्तर में से सदैव या व्यवस्थित निदर्शन ले लेते हैं। स्वीकृत निदर्शन का यह सबसे सरल व अधिक प्रयुक्त होने वाला ढंग है।

पार्टेन के शब्दों में - पहले समग्र का दो या अधिक स्तरों या वर्गों में विभाजन, फिर प्रत्येक स्तर से प्रतिदर्श का चुनाव। स्तर या वर्ग से प्रतिदर्श की इकाइयों का चुनाव यादृच्छिक पद्धति से किया जाता है। जैसे - K.K.V. कालेज के स्नातक वर्ग के 1,000 छात्रों से प्रतिदर्श का चुनाव करने के लिये हम तृतीय एवं चतुर्थ वर्ष के छात्र व छात्रा के आधार पर चार वर्गों या स्तरों का निर्माण पहले कर लेते हैं।

सारणी - 1 समग्र = 1000

	छात्र	छात्रा	कुल
तृतीय वर्ष	450	150	600
चतुर्थ वर्ष	300	100	400
कुल	750	250	1000

सारणी - 2 प्रतिदर्श = 100

	छात्र	छात्रा	कुल
तृतीय वर्ष	45	15	60
चतुर्थ वर्ष	30	10	40
कुल	70	25	100

अब प्रत्येक स्तर से हम 10% छात्रों का चुनाव यादृच्छिक पद्धति से कर कुल 100 इकाइयों का प्रतिदर्श प्राप्त करते हैं।

स्तरीकरण के आधार का निर्णय निम्नांकित बातों पर निर्भर है—

(अ) उपलब्ध सूचना की प्रकृति (समग्र की जिन विशेषताओं के बारे में सूचना उपलब्ध हो) एक महत्वपूर्ण स्तरीकरण का आधार है।

(ब) शोध उद्देश्य से सम्बंध, अर्थात् स्तरीकरण का आधार शोध के उद्देश्य से संबद्ध होना चाहिये।

(स) स्तरों का बड़ा आकार अर्थात् विभाजित वर्गों का आकार इतना बड़ा होना चाहिये कि उनकी इकाइयों की गणना की जा सके।

(द) स्तरों की आंतरिक समरूपता अर्थात विभाजित स्तरों को आंतरिक दृष्टि से समरूप होना चाहिये।

स्तरीकृत यादृच्छिक निदर्शन के प्रयोग के लिये निम्नांकित परिस्थितियां उपयुक्त एवं महत्वपूर्ण हैं—

(1) जब समग्र की प्रकृति काफी विषम हो।

(2) जब शोध का उद्देश्य विभिन्न विशेषताओं के बारे में विशेष जानकारी प्राप्त करना हो।

स्तरीकृत निदर्शन के प्रमुख प्रकार निम्नलिखित हैं—

16.3.1 स्तरीकृत निदर्शन के प्रकार

(1) समानुपातिक स्तरित निदर्शन — इसमें प्रत्येक स्तर से प्रतिदर्श की उतनी ही इकाइयों का चुनाव किया जाता है, जिस अनुपात में स्तर की कुल इकाइयां समग्र की कुल इकाइयों के अन्तर्गत होती हैं।

अर्थात् यदि 1,000 छात्र हैं और एक स्तर में 350 छात्र हैं तो 10% प्रतिदर्श के चुनाव के लिये 35 छात्रों का चुनाव किया जायेगा जो 350 का 10% है।

(2) गैर-समानुपातिक स्तरित निदर्शन — इसमें भी प्रत्येक स्तर से समान संख्या में इकाइयों का चुनाव किया जाता है किन्तु बाद में अधिक संख्या वाले स्तर से प्राप्त इकाइयों को अधिक भार दे दिया जाता है। इस विधि में प्रत्येक वर्ग में से समान संख्या में इकाइयां चुनी जाती हैं इस बात का ध्यान नहीं रखा जाता है कि उनका समग्र में क्या अनुपात है।

16.3.2 स्तरीकृत निदर्शन के लाभ एवं हानियाँ

लाभ :-

(1) स्तरीकृत निदर्शन अधिक प्रतिनिधित्वपूर्ण हो सकता है क्योंकि इसमें किसी स्तर या वर्ग की इकाइयों के छूटने की संभावना नहीं होती। इस तरह प्रतिदर्श में प्रत्येक वर्ग की इकाइयों के समावेश से निदर्शन त्रुटि कम हो जाती है।

(2) स्तरीकृत निदर्शन में छोटे आकार के प्रतिदर्श द्वारा ही अधिक विश्वनीय निष्कर्ष प्राप्त किये जा सकते हैं इसके कारण धन, श्रम व समय की भी बचत होती है।

(3) चूंकि स्तरीकृत निदर्शन भौगोलिक विस्तार को भी नियंत्रित करता है, इसलिये यह कम खर्चीला तो है ही अधिक सुविधाजनक एवं व्यावहारिक भी है।

(4) छोटे प्रतिदर्श पर अध्ययन किये जाने के कारण अधिक सटीक गहन व यथार्थ विश्लेषण किये जा सकते हैं।

हानियाँ -

(1) स्तरीकृत निदर्शन की एक सीमा यह है कि इसके लिये समग्र की विशेषताओं की पूर्व जानकारी आवश्यक है।

(2) यदि समग्र वास्तव में विषम न हो, तथा स्तरीकरण स्पष्ट न किया जा सके, तो स्तरित निदर्शन अधिक जटिल व कभी-कभी व्यर्थ हो सकता है ऐसी स्थिति में सरल यादृच्छिक निदर्शन अधिक उपयुक्त एवं लाभप्रद होता है।

(3) यदि विभिन्न स्तरों के आकार में बहुत अंतर हो तो तुलनात्मकता एवं विश्वसनीयता की दृष्टि से भी कठिनाई उत्पन्न हो सकती है।

(4) जैसे-जैसे स्तरीकरण के आधारों में वृद्धि होती है स्तरों में विभाजन की प्रक्रिया जटिल होती जाती है ।

16.4 बहुस्तरीय निदर्शन

इस विधि का प्रयोग बहुत बड़े क्षेत्र से निदर्शन निकालने के लिये किया जाता है चूंकि इस विधि में निदर्शन का चुनाव कई स्तरों से गुजरने के बाद किया जाता है, इसलिये इसे बहुस्तरीय निदर्शन कहते हैं। इस विधि से यदि हम किसी बड़े शहर (नगर) का अध्ययन करना चाहते हैं तो उसके लिये हमें निम्नांकित स्तरों से गुजनना होता है—

(1) संपूर्ण नगर को कई क्षेत्रों या वार्डों में बांटा जायेगा । ये क्षेत्र क्षेत्रफल की दृष्टि से एवं निवासियों की दृष्टि से समान होने चाहिये ।

(2) प्रत्येक क्षेत्र में कुछ गृह समूहों का चुनाव दैव निदर्शन के आधार पर किया जायेगा।

(3) फिर प्रत्येक गृह समूह में से कुछ परिवारों का चुनाव दैव निदर्शन के आधार पर किया जायेगा।

(4) उसके बाद प्रत्येक परिवार में से एक व्यक्ति को अध्ययन के लिये चुना जायेगा।

इस प्रकार इस विधि में अंतिम चुनाव कई चरणों में जाकर होता है। इस विधि में स्तरित निदर्शन विधि एवं दैव निदर्शन विधि दोनों का प्रयोग किया जाता है। यदि सावधानीपूर्वक इसका प्रयोग किया जाये तो इसमें दोनों के लाभ प्राप्त हो सकते हैं तथा कम से कम इकाइयों से ही अधिकाधिक प्रतिनिधित्व प्राप्त किया जा सकता है।

16.5 क्रमबद्ध या व्यवस्थित निदर्शन

निदर्शन का एक और सरल ढंग है व्यवस्थित निदर्शन। इसमें दैव संख्याओं का उपयोग करने के स्थान पर समष्टि सूची में से नियमित अंतराल के बाद सदस्यों को चुन लेते हैं । जैसे- यदि 1,500 की समष्टि में से हमें 100 का प्रतिदर्श लेना हो तो हम समष्टि की सूची में से प्रत्येक 15वें (पन्द्रहवें) सदस्य को चुन लेते हैं। 1,500 को 100 से भाग देकर यह 15 का अंतराल हमें मिल जाता है। यह आवश्यक है कि पहले तत्व का चयन दैव हो। पहली संख्या चुनने के लिये हम लाटरी की पद्धति या दैव संख्याओं की तालिका का उपयोग कर सकते हैं। माना हमें पहली दैव संख्या 10 मिलती है तब हमारे प्रतिदर्श में आने वाली संख्याएं होंगी 10, 25, 40, 55, 70, 85 आदि। सूची के अन्त तक जाने पर हमें 100 संख्याएं मिल जायेंगी। इन संख्याओं वाले सदस्य हमारे व्यवस्थित निदर्शन में माने जायेंगे।

क्रमबद्ध या व्यवस्थित निदर्शन का उपयोग सामाजिक शोध में बहुधा होता है। यदि समष्टि की सूची अत्यन्त लम्बी हो या हमें बड़ा प्रतिदर्श (निदर्श) लेना हो तो व्यवस्थित निदर्शन से यह अधिक सरल होता है। उदाहरण - यदि हमें किसी चुनाव क्षेत्र के 50,000 मतदाताओं में 1,000 का निदर्श लेना है। दैव संख्याओं द्वारा निदर्शन के लिये हमें पहले सारे मतदाताओं के आगे 1, 2, 3 आदि 50,000 तक संख्याएं लिखनी होंगी, फिर उनमें से निदर्श में आई संख्याओं वाले सदस्यों को ढूँढ कर निदर्शन हो सकेगा। इसके स्थान पर व्यवस्थित निदर्शन में हम एक दैव प्रारम्भ से लेकर प्रत्येक पचासवें व्यक्ति को अपने निदर्श में रखते जायेंगे।

16.6 गुच्छ - निदर्शन

जब समग्र की इकाइयों को स्पष्ट करना कठिन हो और समग्र को विभिन्न इकाइयों के गुच्छ या समूहों के रूप में विभाजित किया जा सकता हो तब गुच्छ निदर्शन का प्रयोग किया जाता है। इस निदर्शन विधि में पहले समग्र से कुछ गुच्छों या समूहों का चुनाव यादृच्छिक विधि से किया जाता है तथा दूसरे चरण में इन चुने गये गुच्छों से इकाइयों का चुनाव यादृच्छिक विधि से किया जाता है। इसका अर्थ है कि समग्र में सम्मिलित कई गुच्छों या समूहों से सभी गुच्छों का चुनाव न कर केवल कुछ गुच्छों को ही चुना जाता है और तब इकाइयों का चुनाव किया जाता है। प्रत्येक स्तर पर यादृच्छिक चुनाव का ही प्रयोग किया जाता है।

स्तरित निदर्शन एवं गुच्छ निदर्शन में एक प्रमुख अंतर यह है कि गुच्छ निदर्शन में विभिन्न चरणों में विभिन्न निदर्शन इकाइयों का चुनाव किया जाता है, विभिन्न गुच्छों के रूप में। जबकि स्तरित निदर्शन में

गुच्छों या स्तरों का चुनाव न कर प्रत्येक से इकाइयों का चुनाव किया जाता है। अर्थात् इकाइयों का चुनाव एक ही स्तर पर हो जाता है जबकि गुच्छ निदर्शन में अंतिम इकाइयों का चुनाव कई चरणों के बाद संपन्न होता है। इसलिये यह बहुस्तरीय निदर्शन भी है। जहां स्तरित निदर्शन में श्रेणी या स्तर को समरूपी इकाइयों के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है गुच्छ निदर्शनं में गुच्छों या समूहों के विषमरूपी होने पर बल दिया जाता है क्योंकि अंततः कुछ ही गुच्छों को निदर्शन में सम्मिलित किया जाता है।

16.6.1 गुच्छ निदर्शन के लाभ एवं दोष

लाभ :- गुच्छ निदर्शन के निम्नांकित लाभ हैं—

(अ) विस्तृत भौगोलिक क्षेत्र में फैले हुए समग्र का अध्ययन गुच्छ निदर्शन की सहायता से अधिक बचतपूर्ण ढंग से किया जा सकता है।

(ब) जहां समग्र के उप समूहों के विषय में आकलन प्राप्त करना हो।

(स) अनेक विषमरूपी समूहों से निर्मित समग्र से निदर्शन के लिये भी गुच्छ निदर्शन उपयुक्त है।

(द) चूँकि यह एक संभाविता निदर्शन है इसलिये यह अधिक प्रतिनिधित्वपूर्ण भी है।

दोष :-

(अ) यह जटिल निदर्शन विधि है।

(ब) चूँकि इसमें निदर्शन या चुनाव की प्रक्रिया कई चरणों में चलती है इसलिये त्रुटि की संभावना भी उतनी ही अधिक होती है।

(स) निदर्शन त्रुटि की गणना भी एक जटिल प्रक्रिया है जिसके लिये कुशलता की आवश्यकता पड़ती है।

16.7 असंभावित निदर्शन के प्रकार

(अ) अभ्यंश या निर्दिष्टांश निदर्शन - कोटा या अभ्यंश निदर्शन में यह प्रयास किया जाता है कि विभिन्न तत्व जिस अनुपात में समग्र में पाये जाते हैं उसी अनुपात में निदर्शन में भी आ जायें, किन्तु इकाइयों का चयन आकस्मिक ही होता है। अभ्यंश निदर्शन में भी स्तरित निदर्शन के समान ही पहले समग्र को कुछ विशेषताओं के आधार पर कुछ स्तरों में विभाजित कर लिया जाता है। फिर प्रत्येक वर्ग या स्तर से निश्चित संख्या में (निर्धारित अभ्यांश के अनुसार) इकाइयों का चयन कर लिया जाता है। यह स्तरित निदर्शन से इसलिये भिन्न है कि इसमें इकाइयों का चुनाव यादृच्छिक विधि से नहीं किया जाता है। इसमें शोधकर्ता अपनी रुचि एवं आवश्यकतानुसार प्रत्येक स्तर या वर्ग का अभ्यंश निर्धारित कर इकाइयों का चुनाव करता है इसीलिये यह असंभाविता निदर्शन है। इसमें व्यक्तिगत पक्षपात की संभावना अधिक होती है तथा यह एक सरल व सुविधापूर्ण विधि है।

(ब) उद्देश्यपूर्ण- निदर्शन — उद्देश्यपूर्ण निदर्शन में यह प्रयास किया जाता है कि ज्ञान एवं विवेक के आधार पर प्रतिनिधित्वपूर्ण इकाइयों को खोजा जाए। यद्यपि एक अर्थ में सभी निदर्शन सोद्देश्य होते हैं तथापि यहां सोद्देश्य निदर्शन का विशिष्ट अर्थ है। सोद्देश्य निदर्शन में शोधकर्ता अपनी आवश्यकता एवं विवेक के आधार पर ऐसे निदर्श का चुनाव करता है, जो उसके शोध उद्देश्यों की पूर्ति करता है।

जेन्सन ने कहा है कि "सोद्देश्य निदर्शन कुछ इकाइयों के चुनने की वह विधि है जिसके अन्तर्गत चुनी गयी इकाइयां सम्पूर्ण समग्र की विशेषताओं के सम्बन्ध में लगभग वही औसत प्रदान करती हैं जिनकी कुछ सांख्यिकीय जानकारी पहले से ही होती है।" इस तरह, सोद्देश्य निदर्शन में शोधकर्ता अपने विवेक के आधार पर ऐसे निदर्श का चुनाव करता है जो समग्र के लगभग समान हों- औसत विशेषताओं की दृष्टि से या बारंबारता की दृष्टि से ।

सेल्टिज, जहोदा ने लिखा है कि इस निदर्शन में शोधकर्ता अपने निर्णय एवं विवेक से समग्र की विशिष्ट इकाइयों का चुनाव करता है। निर्णय एवं विवेक पर आधृत होने के कारण इसे सविचार निदर्शन भी कहा जाता है। नीमैन इसे दोषपूर्ण निदर्शन कहते हैं उनके अनुसार यह विधि बिल्कुल ही निराशाजनक है फिर भी जहां यादृच्छिक निदर्शन नहीं प्रयुक्त किये जा सकते हैं वहां सोद्देश्य निदर्शन उपयोगी सिद्ध होता है।

(स) आकस्मिक निदर्शन — यह विधि पूर्णत: शोधकर्ता की रु चि एवं सुविधा पर इकाइयों का चयन करती है । जिन इकाइयों से तथ्य संकलन की सुविधा होती है या वे आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं वे ही निदर्श का निर्माण करती हैं । इसे सुविधाजनक निदर्शन भी कहा जाता है जब समग्र की सूची उपलब्ध न हो, समय एवं धन की कमी हो, इकाइयां भी अस्पष्ट हों तब यही विधि शोधकर्ता के लिये सहारा रह जाती है।

(द) सुविधाजनक निदर्शन — इस विधि में निदर्शन का चुनाव शोधकर्ता की सुविधानुसार किया जाता है। अनुसंधानकर्ता/ शोधकर्ता निदर्शन का चुनाव करने से पूर्व समय, धन, श्रम, इकाइयों से संपर्क करने की सुविधा, स्रोत सूची की उपलब्धता आदि बातों को ध्यान में रखता है। इसे अनियमित, आकस्मिक, अवसरवादी तथा लापरवाहीपूर्ण निदर्शन भी कहते हैं। इस विधि का प्रयोग प्राय: तब किया जाता है जब —

(1) समग्र पूर्णतया: स्पष्ट न हो,

(2) जब निदर्शन की इकाइयां स्पष्ट न हों,

(3) जब स्रोत सूची अप्राप्य हो।

यह विधि सरल, मितव्ययी, गहन अध्ययन एवं यथार्थ निदर्शन की संभावना के गुण रखती है।

16.8 निदर्शन की प्रमुख समस्याएं एवं उनके उपाय

निदर्शन की अनेक समस्याएं अनुसंधान कार्य को संपादित करते समय उपस्थित होती हैं उसमें से कुछ प्रमुख समस्यायें निम्नवत हैं—

(1) निदर्शन के आकार की समस्या — निदर्शन प्रणाली में महत्वपूर्ण समस्या निदर्शन के आकार की होती है। आकार के छोटे या बड़े होने का प्रत्यक्ष सम्बन्ध समय, धन, शुद्धता की मात्रा व संगठन से है। निदर्शन का आकार छोटा होना चाहिये अथवा बड़ा, यह निर्धारित करना बहुत कठिन कार्य है। छोटे आकार में पूर्ण प्रतिनिधित्व न होने की त्रुटि रहती है तथा बड़े आकार में भी कई कठिनाइयां जैसे श्रम, धन व समय इत्यादि की हैं । निदर्शन को निर्धारित करने में निम्नांकित तत्वों का प्रमुख प्रभाव पड़ता है—

(अ) समग्र की प्रकृति — सजातीय इकाइयों वाले समग्र में थोड़े से निदर्शन से भी प्रतिनिधित्व पर्याप्त हो सकता है । विभिन्न इकाइयों वाले समग्र में बड़ा निदर्शन उपयुक्त रहता है।

(ब) वर्गों की संख्या — यदि समग्र में विभिन्न प्रकार के वर्गों का समावेश है, उनमें काफी विविधताएं हैं तो स्वाभाविक रूप से ही निदर्शन का आकार बड़ा करना पड़ेगा। परन्तु यदि वर्गों की संख्या कम है और साथ में इकाइयों में भी एकरूपता है तो छोटा निदर्शन उपयुक्त हो सकता है।

(स) उपलब्ध साधन व स्त्रोत — शोधकर्ता के पास समय, धन, कार्यकर्ताओं, आवागमन के साधन व अन्य सामग्री पर्याप्त है तो बड़े निदर्शन का चुनाव किया जा सकता है लेकिन इसके विपरीत जितने साधन स्त्रोत कम होंगे, उस निदर्शन का आकार उसी अनुपात में छोटा होगा।

(द) परिशुद्धता की मात्रा — यद्यपि छोटे आकार के निदर्शन भी काफी विश्वसनीय तथा प्रतिनिधित्वपूर्ण हो सकते हैं, तथापि सामान्यत: बड़े निदर्शनों में परिशुद्धता की मात्रा अधिक होती है।

(य) निदर्शन विधि — यदि दैव निदर्शन प्रणाली का प्रयोग करना है तो निदर्शन का आकार बड़ा होना चाहिये जिससे अधिक संख्या में विभिन्न गुणों वाली इकाइयों के चुनाव का अवसर प्राप्त हो सके। सविचार या वर्गीय निदर्शन में कम इकाइयों का चुनाव भी पर्याप्त प्रतिनिधित्व कर सकता है।

(र) अध्ययन की प्रकृति — यदि हमें गहन अध्ययन करना हो तो छोटा निदर्शन लेना होगा, लेकिन विस्तृत एवं सामान्य प्रकृति के अध्ययन के लिये बड़ा निदर्शन लिया जा सकता है।

(ल) अभिनति या पक्षपात पूर्ण निदर्शन की समस्या — निदर्शन के चुनाव पर पक्षपात का प्रभाव पड़ने से निदर्शन प्रतिनिधिपूर्ण नहीं हो सकता, ऐसे निदर्शन को अभिनति या पक्षपात पूर्ण निदर्शन की संज्ञा दी जाती है । निदर्शन में अभिनति या पक्षपात निम्न कारणों से उत्पन्न हो सकता है—

(ए) छोटा आकार — यदि निदर्शन का आकार छोटा है तो उसमें बहुत-सी इकाइयों को चुने जाने का अवसर नहीं मिलता है । ऐसी स्थिति में निदर्शन प्रतिनिधित्वपूर्ण नहीं हो पाता है।

(बी) उद्देश्यपूर्ण निदर्शन — सविचार या उद्देश्यपूर्ण निदर्शन प्रणाली में शोधकर्ता को निदर्शनों के चुनने की पूर्ण स्वंतंत्रता होती है। फलत: पक्षपात का प्रवेश सरल हो जाता है । दूसरी स्थिति यह भी है कि शोधकर्ता जिन इकाइयों से संपर्क स्थापित करने में कठिनाई महसूस करता है उनको छोड़ देता है और वह केवल उन्हीं को निदर्शन में स्थान देता है, जो कठिन व असुविधाजनक न हों, परन्तु ऐसी स्थिति में भी निदर्शन निष्पक्ष नही हो पाता है।

(सी) अपूर्ण स्त्रोत सूची — यदि साधन सूची अधूरी, पुरानी या अनुपयुक्त है तो निदर्शन का चुनाव शोधकर्ता की इच्छानुसार होगा, इससे निदर्शन अभिनति पूर्ण हो जाता है।

(डी) सुविधानुसार निदर्शन — इसके अन्तर्गत अनुसंधानकर्ता को पूर्ण छूट रहती है कि वह सुविधानुसार निदर्शनों का चुनाव कर सकता है, ऐसी स्थिति में निदर्शन प्रतिनिधित्व पूर्ण नहीं हो पाता और उसमें पक्षपात का प्रवेश होना स्वाभाविक हो जाता है।

(ई) दोषपूर्ण दैव निदर्शन — यद्यपि इस पद्धति के अन्तर्गत प्रत्येक इकाई को चुने जाने के समान अवसर प्राप्त होते हैं, लेकिन त्रुटिपूर्ण ढंग के इस पद्धति को प्रयोग में लाने से मिथ्या झुकाव का प्रवेश अनजाने में ही हो जाता है। यदि गोलियों को बनाने में असावधानी बरती गयी तो गोलियां छोटी-बड़ी

हो सकती हैं क्योंकि बड़ी गोली हाथ में जल्दी आती है। इसी प्रकार यदि पर्चियों को अच्छी तरह हिलाकर या घुमाकर नहीं मिलाया गया तो ऊपर की पर्ची या बड़ी पर्ची के चुने जाने की संभावना अधिक रहती है इस स्थिति में भी निदर्शन पक्षपातपूर्ण हो जाता है।

(3) विश्वसनीयता परीक्षण की समस्या — यदि निदर्शन में किसी तरह पूर्वाग्रह आने की शंका हो तो उसका परीक्षण किया जा सकता है । इसके तीन तरीके हैं—

(1) समानान्तर निदर्शन (2) समग्र से तुलना (3) निदर्शन का निदर्शन

(1) समानान्तर निदर्शन — इसका अर्थ यह है कि उसी समग्र से उसी आकार का किन्तु किसी दूसरी प्रणाली से निदर्शन ले लिया जाये तथा उसकी मूल निदर्शन से तुलना की जाये। यह तुलना सांख्यिकीय रीतियों से की जाती है। यदि इनमें बहुत अधिक अंतर आ जाता है तो मूल निदर्शन को दोषयुक्त मानकर रद्द कर देना चाहिए।

(2) समग्र से तुलना — कई बार ऐसा होता है कि शोधकर्ता को समग्र के बारे में काफी जानकारी रहती है वह अपने पूर्व ज्ञान या अनुभव के आधार पर निदर्शन की तुलना करके अपना निर्णय दे सकता है। पर्याप्त समानता होने पर उसे 'कार्यकर निदर्शन' माना जा सकता है।

(3) निदर्शन का निदर्शन — इसमें मूल निदर्शन में से कुछ इकाइयों का चयन दैव निदर्शन से कर लिया जाता है। इस निदर्शन की समग्र से लिये हुए मूल निदर्शन के साथ तुलना की जाती है। मूल निदर्शन से उपनिदर्शन की तुलना करके देख लिया जाता है कि वह कहां तक विश्वसनीय है।

इस प्रकार निदर्शन की विश्वसनीयता की जांच के कुछ महत्वपूर्ण उपायों को निम्नलिखित रूप से समझा जा सकता है-

उपाय

(1) समग्र से तुलना — कभी कभी समय की बहुत सी विशेषताओं जैसे लिंग, अनुपात, आयु, आदि का विवरण ज्ञात होता है। यदि इस प्रकार की माप का पता हो तो निदर्शन की इकाइयों की उनसे तुलना की जाती है और दोनों में पर्याप्त समानता होने पर निदर्शन विश्वसनीय माना जाता है।

(2) समानान्तर निदर्शन — प्राप्त निदर्शन कहां तक विश्वसनीय है इसकी परीक्षा करने के लिये एक समानान्तर उप निदर्शन को प्राप्त करना अक्सर बहुत उपयोगी होता है यदि समानान्तर निदर्शन के अन्तर्गत आने वाली इकाइयों की विशेषताएं मुख्य निदर्शन से सम्बन्धित इकाइयों की विशेषताओं से मिलती-जुलती होती हैं तो निदर्शन को विश्वसनीय माना जा सकता है।

(3) परिणामों की तुलना — यदि अध्ययन से सम्बन्धित किसी पक्ष का अध्ययन पहले भी किया जा चुका हो तो उसके परिणामों की वर्तमान निदर्शन से प्राप्त परिणामों से तुलना करने पर भी यह ज्ञात किया जा सकता है कि निदर्शन किस सीमा तक विश्वसनीय है। यह विधि अधिक उपयोगी न होते हुए भी विशेष परिस्थितियों के लिए सुविधाजनक होती है। इस प्रकार निदर्शन की समस्याओं को हम जान सकते हैं।

16.9 सारांश

इस इकाई के अन्तर्गत हमने निदर्शन के दो प्रमुख स्वरूपों प्रायिकता या संभाविता निदर्शन तथा

अप्रायिकता या असंभाविता निदर्शन का अध्ययन किया। इसके बाद प्रायिकता या संभाविता निदर्शन के अन्तर्गत हमने दैव या यादृच्छिक निदर्शन, स्तरीकृत निदर्शन, बहुस्तरीय निदर्शन, क्रमबद्ध या व्यवस्थित निदर्शन तथा गुच्छ निदर्शन का ज्ञान प्राप्त किया। इसी क्रम में इसी इकाई में अप्रायिकता या असंभाविता निदर्शन के प्रमुख स्वरूपों में अंश या अभ्यंश निदर्शन, उद्देश्यपूर्ण निदर्शन, आकस्मिक निदर्शन व सुविधाजनक निदर्शन का ज्ञान प्राप्त किया। इसी इकाई के अन्तर्गत स्तरीकृत निदर्शन के दो प्रमुख स्वरूप समानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन तथा असमानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन का भी अध्ययन किया। इस प्रकार इस इकाई में हमने निदर्शन के प्रमुख प्रकारों का ज्ञान प्राप्त किया तथा अंत में निदर्शन की प्रमुख समस्याओं एवं उनके उपाय का भी ज्ञान प्राप्त किया।

16.10 बोध प्रश्न

(क) बहुविकल्पीय बोधात्मक प्रश्न

(1) वह निदर्शन, जिसमें समग्र की प्रत्येक इकाई के चुने जाने के समान अवसर होते हैं उसको कहते हैं—-

(अ) दैव निदर्शन (ब) स्तरित निदर्शन (स) उद्देश्यपूर्ण निदर्शन (द) बहुस्तरीय निदर्शन

(2) भौगोलिक क्षेत्र के चुनाव के लिये किस विधि का उपयोग किया जाता है—

(अ) टिपेट प्रणाली (ब) लाटरी विधि (स) टिकट विधि (द) ग्रिड प्रणाली

(3) किस विधि में कागज की पर्चियों को किसी बर्तन, बाक्स या झोले में डालकर खूब अच्छी तरह मिलाकर किसी निष्पक्ष व्यक्ति द्वारा आँखें बन्द करके आवश्यक पर्चियां निकलवायी जाती हैं।

(अ) टिकट प्रणाली (ब) नियमित अंकन प्रणाली (स) लाटरी प्रणाली (द) अनियमित अंकन प्रणाली।

(4) किस विधि में निदर्शन का चुनाव कई स्तरों से गुजरने के बाद किया जाता है—

(अ) सुविधाजनक निदर्शन (ब) दैव निदर्शन (स) बहुस्तरीय निदर्शन (द) सविचार या उद्देश्यपूर्ण निदर्शन।

(5) किस विधि के अन्तर्गत, प्रत्येक वर्ग में से निदर्शन हेतु उतनी ही इकाइयों का चयन किया जाता है जिस अनुपात में वर्ग की कुल इकाइयां समग्र में होती हैं-

(अ) असमानुपातिक स्तरित निदर्शन (ब) भारयुक्त स्तरित निदर्शन (स) आनुपातिक स्तरित निदर्शन।

(ख) लघुउत्तरीय प्रश्न

प्र. 1 दैव निदर्शन की व्याख्या कीजिये ?

प्र. 2 दैव निदर्शन व सविचार निदर्शन विधियों में अंतर स्पष्ट कीजिये?

प्र. 3 लाटरी व टिपेट विधियों को स्पष्ट कीजिये?

प्र. 4 निर्दिष्टांश या अभ्यंश निदर्शन से आप क्या समझते हैं?

प्र. 5 स्तरित या वर्गीकृत निदर्शन का क्या अभिप्राय है?

(ग) दीर्घउत्तरीय प्रश्न

प्र. 1 निदर्शन की परिभाषा को स्पष्ट करते हुए इसके प्रमुख प्रकारों का उल्लेख कीजिये?

प्र. 2 निदर्शन के चयन में प्रमुख समस्याओं का वर्णन कीजिये ?

16.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

उ. 1 (अ) दैव निदर्शन

उ. 2 (द) ग्रिड प्रणाली

उ. 3 (स) लाटरी प्रणाली

उ. 4 (स) बहुस्तरीय निदर्शन

उ. 5 (स) आनुपातिक स्तरित निदर्शन।

इकाई 17 अनुमापन विधियां

इकाई की रूपरेखा

17.0 उद्देश्य

17.1 प्रस्तावना

17.2 अनुमापन (प्रमापन)

17.3 अनुमापन की आवश्यकता

17.4 एक उत्तम अनुमापन की विशेषताएं

17.5 अनुमापन (प्रमापन) की समस्याएं

17.6 सामाजिक विज्ञानों में अनुमापन (प्रमापन)

17.7 अनुमापन के कार्य

17.8 पैमाने के प्रकार

17.9 सारांश

17.10 बोध प्रश्न

17.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

17.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- अनुमापन और अनुमापन की आवश्यकता का उल्लेख कर सकेंगे।
- अनुमापन की विशेषताओं पर टिप्पणी कर सकेंगे।
- अनुमापन में आने वाली समस्याओं से अवगत हो सकेंगे।
- अनुमापन के प्रकारों को जान सकेंगे।

17.1 प्रस्तावना

इस इकाई के अन्तर्गत हम प्रमापन (अनुमापन) के विषय में अध्ययन करेंगे। अनुमापन की आवश्यकता का ज्ञान प्राप्त करने के बाद एक उत्तम अनुमापन की विशेषताओं के बारे में ज्ञानार्जन करेंगे। इसके बाद इसी इकाई के अन्तर्गत अनुमापन की समस्याओं के विषय में अध्ययन करेंगे। इसी क्रम में अब हम अनुमापन के कार्यों का विस्तृत अध्ययन करेंगे। अब इसी इकाई में पैमानें के प्रकारों का भी ज्ञान प्राप्त करेंगे। इसके अन्तर्गत हम मुख्यत: दो प्रकार के पैमानों का अध्ययन करेंगे। प्रथम प्रकार में मनोवृत्ति मापक पैमाने का अध्ययन करेंगे, इसके अन्तर्गत अंक पैमाना, थर्सटन की समविस्तार प्रणाली, तीव्रता मापक प्रणाली, सामाजिक दूरी मापक प्रणाली व पद सूचक प्रणाली का ज्ञान प्राप्त करेंगे। दूसरे प्रकार के संस्थागत व्यवहार मापक पैमाने के अन्तर्गत हम समाजमिति पैमाने का अध्ययन करेंगे।

17.2 अनुमापन (प्रमापन)

प्रमापन या अनुमापन एक ऐसा तरीका है जिसके द्वारा हम वस्तुओं अथवा घटनाओं को मापते हैं तथा अनुमाप या प्रमाण वे उपकरण अथवा यन्त्र होते हैं जिनके द्वारा वस्तुओं अथवा घटनाओं को मापा जाता है। अत: मापने वाले उपकरणों को अनुमाप या प्रमाप या पैमाना कहा जाता है। भौतिक घटनाओं की माप करने के लिये अनेक प्रकार के प्रमापों का प्रयोग किया जाता है, जैसे- उष्णता की माप अंशों में थर्मामीटर द्वारा की जाती है, ऊँचाई की माप टेप द्वारा इंचों अथवा मीटर में की जाती है और इसी प्रकार यदि गेहूँ को तौलना होता है तो हम किसी तुला द्वारा इसका वजन किलोग्राम में करते हैं। द्रव्यों को मापने के लिये लीटर व गैलन का प्रयोग करते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि वस्तुओं अथवा व्यक्तियों की विभिन्न विशेषताओं को मापने के लिये अनेक प्रकार के प्रमाप उपलब्ध हैं। यहां एक बात और ध्यान में रखी जानी आवश्यक है कि हम किसी भी प्रमाप द्वारा स्वयं वस्तुओं, घटनाओं अथवा व्यक्तियों की अन्तर्निहित विशेषताओं की माप करते हैं। अत: घटनाएं वस्तुएं अथवा व्यक्ति हमारे प्रमाप का लक्ष्य नहीं होते हैं। हमारा लक्ष्य इनकी विशेषताओं को मापना होता है ।

उदाहरणस्वरूप, जब हम किसी व्यक्ति की ऊँचाई को मापते हैं तब हम गलती से यह समझ बैठते हैं कि हम व्यक्ति की माप कर रहे हैं। वास्तव में देखा जाए तो हम व्यक्ति को नहीं अपितु व्यक्ति की एक विशेषता अर्थात् ऊँचाई को माप रहे होते हैं । अत: व्यक्ति तथा उसकी विशेषता को एक ही समझने की भूल नहीं की जानी चाहिये।

किसी भी विज्ञान की एक प्रमुख आवश्यकता यह है कि वह अपने निष्कर्षों को निश्चितता प्रदान करे और इस निश्चितता के लिये ही घटनाओं का प्रमाप किया जाता है। यही कारण है कि भौतिक वैज्ञानिकों की भांति समाज वैज्ञानिकों ने भी अपने तथ्यों के मापने के लिये अनेक प्रकार के प्रमापों की खोज की है और निरन्तर प्रयास किये जा रहे हैं। इन प्रमापन विधियों द्वारा समाज वैज्ञानिक अपने गुणात्मक तथ्यों को परिमाणात्मक तथ्यों में परिणित करने का प्रयास करते हैं, ताकि शोध के निष्कर्षों को अधिकाधिक निश्चितता प्रदान की जा सके। स्पष्ट है कि वस्तुओं के गुणों एवं प्रकृति के अनुसार उनके माप के पैमाने/ प्रमाप भी अलग-अलग प्रकार के होते हैं किन्तु सभी वस्तुओं और विशेषकर सामाजिक तथ्यों जैसे - अपराध की संख्या, लोगों की आय, जनसंख्या,, परिवार का आकार, उम्र आदि को तो मापा जा सकता है किन्तु गुणात्मक व अमूर्त सामाजिक तथ्यों जैसे लोगों की मनोवृत्तियों, विचारों, सामाजिक स्थिति, व्यक्तित्व, नैतिकता, रु चि, आदि को विशुद्ध एवं प्रत्यक्ष रूप से मापना संभव नहीं है। बहुत-सी घटनाएं ऐसी होती हैं जिनकी माप की जानी संभव है, जबकि अनेक घटनाओं अथवा वस्तुओं की प्रकृति इस प्रकार की होती है कि जिन्हें मापा नहीं जा सकता । मापन योग्य घटनाओं अथवा वस्तुओं में भी कुछ ऐसी होती हैं जिनकी प्रत्यक्ष माप की जा सकती है और कुछ ऐसी होती है कि जिनकी प्रत्यक्ष माप संभव नहीं होती। प्रत्यक्ष मापन के अयोग्य घटनाएं जटिल होती हैं जैसे - सामाजिक प्रस्थिति, रहन - सहन का स्तर, व्यक्तित्व की कुछ अमूर्त विशेषताएं, मनोवृत्ति, विश्वास, मत-मतान्तर आदि। एक व्यक्ति के रहन-सहन के स्तर में अनेक बातें सम्मिलित होती हैं, जैसे — फर्नीचर, मकान, वेश-भूषा तथा इसी प्रकार की अनेक भौतिक वस्तुएं आदि।

इस प्रकार स्पष्ट है कि सामाजिक तथ्यों की माप करना एक कठिन कार्य है। इसका प्रमुख कारण है सामाजिक घटनाओं की जटिल प्रकृति एवं गुणात्मकता । ज्यों-ज्यों समाजशास्त्र में घटनाओं को मापने के यन्त्रों एवं पैमानों का विकास होगा, त्यों-त्यों वह अपनी जटिल विषय-वस्तु को मापने में समर्थ होगा। इसी संदर्भ में पी. वी. यंग (1960) का कहना है कि इस क्षेत्र में (पैमाना पद्धतियों के विकास के क्षेत्र

में) बहुत-सा कार्य अभी प्रारम्भिक अवस्था में ही है फिर भी यह कहा जा सकता है कि जैसे ही समाजशास्त्र एक विज्ञान के रूप में परिपक्व होगा, सामाजिक घटनाओं के मापक यंत्रों तथा पद्धतियों का विकास होगा तो अधिक सही मापक यंत्र विकसित होंगें।

एक प्रमाप एक मापने का उपकरण होता है। कलिंजर (1966) का मानना है कि एक स्केल (पैमाना) प्रतीकों अथवा अंकों का एक समूह है जिसे इस प्रकार निर्मित किया जाता है कि इन प्रतीकों अथवा अंकों को नियमानुसार उन व्यक्तियों हेतु निर्धारित किया जा सके, जिन पर यह प्रमाप प्रयोग किया जा रहा है। प्रमापन विधि को स्पष्ट करते हुए बर्नाड एस. फिलिप्स ने कहा है कि प्रमापन विधि, वस्तुओं की विशेषता को शब्द अथवा अंक निर्धारित करने का एक तरीका है, यह इस लिए किया जाता है ताकि अध्ययन की जाने वाली विशेषता को अंकों की कुछ विशेषताएं प्रदान की जा सकें।

यहीं मोजर (1959) का मानना है कि उत्तरदाता द्वारा दिये गये विभिन्न प्रत्युत्तरों को उसकी सम्पूर्ण मनोवृत्ति की उग्रता एवं गंभीरता के परिमापन में विभिन्न प्रश्नों के साथ सम्मिलित करने के लिये प्रयास हेतु एक भिन्न विश्लेषणात्मक अभिगम की आवश्यकता होती है और यहीं पर मापक्रम प्रविधियों अपना स्थान ग्रहण करती हैं।

इस प्रकार अलग-अलग विद्वानों ने प्रमापन की परिभाषा दी है। स्पष्टत: प्रमापन या पैमाइश वस्तुओं की विशेषताओं के शब्दों या अंकों अथवा किन्हीं अन्य प्रतीकों द्वारा निर्धारण का एक तरीका है यह एक ऐसा तरीका है जिसके द्वारा वस्तुओं अथवा घटनाओं को मापा जाता है उदाहरणार्थ मनोवृत्ति को आंकिक मूल्य प्रदान कर रु चियों के आयाम पर उसकी स्थिति को मालूम किया जाता है।

17.3 अनुमापन की आवश्यकता

प्रमापन विज्ञान की एक प्रमुख आवश्यकता है। यथार्थता एवं सही माप किसी भी विज्ञान की परिपक्वता एवं प्रगति की द्योतक है। गुडे एवं हाट (1952)का मानना है कि सभी विज्ञानों की प्रवृत्ति अधिकाधिक यथार्थता की दिशा में अग्रसर होने की होती है । इस यथार्थता के कई रूप हैं किन्तु उसका एक आधारभूत रूप है क्रमबद्ध श्रेणियों की माप। किसी भी विषय को वैज्ञानिक व शुद्ध बनाने के लिये उसकी सही रूप में माप होना अत्यावश्यक है । प्रमापन का एक मुख्य उद्देश्य यह होता है कि यह शोधकर्ता को सिद्धान्तों तथा प्रस्थापनाओं के परीक्षण योग्य बना देता है । प्रमापन विधि द्वारा हम एक वैज्ञानिक की विश्व दृष्टि की तुलना दूसरे वैज्ञानिकों की विश्व दृष्टि से कर सकते हैं। प्रमापन वैज्ञानिकों की दृष्टि में वास्तविकता तक पहुंचने के लिये एक अच्छा तरीका है। प्रमापन द्वारा हम घटनाओं की समानताओं तथा विभिन्नताओं को, उनकी संख्या अथवा वजन को अथवा उनमें होने वाले पविर्तन को जान सकते हैं। समाजशास्त्र में प्रमापन की आवश्यकता निम्नांकित कारणों से है—

(1) वैषयिकता (वस्तुनिष्ठता) की प्राप्ति हेतु — संख्यात्मक विश्लेषण से ही तथ्यों की वैषयिक माप संभव है और स्थिति का सही अनुमान लगा सकते हैं । प्रमापन के द्वारा हम समस्या का विवेचन गणितीय आधार पर कर सकते हैं व इसके द्वारा वैषयिक माप संभव है।

(2) संख्यात्मक (मात्रात्मक) प्रस्तुतीकरण हेतु— गुणात्मक तथ्यों को संख्यात्मक रूप में प्रस्तुत करने के लिये वैज्ञानिक प्रमाप की आवश्यकता होती है। चूँकि गुणात्मक माप व्यक्ति प्रधान (व्यक्तिनिष्ठ) होता है अत: उसके स्थान पर संख्यात्मक प्रमाप आवश्यक हैं।

(3) विश्वसनीयता व वैधता की प्राप्ति हेतु— प्रमापन सामाजिक तथ्यों को सांख्यिकीय रूप में व्यक्त करता है। गुणात्मक तथ्यों की अपेक्षा संख्यात्मक तथ्य अधिक विश्वसनीय और वैध होते हैं ।

चूँकि गुणात्मक तथ्य व्यक्तिनिष्ठ होते हैं अत: प्रत्येक व्यक्ति उनके अपने-अपने अर्थ लगाते हैं जबकि संख्यात्मक तथ्यों का सर्वत्र एक ही अर्थ होता है। अत: वे अधिक विश्वसनीय तथा वैध माने जाते हैं।

इस प्रकार प्रमापन तुलना करने तथा अंतर बताने का एक साधन है। ज्यों-ज्यों विज्ञान का विकास होता जायेगा, इसकी अध्ययन पद्धतियों एवं यन्त्रों का विकास होगा, सामाजिक घटना की हमें अधिकाधिक वस्तुनिष्ठ जानकारी प्राप्त होगी और जिससे उसका विश्वसनीय व वैध प्रमाप भी संभव हो सकेगा।

17.4 एक उत्तम अनुमापन की विशेषताएं

अब तक एक उत्तम अनुमापन की विशेषताओं का ज्ञान प्राप्त करेंगे। श्रेष्ठ अनुमापन या प्रमापन की निम्नांकित विशेषताएं होती हैं —

(1) **विश्वसनीयता** — एक पैमानें की विश्वसनीयता उसका एक प्राथमिक गुण है । यदि समान स्थितियों में प्रयोग किये जाने पर पैमाने से विभिन्न परिणाम प्राप्त होते हैं तो ऐसे पैमानें को विश्वसनीय नहीं कहा जा सकता । विश्वसनीयता की परख करने की कई विधियां भी हैं।

(2) **प्रामाणिकता** — वैधता का तात्पर्य है एक पैमाने द्वारा अपेक्षित तथ्य की उचित माप करना, जिसके लिये उस पैमाने का निर्माण किया गया है। यदि किसी पैमाने से इस प्रकार की घटनाओं की माप भी की जाती है तो प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या वह पैमाना प्रामाणिक है। प्रामाणिकता की जांच की कई विधियां हैं किन्तु सर्वसाधारण विधि हमारे सामान्य ज्ञान अथवा अनुभव के द्वारा निष्कर्षों की पुष्टि किया जाना है। यदि प्राप्त निष्कर्ष हमारे सामान्य ज्ञान के अनुसार सही हों तो पैमाना वैध माना जा सकता है।

(3) **सरलता** — पैमाना (प्रमापन) सामान्यत: ऐसा होना चाहिए जिसका महत्व साधारण व्यक्ति भी सरलता से समझ सकें। सरल पैमानें का उपयोग अधिकाधिक किये जाने से उसमे परिमार्जन और संशोधन के अधिक अवसर होंगे।

(4) **व्यापकता** — सरलता के साथ पैमानें का प्रयोग व्यापक होना चाहिए । पैमाना ऐसा नहीं होना चाहिए जिसे किसी एक क्षेत्र, संस्कृति अथवा देश में प्रयोग किया जा सके। भौतिक पैमानों की सबसे बड़ी विशेषता उनकी सार्वभौमिक प्रकृति है। संसार में किसी भी स्थान पर मानव के शारीरिक तापक्रम की माप के लिये थर्मामीटर का प्रयोग किया जाता है। अभी तक सामाजिक विज्ञानों में प्रयुक्त पैमानों में व्यापकता पायी जाती है। उदाहरणार्थ - बोगार्डस का 'सामाजिक दूरी' पैमाना या मोरेनों का 'समाजमितीय पैमाने का प्रयोग' अभी कुछ देशों तक ही सीमित है।

(5) **व्यावहारिकता** — पैमाना व्यावहारिक भी होना चाहिए। पैमाने के निर्माण के लिये जिन तथ्यों की आवश्यकता है वे उपलब्ध हों और उनका संकलन तथा गणना भी की जानी संभव हो । यदि पैमानें में ऐसे अमूर्त तथ्य सम्मिलित कर लिये जाते हैं जिनकी जांच संभव नहीं है तो ऐसा पैमाना व्यावहारिक नहीं होगा। अत: एक पैमाने का विश्वसनीय व प्रामाणिक होना ही आवश्यक नहीं है अपितु वह व्यावहारिक भी होना चाहिए। यदि कोई पैमाना किन्हीं कारणों से प्रयोग योग्य नहीं है तो वह अव्यावहारिक पैमाना होगा । अत: व्यावहारिकता के लिये यह भी आवश्यक है कि पैमाने में जिन विषयों को सम्मिलित किया जाये, वे स्वीकृत आदर्शों पर आधारित होने चाहिये। अत: पैमाना स्वीकृत मापदण्डों तथा आदर्शों के अनुरूप होना चाहिये।

(6) **उचित भारण की व्यवस्था** — पैमाने में सम्मिलित प्रत्येक तथ्य को उसके स्वरूप व आवश्यकतानुसार उचित भारण दिया जाना चाहिये। उदाहरणार्थ — एक व्यक्ति का कार से चलना, व वहीं दूसरे व्यक्ति का बाईक (मोटर साईकिल) से चलना, उनकी सामाजिक अर्थव्यवस्था का द्योतक है अत: कार वाले व्यक्ति को अधिक भारण दिया जाना चाहिये।

17.5 अनुमापन (प्रमापन) की समस्याएं

अधिकांश भौतिक घटनाएं मूर्त और परिमाणात्मक प्रकृति की होती हैं, जिन्हें मापा जाना संभव होता है। यही कारण है कि आज भौतिक वस्तुओं अथवा घटनाओं को मापने के लिये अनेक प्रकार के पैमानों का आविष्कार किया जा चुका है । इसके विपरीत, सामाजिक घटनाएं अमूर्त, जटिल और परिवर्तनशील होती हैं, अत: इनका माप किया जाना कठिन प्रतीत होता है। सामाजिक घटनाओं के माप हेतु पैमाना बनाने में सामाजिक घटनाओं की गुणात्मक प्रवृत्ति तो एक समस्या है ही, किन्तु इसके अतिरिक्त कुछ अन्य समस्याएं भी हैं, जिनका उल्लेख गुडे एवं हाट (1952) ने अपनी पुस्तक में किया है। ये समस्याएं सामाजिक विज्ञानों में प्रयोग किये जाने वाले सभी पैमानों पर न्यूनाधिक रूप से लागू होती हैं—

(1) अनुक्रम या सातत्य की समस्या

(2) प्रमाप की विश्वसनीयता की समस्या

(3) प्रमाप की प्रामाणिकता की समस्या

(4) मदों के भारण की समस्या

(5) मदों की प्रकृति की समस्या

(6) इकाइयों की समानता की समस्या

(1) **अनुक्रम या सातत्य की समस्या** — किसी भी तथ्य या घटना जिसके माप के लिये हम पैमाना बनाना चाहते हैं उनके लिये सर्वप्रथम अनुक्रम को निश्चित करने की समस्या आती है इसके लिये सर्वप्रथम यह देखना होता है कि वह तथ्य या घटना मापने योग्य भी है या नहीं। जो घटना मापने योग्य ही नहीं, उसमें अुनक्रम की खोज निरर्थक होगी। प्रमापन के लिये यह आवश्यक है कि उसमें किसी न किसी प्रकार का अनुक्रम हो। इस अनुक्रम की प्रकृति उन मदों की विशेषताओं पर निर्भर करती है जिन्हें पैमाने के बनाने के लिये चुना गया है। अत: तार्किक दृष्टि से असम्बंधित मदों को एक पैमाने में सम्मिलित नहीं किया जा सकता है। और यदि उन्हें सम्मिलित किया जाता है तो संभव है कि वे अनुक्रम में गड़बड़ी उत्पन्न कर दें। अत: हमें यह ज्ञान होना आवश्यक है कि हम किस तथ्य को परिभाषात्मक रूप में मापने जा रहे हैं। उदाहरणार्थ, यदि हमें अछूतों के प्रति निकटता या दूरी का पता लगाना है। सभी लोग अछूतों से न तो समान रूप से प्रेम करते हैं और न घृणा ही । हम लोगों को, अछूतों से घृणा करने वाले तथा प्रेम करने वाले इन दो वर्गों में विभाजित नहीं कर सकते। इनके बीच में कई डिग्रियां हैं । कुछ लोग बहुत प्रेम कर सकते हैं तो कुछ अत्यधिक घृणा, तो कुछ उनके प्रति उदासीन हो सकते हैं। प्रेम का सबसे बड़ा प्रतीक उनमें विवाह हो सकता है तथा घृणा का सर्वोत्तम रूप उन्हें समाज से बहिष्कृत कर देने के रूप में हो सकता है । इन दोनों चरम सीमाओं के बीच हमें अन्य बिन्दु तय करने होंगे। जैसे अछूतों को पास बैठने की स्वीकृति देना, मित्र बनाना, साथ-साथ भोजन करना

आदि। इन बिन्दुओं को इस प्रकार से निर्धारित किया जाना चाहिये कि वे एक के बाद एक बढ़ती हुई दूरी को प्रकट करें । यह पैमाना इस प्रकार बनाया जा सकता है।

घृणा	4	3	2	1	0	1	2	3	4	प्रेम
	−						+			

∴ अछूतों के प्रति घृणा व प्रेम के पैमाने के विभिन्न बिन्दु इस प्रकार हैं:-

0 → (उदासीन) + 1 → (पास बैठने की स्वीकृति), + 2 → (मित्र बनाना)

+3 → (साथ-साथ भोजन करना), + 4 →(अछूतों से विवाह को तैयार)

− 1 → (पास बैठने से मनाही) − 2 → (मित्र नहीं बनाना)

−3 → (साथ-साथ भोजन करना असंभव), − 4→ (अछूतों को समाज से बहिष्कृत कर दिया जाय)

उपर्युक्त पैमाने में मतों को इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है कि वे एक के बाद एक घनात्मक या ऋणात्मक स्थितियों को बढ़ते हुए क्रम में प्रकट करते हैं। इसी प्रकार से एक अंक के बाद दूसरे अंक में समान दूरी है। विभिन्न मतों को अंक देने से हम लोगों की अछूतों के प्रति मनोवृत्तियों को संख्यात्मक रूप में प्रकट कर सकते हैं।

(2) **प्रमाप की विश्वसनीयता** — प्रमाप सदैव विश्वसनीय होना चाहिये अर्थात् उसके प्रयोग में किसी प्रकार की अभिनति पक्षपात व अस्पष्टता न हो तथा समान दशाओं में एक ही माप प्रदान करें।

गुडे तथा हाट ने (1952) विश्वसनीयता को परिभाषित करते हुए लिखा है कि एक पैमाना तभी विश्वसनीय होगा जबकि उसे एक ही प्रतिदर्श पर बार-बार प्रयोग किये जाने के उपरान्त भी प्रत्येक बार समान परिणाम प्रकट करे।

∴ विश्वसनीयता की अवधारणा में दो अर्थ निहित हैं— स्थायी तथा आन्तरिक संगति । 'स्थायित्व' विचार इस धारणा पर आधारित है कि यदि दो शोधकर्ता समान प्रमापन विधियों का प्रयोग करते हैं तब समान वस्तुओं के प्रमापन परिणाम भी समान आने चाहिये। 'आन्तरिक संगति' का विचार इस धारणा पर आधारित है कि पैमाने में प्रयोग की गयी मदें उन सब मदों का मात्र एक प्रतिदर्श है जिनका इस पैमाने में प्रयोग किया जा सकता था।

विश्वसनीयता की माप करने के लिये सामान्यत: निम्न तीन परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है—

(1) **परीक्षा - पुर्नपरीक्षा विधि** — इस विधि में एक ही जन समुदाय पर एक पैमाने को दो बार भिन्न समय पर प्रयोग किया जाता है और उनके प्राप्त परिणामों की तुलना की जाती है। यदि दोनों परिणामों में बहुत कुछ समानता मिलती है तो ऐसे पैमानें को विश्वसनीय माना जा सकता है। इस विधि की दो सीमाएं हैं —

(अ) जिस व्यक्ति का एक बार परीक्षण किया गया है वह स्वयं ही दूसरी बार के परीक्षण को प्रभावित कर सकता है। यदि प्रमापन उपकरण के रूप में प्रश्नावली का प्रयोग किया गया है ऐसी दशा में उत्तरदाता कुछ विशिष्ट प्रश्नों को याद रखकर दूसरी बार पूछे जाने पर वही प्रत्युत्तर दे सकता है जो उसने पहली बार दिये हैं और इस प्रकार वह विश्वसनीयता की अनुमानित मात्रा में अप्रत्याशित रूप में

वृद्धि कर सकता है।

(ब) मानवीय गुणों तथा घटनाओं में निरन्तर परिवर्तन होता रहता है। यह संभव है कि दोनों परीक्षणों के मध्यान्तर में ही मानवीय घटनाओं में कुछ पविर्तन आ गये हों। ऐसे परिवर्तन विश्वसनीयता के अनुमान में कमी उत्पन्न कर देते हैं। ऐसी दशाओं में विश्वसनीयता या तो घट जाती है या बढ़ जाती है।

(2) **विविध या समानान्तर स्वरूप विधि** — पुन: परीक्षा विधि की उपरोक्त कमियों को नियंत्रित करने का तरीका, विविध या समानान्तर स्वरूप विधि का प्रयोग है। इस विधि में एक ही पैमाने के दो स्वरूप तैयार किये जाते हैं जिन्हें एक दूसरे का समानान्तर माना जाता है। पैमानें के इन दोनों स्वरूपों को व्यक्तियों अथवा वस्तुओं के एक समूह में प्रयोग किया जाता है और तत्पश्चात् पैमाने के दोनों रूपों से प्राप्त परिणामों की तुलना करके विश्वसनीयता आंकी जाती है । यदि दोनों पैमानों के परिणामों में पर्याप्त समानता मिलती है तो पैमानें को विश्वसनीय समझा जाता है।

(3) **अर्द्ध भागों में बांटना**— इस विधि में पैमाने को दो समान भागों में बांट लिया जाता है और प्रत्येक भाग को पूर्ण पैमाना मानकर एक ही समूह पर लागू किया जाता है। इसके बाद दोनों में सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है यदि दोनों भागों के परिणामों में पर्याप्त मात्रा में समानता है तो पैमाना विश्वसनीय माना जाता है।

(3) **प्रमाप की प्रामाणिकता** — किसी माप को उसी समय वैध माना जाता है जब वह तथ्यों की सही-सही माप प्रकट कर सके। जब एक ही परिणाम समान स्थितियों में बार-बार प्राप्त हो तो पैमाना विश्वसनीय माना जाता है। गुंडे एवं हाट ने पैमाने की वैधता को ज्ञात करने के चार आधार बताये हैं —

(अ) **तार्किक वैधता** — इसके अनुसार पैमाने को वैध तभी माना जाना चाहिये, जब वह सामान्य ज्ञान व तर्क के आधार पर सही है।

(ब) **पंचों की राय**— इस विधि के अनुसार पैमाने से प्राप्त होने वाले परिणामों को पंचों के सामने रखा जाता है। यदि अनेक व्यक्तियों द्वारा पैमाना उपयुक्त कहा जाये तो वह वैध माना जाता है।

(स) **ज्ञात समूह** — इस विधि के अनुसार पैमाने का प्रयोग उन व्यक्तियों पर किया जाता है, जिनके बारे में पहले से ही जानकारी है। यदि पैमाने से भी वही निष्कर्ष निकलते हैं जो हमें पहले से ज्ञात हैं तो पैमाने को विश्वसनीय कहा जायेगा।

(द) **स्वतंत्र मापदण्ड** — इस विधि में पैमाने की विश्वसनीयता को ज्ञात करने के लिये पैमाने की परीक्षा समस्त घटना पर न करके विभिन्न स्वतंत्र कारकों पर की जाती है और यदि उन परिणामों द्वारा समान परिणाम आते हैं तो पैमाने को वैध व विश्वसनीय माना जायेगा।

(4) **मदों का भारण** — मदों के भार की समस्या प्रामाणिकता के साथ जुड़ी हुई है। यदि मदों को उचित भार दिया जा सके तो यह पैमाने की प्रामाणिकता को और भी बढ़ा देती है किन्तु यह समस्या सभी प्रकार के पैमानों की नहीं है। प्रमापन का मुख्य उद्देश्य ही अनेक गुणात्मक विशेषताओं को परिमाणात्मक विशेषताओं में परिणत करना होता है। इस प्रकार पैमाने में मदों को उचित व समान भारण दिया जाना चाहिये।

(5) **मदों की प्रकृति** — सामाजिक तथ्यों को मापने में पैमाने के निर्माण में आने वाली एक समस्या पदों की प्रकृति की है। पैमाने के प्रयोग में अध्ययनकर्ता पक्षपातपूर्ण व्यवहार कर सकता है तथा उन्हें अपने रंग में रंग सकता है। चूँकि सामाजिक तथ्य गुणात्मक प्रकृति के होते हैं अत: उनकी व्याख्या पैमाने का उपयोग करने वाला प्रत्येक व्यक्ति अपने-अपने ढंग से कर सकता है।

(6) **इकाइयों की समानता** — पैमाने के निर्माण की एक समस्या यह है कि मापी जाने वाली इकाइयां समान प्रकार की हों। संपूर्ण मानव समाज को एक ही इकाई मानकर पैमाना बनाना वैध नहीं होगा, क्योंकि विभिन्न भौगोलिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में रहने वाले लोगों में अनेक असमानताएं पायी जाती हैं जिन्हें एक ही पैमाने पर दर्शाना कठिन होता है।

17.6 सामाजिक विज्ञानों में अनुमापन (प्रमापन)

इस इकाई में हम देखते हैं कि सामाजिक विज्ञानों की विषय वस्तु की विशिष्ट प्रकृति नें पैमानों के निर्माण में अनेक बाधाएं उपस्थित की हैं। सामाजिक घटनाओं एवं तथ्यों की गुणात्मक प्रकृति के कारण उनको मापने के लिए पैमाना तैयार करना एक कठिन कार्य है। अत: इसके निर्माण में निम्न कठिनाइयां समक्ष दिखायी पड़ती हैं—

(1) **सामाजिक घटनाओं की अमूर्तता** — अधिकांश सामाजिक घटनाएं अमूर्त होती हैं, जिनका इन्द्रियों द्वारा अध्ययन किया जाना संभव नहीं होता । भौतिक तथ्यों को मानव इन्द्रियों द्वारा प्रत्यक्ष रूप से देखा परखा जा सकता है जबकि सामाजिक घटनाओं को उन्हें प्रकट करने वाले शब्दों के प्रतीक द्वारा ही अनुभव किया जा सकता है। परम्परा, प्रेम, घृणा, सामाजिक स्थिति, सामाजिक मूल्य आदि सामाजिक घटनाएं अमूर्त ही नहीं अपितु गुणात्मक प्रकृति की भी होती हैं। अत: एक तो अमूर्त होने के कारण उन्हें देख नहीं सकते, दूसरे गुणात्मक होने के कारण उनकी माप किया जाना संभव नहीं होता। गुणात्मक तथ्यों को परिमाणात्मक तथ्यों में परिवर्तित करना सामाजिक विज्ञानों की एक मुख्य समस्या है।

(2) **सामाजिक घटनाओं की जटिलता** — सामाजिक घटनाएं इतने अधिक तथा विविध कारणों का परिणाम होती हैं कि उनमें से किसी एक प्रमुख कारक के प्रभाव का पता लगाना अत्यन्त दुष्कर कार्य है। पैमाने के निर्माण के लिये किस कारक को महत्व दिया जाये, यह एक कठिन समस्या है । ये कारक आपस में इतने घुले मिले होते हैं कि इनकी अलग-अलग माप किया जाना संभव नहीं होता।

(3) **सार्वभौमिकता की कमी** — भौतिक वस्तुओं के गुण सार्वभौमिक, निश्चित, ठोस, एवं स्थिर होते हैं, अत: इसकी माप के लिये सार्वभौमिक पैमाने पाये जाते हैं। यह बात सामाजिक तथ्यों पर लागू नहीं होती है। प्रत्येक समूह की अपनी संस्कृति, मूल्य व विश्वास होते हैं। अत: प्रत्येक समूह किसी भी सामाजिक घटना का मूल्यांकन अपने-अपने सांस्कृतिक दृष्टिकोण के अनुसार करता है। ऐसी स्थिति में किसी सार्वभौमिक, विश्वसनीय एवं प्रामाणिक पैमाने का निर्माण करना एक कठिन कार्य होता है।

(4) **सामाजिक घटनाओं की अगम्यता** — सामाजिक घटनाओं को भौतिक वस्तुओं की तरह छूकर, सूंघकर, देखकर या चखकर ज्ञात नहीं किया जा सकता । इन्द्रियों द्वारा उनका ज्ञान संभव नहीं है। अत: घटनाओं के बारे में सही-सही ज्ञान, महत्व और माप का पता लगाना कठिन है। यही नहीं, उनका अवलोकन और परीक्षण भी संभव नहीं है। ऐसी स्थिति में सामाजिक घटनाओं के बारे में निश्चित सांख्यिकीय माप बनाना बहुत ही कठिन है।

(5) **सामाजिक मूल्यों में असमानता** — मानव समाज में अनेक विषमताएं पायी जाती हैं। धर्म, भाषा, प्रथा, परम्परा, आदि के आधार पर मानव समाज में अनेक विभेद पाये जाते हैं। अत: एक वर्ग/ समूह के लिये निर्मित पैमाने का उपयोग दूसरे समूह/ वर्ग पर सही-सही लागू नहीं किया जा सकता।

(6) **मानव व्यवहार की परिवर्तनशीलता** — मानव व्यवहार परिवर्तनशील होता है। समय, स्थान और परिस्थिति के अनुसार मानव अनुकूलन करने के लिये अपने आपको बदलता रहता है। इसलिये एक

समय में मानव व्यवहार को ज्ञात करने के लिये तैयार किया गया पैमाना दूसरे समय में व्यर्थ हो जाता है। ऐसी स्थिति में सार्वभौमिक, विश्वसनीय तथा प्रामाणिक पैमानें का निर्माण अति कठिन हो जाता है।

इस प्रकार उपर्युक्त कठिनाइयों के बावजूद भी समाजमिति पैमानों के द्वारा सामाजिक तथ्यों एवं घटनाओं को मापने का सफल प्रयास किया जा रहा है। समाजशास्त्र के विकास के साथ-साथ इसमें नवीन पद्धतियों का विकास होगा तथा सामाजिक घटनाओं की परिशुद्ध माप संभव हो पायेगी।

17.7 अनुमापन (प्रमापन) के कार्य

सामाजिक शोध में अनुमापन के अनेक कार्य हैं जो निम्नलिखित हैं—

(1) **सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक घटनाओं का आनुभविक वर्णन** — वर्णनात्मक शोध परिकल्प (अभिकल्प) का प्रमुख उद्देश्य सामाजिक परिवेश के निवासियों का सविस्तार वर्णन करना होता है। एक मानव वैज्ञानिक का कार्य किसी जनजाति अथवा किसी जन-समुदाय के क्रिया-कलापों, व्यवहारों तथा रीति रिवाजों का वर्णन करना हो सकता है। इस प्रकार के वर्णनात्मक शोध को सही तथा सुनिश्चित बनाने के लिये अनुमापन विधियां अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुई हैं। एक शोधकर्ता अपने संकलित तथ्यों को वर्गीकृत तथा श्रेणीबद्ध भी करना चाहता है, ताकि उनकी तुलना अन्य शोधकर्ताओं के तथ्यों से की जा सके। इस वर्गीकरण की प्रक्रिया में विभिन्न प्रकार की अनुमापन विधियों का सफल प्रयोग किया जाता है। वर्गीकरण के ये तथ्य उसके लिए प्राक्कल्पनाओं की रचना और अन्ततः सिद्धान्तों के निर्माण में सहायक होते हैं। वर्णनात्मक शोध में लिंग, आयु, आय, व्यवसाय, आदि सांख्यिकीय तथ्यों के द्वारा एक शोधकर्ता लिंग अनुपात, विवाह की औसत आयु, परिवार के सदस्यों की औसत संख्या, धर्म तथा जातीय आधार पर समुदाय की वर्ग संरचना का अध्ययन कर सकता है।

(2) **तथ्यों को संख्यिकीय विधियों द्वारा अध्ययन योग्य बनाना** — अनुमापन का दूसरा मुख्य कार्य यह है कि घटनाओं को इस रूप में प्रदर्शित करना ताकि उन्हें सांख्यिकीय विधियों द्वारा देखा परखा जा सके। सामाजिक तथ्यों को प्राप्त करने की कई विधियां हैं, जैसे — साक्षात्कार, प्रश्नावली, प्रेक्षण आदि तथ्यों की प्राप्ति के बाद उनका विश्लेषण किया जाता है। इसके लिये तथ्यों का वर्गीकरण तथा सारणीयन करना आवश्यक होता है। सामाजिक घटनाओं के सम्बन्ध में संकलित तथ्यों को परिमाणात्मक रूप देने के लिये सूचनाओं को अंक प्रदान किये जाते हैं। सूचनाओं को अंक प्रदान करना सांख्यिकीय दृष्टि से अत्यावश्यक है क्योंकि इनके आधार पर तथ्यों को सरलता से गणितीय रूप में प्रदर्शित किया जा सकता है। सभी सांख्यिकीय विधियां इस अनुमान पर आधारित हैं कि तथ्य इस प्रकार के हों कि उनका परिमाणीकरण किया जा सके। अतः तथ्यों को आंकिक रूप प्रदान किया जान सांख्यिकीय विधियों की परम आवश्यकता है।

(3) **प्राक्कल्पना तथा सिद्धान्त निर्माण में सहायक** — शोध प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य प्राक्कल्पनाओं के द्वारा सिद्धान्तों का परीक्षण करना होता है। सिद्धान्त वे युक्तियां हैं जिनके द्वारा सामाजिक, मनोवैज्ञानिक घटनाओं की व्याख्या की जाती है तथा उनके आधार पर भविष्यवाणी की जाती है। शोधकर्ता अपनी प्राक्कल्पनाओं की रचना इन सिद्धांतों के द्वारा ही करता है। वह अपने परिवर्त्यों को परीक्षण योग्य बनाने के लिये उन्हें आंकिक तथ्यों में परिवर्तित करता है ताकि उनका सांख्यिकीय परीक्षण किया जा सके। अनुमापन विधियां गुणात्मक तथ्यों को परिमाणात्मक तथ्यों में परिणत कर सुनिश्चित प्राक्कल्पनाओं को जन्म देती हैं जिनका वस्तुपरक परीक्षण किया जाना संभव होत है।

(4) **तुलना प्रदर्शित करने के साधन के रूप में** — अनुमापन का मुख्य कार्य यह है कि वह शोधकर्ता को तथ्यों की विशेषताओं की विभिन्नता के आधार पर तुलना करने योग्य बनाता है।

इस प्रकार हमने इस इकाई में अनुमापन के कार्यों का ज्ञान प्राप्त किया है।

17.8 पैमाने के प्रकार

इसके अन्तर्गत मुख्यत: दो प्रकार के पैमानों का वर्गीकरण किया जा रहा है जो निम्न हैं—

(1) **मनोवृत्ति मापक पैमाने**— ये वे पैमाने हैं जिनका उपयोग व्यक्तित्व, मानसिक तथा सामाजिक व्यवहार को मापने के लिये किया जाता है। इसके अन्तर्गत मनोवृत्तियों, नैतिकता, चरित्र, ज्ञान, मनोबल तथा सहयोग आदि को मापने के पैमाने आते हैं इसके प्रमुख पैमानों में अंक पैमाना, थर्सटन की समविस्तार प्रणाली या समदृष्टि अंतराल प्रणाली, तीव्रता मापक प्रणाली, सामाजिक दूरी मापक प्रणाली तथा पदसूचक पैमाना आदि हैं।

(2) **संस्थागत व्यवहार मापक पैमाना** — ये वे पैमाने हैं जिनका उपयोग संस्कृति तथा सामाजिक पर्यावरण को मापने के लिये किया जाता है। इसके अन्तर्गत सामाजिक, आर्थिक प्रस्थिति, सामाजिक संस्थाओं, संस्थागत व्यवहारों, समुदायों, आवास की दशाओं आदि को मापने के पैमानें आते हैं। समूह व्यवहारों तथा संस्थागत व्यवहारों को मापने के लिये समाजमिति पैमाने का प्रयोग किया जाता है।

अत: स्पष्ट है कि मनोवृत्ति कुछ विशेष स्थितियों, व्यक्तियों तथा विषयों के बारे में उपयुक्त प्रत्युत्तरों के लिये तत्पर रहने की दशा है। किसी विषय पर लोगों की मनोवृत्तियों को दो प्रकार से ज्ञात किया जा सकता है -

(अ) विचार सर्वेक्षण द्वारा (ब) पैमाना पद्धति द्वारा।

चूँकि विचार सर्वेक्षण का उपयोग पैमाने के अभाव में किया जाता है जिसमें लोगों की मनोवृत्ति को मापने के लिये भाषा तथा मौखिक विचारों का प्रयोग किया जाता है। इसमें यह मान लिया जाता है कि व्यक्ति के शब्द, भाषा या मौखिक रूप से व्यक्त विचार ही उसकी मनोवृत्ति के सूचक हैं।

मनोवृत्तियों को मापने का दूसरा तरीका पैमाना है जैसे —अंक पैमाना, थर्सटन की समविस्तार प्रणाली, तीव्रता मापक पैमाना, सामाजिक दूरी पैमाना आदि।

(अ) **अंक पैमाना** — इस प्रकार के पैमाने में विभिन्न प्रकार के शब्द अथवा स्थितियां ली जाती हैं जिनके बारे में सूचनादाता की राय जानी जाती है। ये शब्द या स्थितियां कुछ भी हो सकते हैं जैसे नृत्य, प्रार्थना, दान, दया, आधुनिकता आदि। सूचनादाता से यह कहा जाता है कि जिस शब्द से उसके मन में रोष उत्पन्न हो उसके आगे क्रास (×) का निशान लगा दें। इसके बाद प्रत्येक शब्द को जिसके आगे क्रास का निशान नहीं लगाया गया हो एक अंक दिया जायेगा। व्यक्ति की मनोवृत्तियों का पता विभिन्न शब्दों को काटने या छोड़ देने के आधार पर किया जाता है। इस प्रकार यदि किसी व्यक्ति ने दान, दया, आदि शब्दों को काट दिया है और अन्य शब्दों को छोड़ दिया है तो समझा जायेगा कि वह नास्तिक व्यक्ति है। एक दूसरे प्रकार से भी अंक पैमाने का प्रयोग किया जाता है। इसमें व्यक्तिगत शब्दों के स्थान पर पक्ष और विपक्ष को प्रकट करने वाले दो-दो शब्दों के जोड़े बना दिये जाते हैं और किसी व्यक्ति की मनोवृत्ति को जानने के लिये पक्ष तथा विपक्ष दोनों प्रकार के शब्दों द्वारा अध्ययन किया जाता है। जैसे - किसी व्यक्ति को यह जानने के लिये कि वह मातृभाषा के रूप में हिन्दी को वरीयता देता है या अंग्रेजी को, इस प्रकार के शब्दों के जोड़े बनाये जायेंगे जो हिन्दी व अंग्रेजी को प्रकट करते हों। इनमें से जो व्यक्ति हिन्दी से सम्बन्धित शब्दों का चयन करता है और अंग्रेजी से सम्बन्धित विकल्प को काट देता है

तो हम यह जान सकते हैं कि वह व्यक्ति हिन्दी को वरीयता देता है। इस पैमाने की सफलता के लिये यह आवश्यक है कि ऐसी परिस्थितियों या शब्दों का चयन किया जाये जो परस्पर विरोधी हों ।

(ब) **थर्सटन पैमाना विधि — समविस्तार पद्धति या समदृष्टि अंतराल पद्धति** — थर्सटन एवं चेव ने 1929 ई0 में विभिन्न समस्याओं के प्रति मनोवृत्ति की माप के लिये एक समदृष्टि अंतराल या समविस्तार मापक्रम विकसित किया। थर्सटन एवं उनके सहयोगियों ने प्रारम्भ में इस मापक्रम का उपयोग चर्च, युद्ध मृत्युदण्ड, विकासवाद, परिवार नियोजन, आदि समस्याओं के प्रति मनोवृत्ति की माप के लिये किया। किन्तु वर्तमान समय में यह विधि कई विभिन्न प्रकार की घटनाओं एवं स्थितियों के प्रति मनोवृत्ति की माप के लिये संभवत: सर्वाधिक प्रचलित विधि है। यह विधि 'थर्सटन मापक्रम' नाम से जानी जाती है। थर्सटन ने इसे एक अंतराल मापक्रम के रूप में विकसित करने का प्रयत्न किया था, जिसमें एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु के बीच समान दूरी होती है या कम से कम मनोवृत्ति के दो बिन्दुओं के बीच की दूरी ज्ञात हो। यही कारण है कि अत्यधिक प्रतिकूलता से अत्यधिक अनुकूलता के बीच के विभाजनों का विस्तार या अंतराल समान रखने का प्रयत्न किया जाता है। इसीलिये थर्सटन विधि एक समदृष्टि अंतराल या समविस्तार मापक्रम कहा जाता है।

थर्सटन मापक्रम में किसी समस्या, घटना या स्थिति से सम्बद्ध बहुत अधिक संख्या में कथनों को एकत्र कर जजों के निर्णय के आधार पर उनका प्रमापन मूल्य निर्धारित किया जाता है। उत्तरदाताओं के प्रत्युत्तर के आधार पर उसका भी 'अंक' ज्ञात कर विषय के प्रति उसकी मनोवृत्ति की तीव्रता मापी जाती है। प्रारम्भ में, थर्सटन ने चर्च के प्रति मनोवृत्ति की माप के लिये दस कथनों वाला मापक्रम तैयार किया था। थर्सटन मापक्रम में एक छोर पर पूर्ण अस्वीकृति या अत्यन्त प्रतिकूलता तथा दूसरे छोर पर पूर्ण स्वीकृति या अत्यन्त अनुकूलता दिखायी जाती है । बीच की स्थिति औसत या तटस्थ स्थिति होती है। उत्तरदाता के प्रत्युत्तर के आधार पर जो कथनों से सहमति के रूप में प्राप्त होती है मनोवृत्ति मापक्रम पर उसका संख्यात्मक स्थान निश्चित किया जाता है।

थर्सटन पैमाने के प्रमुख चरण निम्नांकित हैं —

(1) **प्रथम चरण** में, जिस समस्या के प्रति मनोवृत्ति का अध्ययन किया जाता है उससे संबद्ध काफी संख्या में कथनों को विभिन्न स्रोतों से संकलित किया जाता है। ये स्रोत व्यक्ति, समाचार पत्र, पत्रिकाएं या शोध लेख भी हो सकते हैं। इन कथनों के चुनाव में यह ध्यान रखा जाता है कि ये अस्पष्ट, अनुपयुक्त तथा शोध विषय से असंबद्ध न हों। अनेकार्थक, जटिल या समानार्थक कथनों को छांट दिया जाता है इस तरह, लगभग सौ या उससे अधिक कथनों को संकलित कर लिया जाता है जो किसी समस्या के प्रति मनोवृत्ति से संबद्ध हों। इसमें अनुकूल एवं प्रतिकूल सभी प्रकार के कथन सम्मिलित किये जाते हैं जैसे थर्सटन के पास चर्च के बारे में 'मुझे चर्च की सेवाएं सुखदायी व प्रेरणादायी लगती हैं' की तरह अनुकूल कथन थे तो, 'मैं समझता हूँ कि चर्च समाज का शोषण करने वाली संस्था है' की तरह प्रतिकूल कथन भी थे।

लगभग 100 कथनों के चुनाव में कई बातों का ध्यान रखना होता है—

(1) कथनों का सम्बन्ध व्यक्ति की वर्तमान मनोवृत्ति से हो, न कि अतीत की स्थिति से।

(2) उन कथनों का बहिष्कार किया जाना चाहिये, जिनका विवेचन अनेक प्रकार से किया जा सकता हो, या अनेकार्थक कथनों से बचना चाहिये।

(3) द्विमुखी कथन से बचना चाहिए अर्थात् ऐसे कथन, जिनमें दो कथन सम्मिलित हों उपयुक्त नहीं

होते। जैसे मुझे चर्च का आदर्श पसंद है लेकिन आडंबर नहीं।

(4) कथनों का सम्बन्ध उस विशिष्ट समस्या की मनोवृत्ति से हो।

(5) कथन एवं भाषा एवं वाक्य संरचना सरल, संक्षिप्त, एवं स्पष्ट हो।

(6) थोड़े से लोगों पर लागू कथन या केवल विशिष्ट लोगों पर लागू कथनों से बचना चाहिए। जैसे 'मैं चर्च इसलिये जाता हूँ कि मुझे संगीत से लगाव है।'

(7) कथन अनुकूल एवं प्रतिकूल दोनों प्रकार की मनोवृत्तियों को स्पष्ट करने वाले हों लेकिन एक कथन से अनुकूल अथवा प्रतिकूल कोई एक मनोवृत्ति ही स्पष्ट हो।

इस तरह, कथनों का संपादन संशोधन कर लगभग 100 कथन छांट लिये जाते हैं। थर्सटन ने इस तरह 130 कथन एकत्र किये थे।

(2) **दूसरे चरण** में इन कथनों को समान रूप रंग वाले कागज या कार्ड पर अंकित कर लिया जाता है और इन्हें अनेक जजों को जिनकी संख्या काफी अधिक होनी चाहिए, मूल्यांकन / निर्माण के लिये दिया जाता है । थर्सटन ने 300 (तीन सौ) निर्णायकों या जजो ं को 130 कथनों का मूल्यांकन करने के लिये दिया था। जजों को एक निश्चित निर्देश के अन्तर्गत अपना निर्णय देने के लिए कहा जाता है । सामान्यत: यह कहा जाता है कि इन कथनों को उनकी अनुकूलता एवं प्रतिकूलता के आधार पर ग्यारह गुच्छों या बिन्दुओं में 1 से 11 या A से K तक इस तरह वितरित करें कि सर्वाधिक अनुकूल कथन A या 1 स्थान पर, उससे कम अनुकूल 2 या B पर और इसी तरह जो सर्वाधिक प्रतिकूल हों उन्हें K या 11वें स्थान पर रखा जाए। छठा या F स्थान लगभग औसत या तटस्थ मनोवृत्ति का द्योतक होता है। ग्यारह के बदले 7 या 9 स्थानों में भी इन कथनों को वितरित किया जा सकता है। जजों को यह ध्यांन रखना पड़ता है कि वे अपना वस्तुनिष्ठ निर्णय दें।

(3) **तीसरे चरण** में जजों के निर्णय के आधार पर कथनों का संपादन किया जाता है। अस्पष्ट, अनुपयुक्त एवं असंबद्ध कथन छांट दिये जाते हैं जैसे — जिस कथन के स्थान के बारे में अधिकांश जजों की सहमति होती है वे उपयुक्त कथन समझे जाते हैं। जो 1 से 11 तक के सभी स्थानों के बीच लगभग समान रूप से वितरित होते हैं, वैसे कथन अस्पष्ट तथा अनुपयुक्त समझे जाते हैं । इस संपादन एवं निर्णय के लिये सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग किया जाता है। इसके लिये मध्यांक, माध्य, चतुर्थांक, संचयी आवृत्ति आदि की गणना की जाती है जैसे - चतुर्थांक की तुलना के आधार पर निर्णयों के फैलाव की माप की जाती है और जो कथन उच्च फैलाव बताते हैं उन्हें अस्पष्ट एवं असंबद्ध समझकर छोड़ दिया जाता है।

(4) **चौथे चरण** में चुने गये स्पष्ट, संबद्ध एवं उपयुक्त कथनों का मापक्रम मूल्य ज्ञात किया जाता है। यह मूल्य उस कथन को जजो ं द्वारा दिये गये स्थान के औसत अंक माध्य या मध्यांक के रूप में प्राप्त किया जाता है। यह माध्य या मध्यांक ही उस कथन का मापक्रम मूल्य या Scale Value है।

(5) **पांचवें चरण** में, निश्चित संख्या में लगभग बीस कथनों के चुनाव द्वारा मापक्रम का निर्माण किया जाता है। इन कथनों का चुनाव करते समय यह ध्यान रखा जाता है कि वे अत्यधिक अनुकूलता से प्रतिकूलता के बिन्दु तक समान रूप से लगभग समान अंतर पर वितरित हों। दूसरे शब्दों में लगभग समान मूल्य वाले कथनों को एक ही मापक्रम में नहीं सम्मिलित करना चाहिए और यह भी ध्यान रखना चाहिए कि एक कथन का मापक्रम मूल्य दूसरे, तीसरे और इसी तरह अन्य कथनों के मापक्रम मूल्य से कुछ निश्चित अंतरों पर लगभग समान अंतर पर फैले हों।

(6) **छठे चरण** में इन चुने गये कथनों से निर्मित मापक्रम की विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता की जांच की जाती है। विश्वसनीयता के लिये परीक्षा पुनः परीक्षा विधि का प्रयोग किया जा सकता है।

अब थर्सटन मापक्रम उपयोग के लिये अंतिम रूप से तैयार है। इन कथनों को यादृच्छिक विधि से पुर्नव्यवस्थित कर लिया जाता है । अतः अब वे कथन 'मापक्रम मूल्य' के क्रम से सजे नहीं होते या वे अनुकूलता — प्रतिकूलता क्रम में भी सजे नहीं होते । सामान्यतः मापक्रम पर केवल निर्देश व कथन होते हैं , उनका मापक्रम मूल्य नहीं दिया रहता । उत्तरदाताओं से कहा जाता है कि वे अपनी सहमति एक या उससे अधिक कथनों से बताएं और जिनसे सहमत हो उन्हें चिह्नित करें। मान लिया कि एक उत्तरदाता ने तीन कथनों से सहमति बताई, जिनका मापक्रम मूल्य क्रमशः 6.4, 4.8 तथा 3.2 है, तो उत्तरदाता का औसत अंक माध्य के रूप में प्राप्त कर लिया जाता है। इस स्थिति में यह 6.4 + 4.8 + 3.2 = 14.4 को तीन से विभक्त कर प्राप्त किया गया, जो 14.4 ÷3 = 4.8 हुआ। यह अंक (4.8) उत्तरदाता का मनोवृत्ति सूचक अंक है।

इस प्रकार हम मनोवृत्ति के किसी एक पक्ष की माप थर्सटन पैमाने द्वारा सरलता से कर सकते हैं।

(3) **लिकर्ट की तीव्रता योग मापक पद्धति** — 1932 में लिकर्ट ने सरल पैमाने का निर्माण कर इससे विविध समूहों की साम्राज्यवाद व नीग्रो के प्रति मनोवृत्तियों को जानने का प्रयास किया। मनोवृत्तियों की माप की दूसरी प्रणाली तीव्रता योग मापक पद्धति है जिसे लिकर्ट पद्धति या आंतरिक असम्बद्धता की प्रणाली कहते हैं। यह पद्धति थर्सटन की समविस्तार पद्धति के समान ही है । अन्तर केवल पैमाना मूल्यों के निर्धारण का ही है । इस पद्धति में पैमाना मूल्यों के निर्धारण के लिये कथनों को व्यवस्थित एवं छँटनी करने के लिये बड़ी संख्या में निर्णायकों की आवश्यकता नहीं होती। यह पद्धति कम जटिल, कम श्रम वाली तथा थर्सटन प्रणाली के समान ही विश्वसनीय परिणाम देने वाली है साथ ही निर्णायकों के व्यक्तिगत प्रभाव का बहिष्कार भी करती है। लिकर्ट के इस पैमाने का निर्माण करने के लिए निम्नांकित चरणों से गुजरना पड़ता है –

(1) थर्सटन विधि के समान ही इसमें भी किसी विषय पर लोगों की मनोवृत्ति मापने के लिऐ उस विषय के सम्बन्ध में पक्ष और विपक्ष को बताने वाले समस्त कथनों का संकलन किया जाता है। इन कथनों को अत्यधिक अनुकूल मनोवृत्ति से लेकर अत्यधिक प्रतिकूल मनोवृत्ति के क्रम में लिख दिया जाता है। कथनों के चुनाव में तथ्यों की अपेक्षा उनके महत्व एवं मूल्य को अधिक महत्व दिया जाता है । लिकर्ट ने अमरीका में उत्पन्न जापानियों के प्रति मनोवृत्ति को मापने के लिये 99 कथनों का चुनाव किया था जो पक्ष व विपक्ष की राय की सभी तीव्रताओं को प्रकट करने वाले थे।

(2) प्रत्येक कथन के लिये मनोवृत्ति को पांच श्रेणियों में विभाजित कर दिया जाता है — पूर्ण सहमति, सहमति अनिश्चित, असहमति और पूर्ण असहमति । किसी भी कथन के विषय में उत्तरदाता अपने विचारों के अनुसार इन पांचों वर्गों में से किसी एक पर निशान लगा देता है ये पांचों श्रेणियां कथनों के प्रति मनोवृत्ति मापने के पैमाने बिन्दु हैं । इन पांचों पैमाना बिन्दुओं को वक्र से व्यवस्थित किया जाता है तथा निरन्तरता से व्यवस्थित श्रेणियों को उनके महत्व के अनुसार भार भी दिया जता है जैसे 1, 2, 3, 4, 5 अथवा 5, 4, 3, 2, 1 । भार देने की यह व्यवस्था विषय के प्रति क्रमशः घटती या बढ़ती सहमति या असहमति को स्पष्ट करने में सहायक होती है।

(4) **बोगार्डस का सामाजिक दूरी का पैमाना** — संभवतः सर्वप्रथम बोगोर्डस ने ही मनोवृत्ति की अप्रत्यक्ष माप के लिये 'सामाजिक दूरी मापक्रम' 1925 ई0 में प्रस्तुत किया। सामाजिक दूरी मनोवृत्ति नहीं है लेकिन यह मनोवृत्ति का सूचक अवश्य है। अतः बोगार्डस का सामाजिक दूरी मापक्रम भी अन्य मापक्रमों की भांति कुछ कथनों का संकलन है, जिनके प्रति उत्तरदाता अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं,

जिसके आधार पर विशेष समूह या व्यक्ति से उसकी सामाजिक दूरी की अंतरंगता के साथ घृणापूर्ण सम्बन्ध की दृष्टि से माप की जाती है । इन कथनों की विशेषता यह होती है कि वे इस रूप में एक दूसरे से सम्बद्ध या व्यवस्थित होते हैं कि वे एक सातत्यक या अनुक्रम का निर्माण करते हैं- अत्यत घनिष्ठ अंतरंग सम्बन्ध से अत्यन्त घृणापूर्ण एवं तिरस्कार सम्बन्ध तक। इस अनुक्रम के किसी एक बिन्दु पर यदि उत्तरदाता अपनी सहमति प्रकट करता है तो वह उसके बाद के कथनों से भी सहमत होता है । इसी मान्यता के कारण बोगार्डस मापक्रम एक संचयी मापक्रम है। बोगार्डस ने 1925 ई0 में अंग्रेज, स्वीडिश, पोलिश (पोलैण्डवासी) एवं कोरियन के प्रति अमेरिकन नागरिकों की मनोवृत्ति की माप उनके बीच की सामाजिक दूरी की माप के आधार पर की। धीरे-धीरे यह मापक्रम कई अन्य स्थितियों एवं संदर्भ में भी सफलतापूर्वक प्रयुक्त किया जाने लगा।

इस पैमाने का निर्माण प्रसिद्ध समाजशास्त्री बोगार्डस ने किया था। उन्होंने इसके निर्माण में स्वयं अपने निर्णयों एवं अनुभवों का उपयोग किया है, साथ ही उसने समाजिक दूरी के अंशों के निर्धारण के लिये एक बड़ी संख्या में निर्णायकों का सहारा भी लिया। बोगाडर्स का यह पैमाना उच्चतम आत्मनिष्ठ मनोवृत्तियों को मापने के लिये है।

(अ) किसी विषय के बारे में लोगों की मनोवृत्ति जानने के लिये इस पैमाने में सर्वप्रथम सामाजिक दूरी की समान श्रेणियों को प्रकट करने वाले सम्बन्धों का एक बड़ी संख्या में चुनाव किया जाता है।

(ब) बोगार्डस ने बड़ी संख्या में इस प्रकार के सम्बन्धों का चयन करके सौ (100) निर्णायकों को वितरित किया और उन्हें कहा कि उन्हें इस प्रकार से विभाजित कर दें जिससे कि सामाजिक दूरी घटती हुई या बढ़ती हुई प्रकट हो। इस प्रकार व्यवस्थित सम्बन्धों के विभिन्न स्तरों में से बढ़ती हुई सामाजिक दूरी की तीव्रताओं के आधार पर इन पदों में से सात पदों का चयन किया तथा एक से सात तक विभिन्न स्तरों वाले पदों को स्वैच्छिक अंक प्रदान किये जो क्रमशः इसी अनुपात में बढ़ती हुई दूरी का प्रतिनिधित्व करते हैं। उपर्युक्त सात पदों के आधार पर बोगार्डस ने विभिन्न समूहों के प्रति लोगों की मनोवृत्ति का पता लगाया कि वे आपस में कितना निकट अथवा दूर का सम्बन्ध रखना चाहते हैं। विभिन्न प्रजातियों के सम्बन्ध में लोगों की मनोवृत्ति जानने के लिये बोगार्डस द्वारा प्रयुक्त पैमाने का एक उदाहरण इस प्रकार प्रस्तुत है—

प्रजातीय दूरी मापक पैमाना

क्र.सं.	वर्ग	अंग्रेज	स्वीडिश	पोलिश (पोलैण्डवासी)	कोरियन
1.	विवाह करने की स्वीकृति				
2.	क्लब में साथी बनाने की स्वीकृति				
3.	पड़ोस में रहने की स्वीकृति				
4.	एक ही दफ्तर मे साथ काम करने को तैयार				
5.	अपने देश में नागरिक के रूप में स्वीकार करने को तैयार				
6.	देश में केवल यात्री के रूप में अनुमति देने को तैयार				
7.	अपने देश के बाहर निकाल देने की इच्छा				

यह अनुसूची पैमाना 1, 725 अमरीकन नागरिकों में उनकी मनोवृत्ति ज्ञात करने के लिये वितरित किया गया, साथ ही उन्हें निम्न निर्देश भी दिये गये-

(1) प्रत्येक अवस्था में दायें तरफ के वाक्य को देखते ही तुरन्त जो भावात्मक प्रतिक्रिया आपके मन में आये वही लिखिये।

(2) अपनी प्रतिक्रिया प्रत्येक प्रजाति को एक समूह मानकर दीजिये। समूह के अपने परिचित उत्कृष्ट या निष्कृष्ट सदस्यों के प्रति अपनी प्रतिक्रिया मत दीजिये।

(3) प्रत्येक प्रजाति के खाने में सात वर्गों में से उतने वर्गों के सामने निशान लगाइये जिनसे आप सहमत हों।

इसके बाद प्रत्येक प्रजाति वर्ग के सम्बन्ध में सम्बन्धों की प्रत्येक श्रेणी का कुल योग ज्ञात किया गया और उसको प्रतिशत में लिख दिया गया। कुल 1,725 उत्तरदाताओं को 100 मानकर उसके अनुपात में सभी उत्तरों का प्रतिशत ज्ञात किया गया। विभिन्न श्रेणियों में प्राप्त उत्तरों को सारणी द्वारा निम्न प्रकार व्यक्त किया जा सकता है।

प्रजाति	विभिन्न श्रेणी के सम्बन्धों के लिये % में उत्तर						
	1	2	3	4	5	6	7
1. अंग्रेज	93.7	96.7	97.3	95.4	95.9	1.7	1.0
2. स्वीडिश	45.2	62.1	75.3	78.0	86.3	5.4	1.0
3. पोलिश (पोलैण्डवासी)	11.0	11.6	28.3	44.3	58.3	19.7	4.7
4. कोरियन	1.1	6.8	13.0	21.4	23.7	47.1	19.1

उपर्युक्त सारणी से अमेरिका में बसे विभिन्न अल्पमत समूहों के प्रति अमेरिका के नागरिकों की मनोवृत्ति ज्ञात होती है। सामाजिक दूरी को क्रमशः बढ़ती हुई दिखाने के लिये एक से सात अंक दिये गये हैं। दूरी का न्यूनतम अंक या स्तर निकटता का सूचक है और बड़ा अंक क्रमशः बढ़ती हुई दूरी का प्रतीक है । प्रत्येक स्तर के सम्बन्धों के नीचे अमरीकन लोगों की मनोवृत्ति का प्रतिशत दिया गया है जिससे यह ज्ञात होता है कि विभिन्न अल्पमत समूह के साथ अमरीकन लोगों का कितना प्रतिशत किस प्रकार के सम्बन्ध रखने को तैयार हो सकता है। इस प्रकार प्राप्त हुई सामाजिक दूरी के माप को ग्राफ द्वारा भी प्रदर्शित किया जा सकता है।

ओलाचना — बोगार्डस के सामाजिक दूरी मापक पैमानें की निम्नांकित आलोचनाएं की जाती हैं—

(1) इस पैमाने की विश्वसनीयता बार-बार परीक्षा करने पर ही ज्ञात की जा सकती है। यह विधि बहुत ही जटिल अपरिपक्व और कष्ट साध्य है।

(2) बोगार्डस के पैमाने में एक वर्ग तथा दूसरे वर्ग के बीच समान दूरी मानी गयी है जो कि व्यवहार में देखने को नहीं मिलती। जैसे उपयुर्क्त सारणी में दिये गये आंकड़ों से ज्ञात होता है कि कोरियन, स्वीडिश तथा पोलश लोगों की तुलना में इस प्रकार की समान दूरी नहीं है।

(3) हम निश्चित रूप से यह भी नहीं कह सकते हैं कि उत्तरदाताओं ने जो उत्तर दिये हैं वे विभिन्न लोगों के प्रति उनकी भावना को सही-सही प्रकट करते हैं। होता यह है कि हम किसी वर्ग के प्रति राय उस वर्ग के एक दो व्यक्तियों को प्रतीक मानकर ही बना लेते हैं और उस वर्ग का नाम लेते ही उन विशिष्ट व्यक्तियों का नाम हमारे सामने आ जाता है। अत: यह निर्देश भी निरर्थक जान पड़ता है कि उस वर्ग का नाम लेते ही बिना उस वर्ग के किसी व्यक्ति विशेष को ध्यान में रखे अपनी प्रथम प्रतिक्रिया कीजिये।

(5) **तीव्रता मापक पैमाना** — इस पैमाने द्वारा मनोवृत्ति की तीव्रता या गहनता होने का पता नहीं लगाया जा सकता। हम इसके द्वारा सहमति की मात्रा का अनुमान लगा सकते हैं। इस प्रकार के पैमानों के द्वारा पक्ष-विपक्ष, सहमति, असहमति, आदि द्वन्द्वात्मक विभाजन के आधार पर रु चि या मनोवृत्ति को माप नहीं सकते। इनमें केवल एक पक्ष की तीव्रता चाहे यह पक्ष हो या विपक्ष हो, को मापा जा सकता है, न कि दो प्रतिकूल स्थितियों को । इन पैमानों को मुख्य मापक पैमाने भी कहते हैं।

तीव्रता मापक पैमानें तीन, चार या पांच या अधिक पैमाना बिन्दु के हो सकते हैं। प्राय: तीन या पांच पैमाना बिन्दु का ही अधिक उपयोग होता है । इस प्रकार का पैमाना निर्मित करने के लिये किसी विषय पर व्यक्ति की राय जानने हेतु उसके पक्ष में सहमति, स्वीकृति, पक्ष में, आदि शब्दों का प्रयोग किया जा सकता है। पैमाने के निर्माण के लिये पहले विषय के सम्बन्ध में विभिन्न कथनों का निर्माण कर लिया जाता है। उनको तीन या पांच पैमाना बिन्दुओं के स्वरूप में व्यवस्थित कर लिया जाता है। उदाहरणार्थ :

''घरेलू हिंसा संयुक्त परिवार के विघटन के लिये उत्तरदायी है'' इस कथन को हम पांच बिन्दु पैमाना द्वारा निम्न प्रकार प्रस्तुत कर सकते हैं—

पूर्ण सहमति	सहमति	अनिश्चित	असहमति	पूर्ण असहमति
+2	+1	0	−1	− 2

इस उदाहरण में हम देख रहे हैं कि कथन के सम्बन्ध में मनोवृत्ति के स्तरों को स्पष्ट करने के लिये उन्हें अंक प्रदान किये गये हैं। किसी विषय के प्रति अनुकूल मनोवृत्ति को '+' का तथा प्रतिकूल मनोवृत्ति को '-' का निशान दिया जाता है तथा तटस्थ, अनिश्चित या औसत को 0 मान लिया जाता है । इस प्रकार तीन पैमाना बिन्दु से माप +1, 0, −1 होगा, तथा पांच पैमाना बिन्दु में +2, +1, 0, −1, −2 होगा।

तीन बिन्दु पैमाना

1	2	3
पूर्ण सहमति	सहमति	पूर्ण असहमति
हां	तटस्थ	नहीं
औसत से उच्चतर	औसत	औसत से नीचे
अनुकूलन	तटस्थ	प्रतिकूल
पक्ष	तटस्थ	विपक्ष

पांच बिन्दु पैमाना

1	2	3	4	5
पूर्ण सहमति	सहमति	अनिश्चित	असहमति	पूर्ण असहमति
अत्यधिक उच्च	औसत से कुछ उच्च	औसत	औसत से कुछ नीचे	अत्यधिक निम्न
अधिक पसन्द	पसन्द	तटस्थ	नापसन्द	बिल्कुल नापसंद
पूर्ण अनुकूल	अनुकूल	तटस्थ	प्रतिकूल	पूर्ण प्रतिकूल

तीव्रता मापक पैमानों को हम दो भागों में बांट सकते हैं । समान विस्तार वाले तथा असमान विस्तार वाले।

समान विस्तार वाले पैमाने में एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु की दूरी समान होती है जबकि असमान विस्तार वाले में पैमाना बिन्दुओं की दूरी असमान होती है और यह पैमाना एक सातत्य के रूप में होता है जिसमें माप शून्य से प्रारम्भ होकर आगे बढ़ते जाते हैं। समान विस्तार वाले पैमानों का उदाहरण उपर्युक्त है व असमान विस्तार वाले पैमाने का उदाहरण निम्न प्रकार से है—

उदाहरणार्थ :- ''आयकर किन लोगों पर लगाया जाये?''

(अ) जिनके पास पर्याप्त साधन है।

(ब) जिनके पास अपार संम्पत्ति है।

(स) केवल उच्च तथा मध्यम वर्ग पर ।

(द) अत्यधिक गरीबों को छोड़कर सभी पर ।

मनोवृत्ति की गहनता को मापने के लिये समविस्तार वाली पैमाना बिन्दु प्रणाली का प्रयोग ''लुईस गटमैन'' ने किया था। इस मापक पैमाने का उपयोग किसी पुस्तक, प्रसिद्ध नेता, एवं अध्यापक की लोकप्रियता को जानने के लिये लोगों की विविध व्यवसायों के प्रति रु चि ज्ञात करने तथा जनमत सम्बन्धी सर्वेक्षणों के लिये किया जाता है।

(6) **पद या श्रेणी सूचक पैमाना —** पद या श्रेणी सूचक पैमाने भी तीव्रता मापक पैमानें की भांति ही होते हैं किन्तु दोनों में अंतर यह है कि जहां तीव्रता मापक पैमाने में किसी तथ्य का स्थान संपूर्ण पैमानें में निश्चित करना होता है वहीं पद सूचक पैमानें में तथ्य का स्थान मूल्य कुछ थोड़ी सी चुनी हुई इकाइयों की तुलना करके ज्ञात किया जाता है। इस प्रकार के पैमाने में होरोविट्ज का पैमाना प्रमुख है जो निम्नवत है—

होरोविट्ज पैमाना — होरोविट्ज ने प्रजातीय पक्षपात को श्रेणीबद्ध करने के लिए इस प्रकार के पैमाने का प्रयोग किया। उसने आठ (8) नीग्रो, चार गोरे बच्चों की कुल बारह तस्वीरें ली। इन तस्वीरों के सेट को स्कूल के बच्चों को दिया गया और उन्हें कहा गया कि वे इन्हें इस क्रम से सजायें कि सबसे प्रिय तस्वीर को सबसे ऊपर उससे कम प्रिय को दूसरे नम्बर पर और इसी प्रकार से सभी बारह तस्वीरों को क्रम से सजा दें तथा प्रत्येक तस्वीर को उनकी अधिमान्यता के अनुसार क्रमश: 1, 2, 3, 4, 5 आदि क्रम अंक प्रदान कर दें। गोरे तथा नीग्रो बालकों को मिलने वाले अंकों को जोड़ा गया और इस आधार पर

बच्चों की मनोवृत्ति का पता लगाया गया । जिस तस्वीर को सबसे कम अंक मिले उसे अधिक प्रिय समझा गया और सबसे अधिक अंक मिलने वाली तस्वीर को सबसे कम प्रिय। गोरे बच्चों की तस्वीरों की संख्या चार थी, अत: उनके प्राप्तांकों की संभावना 10 व 42 के बीच थी। यदि चारों गोरे बच्चों को प्रथम चार स्थान दिये गये तो उन्हें 4+3+2+1 = 10 अंक प्राप्त होते। यदि उन्हें अन्तिम चार स्थान दिये जाते तो उन्हें 12 + 11 + 10 + 9 = 42 अंक मिलते। अत: उनका औसत मूल्य 10 व 42 का माध्य मूल्य 26 मान लिया गया। यदि प्राप्तांक माध्य मूल्य से कम हो तो यह मान लिया जायेगा कि लोगों की राय उनके पक्ष में है और यदि अधिक है तो लोगों की राय विपक्ष में मानी जायेगी।

होरोविट्ज ने उन्हें बालकों को उन्हीं 12 तस्वीरों को देकर पुन: कहा कि विभिन्न स्थितियों के लिये इनमें से अपने साथी चुनिये और उन्हें प्राथमिकता के क्रम में व्यवस्थित कीजिये। बच्चों को कुल 12 स्थितियां दी गयीं जिनमें पृथक-पृथक रूप से 12 चित्रों को प्राथमिकता के आधार पर रखने को कहा गया इनमें से कुछ इस प्रकार हैं — (अ) कार में साथ-साथ बैठना (ब) दावत में बुलाना (स) उसके घर भोजन के लिये जाना (द) पड़ोस में रहना ।

प्रत्येक स्थिति को अलग-अलग किया गया और उनके अंकों की गणना की गयी। प्रत्येक स्थिति में चार चित्र गोरे बच्चों के थे, इससे अधिक नहीं। यदि सभी 12 स्थितियों को देखा जाये तो गोरे बच्चों की अधिकतम संख्या 4× 12 = 48 होगी। इन 48 को 100 मानकर गोरे बच्चों की संख्या 12 में से 4 थी अत: उनका संभावित प्रतिशत $33^{1/2}$ प्रतिशत हुआ। इस प्रतिशत से कम अथवा अधिक के आधार पर ही उनके पक्ष एवं विपक्ष का निर्णय किया गया।

इस प्रकार इस इकाई में हमने पैमानों के प्रकारों का संपूर्ण अध्ययन प्राप्त किया है।

(2) संस्थागत व्यवहार मापक पैमाना

मानव समाज में सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, शैक्षणिक एवं सांस्कृतिक आदि अनेक संस्थाएं क्रियाशील हैं। ये संस्थाएं मानव समूह के व्यवहारों का नियमन और नियंत्रण करती हैं तथा लोगों के पारस्परिक सम्बन्धों को निश्चित करती हैं। समूह व्यवहारों एवं संस्थागत व्यवहारों को मापने के लिये समाजमिति पैमाने का प्रयोग किया जाता है।

संस्थागत एवं सामाजिक व्यवहार को मापने के लिये समाजमितीय पैमानों की रचना की गयी। ये पैमाने भी मनोवृत्ति मापक पैमानों के समान ही होते हैं। इन दोनों में अंतर यह है कि मनोवृत्ति मापक पैमाने व्यक्तिगत व्यवहार की माप बतलाते है जिनमें उत्तर द्वन्द्वात्मक हो सकते हैं । इनमें पद या श्रेणी सूचक पैमानो का उपयोग भी किया जा सकता है जबकि संस्थागत व्यवहार मापक पैमाने एक निरन्तर क्रम में होते हैं। जैसे - फुटरूल पर इन्च या सेण्टीमीटर एक से प्रारम्भ होकर लगातार बढ़ते जाते हैं उसी प्रकार से समाजमितीय पैमाने में भी माप लगातार बढ़ती जाती है।

समाजमिति के आधारभूत सिद्धान्तों एवं प्रविधियों का सर्वप्रथम उल्लेख जे. एल. मोरेनो ने 1934 ई0 में अपनी पुस्तक "Who shall survive" (हू शैल सरवाइव) में किया था। मोरेनो ने इस पुस्तक को परिवर्द्धित एवं संशोधित कर पुन: 1953 में प्रकाशित किया। जिसमें समाजमिति के इतिहास, सिद्धान्त शब्दावली, प्रयोग एवं प्रविधि आदि की विस्तृत विवेचना प्रस्तुत की है। मोरेनो आस्ट्रिया के एक मनोवैज्ञानिक थे जो अमेरिका में प्रवास कर रहे थे । वे प्रथम विश्व युद्ध के बाद अमेरिका के एक शरणार्थी शिविर के प्रशासक नियुक्त किये गये। शरणार्थियों के मानसिक तनावों एवं दु:खों को कम करने के लिये इस महत्वपूर्ण प्रविधि का अविष्कार किया। जिसे आगे चलकर हेलेन जेनिग्स (1946) ने और भी विकसित करने का कार्य किया । शेष समाजमिति के विषय में अपनी इकाई में अध्ययन करेंगे।

17.9 सारांश

इस इकाई के प्रारंभ में हमने अनुमापन (प्रमापन) के विषय में ज्ञान प्राप्त किया। प्रमापन या अनुमापन एक ऐसा तरीका है जिसके द्वारा हम वस्तुओं अथवा घटनाओं को मापते हैं। इन अनुमापन विधियों द्वारा समाज वैज्ञानिक अपने गुणात्मक तथ्यों को परिमाणात्मक तथ्यों में परिणित करने का प्रयास करते हैं ताकि शोध के निष्कर्षों को अधिकाधिक निश्चितता प्रदान की जा सके। इसके बाद समाजशास्त्र में अनुमापन की आवश्यकता से सम्बन्धित कारणों का अध्ययन करते हैं। वस्तुनिष्ठता की प्राप्ति हेतु, संख्यात्मक प्रस्तुतीकरण हेतु, विश्वसनीयता व वैधता की प्राप्ति हेतु अनुमापन की आवश्यकता समाजशास्त्र में प्रतीत होती है। इसके पश्चात् एक उत्तम अनुमापन की समस्याओं के बारे में आवश्यक ज्ञान प्राप्त किया। सामाजिक विज्ञान में अनुमापन के कार्यों का भी ज्ञान प्राप्त करते हुए इसके प्रकारों का अध्ययन किया है। प्रमुख पैमानों में अंक पैमाना, थर्सटन की समविस्तार प्रणाली, तीव्रता मापक प्रणाली, सामाजिक दूरी मापक प्रणाली तथा पद सूचक पैमाना व समाजमिति पैमाना आदि हैं। इस प्रकार हमने इस इकाई के अन्तर्गत अनुमापन, इसकी आवश्यकता एक उत्तम अनुमापन की विशेषताएं, अनुमापन के कार्य आदि का अध्ययन किया है।

17.10 बोध प्रश्न

(क) वस्तुनिष्ठ बोधात्मक प्रश्न

(1) सामाजिक घटनाओं का अनुमापन कठिन होता है क्योंकि -

(अ) इसका दायरा बहुत बड़ा होता है (ब) सूचनादाता इसके लिये तैयार नहीं होता है

(स) शोधकर्ता के पास कोई पैमाना नहीं होता है। (द) सामाजिक घटनाएं अमूर्त एवं परिवर्तनशील हैं।

(2) गुडे एवं हाट के अनुसार अनुमापन (प्रमापन) विधियां

(अ) गुणात्मक तथ्यों की श्रेणियों को गणनात्मक श्रेणियों में बदलना है

(ब) गणनात्मक श्रेणियों के तथ्यों को गुणात्मक श्रेणियों में बदलना है।

(स) गुणात्मक तथ्यों का अनुमापन है

(द) गणनात्मक तथ्यों का विश्लेषण है।

(3) समाजशास्त्र को अपनी वैज्ञानिक स्थिति बनाए रखने के लिये जरूरी है।

(अ) समाजशास्त्री का होना (ब) सामाजिक घटनाओं को मापने की क्षमता का होना

(स) कुछ मापक यंत्र का होना (द) सामाजिक अनुसंधान का होना

(4) विचार, प्रेम, घृणा, आदि सामाजिक घटनाएं किस श्रेणी में रखी जाती हैं-

(अ) गणनात्मक श्रेणी (ब) परिमाणात्मक श्रेणी (स) गुणात्मक श्रेणी (द) अनुमापन श्रेणी

(5) थर्सटन पैमाना विधि का इस्तेमाल -

(अ) निदर्शन के लिये किया जाता है (ब) सामाजिक रुचि मापने के लिये किया जाता है

(स) समाज का व्यक्ति के प्रति नजरिया मापा जाता है।

(द) व्यक्ति की मनोवृत्तियों को मापने के लिये किया जाता है

(ख) लघुउत्तरीय प्रश्न

प्र. 1 प्रमापन या अनुमापन का अर्थ स्पष्ट कीजिये।

प्र. 2 अनुमापन की प्रमुख समस्याएं कौन-कौन सी हैं?

प्र. 3 पैमाने (प्रमापन) के निर्माण में आने वाली कठिनाइयों कौन-कौन सी हैं?

प्र. 4 प्रमापन की आवश्यकता क्यों होती है? स्पष्ट कीजिये ?

प्र. 5 अनुमापन के कार्य लिखिये?

(ग) दीर्घउत्तरीय प्रश्न

प्र. 1 अनुमापन के सम्बोध को स्पष्ट करते हुए इसकी प्रमुख समस्याओं का वर्णन कीजिये?

प्र. 2 प्रमापन के प्रमुख प्रकारों का विस्तृत विश्लेषण कीजिये?

17.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

(1) (द) सामाजिक घटनाएं अमूर्त एवं परिवर्तनशील हैं ।

(2) (अ) गुणात्मक तथ्यों की श्रेणियों को गणनात्मक श्रेणियों में बदलना है।

(3) (ब) सामाजिक घटनाओं को मापने की क्षमता का होना

(4) (स) गुणात्मक श्रेणी

(5) (द) व्यक्ति की मनोवृत्तियों को मापने के लिये किया जाता है।

इकाई 18 समाजमिति

इकाई की रूपरेखा

18.0 उद्देश्य

18.1 प्रस्तावना

18.2 समाजमिति पैमाना

18.2.1 समाजमिति की परिभाषा व प्रकृति

18.3 समाजमितिक परीक्षण

18.4 समाजमितीय पैमाने की प्रक्रिया

18.5 समाजमितीय पैमाने के गुण

18.6 समाजमितीय पैमाने का महत्व व सीमाएं

18.7 सारांश

18.8 बोध प्रश्न

18.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

18.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

18.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप:

- समाजमिति की परिभाषा व प्रकृति का उल्लेख कर सकेंगे।
- समाजमितिक परीक्षण की विवेचना कर सकेंगे।
- समाजमितीय पैमाने की प्रक्रिया का उल्लेख कर सकेंगे।
- समाजमितीय पैमाने के महत्व व सीमाओं का वर्णन कर सकेंगे।

18.1 प्रस्तावना

इस इकाई के प्रारम्भ में हम समाजमिति पैमाने के विषय में अध्ययन करेंगे, तदुपरांत समाजमिति की परिभाषा व उसकी प्रकृति के विषय में ज्ञान प्राप्त करेंगे। इसी इकाई के अन्तर्गत समाजमितिक परीक्षण के विषय में भी जानकारी प्राप्त करेंगे। इस परीक्षण के लिये एक उदाहरण का भी अध्ययन करेंगे। इसी क्रम में हम समाजमिति पैमाने के निर्माण के विविध चरणों का भी ज्ञान प्राप्त करेंगे। श्रेष्ठ समाजमिति पैमाने की विशेषताओं के साथ-साथ इसके महत्व व कमियों का भी अध्ययन करेंगे। इस प्रकार हम इस इकाई में समाजमिति से सम्बन्धित विविध अवधारणाओं एवं विविध पक्षों का ज्ञान प्राप्त करेंगे। सामान्यत: यह पैमाना किसी लघु समूह के अन्तर्पारस्परिक सम्बन्धों, समूह संरचना तथा समूह में व्यक्तियों की प्रस्थिति के माप की एक विधि है। संस्थागत एवं सामाजिक व्यवहार को मापने के लिये समाजमितीय पैमानों की रचना की गयी है। इस प्रकार इकाई चार में हम 'समाजमिति' से अवगत हो सकेंगे।

18.2 समाजमिति पैमाना

समाजमिति किसी लघु समूह के अन्तर्पारस्परिक सम्बन्धों, समूह संरचना तथा समूह में व्यक्तियों की प्रस्थिति के माप की एक विधि है। इस विधि में समूह के प्रत्येक व्यक्ति से यह बतलाने के लिये कहा जाता है कि उसे समूह के कौन से व्यक्ति भले लगते हैं? उसे किनके साथ उठना बैठना, काम करना, भोजन करना, साथ में रहना आदि अच्छा लगता है? उसे कौन व्यक्त्ति अच्छे नहीं लगते? वह किन लोगों से अलग रहना चाहता है आदि। इन प्रश्नों के विश्लेषण द्वारा किसी समूह में आकर्षण-विकर्षण, स्वीकृति-अस्वीकृति की माप द्वारा समूह की संरचना, उसका विकास तथा व्यक्तियों की सामाजिक प्रस्थिति का अध्ययन किया जाता है। समाजमिति का प्रयोग गुटों की संरचना और लघु समूहों के अध्ययन में किया जाता है।

संस्थागत एवं सामाजिक व्यवहार को मापने के लिये समाजमितीय पैमानों की रचना की गयी है। ये पैमाने भी मनोवृत्ति मापक पैमानों के समान ही होते हैं। इन दोनों में अन्तर यह है कि मनोवृत्ति मापक पैमाने व्यक्तिगत व्यवहार की माप बतलाते हैं जिनमें उत्तर द्वन्द्वात्मक हो सकते हैं। इनमें पद या श्रेणीसूचक पैमाने का उपयोग भी किया जा सकता है, जबकि संस्थागत व्यवहार मापक पैमाने एक निरन्तर क्रम में होते हैं। जैसे फुटरूल पर इंच या सेण्टीमीटर एक से प्रारम्भ होकर लगातार बढ़ते जाते हैं उसी प्रकार से समाजमितीय पैमाने में भी माप लगातार बढ़ती जाती है।

समाजमिति के सिद्धान्तों एवं प्रविधियों का सर्वप्रथम उल्लेख ' जे. एल. मोरेनो (J.L. Moreno) ने सन् 1934 ई0 में अपनी पुस्तक 'Who Shall Survive' में किया था। मोरेनो ने इस पुस्तक को परिवर्द्धित एवं संशोधित कर पुनः 1953 में प्रकाशित किया जिसमें समाजमिति के इतिहास , सिद्धान्त, शब्दावली, प्रयोग, एवं प्रविधि, आदि की विस्तृत विवेचना प्रस्तुत की। मोरेनो आस्ट्रिया के एक मनोवैज्ञानिक थे, जो अमेरिका में प्रवास कर रहे थे। वे प्रथम विश्वयुद्ध के बाद अमेरिका के एक शरणार्थी शिविर के प्रशासक नियुक्त किये गये। शरणार्थियों के मानसिक तनावों और दुःखों को कम करने के लिए उनको पसंद के छोटे-छोटे समूहों में बांटने के लिये इस विधि का अविष्कार किया गया जिसे आगे चलकर हेलेन जेनिंग्स (Hallen N. Jennings) ने पूरी तरह विकसित करने का कार्य किया।

18.2.1 समाजमिति की परिभाषा व प्रकृति

परिभाषा— सर्वप्रथम इस इकाई में हम आपको समाजमिति की परिभाषा व प्रकृति के विषय में ज्ञान प्रदान करेंगे। विविध विद्वानों ने समाजमिति को निम्न प्रकार से परिभाषित किया है—

प्रो. जे. जी. फ्रांज (1939) के विचारानुसार समाजमिति एक समूह में व्यक्तियों के बीच पाये जाने वाले आकर्षण तथा विकर्षण को मापकर समाजिक संरूपण को खोजने व गढ़ने की एक पद्धति है।

इसी क्रम में अन्य विद्वान हेलेन जेनिंग्स (1946) के अनुसार समाजमिति एक दिये गये समूह के सदस्यों के बीच एक दिये गये समय में विद्यमान सम्बन्धों की सम्पूर्ण संरचना को सफलता से तथा ग्राफ के रूप में प्रस्तुत करने का एक साधन है। एक अन्य विद्वान यूरी ब्रोनफेन ब्रेनर (1943) के मत से समाजमिति समूह में व्यक्तियों के बीच स्वीकृति अथवा अस्वीकृति की मात्रा को खोजने, वर्णन एवं मूल्यांकन करने की एक पद्धति है। इस क्रम में श्रीमती यंग (1951) का कहना है कि समाजमिति में आधारभूत प्रविधि 'समाजमितीय परीक्षण' है। यह परीक्षण इस रूप में होता है- एक समूह के प्रत्येक सदस्य को यह छूट होती है कि वह अपने उस समूह के और सभी सदस्यों में से ऐसे लोगों को चुन ले जिसके साथ वह विशेष परिस्थितियों में साथ रहना या सम्बन्ध स्थापित करना अधिक पसंद करेगा। इस प्रकार हम यह

कह सकते हैं कि समाजमिति, वह प्रविधि है,जिसके द्वारा समूह के सदस्यों के बीच पारस्परिक सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है।

मोरेनो ने इस समाजमिति परीक्षण का प्रयोग एक पब्लिक स्कूल के गुटों के अध्ययन में किया एवं कुछ ही समय बाद इसका प्रयोग हडसन (न्यूयार्क) के राजकीय बालिका प्रशिक्षण स्कूल के एक अध्ययन में पुनः किया। समाजमिति एक उपयोगी प्रविधि है जिसकी सहायता से समूह के सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्ध, समूह में व्यक्ति की सामाजिक स्थिति, समूह के अन्दर क्रियाशील प्रभावशाली व्यक्ति या गुट आदि के विषय में स्पष्ट तथा यथार्थ जानकारी प्राप्त होती है। नेतृत्व, नैतिकता, सामाजिक अनुकूलन, प्रजातीय सम्बन्ध, राजनैतिक गुटबाजी, चुनाव में जनमत संग्रह आदि महत्वपूर्ण विषयों पर अनेक अध्ययन कार्यो में समाजमिति की उपयोगिया स्पष्ट हो गयी है।

18.3 समाजमितिक परीक्षण

समाजमिति में प्रमुख प्रविधि 'समाजमितिक परीक्षण' है। पी. वी. यंग (1951) के अनुसार समाजमितिक परीक्षण में एक समूह के प्रत्येक सदस्य को यह छूट होती है कि वह अपने उस समूह के और सभी सदस्यों में से ऐसे लोगों को चुन ले जिनके साथ वह विशेष परिस्थितियों में साथ रहना या सम्बन्ध स्थापित करना अधिक पसंद करेगा। जे. एल. मोरेनो ने इस परीक्षण का सर्वप्रथम प्रयोग एक पब्लिक स्कूल के गुटों के अध्ययन में किया। इसके बाद न्यूयार्क में छात्राओं के एक प्रशिक्षण स्कूल के अध्ययन में किया। उस स्कूल में 500 छात्राएं थीं जो स्कूल प्रांगण में बने 16 (सोलह) निवास गृहों में रहती थीं। प्रत्येक छात्रा से पांच ऐसे नाम लिखने को कहा गया जिसके साथ वह काम करना, भोजन खाना आदि पसन्द करेंगी। उन्हें यह भी कहा गया कि वे पांच ऐसी छात्राओं के नाम लिखें, जिनके साथ ये सभी कार्य करना पसन्द नहीं करेंगी। इस प्रकार पसन्द एवं नापसन्द को बताने के लिये साथ-साथ रहना, भोजन करना एवं काम करना आदि कुछ ऐसी विशिष्ट परिस्थितियों को चुना जाता है जिनके चारों ओर वह समूह संगठित है। इन परीक्षणों से यह ज्ञात होता है कि कुछ व्यक्ति सभी परिस्थितियों के लिये चुने जाते हैं साथ ही अलग-अलग प्रकार के कार्यों के लिये अलग-अलग लोगों को पसंद किया जाता है। अर्थात् नारायण के साथ कार्य करना पसंद किया जाता है तो घूमने के लिये हरि को साथी के रूप में पसंद किया जाता है। प्रत्येक समूह में एक दो व्यक्ति ही ऐसे होते हैं जिन्हें सभी कार्यों या परिस्थितियों के लिये पसन्द किया जाता है। इस प्रकार समाजमिति पैमाने में सबसे पहले उन मौलिक मानदंडों को निश्चित किया जाता है जिन पर समूह की गतिविधियां आश्रित हैं तथा दूसरा इन मानदंडों के संदर्भ में पसंद नापसंद या आकर्षण-विकर्षण के प्रतिमानों की परीक्षा करनी होती है। कभी-कभी समाजमितिक परीक्षणों के परिणामों की सफलता को ज्ञात करने के लिये व्यक्तिगत / वैयक्तिक साक्षात्कार भी लिये जाते हैं। मोरेनो ने प्रशिक्षण स्कूल (हडसन में) की छात्राओं का साक्षात्कार लेकर उन छात्राओं के प्रति उनकी मनोवृत्ति को भी ज्ञात किया, जिन छात्राओं को उन्होंने पसंद या नापसंद किया। क्या उनके प्रति मन में पसन्दगी, नापसन्दगी या तटस्थता की भावना है? सामाजिक संरचना में प्रत्येक छात्रा की एक स्पष्ट प्रस्थिति जानने के लिये साक्षात्कार में आकर्षण तथा विकर्षण हेतु अभिप्रेरणा को भी ज्ञात किया गया । इस प्रकार के परीक्षण से एक समूह के सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्धों के बीच पायी जाने वाली सहानुभूति, भय, क्रोध, ईर्ष्या आदि उद्वेगों को भी ज्ञात किया जाता है।

समाजमितीय परीक्षण का उदाहरण

माना हम दस छात्रों के बीच परस्पर पाये जाने वाले प्रेम या घृणा का पता लगाना चाहते हैं तो हम प्रत्येक छात्र को एक कागज का टुकड़ा दे देंगे और निर्देश देंगे कि वह अपने तीन मित्रों का नाम अपनी पसन्द के

क्रम में लिख दें अर्थात् जिसे सबसे अधिक पसन्द करता है उसे नम्बर एक पर, उसके बाद वाले को नम्बर दो पर तथा अंत वाले को नम्बर तीन पर लिख दें। जब सभी छात्र नाम लिख लें तो कागज के टुकड़ों को एकत्रित कर छात्रों की पसन्दगी/ नापसन्दगी को सारणी द्वारा इस प्रकार प्रकट की जा सकती है।

चुने गये छात्र

	A	B	C	D	E	F	G	H	I	J	
A		2	1						3		
B	3		2				1				
C	3			1		2					
D			1		2			3			
E			2	3				1			
F			1				3	2			
G				1		2			3		
H			1			2	3				
I	3	2							1		
J			2				3		1		
प्रथम वरीयता			4	2			1	1	2		योग 10
द्वितीय वरीयता		2	3		1	3		1			योग 10
तृतीय वरीयता	3			1			3	1	2		योग 10
योग	3	2	7	3	1	3	4	3	4	0	

इस सारणी का हम समाजमितीय चित्र निम्न प्रकार प्रस्तुत कर सकते हैं –

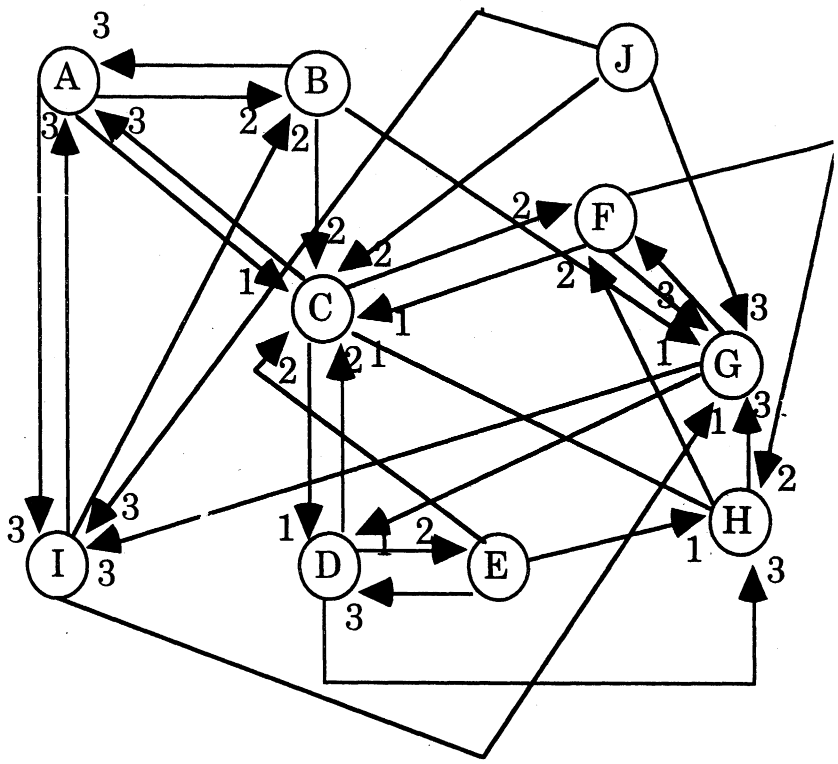

चित्र एवं सारणी के द्वारा 10 (दस) छात्रों के बीच पाये जाने वाले सम्बन्धों के बारे में निम्नांकित निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं:

(1) एकतरफा प्राथमिकता — कुछ छात्रों के आपसी सम्बन्ध ऐसे हैं कि एक छात्र तो दूसरे को प्राथमिकता देता है। जबकि पहले वाले को कोई प्राथमिकता नहीं देता। उपर्युक्त परीक्षण के उदाहरण में B, C को द्वितीयक व G को प्रथम वरीयता देता है किन्तु इन दोनों में से किसी ने भी B को किसी भी प्रकार की प्राथमिकता नहीं दी।

(2) पारस्परिक प्राथमिकता या वरण — कुछ छात्र ऐसे हैं जिन्होंने एक दूसरे को प्राथमिकता दी है। C ने D को तथा D ने C को प्राथमिक वरीयता दी है। इसी प्रकार से A तथा B ने भी परस्पर एक दूसरे को प्राथमिकता दी है चाहे वह असमान ही क्यों न हो।

(3) त्रिकोणीय या चतुष्कोणींय प्राथमिकता — जब दो व्यक्ति प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित न होकर तीसरे व्यक्ति द्वारा संबंधित होते हैं तो उनमें त्रिकोणीय सम्बन्ध होते हैं।C को प्रत्यक्ष रूप से B से कोई संलग्नता नहीं है किन्तु वह A को चाहता है और A, B को चाहता है। इसी प्रकार से चार व्यक्ति परस्पर प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित न होकर अप्रत्यक्ष रूप से दूसरे व्यक्तियों के माध्यम से सम्बन्धित हों तो उन्हें चतुष्कोणीय सम्बन्ध कहते हैं जैसे – C एक ओर I से तथा दूसरी ओर F से सम्बन्धित है, इसी प्रकार F, H से तथा H, E से सम्बन्धित है। इस प्रकार C, H, F तथा E का एक चतुष्कोणीय सम्बन्ध बन जाता है।

(4) सर्वप्रिय नेता — इसके अन्तर्गत उस व्यक्ति को सम्मिलित किया जाता है जिसे सर्वाधिक लोगों ने प्राथमिकता दी है। इस प्रकार के लोग सर्वप्रिय नेता होते हैं। उपर्युक्त सारणी में 'C' ऐसा ही सर्वप्रिय नेता है तथा 'G' का स्थान दूसरा है।

(5) पूर्णतया पृथक — सम्बंध प्रतिमानों में ऐसा भी हो सकता है कि कोई व्यक्ति ऐसा भी हो जिसे कोई भी पसंद नहीं करता हो। 'J' पूर्णतया इसका उदाहरण है।

(6) दलबन्दी — सारणी को देखकर दलबन्दी का भी आभास होता है। इस प्रकार के सम्बन्धों में एकाधिक विद्यार्थी परस्पर एक दूसरे का चुनाव करते हैं। C, E, F, G मिलकर एक गुट/ दलबन्दी का निर्माण करते हैं।

इस प्रकार से समाजमितीय पैमाने के द्वारा हम समूह के सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्धों के बारे में महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्राप्त कर सकते हैं।

18.4 समाजमितीय पैमाने की प्रक्रिया

समाजमितीय पैमाने के निर्माण के लिये हमें निम्नलिखित चरणों को अपनाना पड़ता है जो निम्नलिखित हैं—

(अ) विषय का चुनाव — समाजमितीय पैमानें के निर्माण के लिये हमें सर्वप्रथम विषय का चुनाव करना होता है। यह विषय कोई संस्था, समूह, समुदाय, परिवार, स्कूल, सरकारी या गैर सरकारी संगठन आदि हो सकता है जहां के लोगों के सम्बन्धों एवं व्यवहारों के स्वरूपों का अध्ययन करना हो। विषय सुनिश्चित व सुस्पष्ट हो तथा उसके विविध पक्षों को भली-भांति परिभाषित कर दिया जाये।

(ब) विषय के विशिष्ट पहलुओं का चुनाव — इसके बाद हम विषय से सम्बन्धित अध्ययन किये जाने वाले विशेष पहलुओं का चुनाव करते हैं।

(स) आधारों का निर्धारण — सामाजिक व्यवहारों को मापने के लिये हमें उन आधारों का निर्धारण भी करना होगा जो सामूहिक जीवन का प्रतिनिधित्व करते हैं। इनके आधार पर ही हम किसी पहलू को सही-सही माप सकते हैं। जैसे —जीवन स्तर को मापने के लिये हम भौतिक सुख सुविधाओं की मात्रा, शिक्षा, संस्कृति, सामान्य स्थितियां तथा व्यवहार आदि के तत्वों को सम्मिलित कर सकते हैं।

(द) भार प्रदान करना — आधारों के निर्धारण के बाद उनके तुलनात्मक महत्व को प्रकट करने के लिये उन्हें उपयुक्त भार भी प्रदान करना होता है जिससे हम गुणात्मक मूल्यों को संख्यात्मक रूप से प्रकट कर सकें। भार प्रदान करने का कार्य वस्तुनिष्ठ व वैज्ञानिकता परक होना चाहिये।

(य) उचित निदर्शनों का उपयोग — पैमानें का प्रयोग प्रारम्भ में कुछ चुने निदर्शनों पर प्रयोग करके उससे प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर किया जाये। यदि आवश्यक हो तो उसमें उचित संशोधन भी किया जा सकता है।

(र) अंत में प्रयोगकर्ता को पैमानें के प्रयोग से सम्बन्धित आवश्यक व उचित दिशा निर्देश भी दिये जाने चाहिये।

इस प्रकार इस इकाई में हमने समाजमितीय पैमाने के निर्माण के लिये आवश्यक चरणों का ज्ञान प्राप्त किया है।

18.5 समाजमितीय पैमाने के गुण

पैमानें के निर्माण के चरणों का ज्ञानप्राप्त करने के बाद एक उत्तम समाजमितीय पैमानों के निम्नांकित गुणों का अध्ययन करेंगे।

(1) सरलता — पैमाना ऐसा होना चाहिये जिसका सरलता से उपयोग किया जा सके। जटिल होने पर उसका उपयोग सीमित हो जायेगा।

(2) प्रामाणिकता युक्त — पैमाना प्रामाणिक होना चाहिये। जिन घटनाओं को मापने के लिये निर्मित किया गया है उन्हें मापने में उसे समर्थ होना चाहिये।

(3) विश्वसनीयता — पैमाना विश्वसनीय होना चाहिए अर्थात समान दशाओं में उसके द्वारा विषय की समान माप ज्ञात हो सके/ समान दशाओं में अलग परिणाम निकलने पर पैमाना अविश्वनीय हो जायेगा।

(4) व्यापकता — पैमानें में व्यापकता के गुण होने चाहिये। वह ऐसा हो कि समान दशाओं में सभी घटनाओं पर लागू किया जा सके।

(5) आदर्श मापदण्डों पर आधारित — पैमाना ऐसे मापदण्डों पर आधारित होना चाहिये जिसके द्वारा गणनात्मक निष्कर्ष निकाला जा सके व उनकी परस्पर तुलना की जा सके।

इस प्रकार एक उत्तम समाजमितीय पैमानें में उपर्युक्त आवश्यक गुणों का होना जरूरी है।

18.6 समाजमितीय पैमाने का महत्व व सीमाएं

अब हम समाजमितीय पैमाने के महत्व व सीमाओं का ज्ञान प्राप्त करेंगे। समाजमितीय पैमानें के बढ़ते हुए उपयोग से इसकी महत्ता बढ़ गयी है इसके द्वारा —

(1) समाज की अमूर्त एवं गुणात्मक घटनाओं का गणनात्मक अध्ययन किया जाता है।

(2) समाज में अमूर्त पारस्परिक सम्बन्धों से सम्बन्धित घटनाओं को मापा जाता है।

(3) सामाजिक एवं संस्थागत व्यवहारों की माप का यह एक प्रमुख साधन है।

(4) वैज्ञानिक अध्ययनों में इस पैमानें का अत्यधिक महत्व है।

जहां इसका महत्व बढ़ता जा रहा है वहीं दूसरी ओर इसकी कुछ कमियां भी हैं जो निम्नलिखित हैं—

(1) इसके द्वारा उत्तरदाता द्वारा दिये गये उत्तर सही हैं या नहीं, यह ज्ञात करना कठिन है।

(2) पैमानें के आधारों का निर्धारण एवं आधारों को भार प्रदान करना भी एक कठिन कार्य है।

(3) यथार्थ निष्कर्ष निकालने में असुविधा होती है

इस प्रकार समाजमिति पैमाने का उपयोग जहां एक ओर बढ़ा है वहीं इसकी निश्चित सीमाएं भी हैं। यदि इस पैमाने का सावधानीपूर्वक प्रयोग किया जाये तो यथार्थता के साथ उत्तर प्राप्त किये जा सकते हैं।

18.7 सारांश

इस इकाई में हमने 'समाजमिति' के विषय में ज्ञान प्राप्त किया। इस इकाई के प्रारम्भ में हमने 'समाजमिति पैमाने की अवधारणा का अध्ययन करते हुए विविध विद्वानों द्वारा प्रस्तुत परिभाषा का अध्ययन किया,

इसके साथ ही इसकी प्रकृति का भी ज्ञान प्राप्त किया। इसी क्रम में परिभाषा व प्रकृति के ज्ञान के बाद समाजमिति परीक्षण व इसके उदाहरण का अध्ययन करते हुए एक समाजमितीय पैमाने की प्रक्रिया का अध्ययन किया। इसके उपरांत एक समाजमितीय पैमाने के आवश्यक गुणों , इसके महत्व व कमियों का भी ज्ञान प्राप्त किया। इस प्रकार इस इकाई चार के अन्तर्गत समाजमिति की अवधारणा, प्रकृति, प्रकिया, गुण, महत्व व इस पैमाने की किचिंत कमियों का क्रमबद्ध रूप में व्यवस्थित ज्ञान प्राप्त किया है।

18.8 बोध प्रश्न

(क) वस्तुनिष्ठ बोधात्मक प्रश्न

(1) मोरेनो (J.L. Moreno) एक

(अ) समाजशास्त्री थे (ब) मनोवैज्ञानिक थे (स) वैज्ञानिक थे (द) मानवशास्त्री थे (2) 'Who shall survive' पुस्तक कब प्रकाशित हुई,

(अ) 1940 (ब) 1948 (स) 1934 (द) 1950

(3) समाजमिति पैमाने का उपयोग —

(अ) अमूर्त मनोवृत्तियों को मापने तथा उनका गणनात्मक अध्ययन करने में किया जाता है।

(ब) समाज के अमूर्त पारस्परिक सम्बन्धों को मापने में

(स) किसी व्यक्ति की सामाजिकता को मापने में

(द) सामाजिक जीवन में भौतिकवाद का प्रभाव मापने में

(4) जे. जी. फ्रांज के अनुसार समाजमिति —

(अ) सामाजिक घटनाओं की एक सूची है ।

(ब) सामाजिक क्रियाकलापों का एक संक्षिप्त वर्णन है।

(स) एक समाज का दूसरे समाज के साथ सम्बन्धों को मापने का एक यंत्र है।

(द) एक समूह में व्यक्तियों के बीच पाये जाने वाले आकर्षण तथा विकर्षण को मापकर सामाजिक संरूपों को खोजने की एक पद्धति है

(5) श्रेष्ठ समाजमिति पैमाने का गुण है —

(अ) विश्वसनीयता (ब) सरलता (स) व्यापकता (द) उपर्युक्त सभी ।

(ख) लघुउत्तरीय प्रश्न

प्र. 1 'समाजमिति' की परिभाषा दीजिये।

प्र. 2 समाजमिति पैमाने की कमियां बताइये।

प्र. 3 एक श्रेष्ठ समाजमिति पैमाने के तीन गुणों को बताइये?

प्र. 4 समाजमिति परीक्षण का उदाहरण दीजिये

प्र. 5 समाजमिति पैमाने का महत्व बताइये?

(ग) दीर्घउत्तरीय प्रश्न

प्र. 1 समाजमिति क्या है? इस पैमानें के निर्माण की प्रक्रिया का उल्लेख कीजिये?

प्र. 2 एक उत्तम समाजमिति पैमानें के गुणों का उल्लेख करते हुए इसके महत्व व कमियों की विवेचना कीजिये।

18.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

(1) (ब) मनोवैज्ञानिक थे

(2) (स) 1934

(3) (अ) अमूर्त मनोवृत्तियों को मापने तथा उनका गणनात्मक अध्ययन करने में किया जाता है

(4) (द) एक समूह में व्यक्तियों के बीच पाये जाने वाले आकर्षण तथा विकषर्ण को मापकर सामाजिक संरूपों को खोजनें की एक पद्धति है।

(5) (द) उपर्युक्त सभी।

18.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. कलिंगर, एफ. एन., (1966) फाउन्डेशन्स आफ विहैविओरल रिसर्च, होल्ट रीन हार्ट एण्ड विन्स्टन, न्यूयार्क
2. गाल्टंग, जोहान, (1967) थियरी एण्ड मेथड्स आफ सोशल रिसर्च, जार्ज ऐलेन एण्ड अनविन लि0. लंदन
3. गुडे, डब्ल्यू जे एण्ड हैट, पी. के. (1952) मेथड्स इन सोशल रिसर्च, मैक्ग्राहिल बुक कंपनी न्यूयार्क
4. जहोदा, मेरा, कुक स्टुवर्ट डब्ल्यु एंड मार्टन ड्यूश (1858) रिसर्च मेथड्स इन सोशल रिलेशन्व खण्ड 1, दि ड्राइडेन प्रेस न्यूयार्क
5. जेनिंग्स, एच. एच. (1946) सोशियोमेट्री इन ग्रुप्स रिलेशन
6. नेमन जे. (1938) लेक्चर्स एण्उ कान्फ्रेन्सेज आन मेथमेटिकल स्टेटिस्टिक्स, यू. एस. डिपार्टमेन्ट आफ एग्रीकल्चर
7. पार्टन, मिल्डेड (1965) सर्वेज, पोल्स एण्ड सेम्पिलस हार्पर एण्ड रो, न्यूचार्क
8. फ्रेन्ज जे. जी. (1939) सर्वे आफ सोशियोमीट्रिक टेक्नीक्स विद ऐन ऐनाटेटेड बिब्लियोग्राफी, सोशियोमेट्री
9. ब्रानफ्रेंनब्रेरन यूरी (1943) ए कान्स्टैन्ट फ्रेंम आफ रेफरेन्स फार सोशियोमीट्रिक रिसर्च सोशियोमेट्री
10. यंग, पी. वी. (1951) साइंटिफिक सोशल सर्वेज एण्ड रिसर्च, प्रन्टिस हाल न्यूयार्क
11. सिंह, सुरेन्द्र (1975) सामाजिक अनुसंधान उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी लखनऊ
12. श्रीवास्त, ए. आर. एन., सिन्हा, आनन्द कुमार (1999),
13. टोंग्या एवं पाटिल (1990) सामाजिक अनुसंधान के मूल तत्व, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल ।

NOTES